

॥ श्रीः ॥

सुगमंकौमुद्याः

प्रथमद्वितीयखण्डात्मकः

प्रथमो भागः ।

श्रीमन्महाराजाधिराज महाराजराजेत्यादिपदवीसमलट्टतमुन्दीश्वर

श्री१०८ श्रीरामासिंहप्रसादभाजा सम्प्राप्ति तु तदात्मज-

श्रीमहाराजाधिराजमहाराजराजेत्यादिपदवीभिरा-

जमानमुन्दीन्द्रश्री१०८ श्रीरघुवीरसिंहा-

श्रितेन विदुषी किकरेण गंगास-

हायशर्मणा सङ्कलितः ।

स च

श्रीरुष्णदासात्मजेन गङ्गाविष्णुना

स्वकीये “ लक्ष्मीर्विकटेश्वर ” मुद्रणागारे

मुद्रयित्वा प्रकाशितः ।

शकाब्दाः १८२४, संवत् १९५९.

कल्याण-मुंबई.

अस्य ग्रन्थस्य पुनर्मुद्रणाधिकारः सन् १८६७ तमीयराज
नियमानुसारेण प्रकाशयित्रा स्वायत्तीकृता ।

व्याकरणग्रन्थाः ।

नाम.	की.रु.आ.ट.म.रु.आ.	
३२३ लघुशब्देन्दुशेखर काशीके छा.	५-०	०-८
३२४ सिद्धान्तकौमुदीअष्टाध्यायी, गणपाठ, धातुपाठ, लिङ्गानुशासन पा०अक्षर मोटाजिल्द	खे ४-०	०-१२
३२५ अष्टाध्यायी, गणपाठ, धातुपाठ आदि....	खे १-०	०-०
३२६ सिद्धान्तकौमुदी अतिउत्तम और बारीक टैपमें छपके तैयार है ...	खे २-०	०-४
३२७ लघुसिद्धान्तकौमुदी टिप्पणीसहित जिल्द अक्षर बड़ा सूत्र और वृत्ति खुलासेवार है. क	०-१२	०-२
३२८ तथा सादा जिल्द	क ०-१०	०-१॥
३२९ लघुसिद्धान्तकौमुदी टिप्पणीसहित छोटा	क ०-४	०-१
३३० सिद्धान्तचन्द्रिका सुबोधिनीटीका और तत्त्वदीपिकासह संपूर्ण	खे ४-०	०-८
३३१ सिद्धान्तचन्द्रिका उत्तरार्द्ध सुबोधिनी और तत्त्वदीपिकासह	खे २-०	०-४
३३२ सिद्धान्तचन्द्रिका सटीक पूर्वार्द्ध सुबोधिनी और तत्त्वदीपिका टीका	खे २-०	०-४
३३३ तत्त्वबोधिनी कौमुदीके पृष्ठाङ्कसह पूर्वार्द्ध १	२-८	०-६
३३४ रूपमालाव्याकरणका पदलिङ्गविभाग	खे ०-६	०-॥
३३५ " सन्धिभागः, अव्ययार्थभागः प्रयोगविधिसं- ग्रहः (कारकसमासतद्धितादिक) क्रिया- कलापः आख्यातचन्द्रिका धातुरूपभेदः श्लोकयोजनिकोणय	खे १-४	०-२
३३६ सन्धिविभाग	खे ०-६	०-॥
३३७ अव्ययार्थविभाग	क ०-३	०-॥
३३८ प्रयोगविधि	क ०-२	०-॥
३३९ कारकसमासतद्धितादिक क्रियाकलाप आख्या- तचन्द्रिका धातुरूपभेद श्लोकयोजनिकोपाय२	०-६	०-१
३४० सारस्वत चन्द्रकीर्ती उत्तरार्थ	२-०	०-४
३४१ सारस्वतसटीक प्रसादटीका	क ०-१२	०-२
३४२ सारस्वतमूल पूर्वार्द्ध जिल्द यईपका....	क ०-८	०-१

३४३ सारस्वत तीनों वृत्ति	क	०-१२	०-२
३४४ सारस्वत चन्द्रकीर्त्तिटीकासह परमोत्तम	क	१-४	०-२
३४५ ” ” तथा रफू कागजका	क	१-०	०-२
३४६ सारस्वत भा० टी० (व्याकरण)	ख	२-०	०-४
३४७ कारकवादाय शब्दबोध व्याकरणन्याय	क	०-२	०-॥
३४८ सारस्वत माधवीटीकासमेत	सुं	२-०	०-३
३४९ धातुरूपावलि लघुधातुपाठसहित	क	०-३	०-॥
३५० शब्दरूपावलि एकाक्षरीकोष सहित	क	०-१॥	०-॥
३५१ समासचक्र	क	०-१	०-॥
३५२ समासकुसुमावलि	क	०-२	०-॥
३५३ लघुकौमुदी भा० टी० अतिउत्तम	क	२-०	०-४

३५४ सिद्धांतचंद्रिका उत्तरार्ध सुबोधिनी, तत्त्वदिपिका
संस्कृत टीका और भाषाटीकासह छपती है

३५५ बालसंस्कृतप्रभाकर नवीन संस्कृत शिक्षने-

वालेको बहुत उपयोगी है क ०-८ ०-१

३५६ संस्कृतनामावली भाषाटीका क ०-२ ०-॥

३५७ लिङ्गबोध व्याकरण भाषाटीका ख ०-२ ०-॥

३५८ लघुभाष्य सारस्वतका ३-० ०-८

३५९ कारकस्वरूप भाषाटीका सहित [व्याकरण] ख ०-६ ०-१

३६० सिद्धान्त चंद्रिका मूल ख ०-१० ०-१

३६१ अर्थप्रकाशिका (व्याकरण) पद्मेनारणको

अती उपयोगी है भाषाभाष्यभी है रे ०-८ ०-१

३६२ शब्दरत्न मनोरमा (काशी) ५-० ०-१२

३६३ संस्कृतरौहण भाषाटीका समेत रे ०-६ ०-१

३६४ संस्कृतप्रदीप भाषाटीका अतिउत्तम क ०-३ ०-॥

३६५ संस्कृतशिक्षामंजरी रे ०-१॥ ०-१

गोविंदराजीय भूषण, तनिष्ठोकी, रामानुजी इन

तीनों टीकाओंसहित-

श्रीमद्वाल्मीकीयरामायण.

महाशयो ! देखो इस अपूर्व भूषणटीकाकी पांडित्यशैली,
मृगमता, विचारचातुर्य आदि सब अद्भुत गुण कैसे धमकते

नलमानीविस्तरणेति शुभम् । विदालुर्धन्तु पुस्तकमिदं भोह्मयीसमापर्वत
 कल्याणनगरस्यसुप्रसिद्ध " लक्ष्मीवैकटेश्वर " नामक मुद्रायन्त्रतो लभ्यमत
 पत्रादिप्रेषण तत्रैव कर्तव्यमिति जिघृक्षव इति ॥ मूल्यमस्य ग्राहकसौ कर्णार्थं
 केषल सपादो रूप्यः (१ ।)

अन्वितार्थप्रकाशिकाख्यव्याख्यासहित- श्रीमद्भागवत.

(व्याख्याग्रन्थसंख्या ७००००)

यह टीका बूंदी महाराजाश्रित पं० गंगासहायजीने बनाई
 है. इसमें मछि नाथके ढंगपर अन्वयक्रमसे सरल और कठिन
 सब श्लोकोंका अर्थ सुगम रूपसे लिखा है और टीकामें जिन
 जिन बातोंका लिखना आवश्यक है वे सब संक्षेप और—
 सुगमतासे लिख दी हैं इसमें श्रीधरजीकी टीकाकी तो प्रायः
 सब बात आ गई और बहुतसी बातें तोषिणीसारार्थसंदर्शिनी
 आदिसेभी ली गई है और सुगमता अन्वयक्रम और संक्षेपपर
 पूरी दृष्टि रखी गई है इस टीकाके शेषमें भागवतोपयोगी वेदांत
 सांख्यादिक कितनेक मत सुगम रीतिसे लिख दिये हैं. इसमें
 किसी मतका पक्षपात अथवा खंडन नहीं किया गया है । सब
 मतोंके आचार्योंका आदरपूर्वक स्मरण किया गया है. और
 भागवतके स्कंध और प्रकरणोंका अभिप्राय और श्लोकोंके
 छन्द तथा अध्यायोंके श्लोकोंकी गणना लिख दी है औरभी
 बहुत बातें हैं. इसका मूल्य अत्यल्प केवल १२ रुपये. देखनेसे
 मालूम होमा. पुस्तक समग्र छप चुका. नमूना मंगाली. काशि-
 आदि ठिकानेके विद्वानोंकी शेंकड़ो सम्मति आई हैं.

सुगमकौमुदी.

विदेशी विद्वान्भी प्रायः इस बातको सादर स्वीकार करते हैं कि हजारसे ऊपर लोकप्रसिद्ध भाषाओंमें संस्कृत भाषा अधिक ललित, अधिक निर्दोष और अधिक प्राचीन है। व्याकरण विना उसमें पूर्ण कुशलता प्राप्त नहीं होती है। यद्यपि व्याकरण ग्रंथ अनेक हैं परंतु यह सबही लोगोंकी सम्मति है कि पाणिनि व्याकरण सबसे अधिक प्रामाणिक सर्वोपजीवी और व्यभिचारन्यूनतादि दोषरहित है। परंतु पाणिनि व्याकरण अति कठिन होनेसे बालकोंके समझमें आने योग्य नहीं है। काशिकावृत्ति यद्यपि सुगम है परंतु उसमें विस्तार बहुत है, धातुपाठ नहीं है और प्रक्रियाक्रम नहीं है इसलिये अल्पबुद्धिवालोंके अनुकूल नहीं हो सकती है। सिद्धान्तकौमुदी चाहे प्रक्रियानुकूल और निर्दोष है तथापि वह कठिन होनेसे बालकोंके उपयोगी नहीं है और उसमें विस्तारभी अधिक है। तथापि सर्वांगपूर्ण और निर्दोष सिद्धान्तकौमुदी ही जानकर बालकोंके उसमें प्रवेशके लिये वरदराजने लघुकौमुदीकी रचना की है। उसमें यद्यपि विस्तार न करनेपर भी कितनेही उपयोगी विषय लिखे गये हैं तथापि सिद्धान्तकौमुदीमें प्रवेश करनेके लिये जितने विस्तारकी अपेक्षा है उससे दुगुना विस्तार कर दिया गया है, बालकोंके उपयुक्त सुगमता उसमें नहीं है, बालकोंके अनुपयोगी बहुश्रेयसि इत्यादि शब्द, त्वे, द्वे इत्यादि अव्यय, कटे ह्व इत्यादि धातु लिखकर अनेक उपयोगी धातु तथा अव्यय छोड़ दिये गये हैं इन कारणोंसे वह भी मन्दमति लोगोंके उपयोगी नहीं है किन्तु जो कोई लघुकौमुदी पढ़ताभी है तो उसे व्याकरणका पूर्ण ज्ञान होनेके लिये सिद्धान्तकौमुदी पढ़ना पड़ता है और इस तरह अनन्य गतिसे लघुकौमुदी हुबारा पढ़नी पड़ती है। इस कारण मुझ मन्दमतिने अपने जैसे मन्दमति लोगोंके उपयोगके लिये, अपने अनुभवके अनुसार सिद्धान्तकौमुदीके लौकिक शब्दोंके प्रकरणके तीन खंड कर दिये हैं और इसका नाम सुगम-सिद्धान्तकौमुदी रक्खा है। इसमें बालबोधके लिये प्रथम सुगम फिर उत्तरोत्तर कठिन इस रीतिसे और इसी क्रमसे विषययोजना की है जिससे पढ़नेमें बालकोंको क्रम क्रमसे सिद्धान्तकौमुदीका पूरा पूरा ज्ञान हो जाय। इसके प्रथम खंडमें बहुत प्रसिद्ध समस्त शब्द, अव्यय और धातु हैं, लघुकौमुदीके समान प्रमाण होनेपर भी उसकी अपेक्षा चौगुने धातु हैं और जो शब्द अव्यय तथा धातु अप्रसिद्ध हैं उन्हें छोड़ दिया गया है। इतनेपर भी प्रथमखंडके दो भाग किये गये हैं। प्रथमखंडके

प्रथम भागमें बालाङ्ग उपयांगी सुगम आर सामान्य विषय है जिनसे उन्हें सिद्धान्तकोमुदी तथा अन्य शास्त्रोंमें प्रवेश करनेकी योग्यता होजाय । इस छोटेसे ग्रथमें सुगमतासे सन्धि, सुप्, तिङन्त, णिच्, सत्, यङ्, यङ्लुङ्, नामधातु भावरुमें, कृदन्त, कारक, समास, ताद्धित, स्त्रीप्रत्ययका सामान्य बोध होजाता है । प्रथम खंडके द्वितीय भागमें प्रथम भागके बचे बचाये प्राय समस्त साधि, सुबन्त अव्यय जो लोकप्रसिद्ध हैं और सब धातु हैं इसलिये मध्यकोमुदीके अध्ययनसे अधिक फल होता है । सामान्यतः प्रचारमें आनेवाले णिजन्तादि विषय जो प्रथम खंडमें नहीं लिखे गये उनका मध्यखंडमें उल्लेख है । इसमें समस्त बचेहए कारक, सारे बचे हुए कर्म समस्त सटीक परिभाषा, सर्वोत्तम सटीक लिङानुशासन लिखा गया है इसलिये मध्य खंडके अध्ययनसे प्राय पूरी पूरी व्युत्पत्ति होजाती है । व्युत्पत्तिके लिये तीसरे खंडकी अपेक्षा नहीं रहती है । प्रथम और द्वितीय खंडमें जो विषय शेष रह गये हैं जो अप्रसिद्ध हैं, जिनका प्रचार बहुत थोड़ा है वे तृतीयखंडमें हैं इसमें गौणादिशब्द, अप्रसिद्ध धातु णिजन्तसे बचे हुए उणादिक, सटीक गणपाठ, सर्वशेष फाटिकादि विषय तृतीय खंडमें दिये गये हैं । इसलिये जो केवल अन्य शास्त्रोंमें प्रवेश करनेके लिये व्याकरण पढ़ना चाहें वे प्रथमखंडका आद्य भाग अथवा समग्र प्रथमखंड पढ़ें । जो लोकप्रसिद्ध महाकाव्यादि सर्व प्रयोगोंकी व्युत्पत्ति करना चाहते हैं वे दोनोंखंड पढ़ें और जिनकी इच्छा सर्वलीकिक प्रयोगोंसाहित पूर्ण व्युत्पत्तिकी हो वे तीसरे खंडकाभी अभ्यास करें । यही इस सुगम सिद्धान्तकोमुदीका प्रयोजन है । श्रीकृष्ण दासजीके पुत्र सेठगंगाविष्णुजीके लक्ष्मीविकटेश्वर यशालयमें इसके ये दो खंड मुद्रित होके प्रस्तुत आपके हाथमेंही हैं, तृतीय खंड छप रहा है तृतीय खंड छपजाने पूर्व जो मूल्य देंगे उन्हें ३ रुपयेमें और छपजानेके अनन्तर ४ में मिलेगी । इति शुभम् ।

श्रीमान् बुद्धिनिवेशका आश्रित विद्वानोंका विकर
 'गंगासहायशर्मा'.

पुस्तके मिलनेका ठिकाना—

गङ्गाविष्णू श्रीकृष्णदास,

“ लक्ष्मीविकटेश्वर ” छापाखाना.

कल्याण-मुम्बई.

श्रीः ।

श्रीपरमेश्वराय नमः ॥

अथ सुगमकौमुदीप्रारम्भः ।

श्रीशन्नत्वा त्रिभिः खण्डैर्विभज्य सुगमाध्वना ॥

भट्टोजिकृतकौमुद्याः कुर्वे सुगमकौमुदीम् ॥ १ ॥

तत्रादौ प्रायोपयोगी बालार्हः प्रक्रियाक्रमः ॥

अतिसंक्षेपतः प्रोक्तः शेषो विस्तरतस्ततः ॥ २ ॥

अइउण् १ ऋलृक् २ एओङ् ३ ऐऔच् ४ हयवरट्

५ लण् ६ भमङणनम् ७ झभञ् ८ घढधप् ९ जवगड-

दज्ञ् १० खफछठथचटतव् ११ कपय् १२ शपसर् १३

हल् १४ ॥

एषामन्त्या इतः । हकारादिष्वकार उच्चारणार्थः । लण्मध्ये
त्वित्संज्ञकः ॥

हलन्त्यम् १ । ३ । ३ ॥

उपदेशेऽन्त्यं हलित् । उपदेश आद्योच्चारणम् ॥

आदिरन्त्येन सहेता १ । १ । ७१ ॥

अन्त्येनेता सहित आदिर्मध्यगानां स्वस्य च मंज्ञा । यथा अण्
इति अइऊनां संज्ञा । अच् इति अइउऋलृएओऐऔ एषां संज्ञा ।
अणादयः प्रत्याहारा उच्यन्ते । तेषु इतान्तु न ग्रहणम् यथा
अचि णकडानां न ग्रहणम् ॥

उकालोज्झस्वदीर्घप्लुतः १ । २ । २७ ॥

उ १ ऊ २ ङ ३ एषां काल इव कालो यस्य सोऽच् ऊमाद्दस्वदी-
र्घप्लुतसंज्ञः । यथा अ १ आ २ आ ३ इ १ ई २ ई ३ उ १ ऊ २
ऊ ३ ऋ १ ऋ २ ऋ ३ लृ १ लृ ३ अयं दीर्घो नास्ति ए २ ए ३

अर्था न न न भेदा यथासम्भवम् ।			अचाग्र्येक यथासम्भवमष्टादश भेदाः ।		
अ इ उ ऋ	ल	ए ओ ऐ औ	अ इ उ ऋ	लृ	ए औ ऐ औ
ह्रस्वोदात्ताः	ह्रस्वोदात्तः		ह्रस्वोदात्तानुनासिकः	ह्रस्वोदात्तानुनासिकः	
ह्रस्वानुदात्ताः	ह्रस्वानुदात्तः	एवा ह्रस्वा न सन्ति	ह्रस्वानुदात्तानुनासिकः	ह्रस्वानुदात्तानुनासिकः	एवा ह्रस्वा न सन्ति
ह्रस्वस्वरीताः	ह्रस्वस्वरितः		ह्रस्वस्वरीतानुनासिकः	ह्रस्वस्वरीतानुनासिकः	
दीर्घोदात्ताः		दीर्घोदात्ताः	दीर्घोदात्तानुनासिकः		दीर्घोदात्तानुनासिकाः
दीर्घानुदात्ताः	अयं दीर्घो नास्ति	दीर्घानुदात्ताः	दीर्घानुदात्तानुनासिकः	अयं दीर्घो नास्ति	दीर्घानुदात्तानुनासिकाः
दीर्घस्वरीताः		दीर्घस्वरीताः	दीर्घस्वरीतानुनासिकः		दीर्घस्वरीतानुनासिकाः
प्लुतोदात्ताः	प्लुतोदात्तः	प्लुतोदात्ताः	प्लुतोदात्तानुनासिकः	प्लुतोदात्तानुनासिकः	प्लुतोदात्तानुनासिकाः
प्लुतानुदात्ताः	प्लुतानुदात्तः	प्लुतानुदात्ताः	प्लुतानुदात्तानुनासिकः	प्लुतानुदात्तानुनासिकः	प्लुतानुदात्तानुनासिकाः
प्लुतस्वरीताः	प्लुतस्वरितः	प्लुतस्वरीताः	प्लुतस्वरीतानुनासिकः	प्लुतस्वरीतानुनासिकः	प्लुतस्वरीतानुनासिकाः

एचो ह्रस्वा न सन्ति ओ २ ओ ३ ऐ २ ऐ ३ औ २ औ ३ । एवं
ह्रस्वादिभेदाभिन्नोऽच् प्रत्येकमुदात्तादिभेदेन त्रिधा । एवं स नववि-
धोऽपि प्रत्येकमनुनासिकाननुनासिकत्वाभ्यान्दिधा । तथाहि ॥

उच्चैरुदात्तः १ । २ । २९ ॥

ताल्लादिषु सभागेषु स्यानेषूर्ध्वभागे निष्पन्नोऽनुदात्तसंज्ञः ॥

नीचैरनुदात्तः १ । २ । ३० ॥

समाहारः स्वरितः १ । २ । ३१ ॥

उदात्तानुदात्तत्वे वर्णधर्मो समाह्रियेते यस्मिन्सोऽच् स्वरितसंज्ञः ॥

मुखनासिकावचनोऽनुनासिकः १ । १ । ८ ॥

मुखसहितनासिकयोचार्यमाणो वर्णोऽनुनासिकसंज्ञः यथा
अँ आँ ईँ इँ इत्यादि-तदित्थम् । अइउऋ एपां वर्णानां प्रत्ये-
कमष्टादश भेदाः । लृवर्णस्य द्वादश तस्य दीर्घाभावात् । एचामपि
द्वादश तेषां ह्रस्वाभावात् ॥

इति १ अंशः ।

अथ वर्णानां स्थानप्रयत्नाः । अकुहविसर्जनीयानां कण्ठः ।
इचुयशानां तालु । ऋदुरपाणां मूर्द्धा । लृतुलसानां दन्ताः । उपू-
ष्मानीयानामोष्ठौ । अमडणनानां नासिका च । एदैतोः कण्ठतालु ।
ओदौतोः कण्ठोष्ठम् । वकारस्य दन्तोष्ठम् । जिह्वामूलीयस्य जिह्वा-
मूलम् । नासिकाऽनुस्वारस्य । यत्नो द्विधा । आभ्यन्तरो बाह्यश्च ।
आद्यः पञ्चधा । स्पृष्टेपत्स्पृष्टेपाद्विवृतविवृतसंवृतमेदात् । तत्र स्पृष्टं
प्रयतनं अयाम् । ईपत्स्पृष्टं यणाम् । ईपद्विवृतं शलाम् । विवृतम-
चाम् । ह्रस्वस्यावर्णस्य प्रयोगे संवृतम् । प्रक्रियादशायान्तु विवृतमेव ।
बाह्य एकाशधा श्वासाघोषविवारा नादघोषसंवारा उदात्तानुदा-
त्तस्वरिताः महाप्राणोऽल्पप्राणश्चेति । झमघडधाः हकारोऽनुस्वारश्च
नादघोषसंवारमहाप्राणाः । शरो विसर्ग ँ क ँ पौ खफछठयाश्च
श्वासाघोषविवारमहाप्राणाः । चयः श्वासाघोषविवाराल्पप्राणाः ।

(स्थानप्रयत्नचक्रम् ।)

वर्णः	स्थानानि	वर्णः	आभ्यन्तरप्रयत्नाः	वर्णः	बाह्यप्रयत्नः
अ	कण्ठः	अ	प्रयोगे सप्तमम् प्र- क्रियायां विहितम्	अआआ ३ ईईई ३ उऊऊ ३ ऋ३ ३ ऐऐ ३ ओओ ३ औ औ ३	नादघोषसंसारण- प्रमाणोदात्तानुदात्त- स्वरित्वाः
इ	कण्ठनासिकसिन्धु	आआ ३ ईईई ३ उऊऊ ३ ऋ३ ३ ३ ऐऐ ३ ओओ ३ औ औ ३	विहितम्	इसभयव्यञ्जानु- स्वारः	नादघोषसंसार- महाप्राणाः
ई	तालु	कलसगघञ् चञ्ज मन टडडङण सय दधन फफभम	- सुष्ठम्	खफ छडयदापस- निसर्ग २ रुटपा	श्वासाघोषविग्रा- रमहाप्राणाः
उ	तालुनासिकसिन्धु	यल	ईषसृष्टम्	चटतकप	श्वासाघोषविग्राह- रप्राणाः
ऊ	ओष्ठौ	रपसद	ईषद्विष्टम्	यलराधणनठ मजडदगय	नादघोषसंसार- रान्यप्राणाः
ऋ	वोष्ठनासिकसिन्धु				
ॠ	मूर्ध्ना				
ॡ	मूर्ध्नासिन्धु				
ए	दन्ता				
ऐ	दन्वनासिकसिन्धु				
ओ	कण्ठतालु				
औ	कण्ठाटम्				
अनुस्वारः	दन्तोष्ठम्				
अनुनासिकः	जिह्वामूलात्				
अनुस्वारः	नासिका				

यणो जमो जशश्च नादघोपसंवाराल्पप्राणाः । अचः श्वासाघोपवि-
वाराल्पप्राणोदात्तानुदात्तस्वरिताः । यमा वेदे एव प्रसिद्धाः ॥

तुल्यास्यप्रयत्नं सर्वर्णम् १ । १ । ९ ॥

ताल्वादिस्थानमाभ्यन्तरप्रयत्नश्चेत्येतद्वयं यस्य येन तुल्यं त-
न्मिथः सर्वर्णम् । यथा अ १ आ २ आ ३ एते, मिथः सर्वर्णाः ।
कत्वगघङ्क एते च ॥

ऋलृवर्णयोर्मिथः सावर्ण्यं वाच्यम् ॥ ❀ ॥

अणुदित्सर्वर्णस्य चाप्रत्ययः १ । १ । ६९ ॥

अविधीयमानोऽण् उदिच्च सर्वर्णस्य संज्ञा । अत्रैवाण् परेण
णकारेण । कुचुडुतुषु एते उदितः । तदेवम् अ इत्यष्टादशानां संज्ञा ।
तथा इकारोकारौ । ऋकारस्त्रिंशतः एवम्लकारोगपि । एचो द्वादशा-
नाम् । एदैतोरोदौतोश्च न मिथः सावर्ण्यम् । ऐऔचसूत्रारम्भसा-
मर्थ्यात् । अनुनासिकाननुनासिकभेदेन यवला द्विधा । तेनाननु-
नासिकास्ते द्वयोर्द्वयोः संज्ञाः ।

तपरस्तत्कालस्य १ । १ । ७० ॥

तः परो यस्मात्स च तात्परश्चोच्चार्यमाणः समकालस्यैव
संज्ञा । यथा ॥

अदेङ्गुणः १ । १ । २ ॥

अदेङ् च गुणसंज्ञः । अत्र-अत् इति तपरोऽकारः ह्रस्वानामेव
षण्णां सञ्ज्ञा एवन्तात्पर एङ् दीर्घाणामेव षण्णां षण्णां संज्ञा ॥

वृद्धिरादैच् १ । १ । १ ॥

आदैच् वृद्धिसंज्ञः ॥

परः सन्निकर्षः संहिता १ । ४ । १०९ ॥

वर्णानामतिशयितः सन्निधिः संहितासंज्ञः ॥

सुप्तिङन्तं पदम् १ । ४ । १४ ॥

सुवन्तं तिङन्तश्च पदसंज्ञम् ॥

स्थानेऽन्तरतमः १ । १ । ५० ॥

प्रसङ्गे सति सदृशतम आदेशः ॥

इति संज्ञाप्रकरणम् । इति २ अंशौ ।

इको यणचि ६ । १ । ७७ ॥

इकः स्थाने यण् स्यादचि संदितायां विषये । सुध्युपोऽस्यः ।
धादित्वादि वक्ष्यते । मध्वरिः धात्रंशः लाकृतिः ॥

एचोऽयवायावः ६ । १ । ७८ ॥

एचः क्रमादय अच् आच् आच् एते स्युरचि ॥

यथासंख्यमनुदेशः समानाम् १ । ३ । १० ॥

समसंबंधी विधिर्यथासंख्यम् । हरये । विष्णवे । नायकः ।
पावकः ॥

आह्वणः ६ । १ । ८७ ॥

अवर्णादाचि पूर्वपरयोरेको गुणादेशः । उपेन्द्रः । रमेशः ।
गङ्गोदकम् ॥

उपदेशेऽजनुनासिक इत् १ । ३ । २ ॥

उपदेशेऽनुनासिकोऽजित्संज्ञः । प्रतिज्ञानुनासिक्याः पाणिनी-
याः । लण्सूत्रस्थोऽकारोऽनुनासिकः प्रतिज्ञातः । तेन सद्वोचार्य-
माणो रेकः उरण् रपर इत्यत्र रलयोः संज्ञा ॥

उरण् रपरः १ । १ । ५१ ॥

ऋ इति त्रिगतः संज्ञेत्युक्तन्दत्स्थाने योऽण् स रपरः सन्नेव प्रव-
र्त्तते । तेन कृष्णार्द्धिस्त्पिपादावल् तवल्कार इत्पादावल् आन्तरत-
म्यात् । कृष्णार्द्धिः । दलोपादिकं वक्ष्यते । तवल्कारः ॥

वृद्धिरेचि ६ । १ । ८८ ॥

१ प्रक्रियारीतिप्रारम्भ एव बाला. पिप्प्रा मा भूयस्तिपालीच्यादी एवमर रूपं
लिखितम् । ततः प्रक्रियाभ्यासदायकं स्यात्तत्तामिषोद्गु शायनानि अयं लिखित्यते ।

आदेचि वृद्धिरेकादेशः । गुणापवादः । कृष्णैकत्वम् । गङ्गावः ।
देवैश्वर्यम् । कृष्णौत्कण्ठद्यम् ॥

अकः सवर्णे दीर्घः ६ । १ । १०१ ॥

अकः सवर्णेऽचि परे दीर्घ एकादेशः । देत्यादिः । रमात्र ।
श्रीशः । विष्णूदयः । होतृकारः ॥

एङः पदान्तादति ६ । १ । १०२ ॥

पदान्तादेङोऽति परे पूर्वरूपमेकादेशः । हरेश्च । विष्णोश्च ॥

अदर्शनं लोपः १ । १ । ६० ॥

प्रसक्तस्यादर्शनं लोपसंज्ञम् ॥

लोपः शाकल्यस्य ८ । ३ । १९ ॥

अवर्णपूर्वयोः पदान्तयोर्यवयोर्लोपो वाऽचि परे ।

पूर्वत्रासिद्धम् ८ । २ । १ ॥

सपादसप्ताध्यायीं प्रति त्रिपाद्यासिद्धा ।

त्रिपाद्यामपि पूर्वं प्रति परं शास्त्रमसिद्धम् । इति लोपस्यासिद्ध-
त्वान्न सन्धिः । हर इह । हरयिह । विष्ण इह । विष्णविह । श्रिया
पपः । श्रियायेपः । गुरा अयम् । गुरावयम् ॥

इति ३ अंशाः ।

पुतप्रगृह्या अचि नित्यम् ६ । १ । १२५ ॥

पुताः प्रगृह्याश्चाचि नित्यं प्रकृत्या ॥

अचोऽन्त्यादि टि १ । १ । ६४ ॥

अचाम्मध्ये योऽन्त्यः स आदिर्यस्य तट्टिसंज्ञम् ॥

दूराद्धूते च ८ । २ । ८४ ॥

दूरात्संबोधने यद्वाक्यं तस्य टेः पुतः । एहि कृष्णा ३ अत्र
गीश्वरति ॥

ईदृदेद्विवचनं प्रगृह्यम् १ । १ । ११ ॥

ईदूदेदन्तं द्विवचनं प्रगृह्यसंज्ञम् । हरी एतौ । विष्णू इमौ । गङ्गे
अमू । पचेते इमौ ॥

अदसो मात् १ । १ । १२ ॥

१ । अस्मात्परावीदृतौ प्रगृह्यौ । अमी ईशाः । अमू आसाते ॥

चादयोऽसत्वे १ । ४ । ५७ ॥

अद्रव्यार्थाश्चादयो निपातसंज्ञाः ॥

१० ओत् १ । १ । १५ ॥

आदन्तो निपातः प्रगृह्यः । अहो ईशाः ॥

स्तोः शुनाशुः ८ । ४ । ४० ॥

सकारतवर्गयोः शकारचवर्गाभ्यां योगे शकारचवर्गौ स्तः ।
हरिश्शेते । रामश्चिनोति । सच्चित् । शार्ङ्गिजय ॥

शात् ८ । ४ । ४४ ॥

शात्परस्य तोश्चुर्न । मश्रः । अश्राति ॥

घुना घुः ८ । ४ । ४१ ॥

स्तोः घुना योगे घुः । रामण्यघुः । रामघीकते । पेष्टा । तट्टीका ।
चक्रिण्डौकते ॥

न पदान्ताद्वोरनाम् ८ । ४ । ४२ ॥

पदान्ताद्वोरनामः स्तोः घुर्न । पट्सन्तः । पट्ट ते । नेह । पण्णाम् ॥

अनाम्रवतिनगरीणामिति वाच्यम् ॥ ❀ ॥

पण्णवतिः पण्णगर्यः ॥

तोः पि ८ । ४ । ४३ ॥

तवर्गस्य पकारे परे न पुत्वम् । सन्पष्ठः ॥

झलाञ्जशोऽन्ते ८ । २ । ३९ ॥

पदान्ते झलां जशः । वागीशः ॥

यरोऽनुनासिकेऽनुनासिको वा ८ । ४ । ४५ ॥

यरः पदान्तस्यानुनासिके परेऽनुनासिको वा । एतन्मुरारिः ।
एतदुमुरारिः । स्पर्शस्यैव । नेह चतुर्मुखः ॥

प्रत्यये भाषायां नित्यम् ॥ ❀ ॥

चिन्मयम् ॥

तोर्लि ८ । ४ । ६० ॥

तवर्गस्य लकारे पौ परसवर्णः । तल्लयः । विद्वल्लिखति ।
नकारस्यानुनासिको लकारः ॥

खरि च ८ । ४ । ५५ ॥

खरि शलाञ्चरः । तत्पुत्रः । पट्पदः । ककुप्पदेशः ॥

झयो होऽन्यतरस्याम् ८ । ४ । ६२ ॥

पदान्ताज्झयः परस्य हस्य वा पूर्वसवर्णः । घोपस्य महाप्राणस्य
हस्य तादृशो वर्गचतुर्थ एव । वाग्घरिः । वाग्हरिः । तद्धविः ।
तद्दहविः ॥

इति ४ अंशाः ।

शश्छोटि ८ । ४ । ६३ ॥

पदान्ताज्झयः परस्य शस्य छौ वाऽटि दस्य जत्वे चत्वंम् । त-
च्छिवः । तच्छशिवः ॥

छत्वममीति वाच्यम् ॥ ❀ ॥

तच्छ्लोकेन । तच्छ्लोकेन ॥

मोऽनुस्वारः ८ । ३ । २३ ॥

मान्तस्य पदस्यानुस्वारो हलि ॥

अलोऽन्त्यस्य १ । १ । ५२ ॥

पृष्ठीनिर्दिष्टान्त्यस्यादेशः । हरिं वन्दे ॥

अनुस्वारस्य ययि परसवर्णः ८ । ४ । ५८ ॥

अङ्कितः । अश्रितः । कुण्ठितः । शान्तः । शुम्भितः ॥

वा पदान्तस्य ८ । ४ । ५८ ॥

पदान्तस्यानुस्वारस्य ययि परसवर्णा वा । त्वङ्करोषि त्वं करोषि ।
सय्यन्ता । संयन्ता । संव्यत्सर संवत्सरः । यल्लोकम् । यं लोकम् ॥

आद्यन्तौ टकितौ १ । १ । ४६ ॥

टित्कितौ यस्योक्तौ तस्य क्रमादाद्यन्तावयवौ स्तः ॥

ङमो ह्रस्वादचि ङमुण्णित्यम् ८ । ३ । ३२ ॥

ह्रस्वात्परो यो ङम् तदन्तं यत्पदं ततः परस्याचो नित्यं ङमुट्
आगमः । उकारोऽनुनासिकत्वादित् । इत्संज्ञालोपौ च सूत्रप्रवृ-
त्तिकाले एव प्रयोगाद्ग्रहिरेव भवत ॥

सस्य लोपः १ । ३ । ९ ॥

तस्येतो लोपः । प्रत्यङ्ङात्मा । सुगणीशः । सन्नच्युतः ॥

अत्रानुनासिकः पूर्वस्य तु वा ८ । ३ । २ ॥

अत्र रुप्रकरणे रोः पूर्वस्यानुनासिको वा ॥

अनुनासिकात्परोऽनुस्वारः ८ । ३ । ४ ॥

अनुनासिकं विहाय रोः पूर्वस्मात्परोऽनुस्वारागमः ॥

विरामोऽवसानम् १ । ४ । ११० ॥

वर्णानामभावोऽवसानसञ्ज्ञः ॥

खरवसानयोर्विसर्जनीयः ८ । ३ । १५ ॥

खरि अवसाने च रेफस्य विसर्गः पदान्ते ॥

नञ्छव्यप्रशान् ८ । ३ । ७ ॥

अम्परे छवि नान्तस्य पदस्य रुः नञ् प्रशान्शब्दस्य ॥

विसर्जनीयस्य सः ८ । ३ । ३४ ॥

खरि । चर्कित्वायस्व । राज्ञश्चित्रम् ।

इति ५ अंशाः ।

छे च ६ । १ । ७३ ॥

ह्रस्वस्य छे परे तुक् संहितायाम् । गच्छति । स्वच्छा । जश्त्वं
चुत्वञ्चत्वम् । शिवच्छाया ॥

दीर्घात् ६ । १ । ७५ ॥

दीर्घस्य छे तुक् । चेच्छियते ॥

पदान्ताद्वा ६ । १ । ७६ ॥

दीर्घस्य पदान्तस्य छे तुक्वा । लक्ष्मीच्छाया । लक्ष्मीछाया ॥

अचो रहाभ्यां द्वे ८ । ४ । ४६ ॥

अचः पराभ्यां रेफहकाराभ्यां परस्य यरो द्वे वा । हर्यनुभावः ।
हर्यनुभावः । नह्यस्ति । नह्यस्ति ॥

अनचि च ८ । ४ । ४७ ॥

अचः परस्य यरो द्वे वा न त्वचि । धात्रंशः । धात्रंशः ॥

झलां जश् झशि ८ । ४ । ५३ ॥

इति धस्य दः ॥

ह्रलोऽनन्तराः संयोगः १ । १ । ७ ॥

अजिभरव्यवहिता हलः संयोगसञ्ज्ञाः ॥

संयोगान्तस्य लोपः ८ । २ । २३ ॥

संयोगान्तं यत्पदं तदन्तस्य लोपः । इति प्राप्ते ॥

यणः प्रतिपेधो वाच्यः ॥ ❀ ॥

सुद्धचुपास्यः । सुध्युपास्यः ॥

झरो झरि सवर्णे ८ । ४ । ६५ ॥

हलः परस्य झरो लोपो वा सवर्णे झरि । कृष्णार्द्धः । कृष्णार्द्धः ।
विसर्जनीयस्य सः । विष्णुस्त्राता ॥

वा झरि ८ । ३ । ३६ ॥

शरि विसर्गस्य विसर्गं एव वा । हरिः शेते । हरिश्शेते ॥

कुप्वो ँ क ँ पौ च ८ । ३ । ३७ ॥

‘ कवर्गे पवर्गे च परे क्रमाद्विसर्गस्य जिह्वामूलीयोपध्मानीयौ विसर्गश्च । सत्त्वापवादः । हरि ँ करोति । हरिः करोति । हरि ँ पाति । हरिः पाति ॥

अलोऽन्त्यात्पूर्व उपधा १ । १ । ६५ ॥

अन्त्यादलः पूर्वो वर्ण उपधासंज्ञः ॥

इदुदुपधस्य चाप्रत्ययस्य ८ । ३ । ४१ ॥

इकारोकारोपधस्याप्रत्ययस्य विसर्गस्य षः कुप्वोः । निष्प्रत्युहम् । आविष्कृतम् । दुष्कृतम् ॥

ससजुपो रुः ८ । २ । ६६ ॥

पदान्तस्य सस्य सजुषश्च रुः । जश्त्वापवादः । हरिर्वन्धः ॥

अतो रोरुतादुते ६ । १ । ११३ ॥

अप्लुतादतः परस्य रोरुः स्यादुतेऽति । भो मगो इति यत्वापवादः । शिवोऽर्च्यः । रोः किम् । प्रातरत्र ॥

हशि च ६ । १ । ११४ ॥

अप्लुतादतः परस्य रोरुर्हशि । शिवो बन्धः । रोः किम् । धातर्गच्छ ॥

भोभगोअघोअपूर्वस्य योऽशि ८ । ३ । १७ ॥

एतत्पूर्वस्य रोर्यादेशः आशि । देवा इह देवायिह ॥

हलि सर्वेषाम् ८ । ३ । २२ ॥

भोभगोअघोअपूर्वस्य यस्य लोपो हलि । भो देवाः । भगो नमस्ते । अघो याहि । देवा नम्याः ॥

रो रि ८ । ३ । १४ ॥

रेफस्य रेफे परे लोपः ॥

द्रलोपे पूर्वस्य दीर्घोऽणः ६ । ३ । १११ ॥

ढकारेफलोपनिमित्ते ढकारेफात्मके वर्णे परे पूर्वस्याणो दीर्घः ।
पुना रमते । हरी रम्यः । मनस रथ । इत्यत्र रुत्वे कृते हशि चे-
त्युत्वे रोरीति लोपे प्राप्ते रोरीत्यस्यासिद्धत्वादुत्वमेव । मनोरथः ।

एतत्तदोः सुलोपोऽकोरनञ्समासे हलि ६।१।१३२॥

अककारयोरेतत्तदोर्यः सुस्तस्य लोपो हलि नतु नञ्समासे ।
एष विष्णुः । स शम्भुः ॥

इति संधयः । इति ६ अंशाः ।

पुंस्ति' रामो हरिः सुश्रीः प्रधीः शम्भुः स्वभूः पिता ॥ धाताऽय-
राजयज्वानौ दण्डी धीमान् मरुत् पचन् ॥ १ ॥ ददद्विद्वान् सेदि-
वांश्च वेधा अष्टादशोदिताः ॥

अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम् १ । २ । ४६ ॥

धातुं प्रत्ययं प्रत्ययान्तश्च वर्जयित्वाऽर्थवच्छब्दरूपं प्रातिपदिक-
संज्ञम् ॥

कृतद्धितसमासाश्च १ । २ । ४६ ॥

कृतद्धितान्तौ समासश्च प्रातिपदिकसंज्ञाः । अत्रावयवार्थो
व्युत्पत्तिस्तद्रहिता डित्यादयः शब्दा अव्युत्पन्नाः तेषामर्थवत्सूत्रेण
प्रातिपदिकसंज्ञा व्युत्पत्तिमन्तो रक्षितृदागरथिराजपुरुषादयः
रक्षणकर्त्ता दशरथापत्यं राजसम्बन्धी पुरुष इत्येषामवयवार्थास्तेषां
कृतद्धितेत्यनेन संज्ञा रामशब्दे च मृगाविशेषादावव्युत्पत्तिपक्षस्त-
त्रार्थवत्सूत्रेण संज्ञा । रमन्ते योगिनोऽत्रेति श्रीरामे व्युत्पत्तिपक्षस्तत्र
कृतद्धितेत्यनेन संज्ञा एवमग्रेऽपि यथायोग्यम् ।

स्वौजसमौद्ब्रष्टाभ्यांभिस्ङेभ्यांभ्यस्ङसिभ्यां-
भ्यस्ङसोसाम्ङ्योस्सुप् ४ । १ । २ ॥

ङ्यन्तादावन्तात्प्रातिपदिकाच्च परे स्वादयः प्रत्ययाः सु औ

१ अत्राजन्ता इलन्ताश्च पुलिन्ताः शब्दाः क्रमेणैकत्र न्यन्ताः व्युत्पत्तिनेन
संज्ञेयस्य निष्फलत्वात् । एवं स्वीकृतवयोग्यम् ॥

जस् प्रथमा । अम् औट् शस् द्वितीया । टा भ्याम् भिस् तृतीया ।
 डे भ्यां भ्यस् चतुर्थी । डसि भ्यां भ्यस् पञ्चमी । डस् ओस्
 आम् षष्ठी । डि ओस् सुप् सप्तमी । इति प्राचां संज्ञाः ॥

चुट् १ । ३ । ७ ॥

प्रत्ययाद्यौ चुट् इतौ ॥

लशक्तद्धिते १ । ३ । ८ ॥

तद्धितवर्जप्रत्ययाद्या लशकवर्गा इतः ॥

न विभक्तौ तुस्माः १ । ३ । ४ ॥

विभक्तिस्थास्तवर्गसकारमकारा इतो न ॥

विभक्तिश्च १ । ४ । १०४ ॥

मुप्तिडौ विभक्तिसंज्ञौ ॥

सुपः १ । ४ । १०३ ॥

सुपः श्रीणि श्रीणे वचनानि प्रत्येकमेकवचनद्विवचनबहुवच-
 नसंज्ञानि ॥

व्येकयोर्द्विवचनैकवचने १ । ४ । २२ ॥

द्वित्वैकत्वयोरेते स्तः ॥

बहुषु बहुवचनम् १ । ४ । २१ ॥

बहुत्वे एतत्स्यात् । रुत्वविसर्गौ । रामः ॥

सरूपाणामेकशेष एकविभक्तौ १ । २ । ६४ ॥

एकविभक्तौ यानि सरूपाण्येव दृष्टानि तेषामेक एव शिष्यते ।
 एकशेषश्चायमनैमित्तिकत्वेऽन्तरङ्गत्वादिमत्तयुत्पत्तेः पूर्वमेवेति ॥

प्रथमयोः पूर्वसवर्णः ६ । १ । १०२ ॥

अकः प्रथमाद्वितीययोराचि पूर्वसवर्णदीर्घ एकादेशः ॥

नादिचि ६ । १ । १०४ ॥

अवर्णादिचि न पूर्वसवर्णदीर्घः । रामौ ॥

अतो गुणे ६ । १ । ९७ ॥

अपदान्तादतो गुणे पररूपमेकादेशः । इति 'पररूपे प्राप्ते पर-
च्चात्पूर्वसवर्णदीर्घः । रामाः ॥

एकवचनं संबुद्धिः २ । ३ । ४९ ॥

संबोधने प्रथमाया एकवचनं संबुद्धिसंज्ञम् ॥

यस्मात्प्रत्ययविधिस्तदादिप्रत्ययेऽङ्गम् १ । ४ । १३ ॥

यः प्रत्ययो यस्मात् क्रियते तदादि शब्दरूपं तस्मिन् प्रत्यये
परेऽङ्गसंज्ञम् ॥

एङ्ह्रस्वात्संबुद्धेः ६ । १ । ६९ ॥

एङन्ताद्भ्रस्वान्ताद्याङ्गाद्भ्रष्टुप्यते संबुद्धेश्चेत् । हे राम हे रामी ।
हे रामाः ॥

अमि पूर्वः ६ । १ । १०७ ॥

अकोऽभ्याचि पूर्वरूपमेकादेशः । रामम् । रामी ॥

इति ७ अंशाः ।

तस्माच्छसो नः पुंसि ६ । १ । १०३ ॥

पूर्वसवर्णदीर्घात्परो यः शसः सस्तस्य नः पुंसि ॥

अट्रकुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि ८ । ४ । २ ॥

अट्रकवर्गपवर्गआङ्नुम् एतैर्व्यस्तैर्यथासम्भवं मिलितैश्च व्यव-
धानेऽपि रपाभ्यां परस्य नस्य णः समानपदे । इति प्राप्ते ॥

पदान्तस्य ८ । ४ । ३७ ॥

पदान्तस्य नस्य णो न । रामान् ॥

टाङ्सिङ्सामिनात्स्याः ७ । १ । १२ ॥

अदन्तादङ्गाद्यदीनामिनादयः । रामेण ॥

सुपि च ७ । ३ । १०२ ॥

यनादी सुप्यतोऽङ्गस्य दीर्घः । रामाभ्याम् ॥

अतो भिस ऐस् ७ । १ । ९ ॥

अदन्तादङ्गादिस ऐस् ॥

अनेकाल्शित्सर्वस्य १ । १ । ५५ ॥

अलोऽन्त्यस्येत्यस्यापवादः । रामैः ॥

डेर्यः ७ । १ । १३ ॥

अतोऽङ्गात्परस्य डे इत्यस्य यः ॥

स्थानिवदादेशोऽनल्विधौ १ । १ । ५६ ॥

आदेशः स्थानिवत्स्यान्न तु स्थान्यलाश्रयविधौ तेन डेर्यस्य
सुप्त्वात्सुपि चेति दीर्घः । रामाय । रामाभ्याम् ॥

बहुवचने झल्येत् ७ । ३ । १०३ ॥

शलादौ बहुवचने सुप्यतोऽङ्गस्यैकारः । रामेभ्यः । जश्वं बाधित्वा ॥

वावसाने ८ । ४ । ५६ ॥

अवसाने शलाञ्जरो वा । रामात् । पक्षे जश्त्वम् । रामाद् । रामा-
भ्याम् । रामेभ्यः । रामस्य ॥

ओसि च ७ । ३ । १०४ ॥

ओसि परेऽतोऽङ्गस्य एकारः । रामयोः ॥

ह्रस्वनद्यापो नुद् ७ । १ । ५४ ॥

ह्रस्वान्तान्नघन्तादायन्ताद्याङ्गात्परस्यामो नुद् ॥

नामि ६ । ४ । ३ ॥

अजन्ताङ्गस्य दीर्घः । रामाणाम् । रामे । रामयोः ॥

आदेशप्रत्यययोः ८ । ३ । ५९ ॥

इण्डुभ्यां परस्यापदान्तस्यादेशः प्रत्ययावयवश्च यः सस्तस्य
मूर्धन्यः । रामेषु । एवं कृष्णादयोऽप्यदन्ताः ॥

जसि च ७ । ३ । १०९ ॥

ह्रस्वान्तस्याङ्गस्य गुणः । इति । इगि । इत्यः ॥

ह्रस्वस्य गुणः ७ । ३ । १०८ ॥

संबुद्धौ । हे हरे ॥

शोपो घ्यसखि १ । ४ । ७ ॥

अनदीसंज्ञौ ह्रस्वौ याविद्वौ तदन्तं सखिवर्जं घिसंज्ञम् ॥

आडो नाऽस्त्रियाम् ७ । ३ । १२० ॥

घेः परस्याडो ना स्यादस्त्रियाम् । हरिणा ॥

घेडिति ७ । ३ । १११ ॥

घिसंज्ञकस्य डिति सुपि गुणः । हरये ॥

डसिङ्सोश्च ६ । १ । ११० ॥

एङी डसिङ्सोरति पूर्वरूपमेकादेशः । हरेः ॥

अञ्च घेः ७ । ३ । ११९ ॥

इदुद्भ्यां परस्य डेरीत् घेरन्तादेशश्चाकारः । हरी । एवं कव्या-
दयः ॥

भूवादयो धातवः १ । ३ । १ ॥

क्रियावाचिनो भ्वादयो धातुसंज्ञाः ॥

अचि श्नुधातुभ्रुवां योरियडुवडौ ६ । ४ । ७७ ॥

श्रुप्रत्ययान्तस्य इवर्णोवर्णान्तस्य धातोर्भू इत्येतस्य चाङ्गस्ये-
यहुवडावजादौ प्रत्यये ॥

डिञ्च १ । १ । ५३ ॥

डिःदनेकालप्यन्त्यस्यादेशः । सुश्रीः । सुश्रियो ॥ एवं यवक्रीप्र-
भृतयः ॥

एरनेकाचोऽसंयोगपूर्वस्य ६ । ४ । ८२ ॥

धात्ववयवसंयोगपूर्वो न भवति य इवर्णस्तदन्तो यो धातुस्तद-
न्तस्याऽनेकाचोऽङ्गस्य यणजादौ प्रत्यये । प्रधीः । प्रध्यौ । प्रध्यः ।
शम्भुर्हरिवत् । एवं भान्वादयः । स्वभूः । स्वभुवौ ॥

सुडनपुंसकस्य १ । १ । ४३ ॥

स्वादिपञ्चवनानि सर्वनामस्थानसंज्ञानि स्युरङ्गीबस्य ॥

ऋतो ङिसर्वनामस्थानयोः ७ । ३ । ११० ॥

गुणः । इति प्राप्ते ॥

ऋदुशनस्पुरुदंसोनेहसां च ७ । १ । ९४ ॥

ऋदन्तानामुशनसादीनाञ्च अनङसंबुद्धौ सौ ॥

सर्वनामस्थाने चासंबुद्धौ ६ । ४ । ८ ॥

नान्तस्थोपधाया दीर्घः असंबुद्धौ सर्वनामस्थाने ॥

अपृक्त एकाल् प्रत्ययः १ । २ । ४१ ॥

हल्ङ्याभ्यो दीर्घात्सुतिस्यपृक्तं हल् ६ । १ । ६८ ॥

हलन्तादीर्घो यौ ङ्यापौ तदन्ताच्च परं सुतिसीत्येतदपृक्तं हल्-
प्यते ॥

प्रत्ययलोपे प्रत्ययलक्षणम् १ । १ । ६२ ॥

प्रत्यये लुप्तेऽपि तदाश्रितं कार्यं स्यात् ।

नलोपः प्रातिपदिकान्तस्य ८ । २ । ७ ॥

प्रातिपदिकसंज्ञकं यत्पदन्तदन्तस्य नस्य लोपः । पिता ।
पितरौ ॥

ऋत उत् ६ । १ । १११ ॥

ऋदन्तादङ्गात् ङसिङसोरिति उदेकादेशः । रपरत्वम् ॥

रात्सस्य ८ । २ । २४ ॥

रात्संयोगान्तस्य सस्यैव लोपो नान्यस्य । पितुः ॥

ऋवर्णात्रस्य णत्वं वाच्यम् ॐ ॥

पितृणाम् । ण्वं भ्रात्रादयः ॥

अपृत्तृत्तृचस्वसृनपृत्तेष्टृत्वष्टृक्षृत्तृहोत्पोत्प्रशास्तृ-

णाम् ६ । ४ । ११ ॥

अवादीनामुपधाया दीर्घोऽसंबुद्धौ सर्वनामस्थाने । धाता ।
धातारो इत्यादि । शेषं पितृवत् । गजा । राजानो ॥

स्वादिष्वसर्वनामस्थाने १ । ४ । १७ ॥

कप्प्रत्ययावधिषु स्वादिष्वसर्वनामस्थानेषु पूर्व पदसंज्ञम् ॥

यचि भम् १ । ४ । १८ ॥

यकारादिष्वजादिषु च कप्प्रत्ययावधिषु स्वादिष्वसर्वनामस्था-
नेषु पूर्व भसंज्ञम् ॥

आकडारादेका संज्ञा १ । ४ । १ ॥

इत ऊर्ध्वं कडाराः कर्मधारय इत्यतः प्रागेकस्यैवैव संज्ञा । या
पराऽनवकाशा च । तेन शसादावचि भसंज्ञा नतु पदसंज्ञा ॥
इति ९ अंशाः ।

न ङिसम्बुद्ध्योः ८ । २ । ८ ॥

नस्य लोपो न ङौ संबुद्धौ च । हे राजन् ॥

अलोपोऽनः ६ । ४ । १३४ ॥

अङ्गावयवोऽसर्वस्थानयजादिस्वादिपरो योऽन् तस्याकारस्य
लोपः । जवोर्ज्ञः । राज्ञः । राज्ञा । पदत्वान्नलोपः । राजभ्याम् ॥

नलोपः सुप्स्वरसंज्ञातुग्विधिषु कृति ८ । २ । २ ॥

सुवादिविधौ कृति तुग्विधौ च नलोपोऽसिद्धो नान्यत्र राजाश्वः ॥

विभाषा ङिङ्योः ६ । ४ । १३६ ॥

अङ्गावयवोऽसर्वनामस्थानयजादिस्वादिपरो योऽन् तस्याकारस्य
लोपो वा ङिङ्योः । राज्ञि । राजनि । गजसु । यज्वा ॥

न संयोगाद्धमन्तात् ६ । ४ । १३७ ॥

वकारमकारान्तसंयोगात्परस्यानोष्कारलोपो न । यज्वनः । ज-
क्षणः ॥

इन्इन्पूर्पार्य्यम्णां शौ ६ । ४ । १२ ॥

१ एषां शब्वोपधाया दीर्घो नान्यत्र ॥

सौ च ६ । ४ । १३ ॥

इनादीनामुपधाया दीर्घः असंबुद्धौ सौ । दण्डी दण्डिनौ ॥

अत्वसंतस्य चाधातोः ६ । ४ । १४ ॥

अत्वन्तस्य धातुभिन्नासन्तस्य च उपधाया दीर्घोऽसंबुद्धौ सौ ॥

उगिद्चां सर्वनामस्थानेऽधातोः ७ । १ । ७० ॥

अधातोरुगितो नलोपिनोऽश्वतेश्च नुम् सर्वनामस्थाने ॥

मिद्चोऽन्त्यात्परः १ । १ । ४७ ॥

अचाम्मध्ये योऽन्त्यस्तस्मात्परस्तस्यैवान्त्यावयवो मित्स्यात् ॥

संयोगान्तस्य लोपः

धीमान् । धीमन्तौ । हे धीमन् । धीमतः इत्यादि । मरुत् । मरुतौ । पचन् । पचन्तौ । एवं शत्रन्तमवच्छब्दस्य भवन् । सन् ॥

उभे अभ्यस्तम् ६ । १ । ५ ॥

पाष्ठद्वित्वप्रकरणे ये द्वे विहिते ते उभे समुदिते अभ्यस्तसंज्ञे ॥

नाभ्यस्ताच्छतुः ७ । १ । ७८ ॥

अभ्यस्तात्परस्य शतृर्बुध्न । ददत् । ददतौ ॥

सान्तमहतः संयोगस्य ६ । ४ । १० ॥

सान्तसंयोगस्य महतश्च यो नकारस्तस्योपधाया दीर्घोऽसंबुद्धौ सर्वनामस्थाने । विद्वान् ॥

नश्चापदान्तस्य झलि ८ । ३ । २४ ॥

नस्य मस्य चापदान्तस्य झल्यनुस्वारः । विद्वांसौ ॥

वसोः संप्रसारणम् ६ । ४ । १३१ ॥

वस्वन्तस्य मस्य संप्रसारणम् ॥

इग्यणः संप्रसारणम् १ । १ । ४५ ॥

यणः स्थाने प्रयुज्यमानो य इक् स संप्रसारणसंज्ञः ॥

संप्रसारणाच्च ६ । १ । १०८ ॥

संप्रसारणादचि पूर्वरूपमेकादेशः । त्रिदुपः ॥

वसुस्रंसुध्वंस्वनडुहां दः ८ । २ । ७२ ॥

सान्तवस्वन्तस्य संसादेश्च दः पदान्ते । विद्वद्भ्याम् । निपेदि-
वान् ॥

अकृतव्यूहाः पाणिनीयाः ॥

निमित्तं विनाशोन्मुखं दृष्ट्वा तत्प्रयुक्तं कार्यं न कुर्वन्तीत्यर्थः । तेन
बलादित्वं नाशोन्मुखं दृष्ट्वा इदमेव न कुर्वन्ति । निपेदुपः । निपेदि-
वद्भ्याम् । वेधाः । हे वेधः । वेधोभ्याम् ॥

इति पुलिङ्गाः ॥

इति १० अंगाः इति प्रथमाध्यायस्य प्रथमः पादः ।

स्त्रिया रमा मतिर्गौरी श्रीर्धेनुर्भूचमृद्युधः ॥ शरदाक् च सरि-
त्रावृडिति द्वादश कीर्तिताः ॥

अजाद्यतष्टाप् ४ । १ । ४ ॥

अजादीनामदन्तस्य च वाच्यं यत् स्त्रीत्वं तत्र द्योत्ये टाप् ।
अजा । रमा ॥

पिद्गौरादिभ्यश्च ४ । १ । ४१ ॥

पिद्भ्यो गौरादिभ्यश्च स्त्रिया ङीप् ॥

यस्येति च ६ । ४ । १४८ ॥

मस्येवर्णावर्णयोर्लापस्तद्धिते ईति च । नर्त्तकी । गौरी इत्यादि ।
रमा ॥

औङ आपः ७ । १ । १८ ॥

आवन्तादङ्गात्परस्याङ् शी । ग्मे । रमा ॥

संबुद्धौ च ७ । ३ । १०६ ॥

आप एकारः संबुद्धौ । हे रमे ॥

आडि चापः ७ । ३ । १०५ ॥

आडचोसि चावन्ताङ्गस्य एकारः । रमया ॥

याडापः ७ । ३ । ११३ ॥

आपः परस्य डिद्वचनस्य याडागमः । रमायै । रमायाः २ ।
रमाणाम् ॥

डेराग्नद्याग्नीभ्यः ७ । ३ । ११६ ॥

नद्यन्तादावन्ताग्नीशब्दाच्च डेराम् । रमायाम् । एवं दुर्गादयः ।
मतीः । मत्या ॥

डिति ह्रस्वश्च १ । ४ । ६ ॥

इयडुवड्स्थानौ स्त्रीशब्दभिन्नौ नित्यस्त्रीलिङ्गावीकृतौ ह्रस्वौ च-
र्णौवर्णौ स्त्रिया वा नदीसंज्ञौ डिति ॥

आण् नद्याः ७ । ३ । ११२ ॥

नद्यन्तात्परेषां डितामाद् ॥

आटश्च ६ । १ । ९० ॥

आटोऽचि वृद्धिरेकादेशः । मत्ये । मतये । मत्याः । मतेः ।
नदीत्वे औदिति डेरौत्वे प्राप्ते ॥

इदुड्याम् ७ । ३ । ११७ ॥

नदीसंज्ञकाभ्यामिदुड्भ्या डेराम् पक्षेऽच घेः । मत्याम् । मतौ ।
शेषं हरिवत् । एवं बुद्ध्यादयः । गौरी ॥

दीर्घाजसि च ६ । १ । १०५ ॥

दीर्घाजसि इचि च न पूर्वसवर्णदीर्घः । गौर्यो ॥

यू ह्याख्यौ नदी १ । ४ । ३ ॥

इदृदन्तौ नित्यस्त्रीलिङ्गौ नदीसंज्ञौ ॥

अम्बार्थनद्योर्ह्रस्वः ७ । ३ । १०७ ॥

अम्बार्थाना नद्यन्ताना च ह्रस्वः संबुद्धौ । हे गौरि । गौर्याः ।
एवं नद्यादयः । श्रीः । त्रियो ॥

नेयडुवड्स्थानावस्त्री १ । ४ । ४ ॥

इयडुवडोः स्थितिर्योस्तावीदूतौ नदीसंज्ञौ न स्तः । स्त्रीशब्द-
स्तु स्यात् । हे श्रीः । श्रिये । श्रिये ॥

वामि १ । ४ । ५ ॥

इयडुवड्स्थानौ स्याख्यौ ईदूतौ आमि वा नदीसंज्ञौ स्त्री तु नि-
त्यम् । श्रीणाम् । श्रियाम् । धेनुर्मतिवत् । भूः श्रीवत् । चमूः ।
चम्बे । युत् । युद् । युधौ । युधः । शरत् । शरद् । शरदौ ॥

चोः कुः ८ । २ । ३० ॥

शालि पदान्ते च । वाक् । वाग् । वाची । सरित् । सरिद् ।
सरितौ । प्रावृद् । प्रावृद् । प्रावृपौ ॥

इति स्त्रीलिङ्गाः ॥ इति ११ अंशाः ।

स्त्रीवे ज्ञानं वारि मधु नाम ब्रह्म च दण्डि च ॥ जगत्तुदत्पचक्षुः
पय एकादशोदिताः ॥ १ ॥

अतोऽम् ७ । १ । २४ ॥

अतोऽङ्गात् स्त्रीवात्स्वमोरम् । ज्ञानम् ॥

नपुंसकाच्च १७ । १ । १९ ॥

स्त्रीवात् परस्य औडः शी । यस्येति लोपे प्राप्ते ॥

औडः श्यां प्रतिषेधः ॥

ज्ञाने ॥

जशशसोः शिः ७ । १ । २० ॥

स्त्रीवादनयोः शिः ॥

शि सर्वनामस्थानम् १ । १ । ४१ ॥

नपुंसकस्य झलचः ७ । १ । ७२ ॥

झलन्तस्याजन्तस्य च स्त्रीवस्य नुम् सर्वनामस्थाने । ज्ञानानि ।
पुनस्तद्वत् । शेषं रामवत् । एवं फलादयः ॥

प्रत्ययस्य लृक्लुलुपः १ । १ । ६१ ॥

एतैः शब्दैः कृतं प्रत्ययादर्शनं क्रमादेतत्संज्ञम् ॥

स्वमोर्नपुंसकात् ७ । १ । २३ ॥

ह्रीवाद्भात्स्वमोर्लृक् । वारि ॥

इकोऽचि विभक्तौ ७ । १ । १३ ॥

इगन्तस्य ह्रीवस्य नुम् अचि विभक्तौ । वारिणी ॥

वृद्धचौत्वतृज्वद्भावगुणेभ्यो नुम् पूर्वविप्रतिषेधेन ॥

वारीणि ॥

न लुमताङ्गस्य १ । १ । ६३ ॥

लृक्लुलुपशब्दैर्लुप्ते तन्निमित्तमङ्गकार्यं न तेन सम्बुद्धिनिमित्तौ गुणो न । हे वारि । अस्यानित्यत्वात्पक्षे गुणः । हे वारि । आजो ना । वारिणा ॥

नुमचिरतृज्वद्भावेभ्यो नुद् पूर्वविप्रतिषेधेन ॥

वारीणाम् । मधु । मधुनी । नाम । नाम्नी । नामनी । नामानि ॥

सम्बुद्धौ नपुंसकानां नलोपो वा ॥

हे नाम । हे नामन् । ब्रह्म । ब्रह्मणी । ब्रह्माणि । हे ब्रह्मन् । हे ब्रह्म । दण्डि । दण्डिनी । दण्डीनि । जगत् । जगती । जगन्ति ॥

आच्छीनद्योर्नुम् ७ । १ । ८० ॥

अवर्णान्ताद्भात्परो यः शतुरवयवस्तदन्तस्याङ्गस्य नुम् वा शीनद्योः । हुदन्ती । हुदती । माती । मान्ती ॥

शप्श्यनोर्नित्यम् ७ । १ । ८१ ॥

शप्श्यनोरात्परो यः शतुरवयवस्तदन्तस्याङ्गस्य नित्यं नुम् शीनद्योः । पचन्ती । दीव्यन्ती । ददत् । ददती ॥

वा नपुंसकस्य ७ । १ । ७९ ॥

अभ्यस्तात्परो यश्शता तदन्तस्य ह्रीवस्य नुम् वा सर्वनामस्थाने ददन्ति । ददाति । अथ नुम्सङ्ग्रहपद्यम् । शतुरह्रीवमुटि शी

शीनद्योरापि शङ्खनः ॥ अन्यावर्णात्तयोर्वा नुम्राभ्यस्तांदेषु शी
तु वा ॥ १ ॥ धनुः । धनुर्षी ॥

नुम्विसर्जनीयशर्व्यवायेऽपि ८ । ३ । ५८ ॥

एतैः प्रत्येकं व्यवधानेऽपि इणकुभ्यां परस्य सस्य पः । धनृपि ।
धनुर्भ्याम् । धनुःपु । धनुण्डु । एवं चक्षुर्हविरादयः । पयः ।
पयांसि । पयोभ्याम् ॥

इति नपुंसकलिङ्गाः ॥ इति १२ अंशाः ॥

अथ सर्वादयस्त्रिलिङ्गाः ।

सर्वादीनि सर्वनामानि १ । १ । २७ ॥

सर्वादीनि शब्दरूपाणि सर्वनामसंज्ञानि । सर्व, विश्व, उभ, उ-
भय, इतर, इतंम, अन्य, अन्यतर, इतर, त्वत्, त्व, नेम, सम,
सिम, पूर्वपरावरदक्षिणोत्तरापराधराणि व्यवस्थायामसंज्ञायाम् ।
स्वमज्ञातिधनाख्यायाम् । अन्तरं वहिर्योगोपसंव्यानयोः । त्यद्,
तद्, यद्, एतद्, इदम्, अदस्, एक, द्वि, युष्मद्, अस्मद्, मवत्,
किम् ॥ तत्र पुंसि ॥

जसः शी ७ । १ । १७ ॥

अदन्तात्सर्वनाम्नो जसः शी । सर्वे ॥

सर्वनाम्नः स्मै ७ । १ । १४ ॥

अतः सर्वनाम्नो डेः स्मै । सर्वस्मै ॥

ङसिङ्योः स्मात्स्मिनौ ७ । १ । १५ ॥

अतः सर्वनाम्नः । सर्वस्मात् ॥

आमि सर्वनाम्नः सुद् ७ । १ । ५२ ॥

अवर्णान्तात्सर्वनाम्नो विहितस्यामः सुद् । सर्वेषाम् । सर्वस्मिन्
शेषे रामवत् । एवं विश्वादयः ॥ उभशब्दो नित्यं द्विवचनान्तः ।
उभौ उभौ इत्यादि । इतरइतमौ प्रत्ययौ । ततस्तदन्ता ग्राह्याः ॥

१ सर्वादीनी त्रिलिङ्गत्वाद्परैलक्षण्याच्च सुप्तेन बोधाय त्रिलिङ्गोक्तः पृथङ्स्यात् ॥

पूर्वपरावरदक्षिणोत्तरापराधराणि व्यवस्थायामसंज्ञा-
याम् १ । १ । ३४ ॥

एतेषां व्यवस्थायामसंज्ञायां सर्वनामसंज्ञा गणपाठात्सर्वत्र या
प्राप्ता सा जसि वा । पूर्वं पूर्वाः । स्वाभिधेयापेक्षावधिनियमो व्य-
वस्था । दक्षिणाः गायकाः कुशला इत्यर्थः । संज्ञायान्तु उत्तराः
कुरवः ॥

पूर्वादिभ्यो नवभ्यो वा ७ । १ । १६ ॥

एभ्यो ङसिङचोः स्मात्स्मिनौ वा । पूर्वस्मात् पूर्वस्माद् ।
पूर्वात् पूर्वाद । पूर्वस्मिन् । पूर्वं । एवं परादीनामपि शेषं सर्ववत् ॥

स्वमज्ञातिधनाख्यायाम् १ । १ । ३५ ॥

ज्ञातिधनान्यवाचिनः स्वशब्दस्य प्राप्ता संज्ञा जसि वा । स्वे
स्वाः आत्मीया इत्यर्थः । आत्मान इति वा । अन्यत्र स्वाः ज्ञात-
योऽर्था वा ॥

अन्तरं बहिर्योगोपसंव्यानयोः १ । १ । ३६ ॥

बाह्ये परिधानीये चार्थेऽन्तरशब्दस्य प्राप्ता संज्ञा जसि वा । अन्तरे
अन्तराः वा गृहाः शाटका वा । बाह्याः परिधानीया वा इत्यर्थः ॥

त्यदादीनामः ७ । २ । १०२ ॥

एषामकारोऽन्तादेशो विभक्ती ॥ ,

द्विपर्यन्तानामेवेष्टिः ॥

त्यदादेः संबोधनं नास्तीत्युत्सर्गः ॥

तदोः सः सावनन्त्ययोः ७ । २ । १०६ ॥

त्यदादीनां द्विपर्यन्तानां तदयोः सन्त्ययोः सः सौ । स्यः ।
त्यौ । सः । तौ । वे । एषः । एतौ । एते ॥

इदमो मः ७ । २ । १०८ ॥

सौ । अत्वापवादः ॥

इदोऽय् पुंसि ७ । २ । १११ ॥

इदम इदः अय सौ पुंलि । अयम् ॥

दश्च ७ । २ । १०९ ॥

इदमो दस्य मः विभक्तौ । इमौ ॥

अनाप्यकः ७ । २ । ११२ ॥

अककारस्येदम इदोऽन् आपि विभक्तौ । अनेन ॥

इदमोऽन्वादेशोऽशनुदात्तस्तृतीयादौ २ । ४ । ३२ ॥

अन्वादेशविषयस्येदमोऽनुदात्तोऽश् आदेशस्तृतीयादौ । अश् साकच्कार्यः ॥

इति १३ अंशाः ॥

द्वितीयादौस्त्वेनः २ । ४ । ३४ ॥

द्वितीयायां दौसोश्च परतः इदमेतदोरेनादेशोऽन्वादेशे । किञ्चित्कार्यं विधातुमुपात्तस्य कार्यान्तरं विधातुं पुनरुपादानमन्वादेशः । यथाऽनेन व्याकरणमधीतम् एनञ्छन्दोऽध्यापयेति । अनयोः प-वित्रं कुलम् एनयोः प्रभूतं स्वम् । एनम् ॥

हलि लोपः ७ । २ । ११३ ॥

अककारस्य इदम इदो लोप आपि हलादौ विभक्तौ ॥

नानर्थकेऽलोन्त्यविधिरनभ्यासविकारे ॐ ॥

आद्यन्तवदेकस्मिन् १ । १ । २१ ॥

एकस्मिन् क्रियमाणं कार्यमादाविवान्त इव स्यात् । आभ्याम् ॥

नेदमदसोरकोः ७ । १ । ११ ॥

अककारयोरिदमदसोर्भिस ऐस न । एभिः । अस्मै । एभ्यः । अस्मात् । अनयोः । एपाम् । अस्मिन् । एषु ॥

अदस औ सुलोपश्च ७ । २ । १०७ ॥

अदस औकारोन्तादेशः सौ परे सुलोपश्च । असौ ॥

अदसोऽसेर्दादुदोमः ८ । २ । ८० ॥

असान्तस्यादसो दात्परस्य उदूतौ दस्य मश्च । ह्रस्वव्यञ्जनयो-
र्ह्रस्वो दीर्घस्य दीर्घः । अमू । जसः शी । गुणः ॥

एत ईद्वहुवचने ८ । २ । ८१ ॥

अदसो दादेत ईद्वस्य मश्च बह्वर्थोक्तौ । अमी । पूर्वत्रासिद्धमिति
विभक्तिकार्यं प्राक् पश्चादुत्वमत्वे । अमुम् । अमू । अमून् ॥

न मु ने ८ । २ । ३ ॥

नाभावे कर्त्तव्ये कृते च मुभावो नासिद्धः । घिसंज्ञा । अमुना ।
अमूभ्याम् । अमीभिः । अमुष्मै । अमुष्मात् । द्विशब्दो द्विवचना-
न्तः । द्वौ । द्वौ । द्वाभ्याम् । द्वयोः ॥

किमः कः ७ । २ । १०३ ॥

विभक्तौ । अकचत्सहितस्यापि कः । कौ ॥

अथ स्त्रियाम् ॥

टाप् । सर्वा । सर्वे ॥

सर्वनाम्नः स्याद्भूस्वश्च ७ । ३ । ११४ ॥

आवन्तान्तात्सर्वनाम्नो ङितः स्याडापश्च ह्रस्वः । सर्वस्ये । सर्व-
स्याः । सर्वाताम् । सर्वस्याम् ॥ शेषं रमावत् ॥ एवं विश्वादयः ॥
उभयी । उभय्यी । स्या । त्ये । सा । ते । या । ये । एषा । एते ॥

यः सौ ७ । २ । ११० ॥

इदमो दस्य यः सौ । इयम् । इमे । इमाः । अनया । आभ्याम् ।
असौ । अम् । अमूः । अमुया । अमुष्यै । अमुष्याः । एका । एके ।
द्वे । द्वे । मयती । मयर्त्या । का । के । ह्रीवे । सर्वम् । सर्वे । सर्वा-
णि । पुनस्तद्वत् । शेषं पुंवत् । एवं विश्वादयः ॥

अद्भुतरादिभ्यः पञ्चभ्यः ७ । १ । २५ ॥

एभ्यः ह्रीवेभ्यः स्वमोरदह आदेशः ॥

देः ६ । ४ । १४३ ॥

डिति परे भस्य डेलोपः । डित्वसामर्थ्यात् अभस्यापि । कतरत्
कतरद् । कतरे । कतराणि । हे कतरत् । शेषं पुंवत् । एवं कतमत् ।
इतरत् । अन्यत् । अन्यतरत् । अन्यतमस्य तु अन्यतममित्येव ॥

एकतरात्प्रतिषेधः ॥ ❀ ॥

एकतरम् ॥

इति १४ अंशाः ॥

त्यद् । त्ये । त्यानि । तत् । यद् । एतद् । इदम् । इमे ।
इमानि ॥

अन्वादेशो नपुंसके एनद्वक्तव्यः ॥ ❀ ॥

एनद् । एने । एनानि । एनेन । एनयोः । अदः । अमू । अ-
मूनि । एकम् । एके । द्वे । द्वे । भवत् । भवती । भवन्ति । सोर्लुका
लुप्तत्वात्कादेशो न । किम् । के । कानि । अय युष्मदस्मदौ ॥

डेप्रथमयोरम् ७ । १ । २८ ॥

युष्मदस्मदभ्यां डे इत्यस्य प्रथमा द्वितीययोश्चाम् ॥

त्वाहौ सौ ७ । २ । ९४ ॥

अनयोर्मपर्यन्तस्य त्व अह इत्यादेशौ सौ ॥

शेषे लोपः ७ । २ । ९० ॥

आत्वयत्वनिमित्तेतरविभक्तावनयोरन्त्यलोपः । त्वम् । अहम् ॥

युवावौ द्विवचने ७ । २ । ९२ ॥

द्वयोरुक्तावनयोर्मपर्यन्तस्य युवावौ विभक्तौ ॥

प्रथमायाश्च द्विवचने भाषायाम् ७ । २ । ८८ ॥

इहानयोराकारोऽन्तादेशः । युवाम् । आवाम् ॥

यूयवयौ जसि ७ । २ । ९३ ॥

मपर्यन्तस्य । यूयम् । वयम् ॥

त्वमावेकवचने ७ । २ । ९७ ॥

एकस्योक्तौ अनयोर्मपर्यन्तस्य त्वमौ विभक्तौ ॥

द्वितीयायाञ्च ७ । २ । ८७ ॥

अनयोः आकारः । त्वाम् । माम् । युवाम् । आवाम् ॥

शसो न ७ । १ । २९ ॥

आभ्यां परस्य शसो नकारः ॥

आदेः परस्य १ । १ । ५४ ॥

परस्य यद्विहितन्तत्तस्यादेः स्यात् । अलीन्त्यापवादः । इति शसोऽकारस्य नकारः । संयोगान्तस्य लोपः । युष्मात् । अस्मात् ॥

योऽचि ७ । २ । ८९ ॥

अनयोर्यकारादेशोऽजादौ विभक्तौ । त्वया । मया ॥

युष्मदस्मदोरनादेशे ७ । २ । ८६ ॥

अनयोः आकारादेशे हलादौ विभक्तौ । युवाभ्याम् । आवाभ्याम् । युष्माभिः । अस्माभिः ॥

तुभ्यमहौ ङयि ७ । २ । ९५ ॥

अनयोर्मपर्यन्तस्य तुभ्यमहौ ङयि । शेषे लोपः । तुभ्यम् । महम् । युवाभ्याम् । आवाभ्याम् ॥

भ्यसो भ्यम् ७ । १ । ३० ॥

आभ्यां भ्यसो भ्यम् अभ्यम् वाऽऽदेशः । युष्मभ्यम् । अस्मभ्यम् ॥

एकवचनस्य च ७ । १ । ३२ ॥

आभ्यां ङसेः अत् । त्वत् । मत् । युवाभ्याम् । आवाभ्याम् ॥

पञ्चम्या अत् ७ । १ । ३१ ॥

आभ्यां पञ्चम्या भ्यसोऽत् । युष्मत् । अस्मत् ॥

युष्मदस्मदभ्यां ङसोऽश् ७ । १ । २७ ॥

तवममौ ङसि ७ । २ । ९६ ॥

अनयोर्मपर्यन्तस्य तवममौ ऊसि । तव । मम । युवयोः । आव-
योः । त्वयि । मयि । युवयोः । आवयोः ॥

साम आकम् ७ । १ । ३३ ॥

आभ्यां परस्य आम आकं स्यात् । सुद तु न स्यात् । युष्माकम् ।
अस्माकम् । त्वयि । मयि । युवयोः । आवयोः । युष्मासु ।
अस्मासु ॥

इति १५ अंशः ।

युष्मदस्मदोः षष्ठीचतुर्थीद्वितीयास्थयोर्वात्रावौ ८ । १ । २०
पदात्परयोः पादादौ स्थितयोः षष्ठ्यादिविशिष्टयोस्तयोर्वात्रावौ
तौ चानुदात्तौ ॥

बहुवचनस्य वस्नसौ ८ । १ । २१ ॥

उक्तविधयोस्तयोः षष्ठ्यादिवबहुवचनान्तयोर्वस्नसौ । धात्राबोर-
पवादः ॥

तेमयावेकवचनस्य ८ । १ । २२ ॥

उक्तविधयोस्तयोष्पष्ठीचतुर्थ्येकवचनान्तयोस्ते मे ॥

त्वमौ द्वितीयायाः ८ । १ । २३ ॥

उक्तविधयोस्तयोर्द्वितीयैकवचनान्तयोस्त्वा मा । श्रीशस्त्वावतु
मापीह दत्तात्ते मेऽपि शर्म सः ॥ स्वामी ते मेऽपि स हरिः पातु
वामपि नौ विभुः ॥ १ ॥ सुखं वान्नौ ददात्वीशः पतिर्वामपि नौ
हरिः ॥ सोऽव्याद्वो नः सुखं वो नो देयात्सेव्योऽत्र वः स नः ॥ २ ॥
नेह त्वाम्पातु । वेदैरक्षैः संवेद्योऽस्मान् कृष्णः सर्वदाऽवतु । एते
आदेशा अनन्वादेशे वा । अन्वादेशे नित्यम् । धाता ते भक्तोऽस्ति
तव वा । तस्मै ते नम इत्येव । विभक्तिसत्वे एव नेह इति युष्म-
त्पुत्रो ब्रवीति ॥ इति सर्वादयः ॥

१ अत्र साम इति भागिनः सुटो निवृत्त्यर्थं समुदादिदेश इति व्याख्यातारः ।
तदेव स्पष्टमुक्तं सुटं तु न स्यादिति ।

स्वरादिनिपातमव्ययम् १ । १ । ३७ ॥

स्वरादयो निपाताश्चाव्ययसंज्ञाः । स्वरः अन्तरः प्रातरः पुनरः
इत्यादयोऽग्रे बोध्याः ॥

अव्ययादाप्सुपः २ । ४ । ८२ ॥

अव्ययादिहितस्यापः सुपश्च लुक् । स्वः । अन्तः । चादयोऽन्त-
त्वे । च वा ह अह एव इत्यादयोऽपि अग्रे बोध्याः ॥

प्रादयः १ । ४ । ५८ ॥

अद्रव्यार्थाः प्रादयो निपातसंज्ञाः । प्र परा अप तम् अनु अव
निम् निर् दुस् दुर वि आङ् नि अधि आपि अति सु उद् अभि
प्रति परि उप एते प्रादयः ॥

उपसर्गाः क्रियायोगे १ । ४ । ५९ ॥

गतिश्च १ । ४ । ६० ॥

प्रादयः क्रियायोगे उपसर्गसंज्ञा गतिसंज्ञाश्च स्युः ॥

तद्धितश्चासर्वविभक्तिः १ । १ । ३९ ॥

यस्मात् सर्वा विभक्तिर्नोत्पद्यते स तद्धितान्तोऽव्ययसंज्ञः ।
सर्वतः । सर्वत्र । तत्र शालायाम् । परिगणनं करिष्यते ॥

कृन्मेजन्तः १ । १ । ३९ ॥

कृद्यो मान्त एजन्तश्च एतदन्तमव्ययम् । स्मारस् । स्मारस् ।
जीवसे । पिवध्वै ॥

त्तवातोऽनुक्कमुनः १ । १ । ४० ॥

एतदन्तमव्ययम् । कृत्वा । प्रणम्य । उदेतोः । विसृपः इत्यादि ॥

अव्ययीभावश्च १ । १ । ४१ ॥

आधिहरि । अव्ययानां लिङ्गकारकसंख्याभावादकैरूप्यम् ।
वापि भागुरिरहोपमवाप्योरुपसर्गयोः ॥ आपश्चैव इलन्तानां यथा
वाचा निशा दिशा । अवगाहः । वगाहः । अपिधानम् । पिधानम् ॥
इत्यव्ययानि । इति १६ अंशाः ।

अथाख्यातम्

तत्र धातुभ्यो लकाराः धातवस्तु द्विविधाः । अकर्मकाः सकर्म-
काश्च । तत्राद्या यथा । सत्तायामुदये स्नेहे मोहस्नानविशुद्धिषु ।
शयनासनलज्जासु जीवने मरणे क्रुधि ॥ १ ॥ त्वरायां क्रीडने नृत्ये
रोदनस्थितिदीप्तिषु ॥ भये स्यन्दे च सन्देहे स्वेदस्पर्द्धाक्षयेष्वपि
॥ २ ॥ मदोद्वेगप्रकम्पेषु व्यथाजागरवृद्धिषु ॥ जरायां स्वदनोत्प-
त्त्योर्मृत्रणे हृदने तथा ॥ ३ ॥ विकासे मीलने हासे नाशस्फूर्तिस-
मृद्धिषु । तोषे दोषे विरागे च विषादोन्मादसिद्धिषु ॥ ४ ॥ प्रभातोद्दी-
तिवस्त्रेषु शुद्धिमादिगुणेषु च ॥ ध्वाने क्लेश्ये दरिद्रत्वे ग्लानिगर्वश्रमे-
ष्वपि ॥ ५ ॥ क्षोभप्रस्रवणाद्यर्थे धातवः स्युरकर्मकाः ॥ अन्ये सकर्मकाः
शेषो विषयोऽग्रेऽभिधास्यते ॥ ६ ॥ भू सत्तायाम् लंकारास्तु लट् लिट् लुट्
लृट् लेट् लोट् लङ् लिङ् लुङ् लृङ् इति दश एषु लृट् छन्दस्येव ॥

लः कर्मणि च भावे चाकर्मकेभ्यः ३ । ४ । ६९ ॥

लकाराः सकर्मकेभ्यः कर्मकर्त्रोरकर्मकेभ्यो भावकर्त्रोः स्युः ॥

वर्त्तमाने लट् ३ । २ । १२३ ॥

वर्त्तमानक्रियावृत्तेर्धातोर्लट् । अटावितौ । उच्चारणसामर्थ्याल्ल-
स्य न इत्त्वम् । कर्तृविवक्षायां भू लृ इति स्थिते ॥

तिप्तस्झिसिप्थस्थमिप्वस्रमस्रतातांश्च
मिड्वहिमहिङ् ३ । ४ । ७८ ॥

एतेऽष्टादश लस्यादेशाः ॥

लः परस्मैपदम् १ । ४ । ९९ ॥

लादेशा एतत्संज्ञाः ।

तङानावात्मनेपदम् १ । ४ । १०० ॥

तद्भृशानच्कानचौ चैतत्संज्ञाः ॥ पूर्वसंज्ञापवादः ।

१ यद्यपि लकाराणामय क्रमः पाणिनिना न प्रोक्तः नापि प्रामाण्यगुणः किन्तु
बालानां सुखेन बोधाय. लट् लृट् लोट् लिङ् लृट् लृट् लृङ् लिङ् इति क्रमो
योग्यस्तथापी टिट् डिट् लकारभेदमात्रफलकार्यं क्रमः प्राचामनुषेधादादत्त ।

अनुदात्तङित आत्मनेपदम् १ । ३ । १२ ॥

अनुदात्तेत उपदेशे यो ङितदन्ताच्च धातोर्लस्यात्मनेपदम् ॥

स्वरितभितः कर्त्रभिप्राये क्रियाफले १ । ३ । ७२ ॥

स्वरितेतो वितश्च धातोर्लस्य आत्मनेपदम् कर्तृगामिनि क्रियाफले ॥

शेषात्कर्त्तरि परस्मैपदम् १ । ३ । ७८ ॥

आत्मनेपदानेमिच्छीनाद्धातोः कर्त्तरि परस्मैपदम् ॥

तिङ्स्त्रीणि त्रीणि प्रथममध्यमोत्तमाः १ । ४ । १०१ ॥

तिङ् उभयोः पदयोस्त्रयस्त्रिकाः क्रमादेतत्संज्ञाः ॥

तान्येकवचनद्विवचनबहुवचनान्येकशः १ । ४ । १०२ ॥

लब्धप्रथमादिसंज्ञानि तिङ्स्त्रीणि त्रीणि क्रमादेतत्संज्ञानि ॥

युष्मद्युपपदे समानाधिकरणे स्थानिन्यपि मध्यमः

१ । ४ । १०५ ॥

तिङ्वाच्यकारकवाचिनि युष्मदि प्रयुज्यमानेऽप्रयुज्यमाने च मध्यमः ॥

अस्मद्युत्तमः १ । ४ । १०७ ॥

तथाभूते अस्मादि उत्तमः ॥

शेषे प्रथमः १ । ४ । १०८ ॥

मध्यमोत्तमयोरविषये प्रथमः ॥

इति १७ अंशाः ॥

भू ति इति स्थिते ॥

तिङ्शित्सार्वधातुकम् ३ । ४ । ११३ ॥

तिङ्ः शितश्च धात्वाधिकायेक्ता एतत्संज्ञाः ॥

आर्द्धधातुकं शेषः ३ । ४ । ११४ ॥

तिङ्शित्शित्म्योऽभ्यो धातोरिति विहित एतत्संज्ञः ॥

लिट् च ३ । ४ । ११५ ॥

लिङादेशस्तिङार्द्धधातुकसंज्ञ एव स्यात् ॥

लिङाशिपि ३ । ४ । ११६ ॥

आशिपि लिङस्तिङार्द्धधातुकसंज्ञ एव ॥

कर्त्तरि शप् ३ । १ । ६८ ॥

कर्त्रर्थे सार्वधातुके परे धातोः शप् । शपावितौ ॥

सार्वधातुकार्द्धधातुकयोः ७ । ३ । ८४ ॥

अनयोः परयोः इगन्ताङ्गस्य गुणः । भवति । भवतः ॥

झोऽन्तः ७ । १ । ३ ॥

प्रत्ययावयवस्य झस्यान्तादेशः । भवन्ति । भवसि । भवथः । भवथ ॥

अतो दीर्घो यञि ७ । ३ । १०१ ॥

अतोऽङ्गस्य दीर्घो यजादौ सार्वधातुके । भवामि । भवावः । भवामः । सः भवति । तौ भवतः । ते भवन्ति । त्वं भवसि इत्यादि योज्यम् ॥

परोक्षे लिट् ३ । २ । ११५ ॥

भूतानद्यतनपरोक्षार्थवृत्तेर्धातोर्लिट् । लस्य तिवादयः ॥

परस्मैपदानां णलतुसुस्थलथुसणल्वमाः ३ । ४ । ८२ ॥

लिटस्तिवादीनां क्रमाण्णलादयो नव स्युः ॥

भुवो वुक् लुङ्लिटोः ६ । ४ । ८८ ॥

भुवो वुक् लुङ्लिटोराचि । गुणवृद्धचोर्वाधकः ॥

लिटि धातोरनभ्यासस्य ६ । १ । ८ ॥

लिटि परे अनभ्यासधात्ववयवस्यैकाचः प्रथमस्य द्वे स्तः आदिभूतादयः परस्य तु द्वितीयस्य । भूव् भूव् अ इति स्थिते ॥

पूर्वोऽभ्यासः ६ । १ । ४ ॥

पाष्ठदित्वप्रकरणे ये द्वे विहिते तयोः पूर्वोऽभ्याससंज्ञः ॥

हलादिः शेषः ७ । ४ । ६० ॥

अभ्यासस्यादिर्हल् शिष्यते । अन्ये हलो लुप्यन्ते । इति वलोपः ॥

ह्रस्वः ७ । ४ । ५९ ॥

अभ्यासस्याचो ह्रस्वः ॥

भवतेरः ७ । ४ । ७३ ॥

भवतेरभ्यासोकारस्य अः स्याल्लिटि ॥

अभ्यासे चर्च ८ । ४ । ५४ ॥

अभ्यासे झलाञ्चरः स्युर्जशश्च झशा जशः खयाञ्चरः । तत्रापि प्रकृतिजशा प्रकृतिजशः प्रकृतिचरा प्रकृतिचरः ॥

असिद्धवदन्नाभात् ६ । ४ । २२ ॥

इत उर्ध्वमापादसमाप्तेराभीयम् । समानाश्रये तस्मिन् कर्तव्ये तदसिद्धम् । इति युकोऽसिद्धत्वादुबि प्राप्ते ॥

बुग्बुटाबुवङ्गयोः सिद्धौ वक्तव्यौ ॥ ❀ ॥

बभूव । बभूवतुः । बभूवुः ॥

आर्द्धधातुकस्येड् वलादेः ७ । २ । ३५ ॥

वलादेरार्द्धधातुकस्येडागमः । बभूविष । बभूवथुः । बभूव । बभूव । बभूविष । बभूविम ॥

इति १८ अंशाः ॥

अनद्यतने लुट् ३ । ३ । १५ ॥

भविष्यति अनद्यतने धातोरुट् ॥

स्यतासी लृलुटोः ३ । १ । ३३ ॥

धातोः स्यतासी एतौ स्तः लृलुटोः परतः । शवाद्यपवादः । इट् ॥

लुटः प्रथमस्य डारौरसः २ । ४ । ८५ ॥

अस्य डारौरस् एते त्रयात्स्युः । टेलोपः ॥

ह्रस्वं लघु १ । ४ । १० ॥

पुगन्तलघूपधस्य च ७ । ३ । ८६ ॥

पुगन्तस्य लघूपधस्य च अङ्गस्येको गुणः सार्वधातुकार्द्धधातु-
कयोः । भवित् आ अत्रेको गुणे प्राप्ते ॥

दीधीवेवीटाम् १ । १ । ६ ॥

दीधीवेव्योरिटश्च गुणवृद्धी न । भविता ॥

तासस्त्योर्लोपः ७ । ४ । ५० ॥

तासेरस्तेश्च लोपः सादौ प्रत्यये ॥

रि च ७ । ४ । ५१ ॥

रादौ प्रत्यये प्राग्वत् । भवितारौ । भवितारः । भवितासि ।
भवितास्यः । भवितास्य । भवितास्मि । भवितास्वः । भवितास्मः ॥

लृट् शेषे च ३ । ३ । १३ ॥

भविष्यदर्थाद् धातोर्लृट् । भविष्यति । भविष्यतः । भविष्य-
न्ति । भविष्यसि । भविष्यथः । भविष्यथ । भविष्यामि ।
भविष्यावः । भविष्यामः ॥

लोट् च ३ । ३ । १६२ ॥

विध्यादिष्वर्थेषु ॥

आशिपि लिङ्गलोटौ ३ । ३ । १७३ ॥

एरुः ३ । ४ । ८६ ॥

लोट इकारस्य उः । भवतु ॥

तुह्योस्तातङ्गाशिष्यन्यतरस्याम् ७ । १ । ३५ ॥

आशिपि तुह्योस्तातङ्ग वा परत्वात्सर्वादेशः । भवतात् ॥

लोटो लङ्घत् ३ । ४ । ८५ ॥

लोटो लङ् इव कार्यन्तेन तामादयः सलोपश्च ॥

तस्थस्थमिपान्तान्तन्तामः ३ । ४ । १०१ ॥

डितो लस्य तसादिचतुर्णां तामादयः ॥

नित्यङितः ३ । ४ । ९९ ॥

सकारान्तस्य ङितुत्तमस्य नित्यं लोपः । अलोऽन्त्यस्य । भव-
ताम् । भवन्तु ॥

सेर्ह्यपिञ्च ३ । ४ । ८७ ॥

लोटः सेर्हिः सोऽपिञ्च ॥

अतो हेः ६ । ४ । १०५ ॥

अतः परस्य हेर्लुक् भव । भवतात् । भवतम् । भवत ॥

मेर्निः ३ । ४ । ८९ ॥

लोढो मेर्निः ॥

आङुत्तमस्य पिञ्च ३ । ४ । ९२ ॥

लोढ उत्तमस्य आङ् स पिञ्च । भवानि । भवाव । भवाम ॥

अनद्यतने लङ् ३ । २ । १११ ॥

अनद्यतनभूतार्थवृत्तेर्धातोर्लङ् ॥

लुङ्लङ्लृङ्क्ष्वङुदात्तः ६ । ४ । ७१ ॥

एषु परेष्वङ्गस्याद् स चोदात्तः ॥

इतश्च ३ । ४ । १०० ॥

ङितो लस्य परस्मैपदमिदन्तं यत्तस्य लोपः । अभवत् । अभ-
वताम् । अभवन् । अभवः । अभवतम् । अभवत । अभवम् । अभ-
वाव । अभवाम ॥

इति १९ अंशः ।

विधिनिमन्त्रणामन्त्रणाधीष्टसंप्रश्नप्रार्थनेषु लिङ् ३ ।

३ । १६१ ॥

एष्वर्येषु चोत्येषु वाच्येषु वा लिङ् ॥

यासुद् परस्मैपदेऽपूदात्तो ङिञ्च ३ । ४ । १०३ ॥

लिङः परस्मैपदानां यासुद् स चोदात्तो ङिञ्च ॥

सुटतिथोः ३ । ४ । १०७ ॥

लिङस्तथयोः सुट् ॥

लिङः सलोपोऽनन्त्यस्य ७ । २ । ७९ ॥

सार्वधातुकलिङोऽनन्त्यस्य सस्य लोपः । इति सुटो लोपः ।

यासुटः सस्यापि लोपे प्राप्ते ॥

अतो येयः ७ । २ । ८० ॥

अतः परस्य सार्वधातुकलिङो यास इय् ॥

लोपो व्योर्वालि ६ । १ । ६६ ॥

वकारयकार्योर्लोपो वलि । भवेत् । भवेताम् ॥

झेर्जुस् ३ । ४ । १०८ ॥

लिङो झेर्जुस् । भवेयुः । भवेः । भवेतम् । भवेत । भवेयम् ।

भवेव । भवेम ॥

किदाशिपि ३ । ४ । १०४ ॥

आशिपि लिङो यासुट् कित् ॥

स्कोस्संयोगाद्योरन्ते च ८ । २ । २९ ॥

पदान्ते झलि परे च यः संयोगस्तदाद्योः सकारककार्योर्लोप इति सलोपः ॥

कृति च १ । १ । ५ ॥

गित्कित्ठिन्निमित्ते इगूलक्षणे गुणवृद्धी न स्तः । भूयात् । भूयास्ताम् । भूयासुः । भूयाः । भूयास्तम् । भूयास्व । भूयासम् । भूयास्व । भूयास्म ॥

लुङ् ३ । २ । ११० ॥

भूतार्थवृत्तेर्धातोर्लुङ् ॥

माङि लुङ् ३ । ३ । १७५ ॥

सर्वलकारापवादः ॥

स्मोत्तरे लङ् च ३ । ३ । १७६ ॥

स्मोत्तरे माडि लड् लुड् च ॥

च्लि लुडि ३ । १ । ४३ ॥

शवाद्यपवादः ॥

च्लेः सिच् ३ । १ । ४४ ॥

इचावितो ॥

गातिस्थाघुपाभूभ्यः सिचः परस्मैपदेषु २ । ४ । ७७ ॥

इणादेशगातेः स्थाघुपिवतिभूभ्यश्च सिचो लुक् परस्मैपदे ॥

भूसुवोस्तिङि ७ । ३ । ८८ ॥

भूसू पतयोः सार्वधातुके तिङि गुणो न ॥

अस्तिसिचोऽपृक्ते ७ । ३ । ९६ ॥

विद्यमानात्सिचोऽस्तेश्चापृक्तहल ईट् सिचो लुप्तत्वान्नेट् । अभूत् ।

अभूताम् ॥

सिजभ्यस्तविदिभ्यश्च ३ । ४ । १०९ ॥

सिचोऽभ्यस्ताद्विदेश्च परस्य ङितो ज्ञेर्जुस् । इति प्राप्ते ॥

आतः ३ । ४ । ११० ॥

सिजलुक्पादन्तादेव ज्ञेर्जुस् । अभूवत् । अभूः । अभूतम् ।

अभूत । अभूवम् । अभूव । अभूम ॥

न माङ्योगे ६ । ४ । ७४ ॥

अडाटौ न । मा भवात् भूत् । मा स्म भवत् भूद्वा ॥

लिङ्निमित्ते लट् क्रियातिपत्तौ ३ । ३ । १३९ ॥

हेतुहेतुमद्भावादि लिङ्निमित्तं तत्र मविष्यत्यर्थे लट् स्यात्

क्रियाया अनिष्पत्तौ । अमविष्यत् । अमविष्यताम् । अमविष्यन् ।

अमविष्यः । अमविष्यतम् । अमविष्यत । अमविष्यम् । अम-

विष्याव । अमविष्याम् ॥

इति २० अंशाः । इति प्रथमाध्यायस्य द्वितीयः पादः ।

भू प्राप्तावात्मनेपदी ॥

टित् आत्मनेपदानां टेरे ३ । ४ । ७९ ॥

टितो लस्यात्मनेपदाना टेरेत्वं स्यात् । भवते ॥

सार्वधातुकमपित् १ । २ । ४ ॥

अपित् सार्वधातुकं ङिद्धत् ॥

आतो ङित् ७ । २ । ८१ ॥

अतः परस्य ङितामात इय् ॥

थासस्से ३ । ४ । ८० ॥

टितो लस्य थासः से । भवेते । भवन्ते । भवसे । भवेथे ।

भवध्वे । अतो गुणे भवे । भवावहे । भवामहे ॥

लिटस्तझयोरेशिरेच् ३ । ४ । ८१ ॥

लिङादेशयोस्तझयोरेशिरेच् एतो स्तः ॥

इणः पीध्वंलुङ्लिटां धोऽङ्गात् ८ । ३ । ७८ ॥

इणन्तादङ्गात्परेषामेपा धस्य मूर्धन्यः ॥

विभापेटः ८ । ३ । ७९ ॥

इणः परस्मादितः परेषामेपा धस्य वा मूर्धन्यः । वभूवे । वभू-
वाते । वभूविरे । वभूविषे । वभूवाथे । वभूविद्हे । वभूविध्वे ।

वभूवे । वभूविवहे वभूविमहे ॥

धि च ८ । २ । २५ ॥

धादौ प्रत्यये सलोपः ॥

इ एति ७ । ४ । ५२ ॥

तासस्त्योः सस्य ह एति परे । भविता । भवितारौ । भवि-
तारः । भवितासे । भवितासाये । भविताध्वे । भविताहे । भविता
स्वहे । भवितास्महे । भविष्यते । भविष्येते । भविष्यन्ते । भविष्यसे ।
भविष्येथे । भविष्यध्वे । भविष्ये । भविष्यावहे । भविष्यामहे ॥

आमेतः ३ । ४ । ९० ॥

लोट एकारस्याम् ॥

सवाभ्यां वामौ ३ । ४ । ९१ ॥

सवाभ्यां परस्य लोट एतः क्रमात् व अम् एतौ स्तः ॥

एत ऐ ३ । ४ । ९३ ॥

लोडुत्तमस्य एत ऐ । भवेताम् । भवेताम् । भवन्ताम् । भवस्व ।
भवेयाम् । भवध्वम् । भवै । भवावहै । भवामहै । अभवत ।
अभवेताम् । अभवन्त । अभवथाः । अभवेयाम् । अभवध्वम् ।
अभवे । अभवावहि । अभवामहि ॥

लिङः सीयुट् ३ । ४ । १०२ ॥

झस्य रन् ३ । ४ । १०५ ॥

लिङो झस्य रन् ॥

इटोऽत् ३ । ४ । १०६ ॥

लिङादेशस्पेटोऽत् । भवेत् । भवेयाताम् । भवेरन् । भवेथाः ।
भवेयाथाम् । भवेध्वम् । भवेय । भवेवहि । भवेमहि । भविपीष्ट ।
भविपीयास्ताम् । भविपीरन् । भविपीष्ठाः । भविपीयास्थाम् ।
भविपीद्मम् । भविपीध्वम् । भविपीय । भविपीवहि । भविपीमहि ॥

आत्मनेपदेष्वनतः ७ । १ । ५ ॥

अनकारात्परस्य आत्मनेपदेषु झस्यात् । अमविष्ट । अमवि-
पाताम् । अमविपत । अमविष्ठाः । अमविपाथाम् । अमवि-
द्मम् । अमविध्वम् । अमविपि । अमविष्वाहि । अमविष्महि ।
अमविष्यत । अमविष्येताम् । अमविष्यंत । अमविष्यथाः ।
अमविष्येथाम् । अमविष्यध्वम् । अमविष्ये । अमविष्यावहि ।
अमविष्यमहि ।

ते प्राग्धातोः १ । ४ । ८० ॥

ते गत्युपसर्गसंज्ञका धातोः प्राक् प्रयोज्याः । प्रभवतीत्यादि ॥

इति २१ अंशाः ।

रक्ष पालने । रक्षति । ररक्ष । रक्षिता । रक्षिष्यति । रक्षतु ।
अरक्षत् । रक्षेत् । रक्ष्यात् । अस्तिसिच इति ईद ॥

वदव्रजहलन्तस्याचः ७ । २ । ३ ॥

वदेव्रजेर्हलन्तस्य चाङ्गस्याचो वृद्धिः सिचि परस्मैपदेषु । इति
प्राप्ते ॥

नेटि ७ । २ । ४ ॥

इडादौ सिचि उक्तञ्च ॥

इट ईटि ॥ ८ । २ । २८ ॥

इटः परस्य सस्य लोप ईटि ॥

सिज्जलोप एकादेशे सिद्धो वाच्यः ❀ ॥

अरक्षीत् । अरक्षिष्टाम् । सिज्जभ्यस्तेति क्षेर्जुस् । अरक्षिपुः ।
अरक्षीः । अरक्षिष्टम् । अरक्षिष्ट । अरक्षिपम् । अरक्षिष्व । अरक्षिष्म ।
अरक्षिष्यत् । चर्च अदने । जल्प व्यक्तायां वाचि । पस्ज गतौ ॥

धात्वादेः पः सः ६ । १ । ६४ ॥

सज्जति । अयमात्मनेपद्यपि । सज्जते । गर्ज शब्दे ॥

कुहोश्चुः ७ । ४ । ६२ ॥

अभ्यासस्य कवर्गेहकारयोश्चवर्गः । जगर्ज । मन्य विलोडने ॥

अनिदितां हल उपधायाः क्लिति ६ । ४ । २४ ॥

हलन्तानामनिदितामङ्गानामुपधाया नस्य लोपः किति डिति
च । मथ्यात् । मथ्यास्ताम् । खाद भक्षणे । चखाद । जीव प्राणधा-
रणे । जिजीव । बुक् भरणे । फुल्ल विकसने । दुओस्फुर्जा वज्र-
निघोषे ॥

आदिर्भिटुडवः १ । ३ । ५ ॥

उपदेशे धातोराद्या एते इतः ॥

उपधायां च ८ । २ । ७८ ॥

धातोरुपधाभूतयो रेफवकारयोर्हलपरयोः परत इको दीर्घः ॥

शर्पूर्वाः खयः ७ । ४ । ६१ ॥

अभ्यासस्य शर्पूर्वाः खयः शिष्यन्तेऽन्ये हलो लुप्यन्ते । हलादि-
रित्यस्यापवादः । स्फूर्जति । पुस्फूर्ज । मुच्छा मोहसमुच्छ्राययोः ।
मृच्छति । कूज अव्यक्ते शब्दे । खेल चलने ॥

एच इग्रस्वादेशे १ । १ । ४८ ॥

आदिश्यमानेषु ह्रस्वेषु एच इगेव स्यात् । चित्तेल । दुनदि
समृद्धौ ॥

इदितो नुम् धातोः ७ । १ । ५८ ॥

नन्दति । इदित्वाञ्चलोपो न । नन्धात् । रगि रहि लगि गतौ ।
क्रदि आह्वाने रोदने च । खाजि गतिवैकल्ये । णिदि कुत्तायाम् ॥

णो नः ६ । १ । ६५ ॥

धात्वादेः । निदति । वृहि वृद्धौ शब्दे च ॥

उरत् ७ । ४ । ६६ ॥

अभ्यास ऋकारस्य अत् प्रत्यये । रपरत्वम् । हलादिः शेषः ।
ववृंह । एन शब्दे । स्तनति ॥

अत उपधायाः ७ । २ । ११६ ॥

उपधाया अतो वृद्धिर्धिति णिति च प्रत्यये ॥

णलुत्तमो वा ७ । १ । ९१ ॥

उत्तमो णल् वा णित् । तस्तान् । तस्तनतुः । तस्तान् । तस्तन ॥

अतो हलादेर्लघोः ७ । २ । ७ ॥

हलादेर्लघोर्गकारस्य वा वृद्धिरिडादां सिचि परस्मैपदे । अस्ता-
नीत् । अस्तनीत् ॥

इति २२ अंशाः ।

गद व्यक्तायां वाचि । व्रज गर्ता । व्रजेः पृथग्प्रदणात् । नित्यं
वृद्धेः । अव्राजीत् । शल आशुगमने ॥

अतो लान्तस्य ७ । २ । २ ॥

अत्समीपौ यौ लौ तदन्तस्याङ्गस्यातो वृद्धिः परस्मैपदे सिचि
अटि अतो हलादेरनयोरपवादः । अश्वालीत् । स्तल संचलने । गल
अदने दल विशरणे । ददाल ॥

असंयोगालिट् कित् १ । २ । ५ ॥

असंयोगात्परोऽपिलिट् कित् ॥

अत् एकहल्मध्येऽनादेशादेर्लिटि ६ । ४ । १२० ॥

लिङ्निमित्तादेशादिकं न भवति यदङ्गन्तदवयवस्यासंयुक्तरह-
मध्यस्थस्यात एत्वमभ्यासलोपश्च किति लिटि ॥

थलि च सेटि ६ । ४ । १२१ ॥

प्रागुक्तम् । आदेशश्चेह वैरूप्यकृदेव गृह्यते । तेन दहचरादौ
प्रकृतिजश्चरांतेषु सत्स्वपि एत्वादि स्यादेव । देलतुः । देलिथ ।
अदालीत् । मह पूजायाम् ॥

ह्यन्तक्षणश्चसजागृणिश्च्येदिताम् ७ । २ । ५ ॥

हमयान्तस्य क्षणादेर्ण्यन्तस्य श्वयतेरोदितश्च वृद्धिर्नेडादौ पर-
स्मैपदे सिचि । अमहीत् । हसे हसने अहसीत् । चिती संज्ञाने ।
पुगन्तेति गुणः । चेतति । चिचेत् ॥ कृति चेति गुणनिषेधः ।
चिचित्तुः । चित्यात् । अचेतीत् । जिमु अदने । शुच शोके ।
वृषु सेचनहिंसासंश्लेशनेषु । वर्षति । उरत् । ववर्ष ॥

ऋदुपधेभ्यो लिटः कित्वं गुणात् पूर्वविप्रतिषेधेन ❀ ॥

ववृषतुः । घुषिर्विशन्दने ॥

इर इत्संज्ञा वाच्या ❀ ॥

इरितो वा ३ । १ । ५७ ॥

इरितो धातोः च्लेरङ् वा परस्मैपदे । अधुपत् । अधोषीत् ।
च्युतिर् आसेचने श्र्युतिर् श्रुतिर् क्षरणे । अट गतौ ॥

अत् आदेः ७ । ४ । ७० ॥

अभ्यासस्यादेरतो दीर्घः । पररूपापवादः । आट ॥

। आडजादीनाम् ६ । ४ । ७२ ॥

लुङादौ । आटश्च । आटत् । आटीत् । मा भवानदीत् । अत
सातत्यगमने । अर्च पूजायाम् ॥

तस्मान्नृद् द्विहलः ७ । ४ । ७१ ॥

अनेकहलो धातोर्दीर्घोभूताकारात्परस्य नृद् । आनर्च । आर्वत् ।
अर्ज अर्जने । अर्द गतौ याचने च ॥

इति २३ अंशाः ।

ईर्ष्य ईर्ष्यायाम् ॥

संयोगे गुरु १ । ४ । ११ ॥

संयोगे, परे ह्रस्वं गुरुसंज्ञम् ॥

दीर्घं च १ । ४ । १२ ॥

गुरुसंज्ञम् ॥

इजादेश्च गुरुमतोऽनृच्छः ३ । १ । ३६ ॥

। इजादिर्यो गुरुमान् प्रच्छत्यन्यस्तत आम् लिटि ॥

। आमः २ । ४ । ८१ ॥

आमः परस्य लुक् । लिङादेशापवादत्वाद्धावस्थायामेव लुक् ॥

कृदतिङ् ३ । १ । ९३ ॥

सन्निहिते धात्वाधिकारे तिङ्भिनः प्रत्ययः कृतसंज्ञः । इति
लिटः कृत्वात् कृत्तद्धितेति प्रातिपदिकत्वे सुबुत्पात्तिः कृन्मेजन्त
इत्यामन्तस्याव्ययत्वात् सुपो लुक् ॥

कृञ्चानुप्रयुज्यते लिटि ३ । १ । ४० ॥

आमन्तालिदपराः कृम्बस्तयोऽनुप्रयुज्यन्ते ॥

अचो ष्णिति ७ । २ । ११५ ॥

णिति णिति च परेऽजन्ताद्भस्य वृद्धिः । ईर्ष्याश्चकार । द्वित्वा-
त्परत्वाद्याणि प्राप्ते ॥

द्विर्वचनेऽचि १ । १ । ५९ ॥

द्वित्वनिमित्तेऽचि षोऽच आदेशो न स्याद् द्वित्वे कर्तव्ये यणि कृते
न अनच्कत्वाद्वित्वं न स्यात् । ईर्ष्याश्चक्रतुः ॥

एकाच उपदेशेऽनुदात्तात् ७ । २ । १० ॥

उपदेशो यो धातुरेकाजनुदात्तश्च ततः परस्य बलाद्यार्द्धधातुकस्येद्
न । ईर्ष्याश्चकार्य । ईर्ष्याश्चकृव । कृजः कर्तुगे फले आत्मनेपदे प्राप्ते ॥

आम्प्रत्ययवत् कृभोऽनुप्रयोगस्य १ । ३ । ६३ ॥

आम्प्रकृत्या तुल्यमनुप्रयुज्यमानात् कृभोऽप्यात्मनेपदम् । तच्च
पूर्ववदेव नतु ततो विपरीतम् । तेन एधाश्चक्रे इत्यादौ परस्मैपदं न ।
ईर्ष्याश्चकारेत्यादौ तद्ध न । भवसोस्तु कर्तृप्रत्यये तद्ग पृथगस्तिग्रहण-
सामर्थ्यान्नास्तेर्भूभावः । ईर्ष्यामास । ईर्ष्यावभूव । अनुदात्ता वक्ष्यन्ते ।
उक्ष सेचने उक्षाश्चकार । एजृ कम्पने । इखि इगि गतौ । इह्वांचकार ।
उछि उञ्छे । अथ वेटः । ते च स्यसिचूसीयुद्तासिपु यथासम्मव-
मिह्विकल्पवन्तः । त्वक्षू तनूकरणे ॥

स्वरतिसूतिसूयतिधूजूदितो वा ७ । २ । ४४ ॥

स्वरत्यादेरुदितश्च परस्य बलाद्यार्द्धधातुकस्येद् वा । तत्त्वक्षिथ ।
स्कौरिति कलोपः । तत्वष्ठ । तत्वक्षिव । तत्वक्ष्व । वक्ष्यमाणवयादि-
नियमाह्लिति नित्यमेवेडिति परे । एवं रधादिष्वपि । त्वाक्षिता ।
त्वष्टा । त्वाक्षिष्यति ॥

पठोः कः सि ८ । २ । ४१ ॥

त्वक्ष्यति । इटि अत्वक्षीत् । इडमावे वदव्रजेति वृद्धिः । अत्वा-
क्षीत् ॥

झलो झलि ८ । २ । २६ ॥

झलः परस्य सस्य लोपो झलि । अत्वाष्टाम् । पिधू शास्त्रे माङ्गल्ये
च । स्वरतीति वेट् । सिसेधिय ॥

झपस्तथोर्द्धो घः ८ । २ । ४० ॥

शपः परयोस्तथोर्थो नतु दधातेः । सिपेद्ध । सिषिधिव । सि-
पिध्व । मतान्तरे तु लिटि नित्यमिद् । सेधिता । सेद्धा । सेधिष्यति
सेत्स्यति असेधीत् । वदन्नजेति वृद्धिः । असेत्सीत् । असेद्धामि-
त्यादि ॥

इति २४ अंगाः ॥

अनुदात्ताश्च-

ऊदन्तःसुदन्तरुणक्षुयौतिस्तुभुभिदीशीश्चि च वृड्वृजौ च ॥ स्तु-
द्धातिवः सेट इमेऽथ चान्ये एकाजजन्ता अनिटोऽनुदात्ताः ॥ १ ॥
कान्तेषु शकृ एकः ॥ १॥ चान्तेषु पच् मुच् रिच् वच् विच् सिच्
पट् ॥ ॥ छान्तेषु प्रच्छेकः १ ॥ जान्तेषु त्यज् निजिर् भज भञ्ज
भुज् भ्रस्ज मस्ज यज् युज् रुज् रञ्ज विजिर् स्वञ्ज सञ्ज तृजः पंच-
दश १५ ॥ दान्तेषु अद् क्षुद् खिद् छिद् तुद् नुद् पय मिद् विद्य
विन्द् शद् सद् स्विद्य स्कन्द हृदः पंचदश १५ ॥ धान्तेषु कुप् क्षुप्
बुध्य बन्ध युष् रुष् राष् व्यध शुध साध सिध्या एकादश ११ ॥
नान्तेषु मन्यहनी द्वौ २ ॥ पान्तेषु आप् क्षिप् छुप् तप् तिप् वृत्त्य-
द्वय लिप् लुप् वप् शप् स्वप् सृपस्त्रयोदश १३ ॥ भान्तेषु यम रभ
लभस्त्रयः ३ ॥ भान्तेषु गम् नम् यमरमश्चत्वारः ४ ॥ शान्तेषु कृश्
दंश् दिश् दृश् मृश् रिश् रुश् लिश् विशस्पृशौ दश १० ॥
पान्तेषु कृप् त्विप् तुप् दिप् दुप् पिप् पुष्य विप् शिप् शुप श्लिष्या
एकादश ११ ॥ सान्तेषु घसवसर्तौ द्वौ २ ॥ हान्तेषु दह दिह दुह
नह मिह रुह लिह बहोऽष्टौ ८ ॥ अनुदान्ता हलन्तेषु धातवो
व्याधिकं शतम् ॥ सरूपधातुव्यावृत्त्यै युक्ता इत्संज्ञका इह ॥ १ ॥

अथानिटः ॥

त्यज हानौ । थलि एकाच इति इण्निषेधे प्राप्ते ॥

कृसृभृवृस्तुद्रुलृथ्रुवो लिटि ७ । २ । १३ ॥

क्रादिभ्य एव लिटि इण् न स्यादन्यस्मादनिटोऽपि न निषेधः ॥

अचस्तास्वत्यत्यनिटो नित्यम् ७ । २ । ६१ ॥

उपदेशेऽजन्तात्तासौ नित्यानिटो धातोः थल इण्ण ॥

ऋतो भारद्वाजस्य ७ । २ । ६३ ॥

तासौ नित्यानिट ऋदन्तादेव थलो नेङ् ऋदन्तभिन्नात्परस्य न निषेधः भारद्वाजस्य मते ॥

अयमत्र संग्रहः ॥

अजन्तोऽकारवान्वा यस्तास्यनिट् थलि वेङ्यम् ॥ ऋदन्त ईङ्ङ् नित्यानिट् क्राद्यन्यो लिटि सेङ् मवेत् ॥ १ ॥ तत्यजिथ । तत्य-
कथ । त्यक्ष्याति । वदव्रजेति वृद्धिः । अत्याक्षीत् । अत्याक्ताम् ।
अत्याक्षुः । तप संतापे । तेषिथ । ततप्य । तप्ता । अताप्सीत् । णम
प्रहृत्ये शब्दे च । नमति । नेमतुः । नेमिय । ननन्थ । वदव्रजेति
वृद्धिं बाधित्वा ॥

यमरमनमातां सकृ च ७ । २ । ७३ ॥

एपां सकृ एभ्यः सिच इद् च परस्मैपदे । अनंसीत् । अनंसि-
ष्टाम् । अनंसिपुः । क्षि क्षये । चिक्षाय । चिक्षयिथ । चिक्षेथ ।
चिक्षियिव । क्षेता ॥

अकृत्सार्वधातुकयोर्दीर्घः ७ । ४ । २५ ॥

अजन्ताङ्गस्य दीर्घः यादौ प्रत्यये नतु कृत्सार्वधातुकयोः ।
क्षीयात् ॥

सिचि वृद्धिः परस्मैपदेषु ७ । २ । १ ॥

इगन्ताङ्गस्य वृद्धिः परस्मैपदे सिचि । अक्षेपीत् । अक्षेष्टाम् ।
त्यादि ॥

इति २५ अंशः ।

घृ सेचने । घरति । जघार । जघ्रथुः । जघर्थ । जघ्रिव । घर्त्ता ॥

ऋद्वनोः स्ये ७ । २ । ७० ॥

आभ्यां स्यस्येद् । घरिष्यति ॥

रिङ् शयग्लिङ्पु ७ । ४ । २८ ॥

शे यकि यादावार्द्धधातुके लिङि च ऋतो रिङ् । रीङि प्रकृते रिङ्गविधिसामर्थ्यात् । दीर्घो न । घ्रियात् । अघार्षीत् इत्यादि । स्मृ चिन्तायाम् ॥

ऋतश्च संयोगादेर्गुणः ७ । ४ । १० ॥

ऋदन्तस्य संयोगादेरङ्गस्य गुणः लिटि । परत्वाण्यल्यप्ययम् । रपरत्वम् । उपधावृद्धिः । सस्मार । सस्मारतुः । स्मरिष्यति ॥

गुणोऽर्तिसंयोगाद्योः ७ । ४ । २९ ॥

अर्तः संयोगादेर्ऋदन्तस्य च गुणः यकि यादावार्द्धधातुके लिङि च । स्मर्यात् । अस्मार्षीत् । सन्नन्तादात्मनेपदं वक्ष्यते । द्वैप्र शोधने । दायति ॥

आदेच उपदेशे शिति ६ । १ । ४५ ॥

उपदेश एजन्तस्य धातोरात्वं स्यान्नतु इत्संज्ञकशादौ प्रत्यये ॥

आत औ णलः ७ । १ । ३४ ॥

आदन्ताद्धातोर्णल औ । ददौ ॥

आतो लोप इटि च ६ । ४ । ६४ ॥

अजाधोराद्धधातुकयोः क्लिदिदोः परयोरातो लोपः । द्वित्वात्परत्वाल्लोपे प्राप्ते द्विर्वचनेचेति निषेधाद् द्वित्वे कृते आलोपः । ददतुः । ददुः । ददिथ । ददाथ । ददिब । ददिम । दाता । दास्यति । दायात् । दायास्ताम् । सगिटौ । अदासीत् । अदासिष्टाम् । अदास्यत् । ग्लै म्लै हर्षक्षये । ग्लायति । जग्लौ । जग्लिथ । जग्लाय ॥

वाऽन्यस्य संयोगादेः ६ । ४ । ६८ ॥

स्थाभिन्नस्य संयोगादेर्धातोरात् एत्वं वार्द्धधातुके किति लिङि । ग्लयात् । ग्लेयात् । ध्वै चिन्तायाम् । मिह सेचने । मिमेहिथ ॥

हो ढः ८ । २ । ३१ ॥

इस्य ढः शलि पदान्ते च ॥

ढो ढे लोपः ८ । ३ । १३ ॥

मेढा । मेक्ष्यति ॥

शल इगुपधादनिटः क्सः ३ । १ । ४५ ॥

इगुपधो यः शलन्तोऽनिडधानुस्ततः परस्ये च्लेः क्सः । अमि-
क्षत् । अमिक्षताम् ॥ इति परस्मैपदिनः ॥

काश्ट दीप्तौ । प्रकाशते । चकाशे । काशिता । काशिष्यते ।
काशताम् । अकाशत । काशेत । काशिशीष्ट । अकाशिष्ट । अका-
शिष्यत । माष्ट दीप्तौ । भाष व्यक्तायां वाचाशिक्ष विद्योपादाने ।
भिक्ष भिक्षायाम् । चेष्ट चेष्टायाम् । लोच दर्शने । वदि अभिवाद-
नस्तुत्योः । वन्दते । यती प्रयत्ने । येते । येताते । मुद हर्षे । ईक्ष
दर्शने । ईक्षांचक्रे । एध वृद्धौ ॥

अथानिटः ॥

कुङ् शब्दे । धृङ् अवध्वंसने ॥

उश्च १ । २ । १२ ॥

ऋवर्णात्परौ झलादी लिङ् तङ्परः सिञ्चेत्येती कितौ । धृपीष्ट ॥

ह्रस्वादङ्गात् ८ । २ । २७ ॥

सिचो लोपो झलि । अधृत । त्रैङ् पालने । तत्रे । अत्रास्त । हृद
पुरीषोत्सर्गे । अहत्त । अहत्साताम् । रम रामस्ये । रेमे । रप्स्यते ।
हुलमप् प्राप्ता । इत्यात्मनेपदिनः ॥
दुयाच याच्यायाम् । धावु गतिशुद्ध्योः । हिक् अव्यक्ते शब्दे ॥

अथानिटः ॥

डुपचप् पाके । पेचतुः । पेचिय । पपक्य । पक्ता । अपाक्षीत् ।
अपक्त । धृज् धारणे । धरति । धरते । दधार । दध्नतुः । दधर्थ ।
दधिव । दध्रिषे । धर्ता । धरिष्यति । ध्रियात् । धृपीष्ट । अधार्षी-
त् । अधृत । भृञ् भरणे । वमर्थ । वमृव । लुडादौ भर्ता । इत्यादि
धृञ्वत् । अभृत ॥ इति उभयपदिनः ॥ इति भ्वादयः ॥

इति २६ अंशः ।

अद् भक्षणेऽनिद् परस्मैपदी ॥

अदिप्रभृतिभ्यः शपः २ । ४ । ७२ ॥

लुक् । अत्ति ॥

लिट्यन्यतरस्याम् २ । ४ । ४० ॥

अदो घस्त्व वा लिटि । जवात् ॥

गमहनजनखनघसां लोपः कृत्यनङि ६ । ४ । ९८ ॥

एपाभुपधाया लोपः कृति न त्वङि ॥

शासिवसिघसीनाञ्च ८ । ३ । ६० ॥

इणकुभ्यां परस्यैषां सस्य यः । जक्षतुः । घसेस्तासावमावात
थलि नित्यभिद् । जघसिथ ॥

इडत्यर्तिव्ययतीनाम् ७ । २ । ६६ ॥

एभ्यस्थलो नित्यमिद् । आदिथ । अत्ता ॥

हुझल्भ्यो ह्येर्धः ६ । ४ । १०१ ॥

होर्झलन्तेभ्यश्च ह्येर्धः । अदि ॥

अदः सर्वेषाम् ७ । ३ । १०० ॥

अवः परस्यापृक्तत्तार्वाधातुकस्याद् सर्वमते । आदत् ॥

उस्यपदान्तात् ६ । १ । ९६ ॥

अपदान्तादवर्णादुसि पररूपमेकादेशः । अद्युः ॥

लुङ्सनोर्घस्त्व २ । ४ । ३७ ॥

अदो घस्त्व लुङि सनि च ॥

पुपादिद्युताष्टदितः परस्मैपदेषु ३ । १ । ५५ ॥

दिवादिस्थपुपादेर्द्युतादेर्लौदितश्च च्लेस्त् परस्मैपदे । अवसत् ।
अस् मुवि ॥

शसोरल्लोपः ६ । ४ । १११ ॥

शस्यास्त्वेश्वाकारस्य लोपः सार्वाधातुके कृति । स्तः । संति ।
असि ॥

अस्तेभूः २ । ४ । ५२ ॥

आर्द्धधातुके । वभूव । भविता । इत्यादि ॥

घसोरेद्धावभ्यासलोपश्च ६ । ४ । ११९ ॥

घोरस्तेश्चेत्वं स्याद्धौ परे । अभ्यासलोपश्च । आभीयत्वेन एत्व-
स्यासिद्धत्वाद्धेर्धिः । एधि । स्तात् । स्तम् । लङि । अस्तिसिच

इति ईद । आसीत् ॥

हु दानादानयोः आदाने प्रीणने च । परस्मैपद्यनिद् ॥

जुहोत्यादिभ्यः श्लुः २ । ४ । ७५ ॥

शपः ॥

श्लौ ६ । १ । १० ॥

धातोर्द्धे । जुहोति ॥

अदभ्यस्तात् ७ । १ । ४ ॥

हस्य ॥

हुञ्जुवोः सार्वधातुके ६ । ४ । ८७ ॥

जुहोतेः श्रुप्रत्ययान्तस्य चानेकाचो संयोगपूर्वोर्वर्णस्य यणजादौ
सार्वधातुके । उवङोऽपवादः । जुहति ॥

भीद्वीभृदुवां श्लुवञ्च ३ । १ । ३९ ॥

एभ्यो लिट्याम् वाऽऽमि । श्लावि कार्यश्च । जुहवाश्चकार ।
जुहाव । होता ॥

जुसि च ७ । ३ । ८३ ॥

अजादौ जुसीगन्ताङ्गस्य गुणः । अजुहवुः । जुहुयात् । इह गुणो
न । भाष्ये पिच डिन्न डिञ्च पिन्न इति व्याख्यानात् विगोपविहि-
तेन डित्वेन पित्वस्य बाधात् ह्यात् । अहौपीत् ॥

दिबु क्रीडाविजिगीषाव्यवहारद्युतिस्तुतिमोदमदस्वप्नकान्तिग-
तिषु ॥

दिवादिभ्यः श्यन् ३ । १ । ६९ ॥

कर्त्रर्थे सार्वधातुके । इदमग्रेऽप्यनुवर्त्तते । शपोऽपवादः ॥

स्वादिभ्यः श्रुः ३ । १ । ७३ ॥

तुदादिभ्यः शः ३ । १ । ७७ ॥

रुधादिभ्यः श्रम् ३ । १ । ७८ ॥

गुणं बाधते ॥

तनादिकृभ्य उः ३ । १ । ७९ ॥

त्रयादिभ्यः श्रा ३ । १ । ८१ ॥

हलि च ८ । २ । ७७ ॥

रेफवान्तधातोरुपधाया इको दीर्घो हलि । दीव्यति । देविता ।
इत्यादि । पुञ् अमिषवेऽनिट् उभयपदी । अमिषवः स्रपनं पीडनं
ज्ञानं सुरासन्धानश्च । मुनोति । मुनुतः । मुन्वन्ति ॥

लोपश्चात्स्यान्यरस्यां म्योः ६ । ४ । १०७ ॥

असंयोगपूर्वो यः प्रत्ययोकारस्तदन्ताद्भ्रस्य वा लोपो म्योः ।
मुन्यः । मुनुषः । मुन्वहे । मुनुवहे ॥

उतश्च प्रत्ययादसंयोगपूर्वात् ६ । ४ । १०६ ॥

असंयोगपूर्वो यः प्रत्ययोकारस्तदन्तादद्भात्परस्य देलुङ् । मुनु ॥

स्तुसुधूञ्भ्यः परस्मैपदेषु ७ । २ । ७२ ॥

सिच इट् । अमासीत् । अमासि । तुद व्ययनेऽनिट् उभयपदी ।
तुदति । तुदसे । तोत्ता ॥

लिङ्सिचावात्मनेपदेषु १ । २ । ११ ॥

इयगमीपाट्टलः पर्यं शय्यादी लिङ् गिर्वा विनावात्मनेपदेषु ।
तुगीष्ट । अर्तासीत् । अतुत्त । अतुत्ताताम् ॥ रुधिर् आररणे
उभयपदानिट् । रुणटि । अगोरलोपः । ण्यन्म्यागिट्त्वाऽनुगताः
परमवर्णः । रुन्टः । रुन्पः । रुन्शन् । रुन्धे । रोट् । रुणधानि
अरुणत् । अरुन्धाम् । अरुन्धन् ॥

दश्च ८ । २ । ७५ ॥

धातोर्दस्य पदान्तस्य सिपि रुर्वा । अरुणत् । अरुणः ।
अरुधत् । अरौत्सीत् ॥

इति २७ अंशाः ।

तनु विस्तारे उभयपदी सेद् । तनोति । तन्वः । तनुवः । तनुते ।
तनिता ॥

अनुदात्तोपदेशवनतितनोत्यादीनामनुनासिकलोपो
झलि कृति ६ । ४ । ३७ ॥

अनुनासिकान्तानामेपां वनतेश्च लोपः झलादौ कृति । यमिर-
मिनमिगमिहनिमन्या अनुदात्तोपदेशाः । तनु क्षणु क्षिणु ऋणु
वृणु धृणु वनु मनु तनोत्यादयः ॥

तनादिभ्यस्तथासोः २ । ४ । ७९ ॥

तनादेः सिचो वा लुक् तथासोः । अतत् । अतनिष्ट । अतथाः ।
अतनिष्ठाः । डुकृञ् करणेऽनिद् उभयपदी । करोति ॥

अत उत् सार्वधातुके ६ । ४ । ११० ॥

उप्रत्ययान्तकृञोऽत उत्सार्वधातुके कृति । कुरुतः ॥

नित्यं करोतेः ६ । ४ । १०८ ॥

करोतेः प्रत्ययोकारस्य नित्यं लोपो वमयोः । कुर्वः । कुर्मः ।
कुरुते । कर्ता । हिलुकोऽसिद्धत्वादुत्वम् । कुरु ॥

ये च ६ । ४ । १०९ ॥

कृञ् उलोपो यादौ प्रत्यये । हलि चेति दीर्घे प्राप्ते ॥

न भकुर्छुराम् ८ । २ । ७९ ॥

भस्य कुर्छुरोश्च उपधाया न दीर्घः । कुर्यात् । अकृत । अस्य
विशेषो वक्ष्यते । डुक्रीञ् द्रव्यविनिमये उभयपद्यानिद् । क्रीणाति ॥

श्राभ्यस्तयोरातः ६ । ४ । ११२ ॥

अनयोरातो लोपः कृति सार्वधातुके ॥

ई हल्ययोः ६ । ४ । ११३ ॥

श्राभ्यस्तयोरात ईत्सार्वधातुके कृति हलि न तु घुसंज्ञस्य ।
क्रीणीतः । क्रीणन्ति । क्रीणीते । क्रीणाते । क्रीणते । क्रेता ।
चुर स्तेये ॥

सत्यापपाशरूपवीणातूलश्लोकसेनालोमत्वचवर्मवर्ण
चूर्णचुरादिभ्यो णिच् ३ । १ । २५ ॥

गुणः ॥

सनाद्यन्ता धातवः ३ । १ । ३२ ॥

सनादयः कमेर्णिहन्ताः प्रत्यया अन्ते येषान्ते धातुसंज्ञाः ।
सन्नाद्याः सन् काम्याणिच् क्यच्क्यपौ क्यङ्काचाराकिप् यङ् यगा-
येयङौ णिङ् तिप् शप् गुणायादेशाः । चोरयति ॥

णिचश्च १ । ३ । ७४ ॥

णिजन्तादात्मनेपदम् कर्तृगामिनि क्रियाफले । चोरयते ॥

कास्प्रत्ययादाममन्त्रे लिटि ३ । १ । ३५ ॥

कासृधातोः प्रत्ययान्तेभ्यश्चाम् नतु मन्त्रे ॥

कास्यनेकाज्यहणं कर्तव्यम् ❀ ॥

एवं च प्रत्ययग्रहणं सूत्रे न कार्यमित्याहुः । ह्रीवाञ्चक्रेइत्या-
द्यर्थङ्कार्यमिति परे ॥

अयामन्ताल्वाय्येत्त्विष्णुषु ६ । ४ । ५५ ॥

आमादिषु णेरय लोपापवादः । चोरयाश्चकार । चोरयाश्चक्रे ॥

णेरनिति ६ । ४ । ५१ ॥

अनिडादावार्द्धधातुके णेलोपः । चोर्यात् ॥

णिश्चिदुश्रुभ्यः कर्तरि चङ् ३ । १ । ४८ ॥

ण्यन्तात् श्यादिभ्यश्च । च्लेश्चङ् कर्तृलुङि णिलोपात्परत्वादेरने-
काच इति यणि प्राप्ते ॥

प्यलोपावियङ् यण् गुणवृद्धिदीर्घेभ्यः पूर्वविप्रतिपे-
धेन ❀ ॥

इयङ् । अततक्षत् । यण् । आटिटत् । गुणः । कारणा । वृद्धिः
कारकः । दीर्घः कार्यते ॥

णौ चङ्युपधाया ह्रस्वः ७ । ४ । १ ॥

चङ्परे णौ यदङ्गं तस्योपधाया ह्रस्वः ॥

चङि ६ । १ । ११ ॥

अनभ्यासधात्ववयवस्यैकाचः प्रथमस्य द्वे अजादेस्तु द्विती-
यस्य ॥

दीर्घो लघोः ७ । ४ । ९४ ॥

चङ्परे णौ यल्लघु तत्परो योऽङ्गस्यावयवो लघुरभ्यासस्तस्य
दीर्घः स्याण्णावगलोपेऽस्ति । अचूचुरत् ॥
इति २८ अंशः ।

भज विश्राणने ॥

सन्वल्लघुनि चङ्परेनगलोपे ७ । ४ । ९३ ॥

चङ्परे णौ यल्लघु तत्परो योऽङ्गस्यावयवोऽभ्यासस्तस्य सनीर
कार्यं स्याण्णावगलोपेऽस्ति ॥

सन्यतः ७ । ४ । ७९ ॥

अभ्यासस्यात इः सनि । दीर्घो लघोः । अवीमजत् । लोकृ
दर्शने ॥

नागलोपिशास्वृदिताम् ७ । ४ । २ ॥

णिच्यगलोपिनः शास्तेर्द्धदिताञ्चोपधाया ह्रस्वो न चङ्परे णौ ।

अलुलोकत् ॥

भुवोऽवकल्कने ❀ ॥

णिच् । भावयति । णिचि अच आदेशो न स्यादित्ये कर्तव्ये ॥

ओः पुयण्ज्यपरे ७ । ४ । ८० ॥

सनि परे यदङ्गं तदवयवाभ्यासोकारस्येत्वं पवर्गयण्जकारेष्ववर्णपरेषु परतः । अवीमवत् । अवीमवत् । अथादताः । कथ वाक्यप्रबन्धे ॥

अतो लोपः ६ । ४ । ४८ ॥

आर्द्धधातुकोपदेशकाले यददन्तन्तस्यातो लोप आर्द्धधातुके ॥

अचः परस्मिन् पूर्वविधौ १ । १ । ५७ ॥

परानिमित्तोऽजादेशः स्थानिवत् स्थानिमृतादचः पूर्वत्वेन दृष्टस्य विधौ कर्तव्ये । इति अलोपस्य स्थानिवद्भावात्त वृद्धिः । कथयति । अचकथत् । अग्लोपित्वान्नदीर्घसन्वद्भावौ ॥

इति भ्वादयश्चरार्थता धातवः ।

कण्डूञ् गात्रविधर्पणे ॥

कण्डादिभ्यो यक् ३ । १ । २७ ॥

कण्डादयो धातवः प्रातिपदिकानि चेति द्विधा तत्र धातुभ्यः स्वार्थे यक् । कण्डूयति कण्डूयते । अकण्डूयिष्ट ॥

तत्प्रयोजको हेतुश्च १ । ४ । ५५ ॥

कर्तुः प्रयोजको हेतुसंज्ञः कर्तृसंज्ञश्च ॥

हेतुमति च ३ । १ । २६ ॥

प्रयोजकव्यापारे प्रेषणादौ वाच्ये धातोर्णिच् । भवन्तं प्रेरयति भावयति । अवीमवत् । रक्षयति । अररक्षत् । खादयति । नाग्लोपिशास्त्रदिताम् । अचखादत् । ह्लादयति । अजिह्वदत् । शील-यति । अशीशिलत् । नादयति । अनीनदत् । चेतयति । अची-चितत् ॥

धातोः कर्मणः समानकर्तृकादिच्छायां वा ३ । १ । ७ ॥

इधिकर्मण इपिणैककर्तृकाद्धातोः सन् वेच्छायाम् ॥

सन्यङोः ६ । १ । ९ ॥

सन्नन्तस्य यङन्तस्य च प्रथमैकाचो द्वे स्तोऽजादेस्तु द्वितीयस्य ।
इति द्वित्वम् ॥

सनि ग्रहगुहोश्च ७ । २ । १२ ॥

ग्रहेर्गुहेरुगन्ताच्च सन इण् न ॥

इको झल् १ । २ । ९ ॥

इगन्ताज्झलादिः संन् कित् । बुभूपति । जिजीविपति । सन्यतः
निनदिपति ॥

अज्झनगमां सनि ६ । ४ । १६ ॥

अजन्तानां हनः इडिणिकादेशगमेश्च झलादौ सनि दीर्घः ।
चिक्षीपति ॥

पूर्ववत्सनः १ । ३ । ६२ ॥

सनः पूर्वो यो धातुस्तेन तुल्यं सन्नन्तादप्यात्मनेपदम् । डिङ-
यिपते ॥

धातोरेकाचो हलादेः क्रियासमभिहारे यङ् ३ । १ । २२ ॥

पौनःपुन्यं भृशार्थश्च क्रियासमभिहारस्तस्मिन्द्योत्ये एकाचो
हलादेर्धातोर्यङ् ॥

गुणो यङ्लुकोः ७ । ४ । ८२ ॥

अभ्यासस्य गुणः याङि यङ्लुकि च । पुनः पुनर्भृशं वा भवति
बोभूयते । बोभूयाश्चक्रे । अबोभूयिष्ट ॥

दीर्घोऽकितः ७ । ४ । ८३ ॥

अकितोऽभ्यासस्य दीर्घो याङि यङ्लुकि च । रारक्ष्यते ॥

यस्य हलः ६ । ४ । ४९ ॥

हलः परस्य यशब्दस्य लोपः आर्द्धधातुके । आदेः परस्य । रार-
क्षांचक्रे । रारक्षिता ॥

इति २९ अंशाः ।

यङोऽचि च २ । ४ । ७४ ॥

यङोऽच्प्रत्यये लुक् । चान्तं विनापि बहुलं लुक् । अयमनैमित्तिकत्वादादौ भवति । ततः प्रत्ययलक्षणेन यङन्तत्वाद्वित्वम् । शेषात्कर्त्तरि परस्मैपदम् । चर्करीतं चेत्यदादौ पाठाच्छपो लुक् । शितपा शपानुबन्धेन निर्दिष्टं यद्गणेन च ॥ यत्रैकाजग्रहणं चैव पञ्चैतानि न यङ्लुकि ॥ १ ॥ इत्यापि स्मरणीयम् । इयं परिभाषा निर्मूला इत्यप्याहुः ॥

यङो वा ७ । ३ । ९४ ॥

यङन्तात्परस्य हलादेः पितः सार्वधातुकस्येड् वा । भूसुवोरिति गुणनिषेधो यङ्लुकि भाषायां न । वोभूतु तेतिक्ते इति छन्दसि निपातनात् । वोभवीति । वोभोति । वोभूतः । वोभुवति । वोम-
वाञ्चकार । वोमविता । अवोभवीत् । अवोभोत् । अवोभूताम् ।
अवोभवुः । वोभूयात् । वोभूयाताम् । वोभूयात् । वोभूयास्ताम् ।
अवोभूवीत् । अवोभोत् । अवोभूताम् । अवोभवुः । अवोमवि-
ष्यदित्यादि । राराष्टि । रारष्टः । रारक्षति । रारक्षि । ह्री । राराङ्कि ।
अरारक्षीत् । अरारद् लुङि अरारक्षीत् ॥

सुप आत्मनः क्यच् ३ । १ । ८ ॥

इपिकर्मण एपितृसंबन्धिनः सुवन्तादिच्छार्थे वा क्यच् ॥

सुपो धातुप्रातिपदिकयोः २ । ४ । ७१ ॥

एतयोखयवस्य सुपो लुक् ॥

क्यचि च ७ । ४ । ३३ ॥

अस्य ईत् । आत्मनः पुत्रमिच्छति पुत्रीयाते ॥

नः क्ये १ । ४ । १५ ॥

क्यचि क्यङि च नान्तमेव पदन्नान्यत् । समिध्याति ॥

क्यस्य विभाषा ६ । ४ । ५० ॥

हलः परयोः क्यचक्यङोर्लोपो वाऽऽर्द्धधातुके । समिधिता ।
समिधियता ॥

काम्यञ्च ३ । १ । ९ ॥

उक्तविषये । पुत्रकाम्यति । यशस्काम्यति ॥

उपमानादाचारे ३ । १ । १० ॥

उपमानात्कर्मणः सुवन्तादाचारेऽर्थे क्यच् । पुत्रमिवाचरति पुत्री-
यति च्छात्रम् ॥

अधिकरणाच्च ❀ ॥

प्राप्तादीयति कुट्याम् ॥

कर्तुः क्यङ् सलोपश्च ३ । १ । ११ ॥

उपमानात्कर्तुः सुवन्तादाचारे क्यङ् वा । सान्तस्य तु कर्तृवाच-
कस्य लोपो वा क्यङ् वेत्युक्तेः । पक्षे वाक्यं कृष्ण इवाचरति
कृष्णाद्यते । ओजायते । अप्सरायते ॥

सर्वप्रातिपदिकेभ्यः क्त्वा वक्तव्यः ❀ ॥

सुप इति न संबध्यते । तेन पदकार्यं न ॥

वेरपृक्तस्य ६ । १ । ६७ ॥

अपृक्तस्य वस्य लोपः । कृष्णाति ॥

भावकर्मणोः १ । ३ । १३ ॥

लस्यात्मनेपदम् ॥

सार्वधातुके यक् ३ । १ । ६७ ॥

धातोर्यक् भावकर्मवाचिनि सार्वधातुके । भावे प्रथमैकवचनमेव ।
अनभिहिते कर्त्तारं तृतीया । त्वया मया अन्यैश्च भूयते चभूधे ॥

स्यसिच्सीयुट्तासिषु भावकर्मणोरुपदेशेऽज्ञानग्रह-

दृशां वा चिण्वदिट् च ६ । ४ । ६२ ॥

उपदेशे योऽञ् तदन्तानां हनादीनां च चिणीवाङ्कार्यं वा स्यात्
स्यादिषु परेषु भावकर्मणोर्गम्यमानयोः स्यादीनामिडागमश्च । अय-
मिद् चिण्वद्भावसंनियोगशिष्टत्वात्तदभावे न । भाविता । भविता ।

भाविष्यते । भविष्यते । भूयताम् । अभूयत । भूयेत । भाविषीष्ट ।
भविषीष्ट ॥

चिण् भावकर्मणोः ३ । १ । ६६ ॥

च्लेश्चिण् भावकर्मवाचिनि तशब्दे ॥

चिणो लुक् ६ । ४ । १०४ ॥

चिणः परस्य तशब्दस्य लुक् । अभावि । अभाविष्यत । अभ-
विष्यत । कर्मणि तद् । अनुभूयते आनन्दश्चैत्रेण त्वया मया च ।
अनुभूयेते । अनुभूयन्ते । त्वमनुभूयसे । अहमनुभूये । इत्यादि ।
रक्ष्यते । अरक्षि ॥ इत्याख्यातम् ।

इति ३० अंशाः ।

इति प्रथमाध्यायस्य तृतीयः पादः ।

धातोः ३ । १ । ९१ ॥

अधिकारः ॥

तत्रोपपदं सप्तमीस्थम् ३ । १ । ९२ ॥

धात्वाधिकारे सप्तम्यन्ते कर्मणीत्यादौ वाच्यत्वेन स्थितं कुम्भा-
दि तद्वाचकं पदमुपपदसंज्ञम् ॥

कृदतिङ् ॥ वाऽसरूपोऽस्त्रियाम् ३ । १ । ९४ ॥

अस्मिन्धात्वाधिकारेऽसरूपोऽपवादप्रत्ययः उत्सर्गस्य बाधको वा
स्यधिकारोक्तं विना ॥

कृत्याः ३ । १ । ९५ ॥

'तव्यत्तव्यानीयर्यण्यक्यप्रकेलिमरः कृत्यसंज्ञाः ॥

कर्तरि कृत् ३ । ४ । ६७ ॥

कृतप्रत्ययः कर्तरि स्यात् ॥

तयोरेव कृत्यक्तखलर्याः ३ । ४ । ७० ॥

एते भावकर्मणोरेव ॥

तव्यत्तव्यानीयरः ३ । १ । ९६ ॥

धातोरेते प्रत्ययाः स्युः । एधितव्यम् । एधनीयम् त्वया ।
भावे एकत्वं क्लीबत्वञ्च । चेतव्यश्चयनीयो वा धर्मस्त्वया । चेतव्या
तत्पत्तिः । चेतव्यं धनम् ॥

केलिमर् च ❀ ॥

पचेलिमाः मापाः । कर्मणि प्रत्ययः ॥

अचो यत् ३ । १ । ९७ ॥

अजन्ताद्धातोर्यत् । चेयम् । जेयम् ॥

वान्तो यि प्रत्यये ६ । १ । ७९ ॥

यादौ प्रत्यये ओदौतोखावौ । श्रव्यम् ॥

धातोस्तन्निमित्तस्यैव ६ । १ । ८० ॥

यादौ प्रत्यये धातोरेचश्चेदवावौ तर्हि तन्निमित्तस्यैव । भव्यम् ।

तन्निमित्तस्य किम् । औयते । औयत् ॥

ओरावश्यके ३ । १ । १२५ ॥

उवर्णान्ताद्धातोर्ण्यत् अवश्यभावे द्योत्ये । अवश्यं भवितुं योग्यं
भाव्यम् । श्राव्यम् ॥

पोरदुपधात् ३ । १ । ९८ ॥

पवर्णान्ताददुपधाद्यत् । शप्यम् । लभ्यम् । सारूप्यान्न ण्यत् ।
तव्यदादयः स्युरेव । शप्तव्यम् । शपनीयम् ॥

ऋदुपधाच्चाकृपिचृतेः ३ । १ । ११० ॥

क्यप् । वृत्त्यम् । वृध्यम् ॥

ऋहलोर्ण्यत् ३ । १ । १२४ ॥

ऋवर्णान्ताद्बलन्ताच्च धातोर्ण्यत् । हार्यम् । बाह्यम् ॥

चजोः कुघिण्यतोः ७ । ३ । ५२ ॥

चस्य जस्य च कुत्वं घिति ण्यति च प्रत्यये । पाक्यम् ॥

अर्हे कृत्यतृचश्च ३ । ३ । १६९ ॥

चालिङ्ग । पाठ्य' । पठिता । त्व कन्या वहेः ॥

शकि लिङ् च ३ । ३ । १७२ ॥

शक्तौ लिङ् । चात्कृत्याः । बाह्यः । वहनीयः । त्वं भा
वहेः ॥

ण्वुल्लृचौ ३ । १ । १३३ ॥

धातोः ॥

युवोरनाकौ ७ । १ । १ ॥

युवुएतयोरनुनासिकयोः अन अक एतौ स्तः । कारकः ।
कर्त्ता ॥

नन्दिग्रहिपचादिभ्यो ल्युणिन्यचः ३ । १ । १३४ ॥

नन्द्यादेर्ल्युः ग्रह्यादेर्णिनिः पचादेरच् । नन्दनः । लवणः ।
निपातनाण्णः । ग्राही ॥

आतो युक् चिण्कृतोः ७ । ३ । ३३ ॥

आदन्तस्य युक् चिणि णिति णिति कृति च । स्थायी । पचः ।
पचादिराकृतिगणः । सर्वधातुभ्य एवाच् इति प्राहुः ॥

इगुपधज्ञाप्तीकिरः कः ३ । १ । १३५ ॥

एभ्यः कः । शिष्यः । कृशः । ज्ञः । प्रियः ॥

ऋत इद्धातोः ७ । १ । १०० ॥

रूपगत्वम् । किरः ॥

आतश्चोपसर्गे ३ । १ । १३६ ॥

कः । कुगतिप्रादयः इति वक्ष्यमाणेन गमात् । गुगलः । प्रतः ॥

आशिपि च ३ । १ । १५० ॥

आशीर्षिपयार्थवृत्तेर्धातोर्नुन् । जीवताजीवकः । नन्दकः ॥

कर्मण्यण् ३ । २ । १ ॥

कर्मण्युपपदे धातोर्ण् ॥

उपपदमतिद् २ । २ । १९ ॥

उपपदं समर्थेन नित्यं समस्यते अतिङन्तश्चायं समासः । प्राति-
पादिकत्वम् । सुपो लुक् । कुम्भं करोतीति कुम्भकारः ॥

आतोऽनुपसर्गे कः ३ । २ । ३ ॥

आदन्ताद्धातोरनुपसर्गात् कर्मण्युपपदे कः स्यात् । गोदः । पा-
णित्रम् । नेह । गोसंदायः ॥

क्विप् च ३ । २ । ७६ ॥

अयमापि दृश्यते ॥

ह्रस्वस्य पिति कृति तुक् ६ । १ । ७१ ॥

कृत् ॥

इति ३१ अंशः ।

सुप्यजातौ णिनिस्ताच्छील्ये ३ । २ । ७८ ॥

अजात्यर्थे सुपि धातोर्णिनिः ताच्छील्ये द्योत्ये । उष्णमोजी ।
उपजीवी ॥

कर्तर्युपमाने ३ । २ । ७९ ॥

णिनिः । उष्ट्रकोशी ॥

व्रते ३ । २ । ८० ॥

णिनिः । स्थण्डिलशायी ॥

बहुलमाभीक्ष्ये ३ । २ । ८१ ॥

पौनःपुन्ये द्योत्ये सुप्युपपदे णिनिः । क्षीरपायिण उशीनराः ।

भूते इत्याधिकृत्य ॥

अन्येष्वपि दृश्यते ३ । २ । १०१ ॥

सप्तमीपञ्चमीभिन्नेऽपि उपपदे जनेर्ङः । अजः । द्विजः । जनि-
भिन्नादपि कारकान्तरेऽपि क्वचित् । परिता ॥

क्तवत् निष्ठा १ । १ । २६ ॥

एतौ निष्ठासंज्ञौ ॥

निष्ठा ३ । २ । १०२ ॥

भूतार्थवृत्तेर्द्वातोर्निष्ठा स्यात् । स्नातं मया । स्तुतस्त्वया विष्णुः ।
विष्णुर्विश्वं कृतवान् ॥

श्रुकः किति ७ । २ । ११ ॥

श्रिज एकाजुगन्ताच्च गित्कितोरिण् । न श्रितः भूतम् भूतवान् ॥

गत्यर्थार्कर्मकश्चिपशीङ्स्थासवस जनरुहजीर्यतिभ्यश्च
३ । ४ । ७२ ॥

कर्तरि क्तः स्याद्भावकर्मणोश्च । गङ्गाङ्गतः । गङ्गां प्राप्तः । स्नातः
सः । पक्षे प्राप्ता गङ्गा तेनेत्यादि । शेषं वक्ष्यते ॥

मतिबुद्धिपूजार्थेभ्यश्च ३ । २ । १८८ ॥

वर्तमाने क्तः । राज्ञां मतः । इष्यमाण इत्यर्थः । बुद्धः पूजितः ।
चात् शीलितो रक्षितः क्षान्त आक्रुष्टो जुष्ट इत्यादि ॥

लटः शतृशानचावप्रथमासमानाधिकरणे ३ । २ । १२४ ॥

पचन्तं चैत्रम्पश्य ॥

आने मुक् ७ । २ । ८२ ॥

अदन्ताङ्गस्यातो मुक् आने परे । पचमानं चैत्रं पश्य । प्रथमा-
समानाधिकरणेऽपि क्वचित् । सन् ब्राह्मणः ॥

तौ सत् ३ । २ । १२७ ॥

शतृशानचौ सत्संज्ञौ ॥

लटः सद्वा ३ । ३ । १४ ॥

करिष्यन्तं करिष्यमाणं पश्य । प्रथमासमानाधिकरणेऽपि
क्वचित् । करिष्यतीति करिष्यन् ॥

आक्वेस्तच्छीलतद्धर्मतत्साधुकारिषु ३ । २ । १३४ ॥

क्षिपमाभिव्याप्य वक्ष्यमाणाः प्रत्ययास्तच्छीलादिषु कर्तृषु
योध्याः ॥

तृ ३ । २ । १३५ ॥

कर्ता कटम् ॥

चलनशब्दार्थादकर्मकाद्युच्च ३ । २ । १४८ ॥

चलनार्थाच्छब्दार्थाच्चकर्मकाद्युच्च । चलनः । शब्दनः । इत्यादि ॥

अनुदात्तेतश्च हलादेः ३ । २ । १४९ ॥

अकर्मकाद्युच्च । वर्तनः । वर्द्धनः ॥

क्रोधमण्डार्थेभ्यश्च ३ । २ । १५१ ॥

क्रोधनः । मण्डनः ॥

सनाशंसभिश्च उः ३ । २ । १६८ ॥

षिकीर्षुः । आशंसुः । भिक्षुः ॥

अन्येभ्योऽपि दृश्यते ३ । २ । १७८ ॥

किप् । छिद् । भिद् । मितद्वादिभ्यः डुः । मितद्दुः । शतद्दुः ।

शम्भुः ॥

तुमुन्णुलौ क्रियायां क्रियार्थायाम् ३ । ३ । १० ॥

क्रियार्थायां क्रियायामुपपदे भविष्यदर्थे धातोरेतौ स्तः । अव्य-
यक्तौ भावे । घटं कर्तुं याति । घटं कारको याति ॥

समानकर्तृकेषु तुमुन् ३ । ३ । ५८ ॥

इच्छार्थेष्वेककर्तृकेषूपपदेषु धातोस्तुमुन् । इच्छति मोक्तुम् ॥

भावे ३ । ३ । १८ ॥

सिद्धावस्थापन्ने धात्वर्थे वाच्ये धातोर्घञ् । पाकः पाकौ ॥

अकर्तरि च कारके संज्ञायाम् ३ । ३ । १९ ॥

कर्तृभिन्ने कारके घञ् । प्रासः । संज्ञायामिति प्रायिकम् । लाभो
लब्धः । कृत्यल्युट् इत्यतः प्राक् भावे अकर्तरि च कारके इति
द्वयमप्यनुवर्तते ॥

एरच् ३ । ३ । ५६ ॥

जयः । नयः ॥

ऋदोरप् ३ । ३ । ५७ ॥

करः । गरः । लवः । यवः । स्तवः ॥

घभर्थे कविधानम् * ॥

प्रस्थः । विघ्नः ॥

इितः क्रिः ३ । ३ । ८८ ॥

अयमथुष भाव एव ॥

त्केर्मम् नित्यम् ४ । ४ । २० ॥

त्किप्रत्ययान्तान्नित्यं मप् निर्वृत्तेऽर्थे । पाकेन निवृत्तं पक्विमम् ॥

भावप्रत्ययान्तादिमव्वक्तव्यः * ॥

निर्वृत्तेऽर्थे । त्यागिमम् । पाकिमम् ॥

द्वितोऽथुच् ३ । ३ । ८९ ॥

वेपथुः । श्वयथुः ॥

इति ३२ अंशाः ।

स्त्रियां क्तिन् ३ । ३ । ९४ ॥

स्त्रीलिङ्गे भावादी क्तिन् । घञोऽपवादः । अजपी न्तु परत्वाद्वा-
धते । कृतिः । चितिः । स्तुतिः ॥

तितुत्रतथसिसुसरकसेषु च ७ । २ । ९ ॥

एपात्तेद् । दीप्तिः । स्फायी । स्फातिः । संपदादिभ्यः षिप् ।
सम्पत् । विपत् । क्तिन्नपि । संपत्तिः । निपात्तिः ॥

अप्रत्ययात् ३ । ३ । १०२ ॥

प्रत्ययान्तेभ्यो धातुभ्यः भ्रियामकारप्रत्ययः । चिन्नीर्णा । पुत्र-
काम्या ॥

गुरोश्च हलः ३ । ३ । १०३ ॥

गुरुमतो हलन्तात् स्त्रियामकारप्रत्ययः । ईहा । ऊहा ॥

पिद्भिदादिभ्योऽङ् ३ । ३ । १०४ ॥

पिद्भ्यो भिदादिभ्यश्च स्त्रियामङ् । जरा । त्रपा । भिदा निदारणे ।
भित्तिरन्या । छिदा । क्रपेः संप्रसारणं च । कृपा ॥

आतश्चोपसर्गे ३ । ३ । १०५ ॥

अङ् । प्रदा । उपदा । श्रदन्तरोरुपसर्गवद्भूतिः । श्रद्धा ।
अन्तर्द्धा ॥

ण्यासश्रंथो युच् ३ । ३ । १०७ ॥

कारणा । आसना । श्रन्थना ॥

रोगारुखायां ण्वुल् बहुलम् ३ । ३ । १०८ ॥

प्रच्छर्दिका । कचिन्न । शिरोर्त्तिः ॥

धात्वर्थनिर्देशे ण्वुल् वक्तव्यः ॥

आसिका । शायिका । इक्षितपी धातुनिर्देशे । पचिः । पचतिः ॥

वर्णात्कारः ॥

अकारः । रादिफञ् । रेफः । रकारः । मत्वर्थोच्छः बाहुलकात् ।
अलोपः मत्वर्थीयः ॥

इणजादिभ्यः ॥

आजिः । आतिः ॥

इञ् वपादिभ्यः ॥

वापिः । वासिः ॥

इक् कृष्यादिभ्यः ॥

कृषिः । गिरिः ॥

आक्रोशे नञ्यानिः ३ । ३ । ११२ ॥

नञि उपपदे अनिः आक्रोशे । अजीवनिस्ते भूयात् ॥

कृत्यल्युटो बहुलम् ३ । ३ । ११३ ॥

यत्र विहितास्ततोऽन्यत्रापि स्युः । स्नात्यनैनोति स्नानीयं चूर्णम् ।
दीयतेऽस्मै दानीयो विप्रः । राज्ञा भुज्यन्ते राजभोजनाः शालयः ॥

नपुंसके भावे क्तः ३ । ३ । ११४ ॥

कालसामान्ये ॥

ल्युट् च ३ । ३ । ११५ ॥

हसितम् । हसनम् ॥

करणाधिकरणयोश्च ३ । ३ । ११७ ॥

ल्युट् । इध्मप्रव्रश्चनः । गोदोहनी । खलः । प्राकरणाधिकरण-
योरित्यधिकारः ॥

पुंसि संज्ञायां घः प्रायेण ३ । ३ । ११८ ॥

आकुर्वन्त्यस्मिन् आकरः ॥

हलश्च ३ । ३ । १२१ ॥

घञ् । रमन्ते योगिनोऽत्रेति रामः ॥

ईपट्ः सुषु कृच्छाकृच्छ्रार्थेषु खल् ३ । ३ । १२६ ॥

एषु दुःखसुखार्थेषूपपदेषु खल् । दुष्करः कटो भवता । सुकरः ।
ईपत्करः ॥

आतो युच् ३ । ३ । १२८ ॥

खलोऽपवादः । ईपत्पानः सोम इत्यादि ॥

आवश्यकामर्ण्ययोर्णिनिः ३ । ३ । १७० ॥

अवश्यकारी । शतन्दायी ॥

कृत्याश्च ३ । ३ । १७१ ॥

आवश्यकामर्ण्ययोः । अवश्यं हारिः सेव्यः । शतन्देयम् ॥

क्तिच्यतौ च संज्ञायाम् ३ । ३ । १७४ ॥

धातोः क्तिच कश्चादिषि संज्ञायाम् । मृतात् । मृतिः । दे-
वदत्तः ॥

अलंखल्योः प्रतिपेधयोः प्राचां क्त्वा ३ । ४ । १८ ॥

प्रतिपेधार्थयोरलंखल्वोरुपपदयोः क्त्वा । अलं दत्त्वा । पीत्वा खलु ॥

समानकर्तृकयोः पूर्वकाले ३ । ४ । २१ ॥

समानकर्तृकयोर्द्वात्यर्थयोः पूर्वकाले नियमानाद्भातोः क्त्वा । भुक्त्वा व्रजति । भुक्त्वा पीत्वा व्रजति ॥

समासे नञ्पूर्वे क्त्वो ल्यप् ७ । १ । ३७ ॥

अव्ययपूर्वपदेऽनञ्समासे क्त्वो ल्यप् । प्रकृत्य ॥

आभीक्ष्ण्ये णमुल् च ३ । ४ । २२ ॥

पौनःपुन्ये द्योत्ये पूर्वविषये णमुल् । चात् त्वा । द्वित्वम् । स्मारं स्मारं नमति शिवम् । स्मृत्वा स्मृत्वा ॥

उपमाने कर्मणि च ३ । ४ । ४५ ॥

कर्मणि कर्त्तरि चोपमाने उपपदे धातोर्णमुल् ॥

कपादिषु यथाविध्यनुप्रयोगः ३ । ४ । ४६ ॥

घृतनिधायनिहितं जलम् । अजनाशं नष्टः ॥

इति कृत् । इति ३३ अंशाः ।

प्रातिपदिकार्थलिङ्गपरिमाणवचनमात्रे प्रथमा २ । ३ । ४६ ॥

प्रातिपदिकार्थमात्रे लिङ्गमात्राद्याधिक्ये संख्यामात्रे च प्रथमा स्यात् । उच्चैः । नीचैः । कृष्णः । श्रीः । ज्ञानम् । अलिङ्गा निय-
तलिङ्गाश्च । प्रातिपदिकार्थमात्र इत्यस्योदाहरणम् । अनियतलि-
ङ्गास्तु लिङ्गमात्राद्याधिक्यस्य । तटः । तटी । तटम् । परिमाण-
मात्रे द्रोणो व्रीहिः । द्रोणरूपं यत्परिमाणं तत्परिच्छिन्नो व्रीहि-
रित्यर्थः । वचनं संख्या । एकः । द्वौ । बहवः ॥

सम्बोधने च २ । ३ । ४७ ॥

इह प्रथमा । हे राम ॥

कारके १ । ४ । २३ ॥

इत्याधिकृत्य ॥

कर्तुरीप्सिततमं कर्म १ । ४ । ४९ ॥

कर्तुः क्रियया आमुमिष्टतमं कारक कर्मसंज्ञम् ॥

अनभिहिते २ । ३ । १ ॥

इत्याधिकृत्य ॥

कर्मणि द्वितीया २ । ३ । २ ॥

अनुक्ते कर्मणि द्वितीया । हरिं भजति ॥

उभसर्वतसोः कार्याधिगुपर्यादिषु त्रिषु ॥

द्वितीयोप्रेडितान्तेषु ततोऽन्यत्रापि दृश्यते ॥

उभयतः कृष्णम् । सर्वतः कृष्णम् । उपर्युपरि लोकम् । इत्यादि ॥

स्वतन्त्रः कर्ता १ । ४ । ५४ ॥

क्रियाया स्वातन्त्र्येण विवक्षितोऽर्थः कर्तृसंज्ञः ॥

साधकतमं करणम् १ । ४ । ४२ ॥

क्रियासिद्धौ प्रकृत्योपकारकं करणसंज्ञम् ॥

कर्तृकरणयोस्तृतीया २ । ३ । १८ ॥

अनभिहिते कर्तरि करणे च तृतीया । रामेण वागेन हतो वाली ।

प्रकृत्यादिभ्य उपसंख्यानम् ॐ ॥

प्रकृत्या चारुः । प्रायेण याज्ञिकः । इत्यादि ॥

सहयुक्तेऽप्रधाने २ । ३ । १९ ॥

सहार्थेन युक्ते अप्रधाने तृतीया । पुत्रेण सदागतः पिता । एवं
सावंप्रभृतियोगेऽपि ॥

विनापि तद्योगं तृतीया ॐ ॥

पुत्रेणागत ॥

कर्मणा यमभिप्रैति स सम्प्रदानम् १ । ४ । ३२ ॥

दानस्य कर्मणा यमभिप्रैति स संप्रदानसंज्ञः ॥

चतुर्थी सम्प्रदाने २ । ३ । १३ ॥

विप्राय गां ददाति ॥

तादर्थ्ये चतुर्थी वाच्या ❀

मुक्तये हरिं भजति ॥

नमःस्वतिस्वाहास्वधालंवपडयोगाच्च २ । ३ । १६ ॥

एभिर्योगे चतुर्थी । हरये नमः । इत्यादि ॥

ध्रुवमपायेऽपादानम् १ । ४ । २४ ॥

अपायो विश्लेषस्तस्मिन् साध्ये ध्रुवमवधिभूतं कारकमपादानसंज्ञम् ॥

अपादाने पञ्चमी २ । ३ । २८ ॥

ग्रामादायाति । धावतोऽश्वात्पतति ॥

अन्यारादितरर्ते दिक्छन्दाऽञ्चूत्तरपदाजाहियुक्ते २ । ३ । २९

एभिर्योगे पञ्चमी । अन्यः भिन्नः आरात् इतरः ऋते वा कृष्णात् । चैत्रात्पूर्वः फाल्गुनः । प्राक् प्रत्यक् दक्षिणा । दक्षणाहि वा ग्रामात् ॥

इति ३४ अंशाः ।

दूरान्तिकार्थेभ्यो द्वितीया च २ । ३ । ३५ ॥

प्रातिपदिकार्थमात्रे एभ्यो द्वितीया चात्पञ्चमीतृतीये । ग्रामस्य दूरं दूरात् दूरेण वा । एवमन्तिकयोगे । असत्त्ववचनस्यैव । नेह । दूरः पन्थाः ॥

पष्ठी शेषे २ । ३ । ५० ॥

कारकप्रातिपदिकार्थव्यतिरिक्तः स्वस्वामिमावादिः शेषस्तत्र पष्ठी । सज्ञः पुरुषः । कर्मादीनामपि सम्बन्धमात्रविवक्षायां पष्ठ्येव । सतां गतम् । सर्पिषो जानीते । मातुः स्मरति । इत्यादि ॥

कर्तृकर्मणोः कृति २ । ३ । ६५ ॥

कृद्योगे कर्त्तरि कर्मणि च षष्ठी । कृष्णस्य कृतिः । जगतः कर्त्ता
कृष्णः ॥

न लोकाव्ययनिष्ठाखलर्थतृणाम् २ । ३ । ६९ ॥

एषा प्रयोगे षष्ठी न । कुर्वन् कुर्वाणो वा सृष्टि हरिः । हरिं
दिदृक्षुः । अलंकरिष्णुर्वा दैत्यान् घातुको हरिः ॥

कमेरनिषेधः ❀ ॥

लक्ष्म्याः कामुको हरिः । जगत्सृष्टा मुखं कर्तुम् । विष्णुना रता
दैत्याः । दैत्यान् हतवान् हरिः । ईषत्करः प्रपञ्चो हरिणा । तृन्निति
प्रत्याहारः । शानन् । सोमं पवमानः । चानञ् । आत्मानं मण्डयमान ।
शतृ । वेदमधीयन् । तृन् । कर्त्ता लोकान् ॥

द्विपः शतुर्वा ❀ ॥

मुरस्य मुरं वा द्विपन् । सर्वोऽयं कारकपट्टयाः प्रतिषेधः । शेषे
षष्ठी तु स्यादेव । ब्राह्मणस्य कुर्वन् । नरकस्य जिष्णुः ॥

आधारोऽधिकरणम् १ । ४ । ४५ ॥

कर्तृकर्मदाग तन्निष्क्रियाया आधारः कारकमधिकरणसंज्ञम् ॥

सप्तम्यधिकरणे च २ । ३ । ३६ ॥

अधिकरणं सप्तमी । चादृगन्तिकार्येभ्यः । औपश्रेयिको वैपयि-
कोऽभिव्यापकश्चेत्याधागस्तिधा । कटे आस्ते । म्याल्या पचति । मोक्षं
इच्छास्ति । सर्वस्मिन्नान्मास्ति । वनस्य दूरे अन्तिके वा । दृगन्ति-
कार्येभ्य इति विभक्तित्रयेण सद चतस्रोऽत्र विभक्तयः णिनाः ॥

यस्य च भावेन भावलक्षणम् २ । ३ । ३७ ॥

यस्य क्रियया क्रियान्तरं लक्ष्यते ततः सप्तमी । गोषु दृश्यमा-
नामु गतः ॥

यतश्च निर्धारणम् २ । ३ । ४१ ॥

जातिगुणक्रियार्गजाभि. ममुद्रायदेवभ्यस्य पृथग्गणं निर्दिष्टं
त. परिणामर्था । रूपा नृपु वा ब्राह्मणः श्रेष्ठः । गरा गोषु

वा कृष्णा बहुक्षीरा । गच्छतां गच्छतु वा धावञ्छीघ्रः । छात्रा-
णां छात्रेषु वा मैत्रः पटुः ॥ इति कारकप्रकरणम् ॥

इति ३५ अंशाः ।

अव्ययीभावः २ । १ । ५ ॥

अधिकारोऽयम् ॥

अव्ययं विभक्तिसमीपसमृद्धिवृद्धयर्थोभावात्ययासं-
प्रतिशब्दप्रादुर्भावपश्चाद्यथानुपूर्व्ययौगपद्यसादृश्य-
संपत्तिसाकल्यान्तवचनेषु २ । १ । ६ ॥

विभक्त्यर्थोदिषु वर्तमानमव्ययं समर्थेन सुवन्तेन सह समस्यते
सोऽव्ययीभावः ॥

प्रथमानिर्दिष्टं समास उपसर्जनम् १ । २ । ४३ ॥

समासशब्दे प्रथमानिर्दिष्टमुपसर्जनसंज्ञम् ॥

उपसर्जनं पूर्वम् २ । २ । ३० ॥

समासे उपसर्जनं प्राक् प्रयोज्यम् । अव्ययीभावश्चेत्यव्ययत्वम् ।
हरी इति अधिहरि । अत्र हरि ङि अधि इत्यलौकिकं विग्रहवा-
क्यम् ॥

अव्ययीभावश्च २ । ४ । १८ ॥

अयं नपुंसकम् ॥

ह्रस्वो नपुंसके प्रातिपदिकस्य १ । २ । ४७ ॥

अजन्तस्य । गाः पातीति गोपास्तस्मित्याधिगोपम् ॥

नाव्ययीभावादतोऽम् त्वपञ्चम्याः २ । ४ । ८३ ॥

अदन्तादव्ययीभावात् सुपो न लुक् । तस्य पञ्चमीं विना अमा-
देशः । कृष्णस्य समीपम् उपकृष्णम् ॥

तृतीयासप्तम्योर्वहुलम् २ । ४ । ८४ ॥

अम् उपकृष्णम् उपकृष्णेन उपकृष्णम् उपकृष्णे । मक्षिका-

णामभावः निर्माक्षिकम् । विष्णोः पश्चाद् अनुविष्णु । योग्यतावी-
प्तापदार्थानतिवृत्तिसादृश्यानि यथार्थास्तेषु । रूपस्य योग्यम् अनुरू-
पम् । वीप्सायां विकल्पः । अर्थमर्थं प्रति प्रत्यर्थम् । शक्तिमनति-
क्रम्य यथाशक्ति ॥ इत्यव्ययीभावः ॥

तत्पुरुषः २ । १ । २२ ॥

अधिकारोऽयम् ॥

द्विगुश्च २ । १ । २३ ॥

तत्पुरुषसंज्ञः ॥

कर्तृकरणे कृता बहुलम् २ । १ । ३२ ॥

कर्तरि करणे च तृतीया कृदन्तेन बहुलं समस्यते । हरिणा त्रातः
हरित्रातः । खनिभिन्नः ॥

षष्ठी २ । २ । ८ ॥

सुबन्तेन । लोकस्य पतिः लोकपतिः ॥

विशेषणं विशेष्येण बहुलम् २ । १ । ५७ ॥

भेदकं समानाधिकरणेन भेदेन बहुलं समस्यते ॥

तत्पुरुषः समानाधिकरणः कर्मधारयः १ । २ । ४२ ॥

वृद्धश्चासौ पुरुषश्च वृद्धः पुरुष इति वा वृद्धपुरुषः । वृद्धौ च तौ
पुरुषौ च वृद्धपुरुषौ । वृद्धाश्च ते पुरुषाश्च वृद्धपुरुषाः । एवमग्रेऽपि
द्विवचनं बहुवचने ज्ञेये । नीलोत्पलम् । नीलोत्पले नीलोत्पलानि ॥

पुंवत्कर्मधारयजातीयदेशीयेषु ६ । ३ । ४२ ॥

कर्मधारये जातीयदेशीययोश्च परतो भाषितपुंस्कात्पर ऊङभावो
यस्मिन् तथाभूतं पूर्वं पुंवत् । फुल्लता । फुल्लते । फुल्लताः ॥

उपमानानि सामान्यवचनैः २ । १ । ५५ ॥

समानाधिकरणैः । घन इव श्यामः घनश्यामः ॥

उपमितं व्याघ्रादिभिः सामान्याप्रयोगे २ । १ । ५६ ॥

उपमेयं व्याघ्रादिभिः समानाधिकरणैः समस्यते साधारणधर्म-
स्याप्रयोगे । पुरुषो व्याघ्र इव पुरुषव्याघ्रः । आकृतिगणोज्यम् ॥

तद्धितार्थोत्तरपदसमाहारे च २ । १ । ५१ ॥

तद्धितार्थे विषये उत्तरपदे परे समाहारे च वाच्ये दिक्संख्ये
समानाधिकरणे न समस्यते ॥

संख्यापूर्वो द्विगुः २ । १ । ५२ ॥

तद्धितार्थेत्यत्रोक्तः संख्यापूर्वो द्विगुः स्यात् ॥

द्विगुरेकवचनम् २ । ४ । १ ॥

द्विग्वर्थः समाहारः एकवत् ॥

स नपुंसकम् २ । ४ । १७ ॥

समाहारे द्विगुर्द्विश्च नपुंसकम् । परबलिङ्गापवादः । पञ्चानां
पात्राणां समाहारः पञ्चपात्रम् । शेषो द्विगुर्वक्ष्यते ॥

इति ३६ अंशाः ।

नञ् २ । २ । ६ ॥

सुपा सह समस्यते ॥

नलोपो नञः ६ । ३ । ७३ ॥

उत्तरपदे । अब्राह्मणः ॥

तस्मान्नुडचि ६ । ३ । ७४ ॥

लुप्तनकारान्नञ उत्तरपदस्याजादेर्नुद् । अनञः ॥

कुगतिप्रादयः २ । २ । १८ ॥

समर्थेन नित्यं समस्यन्ते । कुत्सितः पुरुषः कुपुरुषः । ऊरी-
कृतम् । सुग्लः प्रज्ञः इत्यादि तु उपपदसमासेनापि सिद्धम् ।
आदिग्रहणमगत्यर्थम् । प्रगतः आचार्यः आचार्यः । दुराचारः
पुरुषो दुष्पुरुषः । सुस्वभावः पुरुषः सुपुरुषः ॥

ऊर्यादिच्चिडाचश्च १ । ४ । ६१ ॥

एते क्रियायोगे गतिसंज्ञाः । ऊरीकृत्य । शुक्लीकृत्य । पट-
पटाकृत्य ॥

एकविभक्ति चापूर्वनिपाते १ । २ । ४४ ॥

विग्रहे यन्नियतविभक्तिकं तदुपसर्जनसंज्ञं स्यान्नतु तस्य पूर्व-
निपातः ॥

गोस्त्रियोरुपसर्जनस्य १ । २ । ४८ ॥

उपसर्जनं यो गोशब्दः स्त्रीप्रत्ययान्तं च तदन्तस्य प्रातिपदि-
कस्य ह्रस्वः । अतिमालः । निष्कौशाम्बिः अयमपि आदिसमासः ॥

उपपदमतिङ् २ । २ । १९ ॥

कुम्भं करोतीति कुम्भकारः । इह कुम्भ अस् कार् अ इत्यलो-
किकं प्रक्रियावाक्यम् ॥ इति तत्पुरुषः ॥

शेषो बहुव्रीहिः २ । २ । २३ ॥

अनेकमन्यपदार्थे २ । २ । २४ ॥

अनेकं प्रथमान्तमन्यस्य पदस्यार्थे वर्त्तमानं वा समस्यते । अप्र-
थमार्थे समानाधिकरणानां बहुव्रीहिरिति फलितम् । प्राप्तमुदकं यं
प्राप्तोदको ग्रामः । ऊढरथोऽनङ्गान् । उपहतपशू रुद्रः । उद्धृतीदना
स्थाली । पीताम्बरो हरिः । वीरपुरुषो ग्रामः ॥

स्त्रियाः पुंवद् भाषितपुंस्कादनूङ्समानाधिकरणे स्त्रि-
यामपूरणीप्रियादिषु ६ । ३ । ३४ ॥

तुल्ये प्रवृत्तिनिमित्ते यदुक्तपुंस्कं तस्मात्पर ऊङ् भावो यत्र
तथाभूतस्य स्त्रीवाचकशब्दस्य पुंवाचकस्येव रूपं समानाधिकरणे
स्त्रीलिङ्ग उत्तरपदे नतु पूरण्यां प्रियादा च परतः । गोस्त्रियोरिति
ह्रस्वः । चित्रगुः । रूपवद्भार्यः ॥

तेन सहेति तुल्ययोगे २ । २ । २८ ॥

तुल्ययोगे वर्त्तमानं सहेत्येतत्तृतीयान्तेन प्राग्वत् ॥

वोपसर्जनस्य ६ । ३ । ८२ ॥

। बहुव्रीहेरवयवस्य सहस्य सो वा । पुत्रेण सह सपुत्रो गतः, सह-
पुत्रो वा ॥

नद्युतश्च ५ । ४ । १५३ ॥

नद्यन्तोत्तरपदादन्तोत्तरपदाच्च बहुव्रीहेः कप् ॥

केणः ७ । ४ । १३ ॥

के परे णो ह्रस्वः इति ह्रस्वे प्राप्ते ॥

न कपि ७ । ४ । १४ ॥

कपि परे ह्रस्वो न । सपत्नीकः । बहुकर्तृकः ॥

इति बहुव्रीहिः ॥

चार्थे द्वंद्वः २ । २ । २९ ॥

अनेकं सुबतं चार्थे वर्तमानं वा समस्यते । स द्वंद्वः इतरेतर-
योगे । धवत्वदिरी । समाहारे संज्ञापरिभाषम् । समाहारस्यैक्यादे-
कत्वम् ॥ इति द्वंद्वः ॥ इति समासाः ॥

इति ३७ अंशाः ।

तस्यापत्यम् ४ । १ । ९२ ॥

पष्ठचन्तात्कृतसन्धेः समर्थादपत्येऽर्थे उक्ता वक्ष्यमाणाश्च अणा-
दयः प्रत्यया वा ॥

तद्धितेष्वचामादेः ७ । २ । ११७ ॥

विति णिति च तद्धिते परेष्वचामादेरचो वृद्धिः ॥

किति च ७ । २ । ११८ ॥

किति तद्धिते तथा । आदिवृद्धिरन्त्योपधावृद्धी बाधते ॥

ओर्गुणः ६ । ४ । १४६ ॥

उवर्णान्तस्य भस्य गुणस्तद्धिते । उपगोरपत्यमौपगवः ॥

अत इञ् ४ । १ । ९५ ॥

अदन्तं यत्प्रातिपदिकं तत्प्रकृतिकात्पष्ठचन्तादिञ् अपत्येऽर्थे ।
दाक्षिः ॥

स्त्रीभ्यो ढक् ४ । १ । १२० ॥

स्त्रीप्रत्ययान्तेभ्यो ढक् अपत्ये ॥

आयनेयीनीयियः फढखछ्वां प्रत्ययादीनाम् ७।१।२॥

वैनतेयः ॥

इतश्चानिभः ४ । १ । १२२ ॥

इकारान्ताद्बचोऽपत्ये ढक् न त्विवन्तात् । दौलेयः । नैधेयः ।
अत्रेयः ॥

तदधीते तद्वेद ४ । २ । ५९ ॥

अत्रार्थे अणादयः ॥

नय्वाभ्यां पदान्ताभ्यां पूर्वौ तु ताभ्यामैच् ७।३।३ ॥

पदान्ताभ्या यकारखकाराभ्या परस्य न वृद्धिः । किंतु ताभ्या
पूर्वौ क्रमादैचावागमौ । वैयाकरणः ॥

शेषे ४ । २ । ९२ ॥

अपत्यादिचतुर्थ्यन्तादन्योऽर्थः शेषस्तत्राणादयः । चक्षुषा
गृह्यते चाक्षुषं रूपम् ॥

तत्र भवः ४ । ३ । ५३ ॥

अत्राणादयः । सृष्टे भवः सौम्यः ॥

तस्येदम् ४ । ३ । १२० ॥

अत्राणादयः । औपगवम् ॥

वृद्धिर्यस्याचामादिस्तद्वृद्धम् १ । १ । ७३ ॥

यस्य समुदायस्याचा मध्ये आदिर्वृद्धिस्तद्वृद्धसंज्ञम् ॥

त्यदादीनि च १ । १ । ७४ ॥

वृद्धसंज्ञानि ॥

वृद्धाच्छः ४ । २ । ११४ ॥

शालीयः । तदीयः ॥

• वा नामधेयस्य वृद्धसंज्ञा ❀ ॥

देवदत्तः देवदत्तीयः ॥

तेन तुल्यं क्रिया चेद्वृत्तिः ५ । १ । ११५ ॥

ब्राह्मणवदधीते ॥

तस्य भावस्त्वतलौ ५ । १ । ११६ ॥

गोत्वम् गोता ॥

पः प्रत्ययस्य १ । ३ । ६ ॥

प्रत्ययस्यादिः प इत् ॥

गुणवचनब्राह्मणादिभ्यः कर्मणि च ५ । १ । १२४ ॥

ष्यञ् चाद्भावे । जाड्यम् । ब्राह्मण्यम् ॥

संख्याया अवयवे तयप् ५ । २ । ४२ ॥

पञ्चतयम् ॥

द्वित्रिभ्यां तयस्यायज्वा ५ । २ । ४३ ॥

द्वयं द्वितयम् । त्रयं त्रितयम् ॥

तस्य पूरणे ङट् ५ । २ । ४८ ॥

एकादशः ॥

नान्तादसंख्यादेर्मट् ५ । २ । ४९ ॥

ङटो मडागमः । पञ्चमः ॥

पट्कतिकतिपयचतुरान्ध्रुक ५ । २ । ५१ ॥

एषां शुगागमो ङटि । पष्ठः । चतुर्थः ॥

चतुरङ्छयतावाद्यक्षरलोपश्च ❀ ॥

तुरीयः तुर्यः ॥

द्वेस्तीयः ५ । २ । ५४ ॥

द्वितीयः ॥

त्रेः संप्रसारणञ्च ५ । २ । ५५ ॥

तृतीयः ॥

विंशत्यादिभ्यस्तमडन्यतरस्याम् ५ । २ । ५६ ॥

एभ्यो डट्स्तमडागमो वा ॥

तिविंशतोर्दिति ६ । ४ । १४२ ॥

विंशतेर्भस्य तिशब्दस्य लोपः डिति । विंशतितमः विंशः ।
एकविंशतितमः एकविंशः । शतादेर्नित्यं तमद् वक्ष्यते ॥

इति ३८ अंशाः ।

तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप् ५ । २ । १४ ॥

गोमान् ॥

मादुपधायाश्च मतोर्वोयवादिभ्यः ८ । २ । ९ ॥

मवर्णविर्णान्तान्मवर्णविर्णोपधाच्च यवादिबर्जात्परस्य मतोर्मस्य
वः । किवान् । ज्ञानवान् । विद्यावान् । लक्ष्मीवान् ॥

तसौ मत्वर्थे १ । ४ । १९ ॥

तान्तसान्तौ मसंज्ञौ मत्वर्थे प्रत्यये । यशस्वान् । भास्वान् ।
यवादेस्तु । यवमान् । भूमिमान् ॥

क्षयः ८ । २ । १० ॥

क्षयन्तान् मतोर्मस्य वः । विद्युत्त्वान् ॥

प्राणिस्थाधातोलजन्यतरस्याम् ५ । २ । १६ ॥

चूडालः चूडावान् ॥

अत इनिठनौ ५ । २ । ११५ ॥

वा । दण्डी ॥

ठस्येकः ७ । ३ । ५० ॥

अङ्गात्परस्येकादेशः । दण्डिकः दण्डवान् ॥

अस्मायामेधास्रजो विनिः ५ । २ । १२१ ॥

यशस्वी यशस्वान् । इत्यादि ॥

संख्याया विधार्थे धा ५ । ३ । ४२ ॥

क्रियाप्रकारे वर्तमानात्संख्याशब्दात्स्वार्थे धा । चतुर्थो ॥

अतिशायने तमविष्टनौ ५ । ३ । ५५ ॥

अतिशयविशिष्टार्थवृत्तेः स्वार्थे णत्वा । अयमेषामतिशयेन
आढ्यः आढ्यतमः । लघुतमः ॥

टेः ६ । ४ । १५५ ॥

टेलोप इष्टेभ्यस्सु । लघिष्ठः ॥

तिङ्श्च ५ । ३ । ५६ ॥

तिङन्तादतिशये धोत्ये तमः ॥

तरतमर्षो घः १ । १ । २२ ॥

एतौ घसंज्ञौ ॥

किमेत्तिङव्ययवादांस्वऽद्रव्यप्रकरणं ५ । ४ । ११ ॥

किम् एदन्तात्तिङोऽव्ययाद्य यो घस्तदन्तादाप्सुर्नतु द्रव्यप्रकरणं ।
किन्तमाम् । पचातितमाम् । उच्चैस्तमाम् । एदन्ताद्व्ययते । द्रव्यप्रकरणं
तु उच्चैस्तमस्तकः ॥

द्विवचनविभज्योपपदे तरर्वायसुनौ ५ । ३ । ५७ ॥

द्वयोरेकस्यातिशये विभक्त्ये चोपपदे मुप्रतिङन्ताद् एतौ
स्तः । पूर्वयोरपवादः । अयमनगोरातिशयेन लघुर्लघुतरः लघो-
यान् । उदीच्याः प्राच्येभ्यः पटुतराः पटीयांसः । किन्तगाम् ।
पचातितराम् । उच्चैस्तराम् । द्रव्यप्रकरणं तु उच्चैस्तरस्तकः ॥

अत्यन्तस्वार्थे पिकन्तरप्रमयटः ॥

बहुतरकम् । अल्पात्तरम् । ब्रह्ममयम् ॥

संख्यायाः क्रियाभ्यावृत्तिगणने कृत्वसुत्र ५ । ४ । १७ ॥

क्रियाजन्मगणनवृत्तेः संख्याशब्दात्स्वार्थे कृत्वमुच् । पञ्चकृत्वो
भुङ्क्ते ॥

द्वित्रिचतुर्भ्यः सुच् ५ । ४ । १८ ॥

द्विर्भुङ्क्ते । त्रिः । चतुः ॥

एकस्य सकृच्च ५ । ४ । १९ ॥

सकृदित्यादेशः चात्सुच् । सकृद् भुङ्क्ते ॥

कृभ्वस्तियोगे संपद्यकर्त्तरि च्विः ५ । ४ । ५० ॥

अभूततद्भावे इति वाच्यम् ॐ ॥

विकारात्मतां प्राप्नुवत्यां प्रकृतौ वर्त्तमानादिकारशब्दात् स्वार्थे
च्विर्वा करोत्यादिभिर्योगे ॥

अस्य च्वौ ७ । ४ । ३२ ॥

अवर्णस्य ईत् च्वौ । वेरपृक्तस्य । अकृष्णः कृष्णः सम्पद्यते
तं करोति कृष्णीकरोति । ब्रह्मी भवति । गङ्गीस्यात् ॥

च्वौ च ७ । ४ । २६ ॥

च्वौ परे पूर्वस्य दीर्घः । शुचीभवति । पट्टस्यात् ॥

रीड् ऋतः ७ । ४ । २७ ॥

अकृद्यकोरेऽतार्धधातुके यकारे च्वा च ऋदन्ताङ्गस्य रीड् ।
मात्रीकरोति ॥ इति ताद्विताः ॥

इति ३९ अंशाः ।

स्त्रियामित्यधिकृत्य ॥

अजाद्यतष्टाप् ॥

अजा । पडका । इत्यादि । खट्वा ॥

प्रत्ययस्थात् कात् पूर्वस्यात् इदाप्यमुपः ७।३।४४॥

प्रत्ययस्थात्कात् पूर्वस्य आत् इत् आपि परे स आप् मुपः परो
न चेत् । सर्विका । कारिका । गङ्गाशब्दात् स्वार्थे कनि तत्तष्टापि च
इति ह्रस्वः ॥

कृदिकारादक्तिनः ❀ ॥

रात्रिः रात्री ॥

पुंयोगादाख्यायाम् ४ । १ । ४८ ॥

या पुमाख्या पुंयोगात् स्त्रियां वर्तते ततो ङीप् । गोपस्य स्त्री गोपी ॥

स्वाङ्गाच्चोपसर्जनादसंयोगोपधात् ४ । १ । ५४ ॥

असंयोगोपधमुपसर्जनं यत्स्वाङ्गं तदन्तात्प्रातिपदिकाद्वा ङीप् । केशानतिक्रान्ता अतिकेशी अतिकेशा । चन्द्रमुखी चन्द्रमुखा । संयोगोपधात् । सुगुल्फा । उपसर्जनात्किम् । शिखा ॥

जातेरस्त्रीविषयादयोपधात् ४ । १ । ६३ ॥

जातिवाचि यन्न च स्त्रियान्नियतमयोपधमदन्तं ततः स्त्रिया ङीप् । तटी । घटी । औपगवी । कठी । बह्वची । स्त्रीविषयात्तु बलाका ॥ इति स्त्रीप्रत्ययाः ॥

इति ४० अंशाः ।

आद्यखण्डे पूर्वभागः पाणिनीये प्रवेशकृत् ।

बालानां बोधदः पूर्णः श्रीहरेश्वरणेऽर्पितः ॥ १ ॥

इति प्रथमाध्यायस्य चतुर्थः पादः । समाप्तोऽयं प्रथमाध्यायः ।

अत्राशाः सूचिनिर्मित्यै कल्पिताः खद्विवद्वयः ।

तश्चत्वारिंशताध्यायोऽष्टाध्यायीयं भवेत्ततः ॥ १ ॥

सूच्या पादाः कादिसान्तैर्वर्णे (३२०) द्वात्रिंशदीरिताः ।

पादोऽशैर्दशभिर्द्वास्वदीर्घाण्येककल्पितैरिह ॥ २ ॥

पाणिनीयेऽष्टके सूत्रैर्विंशत्याशोऽसूचितैः ।

यद्वाङ्गिरेव कौमुद्यामष्टके चाशसूचनम् ॥ ३ ॥

इति श्रीमद्भट्टोजिदीक्षितकृतकौमुद्याः प्रतिबिम्बरूपायां सुगमकौमुद्यामाद्यखण्डे पूर्वभागः समाप्तः ।

सामान्ययोगी बालार्हः प्राक् प्रोक्तः प्रक्रियाक्रमः ।
तज्ज्ञानां हेतवे सोऽद्य विशेषेण निगद्यते ॥ १ ॥

यणो मयो द्वे वाच्ये ❀ ॥

मय इति पञ्चमी यण इति पष्ठीति पक्षे यस्यापि वा द्वित्वं तेन
चत्वारि रूपाणि । सुद्धचुपास्यः । द्धु ध्यु ध्यु । एवं मद्भुरिः ।
इत्यादी । हर्यनुभवः हर्यनुभवः । न ह्य्यस्ति न ह्यस्ति ॥

हलो यमां यमि लोपः ८ । ४ । ६४ ॥

हलः परस्य यमो लोपो वा यमि । लोपे द्वित्वामावे चैकयन्तु-
त्वं रूपम् । लोपफलं तु आदित्यो देवतास्येति आदित्यं हविः ।
यमां यमीति यथासंख्यत्वात्माहात्म्यमित्यादी न । तवल्कारः ।
यण इति पञ्चमी मय इति पष्ठीति पक्षे कस्य द्वित्वम् । लस्य त्वन-
चि चोति तेन तवल्कारादौ रूपचतुष्टयम् ॥

शरः खयो द्वे ❀ ॥

त्रिस्थली त्रिस्थली । खय इति पञ्चमी शर इति पष्ठीति पक्षे
वत्सरः वत्सरः ॥

गोयूतौ छन्दसि । अध्वपरिमाणे च ❀ ॥

ओतोऽब् गव्यतिः ॥

एत्येधत्यूठसु ६ । १ । ८९ ॥

- अवर्णादेजायोस्तेधत्योरूठि च वृद्धिरेकादेशः । उपाति । उपे-
धते । प्रष्टौहः ॥

अक्षादूहिण्याम् ❀ ॥

। अक्षौहिणी सेना ॥

स्वादीरेरिणोः ❀ ॥

स्वैरः । स्वैरी । स्वैरिणी ॥

प्रादूहोढोऽप्येष्येषु ❀ ॥

प्रौढः । प्रौढः । ऊढेति क्तान्तन्नतु क्तवत्वन्तस्येकदेशः अनर्थक-
त्वात् । तेन प्रोढवानित्यत्र न वृद्धिः । प्रौढिः । प्रैषः प्रैष्यः ॥

ऋते च तृतीयासमासे ❀ ॥

सुखार्तः ॥

प्रवत्सतरकम्बलवसनार्णदशानामृणे ❀ ॥

प्रार्णमित्यादि ॥

उपसर्गाद्विधातौ ६ । १ । ९१ ॥

अवर्णान्तादुपसर्गादकारादौ धातौ वृद्धिरेकादेशः । उपाच्छति ।
ऋत्यक इत्यपीह न ॥

वासुप्यापिशलेः ८ । १ । ९२ ॥

अवर्णान्तादुपसर्गाददादौ सुन्धातौ वृद्धिर्वा । प्रार्थनीयति
प्रर्थनीयति । लृकारस्यापि ग्रहणात् । प्राल्कारीयति प्रल्कारीयति ।
तपरत्वादीर्घे न । उपक्रुकारीयति उपर्कारीयति ॥

ऋत्यकः ६ । १ । १२८ ॥

पदान्ता अक ऋति परे प्रकृत्या स्युर्ह्रस्वश्च वा । होतृऋकारः ॥
ब्रह्म ऋषिः ब्रह्मर्षिः । होतृ ऋकारः ॥

ऋति सवर्णे ऋ वा ❀ ॥

मध्ये द्वौ रेफौ अभितोज्मक्तिश्च । होतृऋकारः होतृकारः ॥

लृति सवर्णे लृ वा ❀ ॥

मध्ये द्वौ लकारौ अभितोज्मक्तिश्च । उभयत्र पाक्षिक ऋत्यक
इति प्रकृतिभावः । होतृ लृकारः होतृलृकारः होतृकारः ॥

एङि पररूपम् ६ । १ । ९४ ॥

आदुपसर्गादेडादौ धातौ पररूपमेकादेशः । प्रेजते । उपोपति ॥

एडादौ सुन्धातौ वा ❀ ॥

उपेडकीयति उपेडकीयति ॥

एवे चानियोगे ❀ ॥

केव भोक्ष्यसे । आनेयोगे किम् । तवैव ॥

शकन्धादिषु पररूपं वाच्यम् तच्च टेः ॥

शकन्धुः । कर्कन्धुः । सीमन्तः केशवेशे । सीमान्तोऽन्यः ।
मनीषा । पतंजलिः । सारंगः पशुपक्षिणोः । साराङ्गोऽन्यः । आकृ-
तिगणोऽयम् । मार्तण्डः ॥

इति ४१ अंशाः ।

ओत्वोष्ठयोः समासे वा ॥

स्थूलोतुः स्थूलौतुः । बिम्बोष्ठः बिम्बौष्ठः ॥

ओमाडोश्च ६ । १ । ९५ ॥

ओमि आडि घात्परे पररूपमेकादेशः । शिवायौ नमः । शिवेहि
अव आ इहि । अवेहि अत्रैत्येधतीति वृद्धिर्नेति पुरस्तादपवादपरि-
मापाया वक्ष्यते ॥

उस्योमाङ्क्षाटः प्रतिषेधः ॥

उसि ओमाडोश्च परयोराटः पररूपं नेत्यर्थः । उस्त्रामैच्छत्
औस्त्रीयत् । औकारीयत् । औदीयत् ॥

अव्यक्तानुकरणस्यात इतौ ६ । १ । ९८ ॥

ध्वनेरनुकरणस्ययोच्छब्दस्तस्मादेतौ परे पररूपमेकादेशः ।
पटत् इति पटिति । एकाचो न । श्रदिति ॥

नाम्नेडितस्यान्त्यस्य तु वा ६ । १ । ९९ ॥

आम्नेडितस्य प्रागुक्तं न । अन्त्यस्य तु तकारमात्रस्य वा डाचि
बहुलं द्वे इति बाहुलकादित्वम् ॥

तस्य परमाम्नेडितम् ८ । १ । २ ॥

द्विरुक्तस्य परं रूपमाम्नेडितसंज्ञम् । पटत् पटिति, पटत् पट-
दिति ॥

सर्वत्र विभाषा गोः ६ । १ । १२२ ॥

लोके वेदे चैडन्तस्य गोरति वा प्रकृतिभावः पदान्ते । गो
अग्रम् गोऽग्रम् ॥

अवङ् स्फोटायनस्य ६ । १ । १२३ ॥

अचि परे पदान्ते एडन्तस्य गोरवङ् वा । गवाग्रम् । व्यवस्थि-
तविभाषया गवाक्षः ॥

इन्द्रे च ६ । १ । १२४ ॥

गोरवङ् इन्द्रे । गवेंद्रः ॥

इकोऽसवर्णे शाकल्यस्य ह्रस्वश्च ६ । १ । १२७ ॥

पदान्ता इकोऽसवर्णेऽचि परे प्रकृत्या स्युः ह्रस्वश्च वा । चक्रि
अत्र चम्यत्र । हरी एतौ इत्यादौ नास्य प्रवृत्तिः । छुतप्रगृह्या
इत्यत्र नित्यग्रहणात् ॥

न समासे ❀ ॥

वाप्यश्वः ॥

सिति च ❀ ॥

पार्श्वम् ॥

ऋत्यकः ❀ ॥

ब्रह्म ऋषिः ब्रह्मर्षिः ॥

समासेऽपि ॥ ❀ ॥

सप्त ऋषीणां सप्तर्षीणाम् ।

वाक्यस्य टेः प्लुत उदात्तः ८ । २ । ८२ ॥

इत्यधिकृत्य ॥

प्रत्यभिवादेऽशूद्रे ८ । २ । ८३ ॥

अशूद्रविषये प्रत्यभिवादे यद् वाक्य तस्य टेः प्लुतः । मो आयु-
ष्मानेधि देवदत्ता ३ ॥

स्त्रियां न ❀ ॥

मो आयुष्मती भवगार्गि । नाम गोत्रं वा यत्रान्ते प्रयुज्यते त-
त्रैव पुतः । नेह । आयुष्मानेधि ॥

भोराज्यन्यविशां वा ॐ ॥

आयुष्मानेधि मोः ३ । आयुष्मानेधीन्द्रमो ३ न । आयुष्मा-
नेधीन्द्रपालिता ३ ॥

हेहेप्रयोगे हेहयोः ८ । २ । ८५ ॥

एतयोः प्रयोगे दूराद्धूते यदाक्यं तत्र हेहयोगेव पुतः । हे ३
राम । राम हे ३ ॥

गुरोरनृतोऽनन्त्यस्याप्येकैकस्य प्राचाम् ८ । २ । ८६ ॥

दूरात्संधोधने यदाक्यं तस्य ऋद्धिन्नस्यानन्त्यस्यापि गुरोरां
पर्यायेण प्लुतः । हे ३ वदत्त । देवदा ३ त्त । देवदत्ता ३ । प्राचा-
मिति योगविभागात्सर्वप्लुतमिच्छः ॥

अप्लुतवदुपस्थिते ६ । १ । १२९ ॥

उपस्थितोऽनार्ष इति शब्दस्तस्मिन् परेप्लुतोऽप्लुतवन् । अप्लु-
तकार्यं यणादिकं षगेति मुष्मेकेति ॥

ईदूदेद् द्विवचनं प्रगृह्यम्

मणीवेति तु इवार्थं वशब्दो वाशब्दो वा बोध्यः ॥

निपात एकाजनाद् १ । १ । १४ ॥

एकोऽनिपात आइवर्जः प्रगृह्यः । इ इन्द्रः । अनाडित्युक्तेगडि-
दाकारः प्रगृह्य एव । आ एवं नु मन्यमे । आ एव किञ्च तत् ।
डित्तु न प्रगृह्यः । ईपदुष्णम् ओष्णम् । वाक्यस्मरणयोरडिन् अन्यत्र
डिदिति विवेकः ॥

इति ४२ अंशः ।

संबुद्धो शाकल्यस्येतावनार्षे १ । १ । १६ ॥

संबुद्धिनिमित्तक ओकागे वा प्रगृह्योऽवदित्कर्त्ता । विष्णो इति
विष्णविति ॥

उञः १ । १ । १७ ॥

उञ इतौ वा प्रागुक्तम् । उ इति विति ॥

ऊँ १ । १ । १८ ॥

उञ इतौ दीर्घोऽनुनासिकः प्रगृह्यश्च । ऊँ इत्ययमादेशो वा । ऊँ इति विति ॥

मय उञो वो वा ८ । ३ । ३३ ॥

मयः परस्य उञो वो वाञचि । किमु उक्तम् किमुक्तम् । वस्या सिद्धत्वान्नानुस्वारः ॥

ईदूतौ च सप्तम्यर्थे १ । १ । १९ ॥

सप्तम्यर्थे पर्यवसन्नमीदूदन्तं प्रगृह्यम् । ययी आस्ते । तनू इति छन्दसि ॥

अणो प्रगृह्यस्यानुनासिकः ८ । ४ । ५७ ॥

अप्रगृह्यस्याणोऽवसानेऽनुनासिको वा । दार्धे दधि ॥

उदः स्थास्तम्भोः पूर्वस्य ८ । ४ । ६१ ॥

उदः परयोः स्थास्तम्भोः पूर्वसवर्णः । आदेः परस्य । उत्थानम् । उत्थानम् । उत्तम्भनम् । अत्र सस्य थः । तस्य शरोऽशरीति वा लोपः । तदभावे थस्यैव श्रवणं नतु चत्वंम् । चत्वं प्रति थस्यासिद्धत्वात् ॥

मो राजि समः कौ ८ । ३ । २५ ॥

किबन्ते राजतौ परे समो मस्य म एव । सम्राट् ॥

हे मपरे वा ८ । ३ । २६ ॥

मपरे हकारे परे मस्य म एव स्याद्वा । किम् हल्लयति किं हल्लयति ॥

यवलपरे यवलावेति वक्तव्यम् ॐ ॥

किङ्क्षः । किङ् हल्लयति । किङ् ह्लादयति । पक्षे किङ्क्षः । इत्यादि ॥

नपरे नः ८ । ३ । २७ ॥

नपरे हकारे परे मस्य नो वा । किन् हुते किं हुते ॥

ङ्णोः कुक्कुटुक् शरि ८ । ३ । २८ ॥

इकारणकारयोः कुक्कुटुकावागमौ वा शरि । तयोरसिद्धत्वाज्ज-
इत्वञ्च ॥

चयो द्वितीयाः शरि पौष्करसादेः ॐ ॥

प्राङ् खपष्ठः प्राङ् क्षष्ठः प्राङ् पष्ठः । सुगण् द् पष्ठः सुगण् द्
पष्ठः सुगण् पष्ठः ॥

डः सिधुद् ८ । ३ । २९ ॥

डात्परस्य सस्य धुडा । पदत्सन्तः पदत्सन्तः ॥

नश्च ८ । ३ । ३० ॥

नान्तात्पदात्परस्य सस्य धुडा । सन् तत्सः सन्तः ॥

शि तुक् ८ । ३ । ३१ ॥

पदान्तस्य नस्य शे परे तुग्वा । सञ्छंभुः सञ्छंभुः सञ्छंभुः
सञ्छंभुः । इह तुक्छत्वचलोपानां विकल्पात् अछी अचछा अच-
शावशाभिति रूपचतुष्कम् ॥

आङ्माङोश्च ६ । १ । ७४ ॥

एतयोश्छे तुक् । पदान्तादिति विकल्पापवादः । आच्छादयति ।
माच्छिदत् ॥

समः सुटि ८ । ३ । ५ ॥

समो रुः सुटि।अलोन्त्यस्य अनुस्वारानुनासिकौ विसर्गः विसर्ज-
नीयस्य सः एतदपवादे वा शरीति पाक्षिके विसर्गे प्राप्ते ॥

संपुंकानां सः ॐ ॥

संस्कृतां संस्कृतां समो वा लोपमेक इति भाष्यम् । लोपस्यापि
रुप्रकरणस्थत्वादनुस्वारानुनासिकाभ्यामेकसमपि रूपद्वयम् । द्विस-
न्तूक्तमेव । तत्रानचीति द्वित्वे त्रिसमपि रूपद्वयम् । अनुस्वारविसर्ग-
जिह्वामूलीयोपध्मानीययमानामकारोपरि शर्षु च पाठेनाऽनुस्वारस्या-

प्यच्त्वात् । अनुनासिकवतां त्रयाणां शरः खयः इति कद्वित्वे षट् ।
 अनुस्वारवतामनुस्वारस्यापि द्वित्वे द्वादश । एषामष्टादशानां तकारस्य
 द्वित्वे वचनान्तरेण पुनर्द्वित्वे एकतं द्वितं त्रितमिति चतुष्पञ्चाशत् ।
 अणोऽनुनासिकत्वेऽष्टोत्तरं शतम् ॥

पुमः खय्यम्परे ८ । ३ । ६ ॥

अम्परे खयि पुमशब्दस्य रुः । संपुंकानामिति सः । पुँस्को-
 किलः पुँस्कोकिलः । पुँस्पुत्रः पुँस्पुत्रः । ख्याज्जदेशेन । पुँख्यानम् ॥

नृन्पे ८ । ३ । १० ॥

नृनित्यस्य रुर्वा पकारे । नृन् ष पाहि नृन् ष पाहि नृः पाहि
 नृः पाहि नृन् पाहि ॥

कानाम्रेडिते ८ । ३ । १२ ॥

कान्नकारस्य रुः स्यादाश्चेडिते परे । संपुंकानामिति सः । यद्वा ॥

कस्कादिषु च ८ । ३ । १८ ॥

एष्विण् उत्तरस्य विसर्गस्य षोऽन्यत्र तु सः । कुप्वोरित्यस्या-
 पवादः । काँस्कान् काँस्कान् । कस्कः । कौतस्कुतः । सर्पिँष्कु-
 ण्डिका । आकृतिगणोऽयम् ॥

इति ४३ अंशाः ।

शर्परे विसर्जनीयः ८ । ३ । ३५ ॥

शर्परे खरि विसर्जनीयस्य विसर्जनीयो न त्वन्यत् । कः त्सरुः ।
 कुप्वोरित्यस्य विषयेऽप्ययमेव । घनाघनः क्षोभणः । इह सत्त्वं
 जिह्वामूलीयश्च न ॥

खर्परे शरि वा विसर्गलोपः ❀ ॥

रामस्थाता रामःस्थाता रामस्थाता । त्रैरूप्यम् ॥

सो पदादौ ८ । ३ । ३८ ॥

विसर्गस्य सो पदाद्योः कुप्वोः । पाशकल्पककाम्येष्विति वृत्तिः ।

यशस्म । यशस्कल्पम् । यशस्कम् । यशस्काम्याति ॥

अनव्ययस्येति वाच्यम् ❀ ॥

प्रातःकल्पम् । काम्ये शरेव नेह । गीः काम्याति ॥

इणः पः ८ । ३ । ३३ ॥

इणः परस्य विसर्गस्य पः पूर्वविषये । सर्पिष्पाठम् इत्यादि ॥

नमस्पुरसोर्गत्योः ८ । ३ । ४० ॥

गतिसंज्ञयोरनयोर्विसर्गस्य सः कुप्वोः । नमस्करोति । साक्षा-
त्प्रभृतीनि चेति वा गतिसंज्ञा । तदभावे नमः करोति । पुरस्करोति ।
पुरोव्ययमिति नित्यं गतिसंज्ञा । इदुदुपधस्येत्यनेन एकादेशशास्त्र-
निमित्तकस्य न पत्वम् । मातुः कृपा ॥

मुहुसः प्रतिषेधः ❀ ॥

मुहुः कामा ॥

तिरसोऽन्यतरस्याम् ८ । ३ । ४३ ॥

सो वा कुप्वोः । तिरस्कृतां तिरःकर्ता ॥

द्विस्रिश्चतुरिति कृत्वोऽर्थे ८ । ३ । ४३ ॥

कृत्वोर्थे वर्तमानानाभिषां विसर्गस्य पो वा कुप्वोः । द्विष्करोति
द्विःकरोति । इत्यादि ॥

इसुसोः सामर्थ्ये ८ । ३ । ४४ ॥

एतयोर्विमर्गस्य पकारो वा कुप्वोः । सर्पिष्करोति सर्पिःकरोति
धनुष्करोति धनुःकरोति ॥

नित्यं समासेऽनुत्तरपदस्थस्य ८ । ३ । ४५ ॥

इसुसोर्विसर्गस्यानुत्तरपदस्थस्य समासे नित्यं पः कुप्वोः । सर्पि-
ष्कुण्डिका । धनुष्कपालम् ॥

अतः कृकमिकंसकुम्भपात्रकुशाकर्णीप्यनव्ययस्य

८ । ३ । ४६ ॥

अकारादुत्तरस्यानव्ययस्य विसर्गस्य समासे नित्यं सकारादेशः
करोत्यादौ परे ननुत्तरपदस्थस्य । अयस्कारः । अयस्काम इत्यादि ॥

अधःशिरसी पदे ८ । ३ । ४७ ॥

समासेऽनुत्तरपदस्थस्य एतयोर्विसर्गस्य सः पदशब्दे परे । अधः
स्पदम् । शिरस्पदम् । कस्कादिषु च । मास्करः । भोस् भगोस्
अघोस् इति सान्ता निषाताः । तेषां रुत्वे यत्वे च ॥

व्योर्लघुप्रयत्नतरः शाकटायनस्य ८ । ३ । १८ ॥

पदान्तयोर्यवयोर्लघूच्चारणौ यवौ वा शि ॥

ओतो गार्ग्यस्य ८ । ३ । २० ॥

ओकारात्परस्य पदान्तस्यालघुप्रयत्नस्य यकारस्य नित्यं लोपः ।
भो अच्युत । लघुप्रयत्नपक्षे भोयच्युत ॥

उभि च पदे ८ । ३ । २१ ॥

अवर्णपूर्वयोः पदान्तयोर्यवयोर्लोप उभि परे । स उ एकाग्रिः ॥

रोऽसुपि ८ । २ । ६९ ॥

अहो रेफादेशो ननु सुपि । रोऽपवादः । अहरहः । अहर्गणः ।
सुपि तु अहोभ्याम् । अत्राहन्निति रुत्वम् ॥

रूपरात्रिरथन्तरेषु रुत्वं वाच्यम् ॐ ॥

अहोरूपम् । गतमहो रात्रिरेषा । अहोरात्रः । अहोरथन्तरम् ॥

अह्रादीनां पत्यादिषु वा रेफः ॐ ॥

विसर्गापवादः । अहर्पातिः । गीर्पातिः । धूर्पातिः । पक्षे विस-
र्गोपध्मानीया ॥

सोऽचि लोपे चेत्पादपूरणम् ६ । १ । १३४ ॥

सस् इत्यस्य सोर्लोपः स्यादचि । पादश्रेष्ठोपे सत्येव पूर्येत ।
सेमामविद्धिप्रमृतिम् । सैष दाशरथी रामः । लोपे चोदिति किम् ।
स एवमुक्त्वा वचनम् । अवधारणान्नेह । सोऽहमाजन्मशुद्धानाम् ॥
इति प्रायोविशेषसन्धिप्रकटणम् ॥

इति ४४ अंशाः ।

अथ पुल्लिङ्गादिषु प्रायो विशेषशब्दाः ।

प्रथमचरमतयाल्पाद्धकतिपयनेमाश्च १ । १ । ३३ ॥

जसः कार्यं प्रति सर्वनामसंज्ञा वा । प्रथमे प्रथमाः । तयः प्रत्य-
यस्ततस्तदन्ता प्राह्याः । द्वितये द्वितयाः । शेषं रामवत् । नेमं
नेमाः । शेषं सर्ववत् ॥

तीयस्य डित्सु वा ❀ ॥

द्वितीयस्मै द्वितीयायेत्यादि । निर्जरः ॥

जराया जरसन्यतरस्याम् ७ । २ । १०१ ॥

जराशब्दस्य जरस् वा अजादौ विभक्तौ । एकदेशविकृतस्यान-
न्यत्वात् जरशब्दस्य जरस् । निर्जरसा । निर्जरसः । इत्यादि । पक्षे
हलादौ च रामवत् । भित्ति निर्जरः । इत्येकम् ॥

पदन्नामासृहन्निशसन्पृषन्पदोपन्यकञ्चकञ्चदन्नासञ्च-
स्रप्रभृतिषु ६ । १ । ६३ ॥

पादादीनां शसादौ पदादय आदेशा वा ॥

मांसपृतनासानूनां मांसपृत्सवो वा शसादौ ❀ ॥

पादः । पादौ । पादाः । पादम् । पादौ । पदः पादान् । दत्तः ।
दत्ता । दद्यामित्यादि । मासः । मासा । माभ्याम् । यूष्णः । यूष्-
भ्याम् । यूष्णि यूष्णि । पक्षे रामवत् । एवं दन्तादीनां स्वस्वल्लिङ्गे
रूपाणि ज्ञेयानि । विस्तरमयान्न सर्वेषां लेखः । तत्र पुंसि पाददन्त-
मासयूषाणां पद् दत् मास् यूषन् इति । स्त्रियां नासिकानिशापृत-
नानां नस् निष् पृत् इति । क्लीबे हृदयअसृज्यकृत्शकृन्उदकआ-
स्यमांसानां हृद् असन् यकन् शकन् उदन् आसन् मांस इति ।
पुंस्त्रीवयोः दोष्त्वान्वोः दोषन् स्तु इति । पदन्निति सूत्रे प्रभृतिग्र-
हणं प्रकारार्थम् । तेन शसादेरन्यत्राप्यादेशः । पदंघ्रिश्चरणोऽस्त्रि-
याम् । पदादयः स्तुपर्यन्ताः पृथगेव शब्दा इत्येके । शमादिवि-
पयाणि प्रकृत्यन्तराण्येव पदादय इति परे । बह्वः ॥

संख्याविसायपूर्वस्याहस्याहनन्यतरस्यां ङौ६।३।११०॥

संख्यादिपूर्वस्याहस्याहनादेशो वा ङौ परतः। द्वयोरहोर्भवो व्यहः ।
व्यह्नि । व्यह्ने । एवं विगतमहर्व्यहः । अहः सायः सायाहः ।
व्यह्ने इत्यादि ॥

आतो धातोः ६ । ४ । १४० ॥

आदन्तो यो धातुस्तदन्तस्य भस्याङ्गस्य लोपः । विश्वपाः ।
विश्वपौ । विश्वपः । हे विश्वपाः । एवं शंखध्मादयः । धातोः
किम् । हाहान् । हाहि । हाहाः । हाहौः । शेषं विश्वपावत् । आत
इति योगविभागादधातोरपि कचिदालोपः । क्त्वः श्रः । आतो
नाप इति वार्तिकात् आबन्तभिन्नाः सर्वे आदन्ता विश्वपावत्
इति परे ॥

अनङ् सौ ७ । १ । ९३ ॥

सख्युरङ्गस्यानङादेशोऽभ्रम्बुद्धौ सौ । सखा । हे सखे ॥

सख्युरसम्बुद्धौ ७ । १ । ९२ ॥

सख्युरङ्गात्परं संबुद्धिवर्जं सर्वनामस्थानं णित्कार्यकृत् । अचो-
ज्जिगति । सखायौ । सख्या । सख्ये ॥

ख्यत्यात्परस्य ६ । १ । ११२ ॥

खितिशब्दाभ्यां खीतीशब्दाभ्यां कृतयणादेशाभ्यां परस्य ङ-
सिङ्सोरत उत् । सख्युः ॥

औत् ७ । ३ । ११८ ॥

इदुज्यां डेरौत् । सख्यौ ॥

पतिः समास एव १ । ४ । ८ ॥

पतिशब्दः समास एव धिसंज्ञः । पत्या । पत्ये इत्यादि ।
समासे ऽ भूपतिना ॥

इति ४५ अंशः ।

कतित्रिशब्दौ नित्यं बहुवचनान्तौ ॥

बहुगणवतुडतिसंख्या १ । १ । २३ ॥

एते संख्यासंज्ञाः ॥

डति च १ । १ । २५ ॥

डत्यन्ता संख्या पदसंज्ञा ॥

पङ्भ्यो लुक् ७ । १ । २२ ॥

पङ्भ्यः परयोर्जशसोर्लुक् । लुका लुप्तत्वाज्जसि चेति गुणो न ।
कति । कति । इत्यादि । अस्मद्युष्मद्पदसंज्ञास्त्रिषु सरूपाः । त्रयः ॥

त्रेस्त्रयः ७ । १ । ५३ ॥

त्रिशब्दस्य त्रयादेश आभि । त्रयाणाम् । पपीः । पप्यौ ।
पपीम् । पपीन् । पप्याम् । डौ पपी । एवं ययीवातप्रम्यादयः ।
उन्नीः । धातुना संयोगस्य विशेषणघण् स्यादेव । उन्यी । डौ
उन्न्याम् । एवं ग्रामणीः । सेनानीः ॥

गतिकारकेतरपूर्वपदस्य यण् नेप्यते ❀ ॥

शुद्धधियौ । परमधियौ । दुर्धियः इति तु दुस्त्यता धीर्येपा-
मिति विग्रहे दुरो धीशब्दं प्रति गतित्वाभावात् । एवं वृश्चिकभिय
इति । वृश्चिकसंबन्धिनी भीरिति विग्रहात् । नीः । नियौ । नियाम् ॥

न भूसुधियोः ६ । ४ । ८५ ॥

एतयोर्यण् न आचि सुपि परे । सुधीः । सुधियौ ॥

ओः सुपि ६ । ४ । ८३ ॥

धात्ववयवसंयोगपूर्वो न भवति य उवर्णस्तदन्तो यो धातुस्तद-
न्तस्यानकाचोऽङ्गस्य यणजादौ सुपि । खलपूः । खलपूर्वा ॥

तृज्वत्क्रोष्टुः ७ । १ । ९५ ॥

क्रोष्टुशब्दस्तृजन्तेन तुल्यं भवति असंख्यद्वौ सर्वनामस्थाने । क्रो-
ष्टुस्थाने क्रोष्टुशब्दः प्रयोज्य इत्यर्थः । क्रोष्टा । क्रोष्टारौ । क्रोष्टून् ॥

विभाषा तृतीयादिष्वचि ७ । १ । ९७ ॥

अजादिषु तृतीयादिषु क्रोष्ट्वा वृज्वत् । क्रोष्ट्वा । नुमचिरेति वृद्धः ।
क्रोष्ट्वा । क्रोष्ट्वा । क्रोष्ट्वा । पक्षे हलादौ च शम्भुवत् । वृद्धः ।
वृद्धः । वृद्धम् । स्वभूः । स्वभुवौ । सुल्वौ । परमलुवौ ॥

वर्षाभ्वश्च ६ । ४ । ८४ ॥

अस्योवर्णस्य यणचि सुपि । वर्षाभ्वौ । दम्भवतीति दम्भूः ।
उणादिषु दम्भ्वौ । दम्भवत् ॥

हृत्कारपुनःपूर्वस्य भुवो यण् वक्तव्यः ❀ ॥

हृन्भवम् । कर्भ्वौ । दीर्घपाठे तु कर एव कारः । कारभ्वौ ।
पुनर्भ्वौ । दम्भूकाराभूशब्दौ तु स्वयंभूवत् । नप्तादयो धातुवत् ।
उद्गातुरपि दीर्घः । उद्गातारौ । ना । नरौ । हे नः ॥

नृ च ६ । ४ । ६ ॥

नृइत्यस्य नामि वा दीर्घः । नृणाम् नृणाम् । कृ तृ अनयोस्तु-
करणे प्रकृतिवदनुकरणमिति वैकल्पिकातिदेशादित्वे रपरत्वम् ।
कीः । किरौ । किरः । तीः । तिरौ । तिरः । इत्यादि गीर्त्तु ।
इत्वामावे तु कृः । क्रौ । क्रः । कृन् । इत्यादि । डे । डयौ । एवं
सेः । स्मृतेः ॥

गोतो णित् ७ । १ । ९० ॥

गोशब्दात्परं सर्वनामस्थानं णित्कार्यकृत् ॥

औतोऽमृशसोः ६ । १ । ९३ ॥

ओकारादमृशसोरच्याकार एकादेशः । गौ । गावौ ।
गाम् । गाः ॥

ओतो णिदिति वाच्यं विहितविशेषणं च ❀ ॥

मुद्यौ । स्मृतौ । हे मानो । इत्यादि सारोऽगन्ताद्विहित-
त्वामावात्त णिट् ॥

रायो हलि ७ । २ । ८५ ॥

रेशन्दस्याकारोन्तादेशो ह्लादी विमक्तौ । राः । रायो । गभ्याम् ॥
इति ४६ अंशाः ।

हो ङः

मुलोपः । लिद् लिङ् । लिर्हा । लिङ्भ्याम् । लिङ्मु लिङ्त्सु ॥

दादेर्द्धातोर्घः ८ । २ । ३२ ॥

उपदेशो दादेर्द्धातोर्हस्य घः झलि पदान्ते च ॥

एकाचो वशो भप् झपन्तस्य र्व्योः ८ । २ । ३७ ॥

धातोख्यवो य एकाच् झपन्तस्तद्वयवस्य वशो मप मे ध्वे
पदान्ते च । धुक् धुग् । दुहौ ॥

वा दुहमुहण्युहण्णिहाम् ८ । २ । ३३ ॥

एपां हस्य वा घो झलि पदान्ते च । धुक् धुग् । धृङ्
धृङ्त्सु ॥

वाह ऊङ् ६ । ४ । १३२ ॥

भस्य वाहः सम्प्रसारणमूढ । वृद्धिः । विशोहः । विशोहा ॥

चतुरङ्गुनहोरामुदात्तः ७ । १ । ९८ ॥

एतयोराम् सर्वनामस्थाने स चोदात्तः ॥

सावनडुहः ७ । १ । ८२ ॥

अस्याकारात् नुम् सौ परे । संयोगान्तलोपस्यामेढ्रत्वान्तलोपो
न । अनङ्गान् ॥

अम् सम्बुद्धौ ७ । १ । ९९ ॥

चतुरङ्गुनहोराम् सम्बुद्धौ । हे अनङ्गान् । वसुभंस्वाति दः ।
अनङ्गुद्व्यामित्यादि ॥

सहेः साङः सः ८ । ३ । ५६ ॥

साङ् रूपस्य महेः सस्य मूर्धन्यः । तुगपाद् । तुगसाहो चत्वारः ॥

पट्चतुर्भ्यश्च ७ । १ । ५५ ॥



पट्संज्ञकेभ्यश्चतुरश्च परस्य आमो जुडागमः । चतुर्णाम् चतुर्थे ॥

मो नो धातोः ८ । २ । ६४ ॥

धातोर्मस्य नः पदांते नत्वस्यासिद्धत्वान्नलोपो न । प्रशान् ।
प्रशान्भ्याम् । वृत्रहा । वृत्रहणौ ॥

एकाजुत्तरपदे णः ८ । ४ । १२ ॥

एकाजुत्तरपदं यस्य तस्मिन्समासे पूर्वपदस्थान्निमित्तात्परस्य
प्रातिपदिकान्तनुम्विभक्तिस्थस्य नस्य नित्यं णः ॥

हो हन्तेऽङ्गिन्नेषु ७ । ३ । ५४ ॥

जिति णिति च प्रत्यये नकारे च परे हन्तेर्हस्य कुत्वम् । वृत्रघ्नः ॥

हन्तेः ८ । ४ । २२ ॥

उपसर्गस्थान्निमित्ताद्धन्तेर्नस्य णः । ग्रहण्यात् ॥

अत्पूर्वस्य ८ । ४ । २२ ॥

हन्तेरत्पूर्वस्यैव नस्य णः नान्यस्य । प्रघ्नन्ति । वृत्रघ्ना । एवं
शार्ङ्गिन्यशास्विन्नर्यमन् पूषन् ॥

मघवा बहुलम् ६ । ४ । १२८ ॥

मघवन्शब्दस्य वा वृ इत्यन्तादेशः । उपधादीर्घः । इह संयो-
गान्तलोपस्यासिद्धत्वं तु बाहुलकात् । मघवान् । मघवन्तौ । हे
मघवन् । मघवतः । पक्षे मघवा । सुदि राजवत् ॥

श्वयुवमघोनामतद्धिते ६ । ४ । १३३ ॥

अन्नन्तानां मसंज्ञकानामेपामतद्धिते संप्रसारणम् । मघोनः । शुनः ॥

न संप्रसारणे संप्रसारणम् ६ । १ । ३७ ॥

संप्रसारणे परतः पूर्वस्य यणः संप्रसारणं न । यूनः । यूनाः ॥

इति ४७ अंगाः ।

अर्वा ॥

अर्वणस्त्रसावनजः ६ । ४ । १२७ ॥

नत्रा रदितस्यार्नइत्यस्याङ्गस्य वृ इत्यन्तादेशो नतु र्मा ।
अर्वन्ती । अर्वझाम् । अनञः किम् । अनर्वाणा यज्यत ॥

पथिमथ्यूभुक्षामात् ७ । १ । ८५ ॥

एषामाकारोन्तादेशः सौ ॥

इतोत्सर्वनामस्थाने ७ । १ । ८६ ॥

पथ्यादेरिक्कास्स्याकारः सर्वनामस्थाने ॥

थो न्यः ७ । १ । ८७ ॥

पथिमथोस्यस्य न्यादेशः सर्वनामस्थाने । पन्थाः । पन्थार्ना ॥

भस्य टेल्लोपः ७ । १ । ८८ ॥

भसंज्ञकस्य पथ्यादेटेल्लोपः । एयः । एवं मन्थाः । ऋमुक्षाः ॥

णान्ता पट् १ । १ । २४ ॥

पान्ता नान्ता च संख्या पट्संज्ञा । पञ्च । पञ्च ॥

नोपधायाः ६ । ४ । ७ ॥

नान्तस्योपधाया दीर्घो नाभि । नलोपः । पञ्चानाम् । एवं
सप्तादयः ॥

अष्टन आ विभक्तौ ७ । २ । ८४ ॥

अष्टनो हलादौ विभक्ती जश्शसोश्च वा आत्वम् ॥

अष्टाभ्य औश् ७ । १ । २१ ॥

कृताकारादष्टनः परयोर्जश्शसोरीश् । अष्टौ । अष्टौ । अष्टामिः ।

अष्टानाम् । आत्वामावे अष्ट २ । इत्यादि पंचवत् ॥

ऋत्विग्दधृक्स्त्रिगुण्णिगञ्जुजिकुञ्चां च ३ । २ । ५९ ॥

एभ्यः क्तिन् । तत्र निरुपपदात् युजेः क्तिन् । कृदतिङ् । वेर-

पृक्तस्य ॥

युजेरसमाप्ते ७ । १ । ७१ ॥

युजेः सर्वनामस्थाने नुम् असमामि ॥

किन्प्रत्ययस्य कुः ८ । २ । ६२ ॥

किन्प्रत्ययो यस्मात्तस्य कवर्गोऽन्तादेशः पदान्ते । नस्य डः । युङ्।युङ्गौ । युजः । युजा । समासे तु सुयुक् । युज समाधौ इत्यस्य तु न नुम् । तेन युक् । खन् । खङ्गौ । व्रश्चभ्रस्जे । ति पत्वम् । जश्त्वेन डः । राट् राड् । सुपि पक्षे धुद् चत्वम् । तस्यासिद्धत्वाच्चयो द्वितीया इति द्रव्योष्ठ्यौ न । न पदान्तादिति प्लुत्वन्न । राट्सु राट्सु । षढोः कः सि इति तु न जश्त्वं प्रत्यसिद्धत्वात् । विभ्राट् विश्वसु-ट् । परिमृ-ट् । व्रश्चेति सूत्रे भ्राजः फणादेर्ग्रहणम् । अन्यस्य विभ्राक् ॥

परौ व्रजेः पः पदान्ते ॐ ॥

परावुपपदे व्रजेः क्तिदीर्घो पदान्ते पत्वं च । परिव्राट्-ट् ॥

विश्वस्य वसुराटोः ६ । ३ । १२८ ॥

विश्वशब्दस्य दीर्घोऽन्तादेशो वसौ राट्शब्दे च परे । विश्वावसुः । राडिति पदान्तोपलक्षणम् । विश्वाराट् । विश्वाराडभ्यां । नेह । विश्वराजौ । स्कोरिति सलोपः । भृट् भृङ् । भृङ्गौ । ऋतावुपपदे यजेः किन् । ऋत्विक्-ग् । रात्सस्य । ऊर्क् र् । ऊर्जौ । सुपाट्-ट् । सुपाटो ॥

पादः पत् ६ । ४ । १३० ॥

पाच्छब्दान्तं यटङ्गं भं तदवयवस्य पाच्छब्दस्य पदादेशः । सुपदः । सुपदा । सुपाद्यामित्यादि । अग्निमत्-ट् । अग्निमर्था । अग्निमद्यामित्यादि ॥

इति ४८ अंशाः ।

अश्नेः सुप्युपपदे किन् अनिदितामिति नस्य लोपः । प्राड् । प्राश्चौ ॥

अचः ६ । ४ । १३८ ॥

उभनस्याश्चतेर्भस्यातो लोपः ॥

चौ ६ । ३ । १३८ ॥

लुप्ताकारनकारेऽश्वतो परे पूर्वस्याणो दीर्घः । प्राचः । प्रत्यङ् ।
अच इति लोपस्य विषयेऽन्तरङ्गोऽपि यण् न प्रवर्त्तते । अकृतव्यूहाः
इति परिभाषया । प्रतीचा । विष्वगश्वतीति विग्रहे ॥

विश्वदेवयोश्च देरद्रचंचतावप्रत्यये ६ । ३ । ९२ ॥

अनयोः सर्वनाम्नश्च देरद्रथादेशो वप्रत्ययान्तेऽश्वतो । विश्वद्रचद्र ।
विष्वद्रीचः । एवं देवद्रचङ् । उदङ् ॥

उद ईत् ६ । ४ । १३९ ॥

उदः परस्य लुप्तनकारस्याश्वतेर्मस्याकारस्य ईत् । उदीचः ॥

समः समि ६ । ३ । ९३ ॥

वप्रत्ययान्तेऽश्वतो परे समः समिरादेशः । सम्यङ् । समीचः ॥

सहस्य सध्रिः ६ । ३ । ९५ ॥

सध्यङ् । सध्रीचः ॥

तिरसस्तिर्यलोपे ६ । ३ । ९४ ॥

अलुप्ताकारेऽश्वतो अप्रत्ययान्ते परे तिरसस्तिरिः । तिर्यङ् ।
तिरश्चः ॥

नाञ्चैः पूजायाम् ६ । ४ । ३० ॥

पूजार्थस्याश्वतेः उपधाया नस्य लोपो न । नलोपाभावात्
नुमकारलोपो । प्राङ् । प्राञ्चौ । प्राञ्चः । प्राङ्भ्याम् । प्राङ्स्त्पु
प्राङ्क्षु प्राङ्ष्टु । एवं पूजार्थे प्रत्यङ्गादयः । कुञ्चः । किनि नलोपाभा-
वोऽपि निपात्यते । कुङ् । कुञ्चौ । कुङ्भ्यामित्यादि । पयोमुक्-ग् ।
सुवृद्-ङ् । सुवृश्चौ ॥

वर्तमाने पृपन्महद्महजगच्छत्तवच्च ॥

उगित्वाक्षुम् । महान् । महान्तौ । महता ॥

जक्षित्यादयः षट् ६ । १ । ६ ॥

जक्षादयः षडन्ये जक्षितिश्च सप्तम एते अभ्यस्तसंज्ञाः । जक्ष-

त् द् । जक्षतौ । एवं जाग्रत् द् । दारिद्र्यत्-द् । शासत्-द् । चकासत्-द् ।
दीध्यत्-द् । वीव्यत् । छान्दसत्वात्परस्मैपदम् । गुप्-व् । गुपौ ॥

त्यदादिषु दृशोऽनालोचने कश्च ३ । २ । ६० ॥

अज्ञानार्थाद् दृशोर्दातोः कञ् चात् किन् ॥

आ सर्वनाम्नः ६ । ३ । ९१ ॥

सर्वनाम्न आकारान्तादेशो दृग्दृश्वतुषु कुत्वस्यासिद्धत्वात्षः ।
ततो ङगकाः । तादृक्-ग् । तादृशौ । विद्-ङ् । विशौ ॥

नशेर्वा ८ । २ । ६३ ॥

नशेः कवर्गोऽन्तादेशो वा पदान्ते । नक्-ग् । नट्-ङ् । नशौ ॥

स्पृशोऽनुदके किन् ३ । २ । ५८ ॥

अनुदके सुप्युपपदे स्पृशेः किन् । घृतस्पृक्-ग् । घृतस्पृशौ ।
किन्प्रत्यय इति बहुव्रीहेः किप्यपि कुत्वम् । स्पृक्-ग् । पङ्गकाः
प्राग्वत् । धृपेः किन् द्वित्वं निपात्यते दधृक्-ग् । दधृषौ । रत्नमुद्-ङ्
रत्नमुषौ । पद्-ङ् । पङ्क्तिः ॥

प्रत्यये भाषायां नित्यम् ॐ ॥

पण्णाम् । दमेर्दोस् ङित्वसामर्थ्यादभस्यापि टेलोपः । पत्वस्या-
सिद्धत्वाद्भुत्वविसर्गौ । दोः । दोषौ । पदभित्ति वा दोपन् । दोष्णः ।
दोष्णा । दोषः । दोषा । सान्तमहत इत्यत्र सान्तसंयोगोऽपि
प्रातिपदिकस्यैव गृह्यते । तेन सुष्ठु हिनस्तीति सुहिन् । सुहिंसौ ।
सुहिन्भ्याम् । उगिदचामित्यत्राजग्रहणं नियमार्थं धातोश्चेदुगि-
त्कार्यं तर्ह्यश्चेत्तेरेवेति । तेनेह न । ध्वत्-द् । ध्वद्भ्याम् । एवं सत् ॥

पुंसोऽसुद् ७ । १ । ८९ ॥

सर्वनामस्थाने विवक्षिते पुंसोऽसुद् । पुमान् । हे पुमन् ।
पुमांसौ । पुंसः । पुंभ्याम् । उशना । उशनसौ ॥

अस्य संबुद्धावनङ् नलोपश्च वा वाच्यः ॐ ॥

हे उशनन् हे उशन हे उशनः । उशनोभ्याम् । अनेहा ।

अधातोर्ित्युक्तेर्न दीर्घः । सुपु वस्ते सुवः । सुवसौ । पिण्डं असते
पिण्डग्रः पिण्डग्लः ॥ इति पुलिङ्गाः ॥

इति ४९ अंशाः ।

विभाषा द्वितीयातृतीयाभ्याम् ७ । ३ । ११५ ॥

आभ्या परस्य डितः स्याद् वापश्च द्वस्वः । द्वितीयस्ये द्विती-
यायै । अम्बार्थनद्योर्द्वस्यः । हे अम्ब । हे अक्क । हे अल्ल । असंयुक्त-
डलकवतान्न । हे अम्बाडे । हे अम्बाले । हे अम्बिके । जरा ।
अजादौ जरस् । जरसौ । जरसम् । पक्षे हलादौ च रमावत् । निशा-
निश् । निशः । व्रश्चेति पः । निङ्भ्याम् । व्रश्चेति सूत्रे धातोर्ित्यनु-
वृत्तौ तु निङ्भ्याम् । श्रुत्वम् । निचशु । कुत्वं तु न जश्त्वस्यासिद्ध-
त्वात् । गोपा विश्वपावत् ॥

त्रिचतुरोः स्त्रियां तिसृचतसृ ७ । २ । ९९ ॥

स्त्रीलिङ्गयोरेतयोरेतावादेशौ विभक्तौ ॥

न पट्स्वस्त्रादिभ्यः ४ । १ । १० ॥

पट्संज्ञकेभ्यः स्वस्त्रादिभ्यश्च टाप्रडीपौ न । स्वस्त्रादयः स्युः
स्वसृमातृयातृननांघ्रितिस्रो दुहिता चतस्रः ॥

अचिर ऋतः ७ । २ । १०० ॥

तिसृचतसृएतयोः ऋकारस्य रेफादेशोऽचि । गुणदीर्घोत्वानाम-
पवादः । तिस्रः ॥

न तिसृचतसृ ६ । ४ । ४ ॥

एतयोर्नामि दीर्घो न । तिसृणाम् । स्त्री । हे स्त्रि ॥

स्त्रियाः ६ । ४ । ७९ ॥

स्त्रीशब्दस्य इयङ्जादौ प्रत्यये । स्त्रियौ ॥

वामृशसोः ६ । ४ । ८० ॥

अमि शसि च परे स्त्रिया इयङ् वा । स्त्रियम् स्त्रीम् । स्त्रियः ।
स्त्रीः । स्त्रियै । स्त्रियाः । स्त्रीणाम् । स्त्रियाम् । प्रधीशब्दस्य वृत्तिका-

रादीनां मते लक्ष्मीवद्रूपम् । कैयटमते पुंवत् । प्रकृष्टा धीरिति विग्रहे तु लक्ष्मीवत् । अमि शसि च प्रध्यम् । प्रध्यः । सुष्ठु धीर्यस्याः सा सुष्ठु ध्यायति वेति विग्रहे तु वृत्तिमते सुधीः श्रीवत् । मतान्तरे पुंवत् सुष्ठु धीरिति विग्रहे तु श्रीवदेव । ग्रामणीः पुंवत् । धेनुर्मतिवत् ॥

स्त्रियां च ७ । १ । ९६ ॥

स्त्रीषाची कोष्ठशब्दस्तृजन्तवद्रूपं लभते । डीप् । क्रोप्री । वधू-गौरीवत् । भूः श्रीवत् । हे सुभूः । ह्रस्वस्त्वपाणिनीयः । प्राञ्चः कवयस्तु सुभूगन्धे ह्रस्वं प्रयुञ्जते । खलपूः पुंवत् । पुनर्भूः । पुनर्भूः । ह्रस्वः । हे पुनर्भु । पुनर्भ्वम् । एकाजुत्तरेति णः । पुनर्भूणाम् । भेकजातौ कैयटमते हे वर्षाभूः । मतान्तरे हे वर्षाभु । पुनर्नवायां तु सर्वेषाम् । हे वर्षाभु । वर्षाभ्वी । स्वयंभूः पुंवत् । स्वसा । स्वसारौ । द्यौर्गोवत् । नौर्ग्लौवत् ॥

नहो धः ८ । २ । ३४ ॥

नहो हस्य धः झलि पदान्ते च । उपानत्-ट् । उत्पूर्वात् णिहः फिलिपातनात्तलोपपत्वे कुत्वम् । जश्त्वचत्वे उष्णिक् ग् ॥

दिव औत् ७ । १ । ८४ ॥

दिविति प्रातिपदिकस्य औत् सौ । द्यौः । दिवौ ॥

दिव उत् ६ । १ । १३१ ॥

दिवोऽन्तादेशः उकारः पदान्ते । शुभ्याम् । चतुश्चतस्र । चतस्रः । चतसृणाम् । सृजेः षिन् अमागमश्च निपात्यते । सकृ-ग् । अप्-शब्दो नित्यं बहुवचनान्तः । आपः । अपः ॥

अपो भि ७ । ४ । ४८ ॥

अपस्तकारो मादौ प्रत्यये । अट्टिः । दिक्-ग् । दशः षिन्विधानादन्यत्रापि कुत्वम् । दृक्-ग् । सह जुपते इति सज्जः । सजुर्पा । सजूर्भ्याम् । सजूर्षु मज्जःपु ॥ इति मीलिंगाः ॥

इति ५० अंशाः । इति द्वितीयाध्यायस्य प्रथमः पादः ।

अजरशब्दस्य सौ अजरमित्येव । सन्निपातलक्षणो विधिरानिभित्तं
तद्विधातस्य इति परिभाषया अजरसी । अजरे । अजरांसि । अज-
राणि । अजरसम् अजरम् । श्रीर्पं ज्ञानवत् ॥

अस्थिदधिसक्थ्यक्ष्णामनङ्कुदात्तः ७ । १ । ७५ ॥

एषामनङ् टादावचि स चोदात्तः । दध्ना । दध्नि दधनि । तद-
न्तस्याप्यनङ् । अतिदध्ना । एवमस्थ्यादि । चत्वारि । रोऽपि
अहर्भाति । विभाषाङिश्योः । अह्नी । अहनी । अहानि ॥

अहन् ८ । २ । ६८ ॥

अहन्नित्यस्य रुः पदान्ते । अहोभ्याम्रात्सस्याऊर्क्-र्ग । ऊर्जी ।
ऊर्जि । नरजानां संयोगः । तिर्य-र्ग । तिरश्ची । तिर्यञ्चि । पूजा-
यान्तु तिर्यङ् । तिर्यञ्ची ॥ इति नपुंसकलिङ्गाः ॥

सर्वादिषु उभयशब्दस्य द्विवचनं नास्तीति कैयटः । अस्तीति
हरदत्तः । जसि स्थानिवद्भावेन तयान्तत्वात् प्रथमचरमेति विकल्पे
प्राप्तेऽन्तरङ्गत्वाभित्यैव संज्ञा । उभये । समः सर्वपर्यायः । तुल्यप-
र्यायस्तु नेह गृह्यते । समे सर्वे । समास्तुल्याः । एकशब्दः संख्यायां
नित्यैकवचनान्तः ॥

अन्तरं वह्नियोगेति गणसूत्रेऽपुरीति वक्तव्यम् ❀ ॥

अन्तरायां पुरि । सर्वाद्यन्तस्यापि सर्वनामसंज्ञा तेन परमसर्व-
त्रेति प्रह । परमभवकानित्यकच ॥

न बहुव्रीहौ १ । १ । २९ ॥

बहुव्रीहौ चिकीर्षिते सर्वनामसंज्ञा न । त्वकं पिता यस्य त्वत्क-
पितृकः । मत्कपितृकः । समासात्प्रागेव प्रक्रियावाक्ये संज्ञानिषेधः
अन्यथा लौकिकविग्रहवाक्य इव तत्राप्यकच् प्रवर्त्तत स च समासे-
ऽपि श्रूयेत । अतिक्रान्तो भवकन्तमतिभवकानिति वत् । भाष्यका-
रस्तु त्वकत्पितृकः मकत्पितृक इत्यङ्गीकृत्य सूत्रं प्रत्याचख्यौ ॥

यथोत्तरं मुनीनां प्रामाण्यम् ❀ ॥

संज्ञोपसर्जनीभूतास्तु न सर्वादयः । अतः संज्ञाकार्यमन्तुर्गण-

कार्यं च तेषां न भवति । सर्वो नाम कश्चित्तस्मै सर्वाय देहि । अति-
क्रान्तः सर्वमतिसर्वस्तस्मै अतिसर्वाय । अतितत् ॥

तृतीयासमासे १ । १ । ३० ॥

अत्र सर्वनामता न । मासपूर्वाय । तदर्थवाक्येऽपि न । मासेन
पूर्वाय ॥

द्वन्द्वे च १ । १ । ३१ ॥

द्वन्द्वे उक्ता संज्ञा न । वर्णाश्रमेतराणाम् ॥

विभाषा जसि १ । १ । ३२ ॥

जसाधारं यत् कार्यं शीमावाख्यं तत्र कर्तव्ये द्वन्द्वे उक्ता संज्ञा
वा । वर्णाश्रमेतरे वर्णाश्रमेतराः । शीमावं प्रत्येव विभाषातो नाकच्
किन्तु क एव । वर्णाश्रमेतरकाः । स्त्रियाम् ॥

विभाषा दिक्समासे बहुव्रीहौ १ । १ । ३८ ॥

अत्र सर्वनामता वा । उत्तरपूर्वस्यै उत्तरपूर्वायै । दिङ्नामा-
नीत्युक्ते प्रतिपदोक्ते समास एव । नेह । योत्तरा सा पूर्वा यस्या
मुग्धायास्तस्यै उत्तरपूर्वायै । अन्तरस्यै बाह्यायै अन्तरायै पुर्य्यै ।
ह्रीवे । कतरत् कतरद् । कतमत् । संज्ञागौणयोः । कतरम् । अति-
कतरं कुलम् । अन्यत् । अन्यतरत् । द्वौ । द्वौ । परमद्वौ । द्विर्नाम
कश्चित् । द्विः । अतिद्विः ॥

इति ५१ अंशाः ।

इदमः ककारयोगे अयकम् । इमकौ । इमकेन । परमसः ।
संज्ञाया गौणत्वे च । त्यद् । त्यदौ । अतित्यद् । अतित्यदौ । यः ।
एषः । अन्वादेशे एनमित्यादि । एनाम् ॥

अदसः सौ ओत्वप्रतिषेधः सारुच्चकस्य वा वक्तव्यः
सादुत्वं च ॥

प्रतिषेधसन्नियोगशिष्टमुत्वं तदभावे न प्रवर्तते । अमकौ ।
५ । अमुकशब्दस्त्वव्युत्पन्नमदः पर्यायभूत शब्दान्तरम् ॥

समानवाक्ये निघातयुष्मदस्मदादेशाः ❀ ॥

एकतिङ् वाक्यम् । नेह । ओदनं पच तव भविष्यति । इह तु स्यादेव । शालीनां ते ओदनं दास्यामीति ॥

न च वाहाहैवयुक्ते ८ । १ । २४ ॥

चादिपञ्चकयुक्ते नैते आदेशाः हरिस्त्वां मां च रक्षतु । कथं त्वां मां वा न रक्षेदित्यादि साक्षाद्योगेभ्यं निषेधः । परंपरासम्बन्धे स्यादेव । हरो हरिश्च मे स्वामी ॥

पश्यार्थैश्चानालोचने ८ । १ । २५ ॥

अचाक्षुपज्ञानार्थैर्द्रोतुभिर्योगे नैते आदेशाः । चेतसा त्वां समीक्षते । परम्परासम्बन्धेऽपि न । भक्तस्तव रूपं ध्यायति । आलोचने तु भक्तस्त्वा पश्यति चक्षुषा ॥

सपूर्वायाः प्रथमाया विभाषा ८ । १ । २६ ॥

विद्यमानपूर्वात्प्रथमान्तात्परयोरनयोरन्वादेशेऽपि एते आदेशा वा स्युः । भक्तस्त्वमप्यहन्तेन हरिस्त्वां त्रायते स माम् । त्वामेति वा ॥

सामन्त्रितम् २ । ३ । ४८ ॥

सम्बोधने या प्रथमा तदन्तमामन्त्रितसंज्ञम् ॥

आमन्त्रितं पूर्वमविद्यमानवत् ८ । १ । ७२ ॥

अग्ने तव । सर्वदा रक्ष देव न इत्यत्र तु रक्षेत्याश्रित्यादेशः ॥

नामन्त्रिते समानाधिकरणे सामान्यवचनम् ८ । १ । ७३ ॥

विशेष्यं समानाधिकरणे विशेषणे आमन्त्रिते परे नाविद्यमानवत् । हरे दयालो नः पाहि ॥

विभाषितं विशेषवचने ८ । १ । ७४ ॥

बहुवचनान्तं विशेष्यं समानाधिकरणे विशेषणे आमन्त्रिते परे अविद्यमानवद्वा । यूयं प्रभवः । देवाः शरण्याः । युष्मान् भजे । यो भजे इति वा । इहान्वादेशेऽपि वैकल्पिका आदेशाः ॥

इति ५२ अंशाः ।

स्वरादिनिपातमव्ययम् १ । १ । ३७ ॥

ते चादिवर्णक्रमेण लोके प्रसिद्धा लिख्यन्ते । अन्तर । अभी-
क्षणम् । अंजसा । अतीव । अद्वा । अनिशम् । अनुपदम् । अन्त-
रा । अन्वक् । अपट्ट । अमुत्र । अरम् । अर्वाक् । असांप्रतम् ।
अवश्यम् । अस्तम् । आरात् । आविस् । आशु । ईषत् । उच्चैस् ।
उपा । उपजोषम् । उपांशु । ऋधक् । ऋते । कामम् । कुजोषम् ।
ज्ञाति । ज्ञागिति । तरसा । तिरस् । तिर्यक् । तूर्णम् । तूष्णीम् ।
तूष्णीकाम् । दिवा । दुष्ट । दोषा । द्राक् । धिक् । नक्तमानमस् ।
नाना । निकषा । निकामम् । नीचैस् । न्यक् । परम् । परश्वस् ।
पराक् । पुनःपुनर् । पुनर् । पुरतस् । पृथक् । प्रकामम् ।
प्रत्यक् । प्रत्यहम् । प्रसह्य । प्रातर । प्रादुस् । प्रायशस् । प्रायस् ।
प्रेत्य । बलात् । भुवर् । भूयस् । भूर् । मंथु । मनाक् । मिथस् ।
मिथुस् । मिथ्या । मुधा । मुहुर्मुहुस् । मुहुस् । मृषा । युगपत् ।
युक्तम् । रहस् । रोदसी । वरम् । वहिस् । विहायसा । विना ।
विश्वक् । विष्वक् । वृथा । शनैस् । शम् । शान्तम् । श्वसःसंवत् ।
सत्यम् । सपदि । समन्ततः । समन्तात् । सनत् । सनात् । समया ।
सना । समुपजोषम् । सह । साक्षात् । साचि । सामि । स्नाक् ।
सायम् । सुदि । सुष्टु । स्थाने । स्वयम् । स्वर । स्वस्ति । हिरुक् ।
ह्यस् । आकृतिगणोऽयम् ॥

चादयो सत्वे ॥

अ । अकस्मात् । अग्रे । अघोस् । अङ्ग । अचिरम् । अट्टट्ट ।
अथ । अथकिम् । अथवा । अथो । अन्तरेण । अपि । अपिच ।
आपितु । अभि । अमा । अयि । अये । अरे । अरे । अरेरे ।
अलम् । असकृत् । अस्ति । अस्तु । अहह । अहो । अहोवत् ।
अह्वाय । आ । आह् । आम् । आः । आहो । आहोस्वित् । इ ।
इति । इति । हा । इवा । उता । उत । उताहो । उम् । उररी । उरी । ऊरी ।
ऋतम् । ए । एवा । एवम् । एकपदे । ऐ । ओ । ओम् । औ । कश्चित् ।

कदाचन । कदाचित् । कम् । किंस्वित् । किंच । किञ्चन । किञ्चित् ।
 किं । किल । किन्तु । किञ्चु । किम् । किम् । किमुताकिंवा । किल ।
 कुत्रचित् । कृतम् । कचन । कचित् । खलु । चन । चित् । चिग्म् ।
 चिररात्राय । चिरस्य । चिरात् । चिराय । चिरेण । चेत् । छंवद् ।
 जातु । तत् । तथा च । तथापि । तथाहि । तावत् । तु । ते । दृ ।
 दिष्ट्या । न । नञ् । ननु । ननु च । न चेत् । न वा । न वै । नहि ।
 नाम । नास्ति । नितराम् । नु । नृनम् । नो । परमम् । पाद् ।
 प्याद् । पुरा । प्रगे । प्रत्युत । प्राध्वम् । प्राह्णे । फट् । वत । बलम् ।
 भगोस् । भवतु । भृशम् । भोस् । मम । माह् । मास्म । मेयत् ।
 यच्च । यथायथम् । यथातथम् । यथार्हम् । यथायत् । यथास्वम् ।
 यद्वा । यदि नाम । यदि । यदुत । यद्यपि । यावत् । रेवत् । यदि ।
 वरम् । वपद् । वा । वाव । विपु । वै । वीपद् । शश्वत् । शुम् । श्रत् ।
 श्रीपद् । सत् । सकृत् । सत्रा । सह । समम् । संप्रति । सम्यक् ।
 स्म । साकम् । सांप्रतम् । सार्द्धम् । मुचिरम् । मुतराम् । स्वा ।
 स्वाहा । स्वित् । ह । हंहो । हस्ते । हंडे । ईत । इम् । हला । हा ।
 हि । ही । हीही । हुम् । ह्म् । हे । हे । हो । हौ । अयमप्याकृतिगणः ॥
 इति ५३ अंगाः ।

उपसर्गविभक्तिस्वरप्रतिरूपकाश्च ॐ ॥

अवदत्तम् सुवन्तविभक्तिप्रतिरूपकाः । अहम् । अन्तरेण ।
 अन्योन्यस्य । अद्वाय । अग्रे । अक्स्मात् । एकपदे । कृतम् ।
 चिरेण । चिराय । चिररात्राय । चिरात् । चिरस्य । ते । तेन ।
 पर्याप्तम् । प्रगे । प्राह्णे । मम । मे । मात्रायाम् । येन । गत्री ।
 वेलायाम् । शुम् । हेतौ । अथ तिङन्तविभक्तिप्रतिरूपकाः ।
 अस्ति । अस्ति । अस्तु । अस्मि । आस । आह । एहि । न याति ।
 न वर्तते । नास्ति । पश्यत । पश्य । पूर्यते । ब्रूहि । भवति । भवतु ।
 मन्ये । याति । वर्तते । विद्यते । शंके । स्वरप्रतिरूपकाः । अ । आ ।
 इ । ई । उ । ऊ । ऋ । ॠ । लृ । लृ । ए । ऐ । ओ । औ ।

प्रादयः । ते चोक्ताः । शेषा अव्यया गणपाठे बोध्याः । एषामर्थो
अपि तत्रैव ॥

तद्धितश्चासर्वविभक्तिः ॥

तमिल् । त्रल् । अ । अत् । दाहिंल् । अधुना । दानीम् । यस् ।
उत् । आरि । समसण् । एद्यवि । य । एद्युस् । शुस् । थाल् । थमु ।
अस्ताति । असि । अतसुच् । रिल् । रिष्टातिल् । आति ।
एनप् । आच् । आहि । धा । ध्यमुञ् । धमुञ् । एधाच् । शम् ।
तसि । च्वि । साति । त्रा । डाच् । अम् । आम् । कृत्वसुच् । सुच् ।
धा । तसि । वति । नानान् । इति । तेनेह नापचतिरूपम् । तसिल् ।
कुतः । यतः । ततः । अतः । इतः । अमुतः । परतः । पूर्वतः ।
सर्वतः । परितः । अभितः । इत्यादि । त्रल् । कुत्र । यत्र । तत्र ।
अत्र । सर्वत्र । इत्यादि । ह । इह । कुह । अत् । क । दा । सर्वदा ।
सदा । एकदा । अन्यदा । कदा । यदा । तदा । हिंल् । तर्हि । यर्हि ।
एतर्हि । कर्हि । अधुना । अधुना । दानीम् । इदानीम् । तदानीम् ।
यस् । सद्यः । य । अद्य । एद्यवि । परेद्यवि । एद्युस् । पूर्वेद्युः ।
अन्येद्युः । अन्यतरेद्युः । इतरेद्युः । अपरेद्युः । अधरेद्युः । उभयेद्युः । उत्तरेद्युः ।
द्युस् । उभयद्युः । उत् । परुत् । आरि । परारि । समसण् । ऐषमः ।
थाल् । तथा । यथा । थमु । इत्थम् । अस्ताति । पुरस्तात् । अधस्तात् ।
अवस्तात् । अवरस्तात् । परस्तात् । असि । पुरः । अधः । अवः ।
अतसुच् । दक्षिणतः । उत्तरतः । अस्तातेर्लुक् । प्राक् । उदक् ।
प्रत्यक् । अवाक् । इत्यादि । रिल् । उपरि । रिष्टातिल् । उपरिष्टात् ।
आति । पश्चात् । उत्तरात् । अधरात् । दक्षिणात् । एनप् । उत्तरेण ।
दक्षिणेन । अधरेण । पूर्वेण । इत्यादि । आच् । उत्तरा । दक्षिणा ।
आहि । उत्तराहि । दक्षिणाहि । धा । द्विधा । इत्यादि । ध्यमुञ् ।
ऐक्यम् । धमुञ् । द्वैधम् । त्रैधम् । एधाच् । द्वेधा । त्रैधा । शस् ।
बहुशः । अल्पशः । इत्यादि । तसि । कृष्णतः । आदितः । मध्यतः ।
उरस्तः । इत्यादि । च्वि । कृष्णीभवति । इत्यादि । साति ।
अग्निसाद्भवति । इत्यादि । त्रा । देवत्रा करोति । इत्यादि । डाच् ।

पटपटाकरोति । सपत्राकरोति । इत्यादि । एकदिक्करोति ।
उरस्तः । वतिः । ब्राह्मणवत् । इत्यादि । ना । मिना । नाञ् ।
नाना । आम् । पचतितराम् । सुतराम् । अम् । उन्दसि । प्रतं ।
नयप्रतरम् । कृत्वसुच् । पंचकृत्वः । इत्यादि । सुच् । द्विः । त्रिः ।
सकृत् । धा । बहुधा । इत्यादि ॥ इत्यव्ययानि ॥

इति ५४ अंशाः ।

अथाख्यातम् । फलं व्यापारश्च धात्वर्थः । यथा पचो विह्वलितः
फलं तदनुकूलोऽधिभ्रयणादिव्यापारः तत्र धातुपाठे प्रायो विह्व-
ल्यादिरूपस्य पाकादेः फलस्यार्थतया निर्देशः तदनुकूलो व्यापार
एव क्रिया तद्वाचित्वं विना धातुत्वस्यैवाभावात्सर्वधातूनां क्रिया
वाच्या । व्यापारो भावना सैवोत्पादना सैव च क्रिया तत्र फल-
व्यापारयोरेकनिष्ठतायामकर्मकः धातुस्तयोर्द्धर्मिभेदे सकर्मक उदा-
हृतः । सकर्मकस्यापि हेतुचतुष्टयेनाकर्मकता । धातोरर्थान्तरे घृते-
र्द्धात्वर्थेनोपसंग्रहात् । प्रसिद्धेरविवक्षातः कर्मणोऽकर्मिका क्रिया ॥
वहति भारम् । नदी वहति । स्यन्दत इत्यर्थः । जीवति । नृत्यति ।
अत्र प्राणधारणमात्रविक्षेपार्थयोर्जीवनृत्योर्स्थेन कर्मणोः प्राणगा-
त्रयोः उपसंग्रहादकर्मकता । प्रसिद्धेर्यथा । मेघो वर्षति । कर्मणोऽ-
विवक्षातो यथा । हितान्नयः सशृणुते स किं प्रभुः । अत एव
आडो यमहनः समो गम्पृच्छिभ्यामित्यादौ हनिगम्यादेरपि वक्ष्य-
माणाऽकर्मकता न विरुद्धा अत एव च यथालक्ष्यमन्तर्भावितण्यर्थ-
तायामकर्मकोऽपि सकर्मकः । प्रेरणाशत्यागे सकर्मकोऽप्यकर्मकः ।
यथा । गजो मदं क्षरति । गजस्य मदं क्षरति । रविस्तपति ।
रविर्ललाट तपति । गत्युपसर्गसंज्ञा धातोः प्राक् प्रयोज्या इत्युक्त-
म् । उपसर्गास्त्वर्थविशेषस्य द्योतकाः । प्रभवति परामवर्तीत्यादौ
विलक्षणार्थावगतेः । उक्तञ्च । उपसर्गेण धात्वर्थो बलादन्यत्र नी-
यते । प्रहाराहारसहाराविहारपरिहारवादिति ॥ धात्वर्थं बाधते प्रादिः
कश्चित्तमनुवर्तते । तमेव विशिनष्ट्यन्योऽनर्थकोऽन्यः प्रयुज्यते ॥

क्रमेण यथा । प्रतिष्ठते । प्रस्मरति । प्रहरति । इत्यादि । आद्रियते । अधीते । व्याप्रियते । इत्यादि । अनुगच्छति । आगच्छति । संस्करो-
तीत्यादि । प्रेक्षते । वीक्षते । निहन्तीत्यादि । धातुषु सत्ताद्यर्थनिर्देश-
श्चोपलक्षणम् । यागात्स्वर्गो भवतीत्यादावुत्पद्यत इत्याद्यर्थात् । किञ्च
नकारजावनुस्वारपञ्चमौ ज्ञानि धातुषु पकारजः सकारस्तु पाद्वर्ग-
स्तवर्गजः ॥

आनि लोट् ८ । ४ । १६ ॥

उपसर्गस्थान्निमित्तात्परस्य लोडादेशस्यानीत्यस्य नस्य णः ।
प्रभवाणि । दुरः पत्वणत्वयोरुपसर्गत्व न । दुःस्थितिः । दुर्भवानि ।
अन्तःशब्दस्याङ्गिविधिणत्वेपूपसर्गत्वम् । अन्तर्द्वा । अन्तर्द्धिः ।
अन्तर्भवानि ॥

**नेर्गदनदपतपदधुमास्यतिहन्तियातिवातिद्रातिप्साति-
वपतिवहतिशाम्यतिचिनोतिदेग्धिषु च ८ । ४ । १७ ॥**

उपसर्गस्थान्निमित्तात्परस्य नेर्नस्य णः स्यात् गदादिषु । प्रणि-
गदति । प्रणिनदति ॥

शेषे विभाषा कखादावपान्त उपदेशे ८ । ४ । १८ ॥

उपदेशे कादिखादिषान्तवर्जे गदनदादेरन्यास्मिन् धातौ परे उप-
सर्गस्थान्निमित्तात्परस्य नेर्नस्य णत्वं वा । प्रणिभवाति । प्रणिभवति ॥

उपसर्गादसमासेऽपि णोपदेशस्य ८ । ४ । १९ ॥

उपसर्गस्थान्निमित्तात्परस्य णोपदेशस्य धातोर्नस्य णः समा-
सेऽसमासेऽपि च । नाद्यानाटिनृत्यनाथ्रनाधनक्नूनर्दानन्दं विना
णोपदेशाः । प्रणिन्दति । अथ प्रसङ्गात् णोपदेशाः । स्तयैसेकसृ-
स्तृजसृप्स्तृतोऽन्ये ये स्युस्तवर्गस्वरयुक्तसाद्याः । एकाच एते किल
णोपदेशाः प्वष्कप्विदप्वथ्वदप्वपाष्मिडश्च ॥

सात्पदाद्योः ॥

पत्वन्न । अनुसज्जति । इहोपसर्गाणामसमस्तत्वेऽपि संहिता

नित्या तदुक्तम् । संहितैकपदे नित्या नित्या धातूपसर्गयोः ।
नित्या समासे वाक्ये तु सा विवक्षामपेक्षते ॥

कर्तरि कर्मव्यतिहारे १ । ३ । १४ ॥

क्रियाविनिमये चोत्थे कर्तरि लस्यात्मनेपदम् । व्यतिभ्रंते ।
व्यतिरक्षन्ते । कर्मव्यतिहारविवक्षायां व्यत्युपसर्गयोगं विनाप्यात्म-
नेपदम् ॥

न गतिहिंसार्थेभ्यः १ । ३ । १५ ॥

व्यतिगच्छन्ति । व्यतिघ्नन्ति ॥

हसादीनामुपसंख्यानम् ❀ ॥

हसादयो हसप्रकाराः शब्दक्रियास्तेभ्योऽपि नात्मनेपदम् ।
व्यतिहसन्ति । व्यतिजल्पन्ति ॥

इतरेतरान्योन्योपपदाच्च १ । ३ । १६ ॥

नात्मनेपदम् । इतरेतरम् । व्यतिभवन्ति ॥

परस्परौपपदाच्च न ❀ ॥

परस्परं व्यतिभवन्ति । एवं न गतीत्यादि निषेधकं विना सर्व-
धातुभ्यः कर्मव्यतिहारे आत्मनेपदं तत्कार्यं च ज्ञेयम् । वल्गु गती ।
तर्ज भर्त्सने । तर्द हिंसायाम् । गर्द-नर्द शब्दे । कर्द कुत्सिते शब्दे ।
सर्व-गर्व गती । गर्व हिंसायाम् । फक् नीचेर्गती । चञ्चु वञ्चु गती ।
आशीर्लिङि कित्वात् उपधाया नस्य लोपः । चच्यात् । चच्या-
स्ताम् । शंसु स्तुतौ दुर्गतौ च । णील वर्णे । नीलति । प्रणीलति ।
मील निमेषणे । शील समाधौ । क्रीड विहारे ॥

क्रीडोर्नुसंपरिभ्यश्च १ । ३ । २१ ॥

एभ्य आडश्च । क्रीड आत्मनेपदम् । अनुक्रीडते इत्यादि ॥

अनोः कर्मप्रवचनीयान्न ❀ ॥

वालमनुक्रीडति । तृतीयार्ये इति कर्मप्रवचनीयता । समो
 कूजने । संक्रीडते । कूजने तु संक्रीडति रथचक्रम् । कील बन्धने ।
 लुञ्च अपनयने । लुच्यात् । कुञ्च-कुञ्च कौटिल्याल्पीभावयोः ।
 कुच्यात् । कुञ्चेस्तु । उपधालोपो न अस्य ओपधत्वेनैवेष्टत्वादि-
 त्याहुः । कुञ्यात् । तुम्प हिंसायाम् । तुतुम्प । तुतुम्पतुः । संयो-
 गात्परस्य लिटः कित्वाभावान्नलोपो न । आशीर्लिङि तु कित्वा-
 न्नलोपः । तुप्प्यात् । प्रातुम्पतौ गवि कर्त्तरि इति पारस्करादिगणे
 पाठात्सुट् । प्रस्तुम्पति गौः । श्लिपा निर्देशाद्यङ् । लुकि न प्रतोतु-
 म्पीति । चूप पाने । रूप भूषायाम् । शूल रुजाया संघोषे च ।
 कूज अव्यक्ते शब्दे । भूप अलङ्कारे । मूल प्रतिष्ठायाम् । म्लेच्छ
 अव्यक्ते शब्दे । मिम्लेच्छ । वेल्ल-क्ष्वेल्ल चलने । म्रेह-लोह् । उन्मादे ।
 शोण वर्णगत्योः । शुशोण । धोर्ऋ गतिचातुर्ये । शौट् गर्वे ।
 शुशौट् । त्वगि गतौ कम्पने च । कडि मदे । काक्षि काक्षायाम् ।
 ध्वाक्षि घोरवासिते च । लाच्छि लक्षणे । वाछि इच्छायाम् ।
 रिंगि लिङि गतौ । शिधि आघ्राणे । लुवि अर्दने । चुवि
 वक्त्रसंयोगे । कुथि हिंसासंक्लेशनयोः । जुगि वर्जने । लुटिलुठि
 स्तेये । मुडि त्वण्डने । शुठि कुठि प्रतिघाते । गुजि अव्यक्ते शब्दे ॥
 इति ५५ अंशाः ।

हस शब्दे । जहास । कप हिंसायाम् । चकपतुः । कण कण
 ध्वन भण शब्दे । भप भर्त्सने । हठ प्लुति शठत्वबलात्कारेषु । खल
 संचलने । गल अदने । लल विलासे । चल कम्पने । चर गतिभक्ष-
 णयोः । चेरतुः । अचारीत् ॥

उदश्वरः सकर्मकात् १ । ३ । ५३ ॥

तडानौ । धर्ममुचरते ॥

समस्तृतीयायुक्तात् १ । ३ । ५४ ॥

रथेन संचरते । व्यवहितेऽपि । रथेन समुदाचरते । जप व्य-
 क्ताया वाचि मानसे च । अजापीत् अजपीत् । णट नृतौ । णट्

अव्यक्ते शब्दे । पठ व्यक्तायां वाचि । मण रण शब्दे । रट परि-
भाषणे । जट संघाते । पट गर्तौ । रट विलेखने । रस शब्दे । लड
विलासे । लप व्यक्तायां वाचि । लस श्लेषणक्रीडनयोः । शट रुजावि-
शरणगत्यवसादनेषु । शसु हिंसायाम् । दन्त्यान्तः । शशास ॥

न शसददवादिगुणानाम् ६ । ४ । १२ ६ ॥

शसेर्देर्देवकारादीनां गुणशब्देन भावितस्य च योष्कारस्तस्य
एत्वाभ्यासलोपा न । शशसतुः । शशसुः । योपदेवादयस्तु न
शसेति सूत्रे शश प्लुतगर्तौ इति द्वितालव्यं धातुं गृह्णन्ति तेषां
मते दन्त्यान्तस्य शसतुरित्यादि द्वितालव्यस्य शशशतुरित्यादि ।
खिड ग्रासे । पुप पुष्टौ । पोपति । अपोपीत् । प्लुप दाहे । लुठ
उपधाते । लुड विलोडने । लुल विमर्दने साग्रः । कुच शब्दे तारे ।
घृह घृदौ शब्दे च । मृपु सेचने । घृपु संघर्षे । हृपु अलीके । स्फु-
टिर् विशरणे । अव रक्षणगतिकांतिप्रीतिवृत्त्यवगमप्रवेशश्रवणस्वा-
म्यर्थयाचनक्रियेच्छादीम्यवास्यालिंगनहिंसादानमागवृद्धिषु । बर्ह
पूजायाम् । अञ्चु गतिपूजनयोः । म्लुचु गर्तौ ॥

नृस्तम्भुचुम्लुचुयुग्लुचुग्लुश्विभ्यश्च ३ । १ । ५८ ॥

एभ्यः च्लेरङ् वा नलोपः । अम्लुचत् । अम्लोचीत् । धिवि
प्रीणने ॥

धिविकृण्व्योर च ३ । १ । ८० ॥

अनयोःफारोन्तादेश उपत्ययश्च शन्विषये । अतो लोपः । तस्य
स्थानिवत्त्वाल्लघूपधगुणो न । धिनोति । धिनुतः । धिन्वति । धिन्वः
धिनुवः । धिन्मः धिनुमः । हेर्लृरु । धिनु । नित्यत्वादुकारलोपा-
त्पूर्वमाट् । धिनवाव । एवं कृवि हिंसाकरणयोर्गर्तौ च । चमु अदने ॥

पिबुक्कुमुचमां शिति ७ । ३ । ७५ ॥

एषामचो दीर्घः शिति ॥

आङि चम इति व्यक्तव्यम् ॥

आचामति । चमति । अचमीत् । कटे वर्षावरणयोः । अरु-
दीत् । ष्टिवु निरसनं ॥

सुव्धातुष्टिवुष्पक्तीनां सत्वप्रतिषेधः ❀ ॥

षीवति । अस्य द्वितीयस्थष्टो वेति वृत्तिः । तिष्ठेव । टिष्ठेव ।
फल निष्पत्तौ ॥

तृफलभजत्रपश्च ६ । ४ । १२२ ॥

एषामत एत्वमभ्यासलोपश्च किति लिटि सेटि थलि च ।
फेलतुः । अफालीत् । एवं जिफला विशरणे । ईक्ष्य ईर्ष्यायाम् ।
इक्ष्याश्चकार । उठी विवासे । प्रायेण विपूर्वः । व्युच्छति । व्युच्छा-
श्चकार । ऊप रुजायाम् । इदि परमैश्वर्य । कित निवासे रोगाप-
नयने च ॥

गुप्तिज्जकिद्भ्यः सन् ३ । १ । ५ ॥

मान्वधदान्शान्भ्यो दीर्घश्चाभ्यासस्य ३ । १ । ६ ॥

सूत्रद्वयोक्तेभ्यः सन्मानादीनामभ्यासेकारस्य दीर्घश्च । गुपेर्नि-
न्दायाम् । तिजेः क्षमायाम् । कितेर्व्याधिप्रतीकारे निग्रहे अप-
नयने संशये च । मानेर्जिज्ञासायाम् । वधेश्चित्तविकारे । दानेराज्वे ।
शानेर्निशाने । गुपिप्रभृतयः कित्भिन्ना निन्दाद्यर्थका एवानुदा-
त्तेतो दानशानौ च स्वरितेत्तौ एते नित्य सन्नन्ताः । अर्थान्तरे
त्वननुबधकाश्चुरादयः धातोरित्यविहितत्वात् सनोऽत्र नार्द्धधातुक-
त्वं तेनेद्गुणौ न । सन्यङोः अभ्यासकार्यम् । चिकित्साति चिकि-
त्सत इत्यपि कश्चित् । अतो लोपः । चिकित्साचकार ॥

इति ५६ अंशाः ।

उप दाहे ॥

उपविदजागृभ्योऽन्यतरस्याम् ३ । १ । ३८ ॥

एभ्यो लिङ्थाम्वा । ओपाश्चकार ॥

अभ्यासस्यासवर्णे ६ । ४ । ७८ ॥

अभ्यासस्येवर्णोवर्णयोरियडुवडौ असवर्णेऽचि । उवोप । ऊ-
पतुः । ऊपुः । इह सवर्णदीर्घस्याभ्यासग्रहणेन ग्रहणाद्भ्रस्वः
प्राप्तो न भवति सकृत्प्रवृत्तत्वात् । आङ्गत्वाद्धि पर्जन्यवलक्षणप्रवृ-
त्त्या ह्रस्वे कृते ततः सवर्णदीर्घः । वाणादाङ्गं वलीयः इति न्या-
यात् परत्वाच्च । धूप सन्तापे ॥

गुपूधूपविच्छिपणिपनिभ्य आयः ३ । १ । २८ ॥

एभ्य आयप्रत्ययः स्वार्थे । धूपायति । धूपायांचकार ॥

आयादय अर्द्धधातुके वा ३ । १ । ३१ ॥

दुधूप । धूपायिता धूपिता । अधूपायीत् अधूपीत् । उख-उखि
गतौ । ओखति । उवोख । ऊखतुः । उङ्गति । उङ्गांचकार ॥ अथ
घटादयः ॥ ते च द्विधा । केचित् घटादिगण एवापूर्वतया प-
ठिताः । केचित्तु अन्यत्र पठिता अपि मित्कार्यार्थं घटादिष्वपि
पठिताः । तत्र घटादयस्वरत्यन्तास्त्रयोदश पितोऽपि तेभ्यः पि-
द्भिदादिभ्योऽङ् । घटा । व्यया । प्रया इत्यादिघटादयो मित इति ।
मितस्तु फणान्ताः सर्वेऽपि तेषां मित्कार्यं च णिच्येव ॥

मितां ह्रस्वः ६ । ४ । ९२ ॥

मितामुपधाया ह्रस्वो णौ परे । लगयति । णिजन्तात्क्रमेणि
लुङि तस्य तादेशे च्लौ तस्य चिणि णिलोपे च ॥

चिण्णमुलोर्दीर्घोऽन्यतरस्याम् ६ । ४ । ९३ ॥

चिण्णपरे णमुल्परं च णौ मितामुपधाया दीर्घो वा । अलगाणि
अलगि । आमीक्ष्ये णमुलि लागं लागं लगं लगम् । एवं सर्वेषु
घटादिपूदाहार्यम् । स्वस्वगणकार्यं च । लगति । ललाग । लेगतुः ।
अलगीत् । इत्यादि ज्ञेयम् । तत्राद्याः प्रसिद्धाश्चात्र खण्डे लिख्य-
न्ते । लगे संगे । ऋथ हिंसायाम् । ज्वर रोगे । हल चलने । दृ मये ।
नयादेरनुवादोऽयम् । अपूर्वं एवेत्यन्ये । अक-अग कुटिलाया गता ।
रगे सङ्गे । चक वृत्तौ । हेड वेष्टने । हेड्धातोऽनुवादोऽयमित्याहुः ।
परे तु असाम्प्रदायिकोऽस्य पाठः । सति पाठे त्वपूर्वं एवायं नत्वन्-

वाद इत्याहुः । णिजन्ते सर्वे घटादयो वक्ष्यन्ते । अथ फणादयः ॥
फण गतौ । अयं मतभेदेन घटादिष्वपि ॥

फणाञ्च सप्तानाम् ६ । ४ । १२५ ॥

एषां वा एत्वाभ्यासलोपां किति लिटि सेटि थालि च । फेणतुः
फफणतुः । स्वन शब्दे । स्वेनतुः सस्वनतुः । शेषा वक्ष्यन्ते ॥
अथ ज्वलादयः ॥ ज्वल दीप्ती । अज्वालीत् । बल प्राणने धान्या-
बोधे च । बेलतुः । बेलुः । पल्ल गतौ ॥

पतः पुम् ७ । ४ । १२६ ॥

अडि । अपसत् । टल वैक्लव्ये । पुल महत्त्वे । हल विलेखने ।
दुवम् उद्दिरणे । वाङ्मत्वाभ्यासलोपां । ववमतुः । वेमतुस्त्यपि
भागवृत्तौ । तद्वभाष्यादौ न दृष्टम् । अवमीत् । विधु गत्याम् ।
सेधति । सात्पदाद्योरिति निषेधे प्राप्ते ॥

उपसर्गात्सुनोतिसुवतिस्यतिस्तौतिसुतोभतिस्थासे-
नयसेधसिचसञ्जस्वञ्जाम् ८ । ३ । ६५ ॥

उपसर्गादिष्णिमिच्छादेषां सस्य षः । निषेधति ॥

सदिरप्रतेः ८ । ३ । ६६ ॥

प्रतिभिन्नोपसर्गन्यादिणः सदेः सस्यः षः ॥

स्तन्भेः ८ । ३ । ६७ ॥

सौत्रस्य सस्य षः । प्रतेरापि । बाहुप्रतिष्ठम्भविबृद्धमन्युः ॥

अवाञ्चालम्बनाऽऽविदूर्ययोः ८ । ३ । ६८ ॥

अवात्स्तन्भेरेतयोरर्थयोः षः ॥

वेश्व स्वनो भोजने ८ । ३ । ६९ ॥

व्यवाभ्यां स्वनतेः सस्य षः भोजने ॥

परिनिविभ्यः सेवसितसयसिबुसहसुटस्तु स्वञ्जाम्

। ३ । ७० ॥

एभ्यः परेषामेषां सस्य पः ॥

प्राक्सितादङ्गव्यवायेऽपि ८ । ३ । ६३ ॥

सेवसित इत्यत्र सितशब्दात्प्राग्ये सुनोत्यादथस्तेषामङ्गव्यवाये-
ऽपि पत्वम् । न्यपेधत् । न्यपेधीत् । न्यपेधिष्यत् ॥

स्थादिष्वभ्यासेन चाभ्यासस्य ८ । ३ । ६४ ॥

प्राक्सितात्स्थादिष्वभ्यासेन व्यवायेऽपि पत्वम् एषामेव चाभ्या-
सस्य नतु सुनोत्यादीनाम् । निपिपेध । निपिपिधत् ॥

सेधतेर्गतौ ८ । ३ । ११३ ॥

गत्यर्थस्य सेधतेः पत्वं न । गंगां विसेधति । भ्रमु चलने ॥

वा भ्राशभ्लाशभ्रमुक्रमुत्रसिञ्जटिलपः ३ । १ । ७० ॥

एभ्यः इयन् वा कर्त्तरि सार्वधातुके । भ्रम्यति भ्रमति । दिवादी
भ्राम्यति ॥

वा जृभ्रमुत्रसाम् ६ । ४ । १२४ ॥

एषामेत्वाभ्यासलोपौ वा किति लिटि सेटि थलि च । भ्रेमतुः
वभ्रमतुः । अभ्रमीत् । कथे निष्पाके । मथे विलोडने । क्षर संच-
लने । चल कंपने । कुच संपर्चनकौटिल्यप्रतिष्ठम्भविलेखनेषु । बुध
अवगमने । कस गतौ । शेषा वक्ष्यन्ते ॥ अथ द्वौ यजादी ॥ वद
व्यक्तायां वाचि ॥

वचिस्वपियजादीनां किति ६ । १ । १५ ॥

वचिस्वप्योर्यजादीनां च संप्रसारणं किति ॥

ग्रहिज्यावयिव्यधिवष्टिविचितिवृश्चतिपृच्छतिभृज्जती-
नां ङिति च ६ । १ । १६ ॥

एषा किति ङिति च संप्रसारणम् ॥

लित्यभ्यासस्योभयेषाम् ६ । १ । १७ ॥

वच्यादेर्ग्रहादेश्चाभ्यासस्य संप्रसारणं लिटि । उवाद् ॥

परनित्यांतरंगापवादानामुत्तरोत्तरं वलीयः । संप्र-
सारणं तदाश्रयं च बलवत् । सकृद्गतौ विप्रतिषेधे यद्वा-
धितं तद्वाधितमेव । पुनः प्रसङ्गविज्ञानात्सिद्धम् पुनः
प्रसङ्गविज्ञानाद् द्वित्वम् ॥

ऊदतुः । उद्यात् । अवादीत् ॥

भासनोपसंभाषाज्ञानयत्नविमत्युपमंत्रणेषु वदः १ ।
३ । ४७ ॥

आत्मनेपदम् । शास्त्रे वदते । श्रुत्यानुपवदते । शास्त्रे वदते ।
क्षेत्रे वदते । गेहे विवदन्ते । परदारानुपवदते ॥

व्यक्तवाचां समुच्चारणे १ । ३ । ४८ ॥

संप्रवदन्ते ब्राह्मणाः । नेह । संप्रवदन्ति खगाः ॥

अनोरकर्मकात् १ । ३ । ४९ ॥

व्यक्तवाग्विषयादनुपूर्वाद्भिदेरात्मनेपदम् । अनुवदते कठः कल-
पस्य ॥

विभाषा विप्रलापे १ । ३ । ५० ॥

विरुद्धोक्तिरूपे व्यक्तवाचां समुच्चारणे उक्तं वा । विप्रवदन्ते वि-
वदन्ति वा वैद्याः ॥

अपाद् वदः १ । ३ । ७३ ॥

अपवदते । कर्त्रभिप्राय एव । नेह । अपवदति ॥

विभाषोपपदेन प्रतीयमाने १ । ३ । ७७ ॥

स्वरितवितः, णिचश्च, अपाद् वदः, समुदाद्भ्यः, अनुपसर्गाज्ज्ञः
इति पञ्चसूत्र्या यदात्मनेपदं विहितं तत्समीपोच्चारितेन पदेन
क्रियाफलस्य कर्तृगामित्वे द्योतिते वा । स्वं पुत्रमपवदते अपव-
दति वा ॥

इति ५७ अंशाः ।

दुओश्च गतिवृद्धयोः ॥

विभाषा श्वेः ६ । १ । ३० ॥

श्वयतेः संप्रसारणं वा लिटि याडि च । शुशाव । शुशुवतुः ॥

श्वयतेर्लिट्यभ्यासलक्षणप्रतिषेधः ॥

तेन लिट्यभ्यासस्येति संप्रसारणं न । शिश्वाय । शिश्वियतुः । शूयात् ॥

जृस्तंभ्विति ॥

च्लेरङ् वा ॥

श्वयतेरः ७ । ४ । १८ ॥

श्वयतेरिकारस्य अकारोऽडि । अश्वत् ॥

विभाषा धेइङ्योः ३ । १ । ४९ ॥

आभ्यां च्लेश्चङ् वा कर्तृलुङि।चाङि इति धित्वम् । अशिश्वियत । ह्यन्तेति न वृद्धिः । अश्वयीत् । शेपा वक्ष्यन्ते ॥ अथ वेडानिदः ॥ तत्र अनिदश्च गधेन पूर्वमुक्ताः ज्ञातेति स्मरणार्थं श्लोकार्थोच्यन्ते । ऊदन्तक्रुदन्तरुणक्षुयौतिस्तुभुभिविडीशीश्रिं च वृद्धवृजौ च । स्युर्द्धा- तवः सेट इमेऽथ चान्ये एकाजजन्ता अनिदोऽनुदात्ताः ॥ १ ॥ हलन्तेषु शक्नोति पञ्चवच्चरिचश्च विचिर्मुञ्चतिः सिञ्चतिः पृच्छमञ्जौ । त्यजि- मर्ज्जती रञ्जनेनेक्तिभृज्जाः भुजिः स्याद्भजिर्गृह् भवेद्युज्जुजौ च ॥ १ ॥ स्वञ्जविजिरस्यजिसञ्जखिदः क्षुद्गच्छिनुदपयनुदोभिदविन्ते । स्विद्यति विद्यति सीदति चात्ति स्कन्दहृदौ शदशुष्यतिबुध्यौ ॥ २ ॥ रुधिः सराधिर्युधिवन्धिसाधयः क्रुधिः क्षुधिः सिध्यतिविध्यती हनिः । मन्यापत्त्यत्यथ लिम्पलुम्पती दृष्यस्वपी सर्पतिवप्रापक्षिपः ॥ ३ ॥ तेषति च्छुपति तप्पयभी रभिर्लभ्गमी अथ नमिर्यमी रमिः । दंशद- श्दिशतिभृशरिशीरुशिल्लिशस्पृशत्यथ विशत्यतुकुशिः ॥ ४ ॥ द्वेष्टि तुष्यकृपत्वेपत्यथ दुष्यति पुष्यति । पिनाष्टि विष् तत्तः शुष्य- त्यथ श्लिष्यति शिष तथा ॥ ५ ॥ स्याद्वसतिश्च घासिर्दहदेग्धीदो-

ग्निधनहीनहिलेदिरुहश्च । मेहतोरित्यनुदात्तहलन्ताः संकलिता द्यधिकं
शतमेते ॥ ६ ॥ गुप् रक्षणे । गोपायाञ्चकार । जुगोपिय जुगो-
प्य । गोपायिता गोपिता गोप्ता । गोपाय्यात् गुप्यात् । अगो-
पायीत् अगोपीत् । अगौप्सीत् । अगौप्ताम् । अज गतिकेपणयोः ।
अजति ॥

अजेर्व्यघभपोः २ । ४ । ५६ ॥

अजेर्वा आदेश आर्द्धधातुकविषये घञमर्प च वर्जयित्वा । बला-
च्चाद्धधातुके वेप्यते । विषाय । विध्यतुः । विव्युः । इह वकारस्य
हल्परत्वात् उपधाया च इति दीर्घे प्राप्ते अचः परस्मिन्निति स्या-
निबद्धावेनाच्परत्वम् । न च न पदान्तेति निषेधः । स्वरदीर्घयलोपेषु
लोपाजादेश एव न स्थानिवदिति वार्तिकोक्तेः । थलि एकाच इती-
प्तिनेपथे प्राप्ते कृत्भृत् इति क्रादिनियमादिद् प्राप्नोति । अत्र हि प्रकृत्या-
श्रयः प्रत्ययाश्रयो वा यावानिदं निषेधः स लिटि चत्तार्हि क्रादिभ्य
एव नान्येभ्य इति । ततश्चतुर्णां थलि भारद्वाजनियमप्रापितस्य वमादिषु
क्रादिनियमप्रापितस्य चेटो निषेधार्थम् । एवमिति प्राप्ते पुनरचस्ता-
स्वादित्यनेन निषेधे प्राप्ते भारद्वाजमतेन पुनर्निषेधनिवृत्त्या विकल्पः
नच स्तुद्धुक्षुभ्रामपि थलि विकल्पः शङ्क्यः । अचस्तास्वादिति उप-
देशे त्वत इति च योगद्वयप्रापितस्यैव हि प्रतिषेधस्य भारद्वाजनि-
यमो निवर्तकः अनन्तरस्येति न्यायात् । विवयिथ विवेथ । आ-
जिथ । विव्यथुः । विध्य । विषाय विवय । विध्यिव । विध्यिम ।
आजिव । आजिम । वेता । अजिता । वेप्याति । अजिप्यति ।
अजतु । आजत् । अजेत् । वीयात् । अवैपीत् । आजीत् । अवे-
प्यत् । आजिप्यत् । रिष रुप हिंसायाम् ॥

तीपसहलुभरूपरिपः ७ । २ । ४८ ॥

इच्छत्यादेः परस्य तादेराद्धधातुकरयेट वा । रोपिता रोष्टा ।
रोपिता रोष्टा । त पुवनतरणयोः । तरति ॥

ऋच्छत्पृताम् ७ । ४ । ११ ॥

तौदादिकऋच्छेऋधातोऋतां च गुणो लिटि परत्वात् णल्यपि ।
गुणः । उपधावृद्धिः । गुणशब्दमाविताकारवच्चान्निपेधे प्राप्ते तृफ-
लित्येच्चाभ्यासलोपी । तेरतुः ॥

घृतो वा ७ । २ । ३८ ॥

घृङ्घृञ्भ्यामृदन्ताघेदो दीर्घो वा नहु लिटि । तरिता तरीता ॥

ऋत इद्धातोः ॥

गुणवृद्धी परत्वाद्वाधेते । तीर्यात् । सिचि वृद्धिरिति वृद्धिः ।
अतारीत् ॥

सिचि च परस्मैपदेषु ७ । २ । ४० ॥

वृत इदो दीर्घो न । अतारिष्टाम् । कर्मव्यतिहार आत्मनेपदे वृ ॥

लिङ्सिचोरात्मनेपदेषु ७ । २ । ४२ ॥

वृतः परयोर्लिङ्सिचोरिङ् वा तडि ॥

न लिङि ७ । २ । ३९ ॥

वृतो लिङ् इदो दीर्घो न । तरिपीष्ट । उश्चेति कित्त्वम् । ती-
पीष्ट । अतरिष्ट अतरीष्ट अतीष्ट ॥

इति ५८ अंशाः ।

तक्षू तनूकरणे ॥

तनूकरणे तक्षः ३ । १ । ७६ ॥

शुर्वा शब्धिपये । तक्ष्णोति तक्षाति वा काष्ठम् । अन्यत्र वाग्मिः
संतक्षाति । भर्त्सयतीत्यर्थः । अतक्षीत् । पक्षे अताक्षीत् । अक्षू व्याप्ती ॥

अक्षोऽन्यतरस्याम् ३ । १ । ७५ ॥

शुः शब्धिपये । अक्ष्णोति अक्षति । अक्ष्णवन्ति । आनाक्षिथ
आनष्ट । अक्षिता अष्टा । अक्षिष्यति अक्षयति । अक्ष्णोतु । आक्षीत् ।
मा भवानक्षीत् । अक्षिष्टाम् । अनिद्रत्वे मा भवानाक्षीत् । आक्षाम् ।
ऋमु पादविक्षेपे । वा आशोति श्यन्वा ॥

क्रमः परस्मैपदेषु ७ । ३ । ७६ ॥

क्रमेर्दीर्घः परस्मैपदपरे शिति । काम्यति कामति ॥

स्नुक्रमोरनात्मने पदनिमित्ते ७ । २ । ३६ ॥

अत्रैवेद् । अकमीत् ॥

वृत्तिसर्गतायनेषु क्रमः १ । ३ । ३८ ॥

आत्मनेपदम् । ऋचि क्रमते वुद्धिः । न प्रतिहन्यत इत्यर्थः ।
क्रन्ता । क्रंस्यते । अक्रंस्त । अध्ययनाय क्रमते क्रमंतेऽस्मिन्
शास्त्राणि ॥

उपपराभ्याम् १ । ३ । ३९ ॥

वृत्त्यादिष्वाभ्यामेव क्रमेर्न तृपसर्गान्तगृवात् । उपक्रमते । परा-
क्रमते । नेह । संक्रामति ॥

आङ् उद्गमने १ । ३ । ४० ॥

आक्रमते सूर्यः ॥

ज्योतिरुद्गमन एव ॐ ॥

नेह । आक्रामति धूमो हर्म्यतलात् ॥

वेः पादविहरणे १ । ३ । ४१ ॥

साधु विक्रमते बाजी ॥

प्रोपाभ्यां समर्थाभ्याम् १ । ३ । ४२ ॥

प्रोपपूर्वादारम्भार्थात् क्रमेरात्मनेपदम् । प्रक्रमते । उपक्रमते ॥

अनुपसर्गाद्वा १ । ३ । ४३ ॥

क्रामति क्रमते । क्रन्ता । क्रंस्यते ॥ अथानिटः ॥ स्कन्दिद्
गतिशोषणयोः । चस्कन्दिथ चस्कन्थ । स्कन्ता । स्कन्तस्यति ।
नलोपः । स्कधात् । इरित्वादद् वा । अस्कदत् । अस्कान्तसीत् ।
अस्कान्ताम् । अस्कान्तसुः ॥

वेः स्कन्देरनिष्ठायाम् ८ । ३ । ७३ ॥

पत्वं वा । कृत्येवेदम् । अनिष्टायामिति पर्युदासात् । विष्कन्ता
विस्कन्ता । निष्ठायां तु । विस्कन्नः ।

परेश्च ८ । ३ । ७४ ॥

परेः परस्य स्कन्देः सस्य षो वा । योगविभागादनिष्टायामिति
न सम्बध्यते । परिष्कन्दानि परिस्कन्दति । परिष्कण्णः परिस्कन्नः ।
पत्वपक्षे णत्वम् । न च पदद्वयाश्रयतया बहिरङ्गत्वात्पत्वमसिद्धम् ।
धातृपसर्गयोः कार्यमन्तरङ्गमित्यभ्युपगमात् । पूर्वं धातुरुपसर्गेण
युज्यते ततः साधनेनेति भाष्यम् । पूर्वं साधनेनेति मतान्तरे तु न
णत्वम् । तप सन्तापे । तेषिथ ततप्य । तप्ता । अताप्सीत् ॥

उद्विभ्यां तपः १ । ३ । २७ ॥

अकर्मकात्तडानौ । उत्तपते । वितपते । दीप्यते इत्यर्थः ॥

स्वाङ्गकर्मकाच्च ❀ ॥

उत्तपते स्वपाणिम् । नेह । चैत्रो मैत्रस्य पाणिमुत्तपति । सृष्ट
गती । सर्पति ॥

अनुदात्तस्य चर्दुपधस्यान्यतरस्याम् ६ । १ । ५९ ॥

उपदेशेऽनुदात्तो य ऋदुपधस्तस्य अम् वा झलादावकिति । स्रप्ता
सर्ता । असृपत् । दह भस्मीकरणे । देहिथ । दादोरिति घः । दद-
ग्ध । दग्धा । धक्ष्यति । अधाक्षीत् । अदाग्धाम् । अधाक्षुः । यम
मैथुने । येभिथ ययब्ध । अयाप्सीत् । घस्त्व अदने । शपि बला-
घार्द्धधातुके लुडि कमराचि चास्य प्रयोगो न सर्वत्र । घस्ता ॥

सः स्याद्धधातुके ७ । ४ । ४९ ॥

सस्य तः सादावार्द्धधातुके । घत्स्यति । लटित्वात् च्लेरङ् ।
अधसत् ॥

इति ५९ अंशाः ।

वस निवासि॥अयं यजादिः । उवास । शासिवासि इति पः । ऊ-
पतुः । उष्यात् । वत्स्यति । औवै शोषणे । श्रै पाके । स्त्यै शब्द-
संघातयोः । क्षे क्षये । द्वै स्वप्ने । ण्यै वेष्टने । दाण् दाने ॥

पाघ्राध्मास्थाम्रादाण्ड्श्रयतिर्तिशदसदां पिबजिघ्रध-
मतिष्ठमनयच्छपश्यर्धौशीयसीदाः ७ । ३ । ७८ ॥

पादीनां पिवादयः स्युः इत्संज्ञकशकारादी प्रत्यये । यच्छति
दाता । प्रणियच्छति । अद्व्यवायेऽपीष्यते । प्रणययच्छत् ॥

दाधाध्वदाप् १ । १ । २० ॥

दाण्-डुदाज-दो-देद्-डुधाञ्-धेटो घुसंज्ञाः ॥

एलिङि ६ । ४ । ६७ ॥

घुमास्थागापाजहातिसो एपामात एत्वमार्द्धधातुके किति लिङि ।
देयात् । गातिस्थेति तिचो लृक् । अदात्तात् । अस्य पदातात् ।
अदुः ॥

दाणश्च सा चेच्चतुर्थ्यर्थे १ । ३ । ५५ ॥

सम्पूर्वादाणस्तृतीयान्तेन युक्तात्तडानौ तृतीया चेच्चतुर्थ्यर्थे ।
दास्या संयच्छते । व्यवधानेऽपि । दास्या सम्प्रयच्छते । सन्ददे ।
सन्दासीष्ट ॥

स्थाध्वोरिञ्च १ । २ । १७ ॥

अनयोरिदादेशः सिञ्च कित् तडि । ह्रस्वादङ्गात् । समदित ।
समदिपाताम् । पा पाने । पिवादेशोऽदन्तः । तेन उपधागुणो न ।
पिबति । पेयात् । अपात् । ध्मा शब्दाग्निसंयोगयोः । धमाति ।
धमेयात् । धमायात् । अध्मासीत् । घ्रा अभ्यासे । मनाति । घ्रा
गन्धोपादाने । जिघ्रति । घ्रेयात् घ्रायात् ॥

विभापा घ्राधेट्श्राञ्छासः २ । ४ । ७८ ॥

एभ्यः तिचो लृक् वा परस्मैपदे । अघ्रात् । अघ्रासीत् । धेट्
पाने । प्रणिधयति । दधी । दधिय दधायाधेयात् । विभापा धेट्ति
चट् द्वित्वम् । अदधत् । अदधताम् । पक्षे अधात् । अधासीत् ॥
इति ६० अंशाः । इति द्वितीयाध्यायस्य द्वितीयः पादः ।

ष्टा गतिनिवृत्तौ । तिष्ठति । तस्थौ । स्थेयात् । अस्थात् ॥

समवप्रविभ्यः स्थः १ । ३ । २२ ॥

आत्मनेपदम् । सन्तिष्ठते । समस्थित । समस्थिपाताम् ॥

आडः प्रतिज्ञायाम् ❀ ॥

शब्दं नित्यमातिष्ठते ॥

प्रकाशनस्थेयाख्ययोश्च १ । ३ । २३ ॥

गोपी कृष्णाय तिष्ठते । आशयं प्रकाशयतीत्यर्थः । संशय्य कर्णादिषु तिष्ठते यः । कर्णादीन्निर्णेतृत्वेनाश्रयतीत्यर्थः ॥

उदोऽनूर्द्ध्वकर्मणि १ । ३ । २४ ॥

मुक्तावुत्तिष्ठते । ऊर्ध्वकर्मणि तु पीठादुत्तिष्ठति । ईहायामेव । नेह । ग्रामाच्छतमुत्तिष्ठति ॥

उपान्मंत्रकरणे १ । ३ । २५ ॥

आग्नेय्याग्नीध्रमुपतिष्ठते ॥

उपादेवपूजासंगतिकरणमित्रकरणपथिष्विति वाच्यम् ❀ ॥

आदित्यमुपतिष्ठते । गङ्गा यमुनामुपतिष्ठते । रथिकानुपतिष्ठते । पंथाः सुन्नमुपतिष्ठते ॥

वा लिप्सायाम् ❀ ॥

प्रभुमुपतिष्ठते उपतिष्ठति वा ॥

अकर्मकाच्च १ । ३ । २६ ॥

उपात्तिष्ठतेरकर्मकादात्मनेपदम् । भोजनकाले उपतिष्ठते । गे शब्दे । गेयात् । अगासीत् । व्यतिगायति । जि जयेऽभिभवे च ॥

सँल्लिङ्गेर्जेः ७ । ३ । ५७ ॥

जयतेः सनि लिटि च योऽभ्यासस्ततः परस्य कुत्वम् । जिगाय । अजैषीत् ॥

विपराभ्यां जेः १ । ३ । १९ ॥

तडानौ । विजयते । पराजयते । व्यजेष्ट । जु रहसि । हु गतौ ।
द्रोता । द्रूयात् । णिश्रिदुसु इति चङ् । चङि अदुदुवत् । व्यति-
द्रवन्ति । एवं सु गतौ । पु प्रसवैश्वर्ययोः । सवति । सोता । धु
स्थयै । श्रु श्रवणे ॥

श्रुवः शृच ३ । १ । ७४ ॥

श्रुवः शृ इत्यादेशः श्नुप्रत्ययश्च कर्त्रर्थे सार्वधातुके । शपोऽप-
वादः । शृणोति । हुश्रुवोरिति यण् । शृण्वन्ति । शृण्वः शृणुवः ।
शुश्रोथ । शुश्रुव । शुश्रुम । शृणु ॥

अर्तिश्रुद्दिशिभ्यश्च ॐ ॥

समोऽर्कमेभ्य एभ्यस्तडानावित्यर्थः । संशृणुते । समश्रोष्ट ।
सन्नन्तादपि च तडानौ वक्ष्येते । ऋ गतिप्रापणयोः । ऋच्छति ।
उरत् । ऋच्छत्यताम् णलि गुणे उपधावृद्धिः । आर । आरतुः ।
इडत्यर्तिव्ययतीनाम् । आरिथ । ऋद्धनोः स्ये । अरिष्यति ।
आद् आटश्च । आच्छत् । अर्यात् ॥

सर्तिशास्त्यर्तिभ्यश्च ३ । १ । ५६ ॥

एभ्यः च्लेरङ् कर्तरि लुङि । इत्यङ् तु न लुप्तशपा शासिना
साहचर्यात् सत्यर्त्योर्जोहीत्यादिकयोरेवात्र ग्रहणात् । आपीत् ।
समृच्छते । समारे । समाराते । समारिरे । उश्च । समृषीष्ट । समात्ते ।
समार्पाताम् । समार्पत । माङि तु मासमृत । मासमृपाताम् ।
मासमृपत । सृ गतौ । शीघ्र गतौ । धावति । अन्यत्र सरति ॥

इति ६१ जंजाः ।

पञ्च सङ्गे ॥

दंशपञ्चज्जां शपि ६ । ४ । २५ ॥

रञ्जेश्च ६ । ४ । २६ ॥

एषा शपि नलोपः । पजति । ससञ्जिय ससङ्कय । सङ्गा ।

दंश दशने । दशति । ददंशित्य ददंष्ट्र । दंष्ट्रा । दश्यात् । दंक्ष्य-
ति । अदांक्षीत् । गम्ल गती ॥

इषुगमियमाञ्छः ७ । ३ । ७७ ॥

एषां छः शिति । गच्छति । जगाम । गमहनेत्युपधालोपः ।
जग्मतुः । जगमित्य जगन्थ । गन्ता ॥

गमेरिट् परस्मैपदेषु ७ । २ । ५८ ॥

गमेः परस्य सकारादेः इट् तडानयोरभावे । गमिष्यति । च्ले-
रङ् । अगमत् ॥

समोगमृच्छिभ्याम् १ । ३ । २९ ॥

अकर्मकाभ्यामात्मनेपदम् । संगच्छते । संगंस्यते ॥

वा गमः १ । २ । १३ ॥

गमः परौ झलादी लिङ्गसिच्चा वा कितौ । कित्वे अनुदात्तोप-
देशेति मलोपः । संगसीष्ट पक्षे संगंसीष्ट । समगत समगंस्त ।
यमु उपरमे । शपि यच्छति । शेषं णमवत् ॥

आङो यमहनः १ । ३ । २८ ॥

आत्मनेपदम् । आयच्छते । आयंस्त ॥

यमो गंधने १ । ३ । १५ ॥

परदोषाविष्करणे यमः सिच् कित् । उदायत् । गन्धने किम् ।
उदायंस्त पादम् । आकृष्टवानित्यर्थः ॥

उपाद्यमः स्वकरणे १ । ३ । ५६ ॥

उपाद्यमः स्वीकारे आत्मनेपदम् । भार्यामुपयच्छते ॥

विभाषोपयमने १ । २ । १६ ॥

यमः सिच् किङ्गा । विवाहे रामः सीतामुपायत् उपायंस्त वा ।
उदबोद्धेत्यर्थः । गन्धनाद्ग उपयमे तु पूर्वविप्रतिषेधान्नित्यं कित्त्वम् ॥

समुदाङ्भ्यो यमोऽग्रंथे १ । ३ । ७५ ॥

अग्रंथे इति छेदः । ब्रीहीन् संयच्छते । भारमुयच्छते । वस्त्रमा-

यच्छते । ग्रन्थे तु उद्यच्छति वेदम् । विभाषोपपदेनेति । स्वं व्रीहिं
संयच्छति संयच्छते वा । दृशिद् प्रेक्षणे । पश्यति ॥

विभाषा सृजिदृशोः ७ । २ । ६५ ॥

आभ्या थल इद् वा ॥

सृजिदृशोर्ज्ञल्यमकिति ६ । १ । ५८ ॥

अनयोः अमागमो हलादावकिति दद्रष्ट । ददर्शित्य ॥

ऋदृशो ङि गुणः ७ । ४ । १६ ॥

ऋवर्णान्तानां दृशेश्च गुणो ङि । अदर्शत् । अङ्भावे ॥

न दृशः ३ । १ । ४७ ॥

दृशः च्लेः कसो न । अद्राक्षीत् । अद्राष्टाम् ॥

अर्तिश्रुदृशिभ्यश्च ॥

सम्पश्यते । संदृशे । संदृक्षीष्ट । समदृष्ट । समदृक्षाता । समदृ
'क्षत । सन्नन्तादात्मनेपदं वक्ष्यते । कृप विलेखने । अनुदात्तस्ये-
त्यम् वा । कष्टा कर्षा ॥

स्पृशमृशकृपत्पहपां च्लेः सिज्वा ॐ ॥

अक्राक्षीत् अकाक्षीत् । अकृक्षत् । अथ ज्वलादिषु । शद्ल
शातने ॥

शदेः शितः १ । ३ । ६० ॥

शिद्भाविनोऽस्मादात्मनेपदम् । शीयते । शेदिय शशत्थ ।
शत्ता । अशदत् । पद्ल विशरणगत्यवसादनेषु । सीदति । सेदतुः ।

सदेः परस्य लिटि ८ । ३ । ११८ ॥

सदेरभ्यासात्परस्य पत्वं न लिटि । निपसाद । निपेदतुः ।
सत्ता । रुश आह्वाने रोदने च । क्रोष्टा । कसः । अरुक्षत् । रुह
बीजजन्मनि प्रादुर्भावे च । रोद्वा । रोक्ष्यति । अरुक्षत् । शेषा
वक्ष्यन्ते ॥ इति परस्मैपदिनः ॥

इति ६२ अंशाः ।

वल्लभ भोजने । वल्लभते । वल्लभे । वल्लभता । वल्लभ्यते । वल्लभ-
ताम् । अवल्लभत । वल्लभेत । वल्लभणीष्ट । अवल्लभष्ट । अवल्लभ्यत ।
पर्द कुत्सिते शब्दे । बर्ह परिभाषणाहिंसाच्छादनेषु । श्रम्भु-स्रम्भु
प्रमादे । स्पर्द्ध संघर्षे । कत्थ श्लाघायाम् । चकत्थे । गल्म धाष्टर्थे ।
गर्ह कुत्सायाम् । घट्ट चलने । दक्ष वृद्धौ शीघ्राय च । मक्ष अदने ।
परस्मैपद्यमित्येके । नित्यचुरादिरयं नतु भ्वादिरीति परे । बाधृ
षि लोडने । बबाधे । रास शब्दे । शाडृ श्लाघायाम् । लाघृ सामर्थ्ये ।
श्लाघृ कत्थने । भाम क्रोधे । भ्राजृ दीप्तौ । ह्राद अव्यक्ते शब्दे । ह्रादी
सुखे च । टीकृ गतौ । दीक्ष मौण्डचेज्योपनयननियमश्रुतादेशेषु ।
शीकृ सेचने । ह्लीष्ट अधाष्ट्यं । क्षीष्ट मदे । कुर्द क्रीडायामेव ।
कूर्दते । धुक्ष संदीपनक्लेशनजीवनीयेषु । पूर्या विशरणे । घूद
क्षरणे । क्यूरी शब्दे उन्दे च । घूर्ण भ्रमणे । वेष्ट वेष्टने । देष्ट देवने ।
पेष्ट सेवने । दुवेष्ट कंपने । रेष्ट अव्यक्ते शब्दे । रेष्ट शब्दे । हेष्ट
अनादरे । हेष्ट-हेष्ट अव्यक्ते शब्दे । ग्लेष्ट गतौ दैन्ये कम्पने च ।
ढौकृ गतौ । चडि कोपे । पचि व्यक्तीकरणे । लधि गतौ
मोजनानिवृत्तौ च । रभि शब्दे । लवि शब्दे अवसंसने च । शकि
शंकायाम् । आङ्गशसि इच्छायाम् । श्लथि शैथिल्ये । स्कमि-ष्टमि
प्रतिबन्धे । केऽपि ष्मेष्टकारमौपदेशिकमाहुः । स्पदि, किंचिश्चलने ।
काठि शोके । कपि चलने । ग्रथि कौटिल्ये । कडि मदे । भाडि
परिभाषणे । मडि विभाजने । हिडि गत्यनादरयोः । पिडि
संघाते । जृमि गात्रविनामे । कच बन्धने । दद दाने । ददते ।
न शसेति निषेधान्नेत्वाभ्यासलोपौ । दददे । दददाते । दददिरे ।
दध धारणे । देधे । पच सेवने सेचने च । घुव गतौ । वल संवरणे
संचरणे च । कल शब्दसंख्यानयोः । ष्वद आस्वादने । अयमनुभवे
सकर्मकः रुचावकर्मकः । ग्रसु अदने । एमु स्तम्भे । स्तोमते । स्फुट
विकसने । ऋज गतिस्थानार्जनोपार्जनेषु । अर्जतो नुडविधौ
ऋकारिकदेशो रेफो हलत्वेन गृह्यते तेनानेकहलत्वान्नुद् । आनृजे ।
भृजी मर्जने । ईह चेष्टायाम् । ईहांचक्रे । ऊयी तन्तुसंताने । एष्ट गतौ ।

एषते । डीड विहायसा गतौ । डयते । डिडये । डिडिचडे डि-
डिचध्वे । पूड पवने । पवते । ताड संतानपालनयोः ॥

दीपजनबुधपूरितायिप्यायिभ्योऽन्यतरस्याम् ३ । १ । ६१ ॥

एभ्यः च्लेशिष्ण वा एकवचनेतशब्दे परे । धिणो लुक् । अतायि ।
अतायिष्ट । स्फायी-ओप्यायी वृद्धौ ॥

लिडचडोश्च ६ । १ । २९ ॥

लिटि याडि च प्यायः पीमावः । पिप्ये । पिप्यिरे । अप्यायि ।
अप्यायिष्ट । कास शब्दकुत्सायाम् । कासते । कासाचक्रे । कासिता ।
नाधु-नाधु याचोपतापैश्वर्याशीःपु ॥

आशिपि नाथः ॥

अस्याशिष्येवात्मनेपदम् । नाथते । अन्यत्र नाथति । केचित्
नाधेर्णोपदेशतामाहुः । मान पूजायाम् । भीमासते । वध बन्धने ।
मष्वम् । बीभत्सते । तिज निशानि । तितिक्षते । गुप गोपने ।
जुगुप्सते । पण व्यवहारे स्तुतौ च । पनिसाहचर्यात्पणरेपि स्तुतावे-
वायः अन्यत्र पणते इत्यादि । वणिजा पणाया इति भट्टिर्व्य-
वहारेऽपि प्रायुक् । स्तुतावनुबन्धस्य केवले चरितार्थत्वात् आया-
न्तात्मात्मनेपदम् । पणायति । पणायाश्चकार । पेणे । पणायितासि
पणितासे । पगाय्यात् । जमी गात्रविनामे ॥

रधिजभोरचि ७ । १ । ६१ ॥

एतयोर्नुमागमोऽचि । जम्भते । कमु कान्ती ॥

कमेर्णिङ् ३ । १ । ३० ॥

स्वार्थे । कामयते । कामयाचक्रे । चकमे । कामयिता कमिता ।
णिश्रीति चङ् । काम इ अत इति स्थिते । णिलोपः । उपधाह्रस्वः ।
सन्चद्भावः । सन्यतः । दीर्घो लघोः । अचीकमत । णिङमावे ॥

कमेश्लेश्चङ्वाच्यः ❀ ॥

अचकमत ॥

इति ६३ अंशः ॥

दय दानगतिरक्षणहिमादानेषु ॥

दयायासश्च ३ । १ । ३७ ॥

दय अय आग एम्य आय लिटि । दयाञ्जे । दयिपीडम् । दयिपीडम् । अय गर्ता । अयाञ्जे ॥

उपसर्गस्यायतौ ८ । २ । १९ ॥

अयतिपरस्योपसर्गस्य यो ग्रेफ्तस्य लः । प्रायते । पलायते । निस्सुसोरुत्वस्यासिद्धत्वात् लत्वम् । निग्यते । दुग्यते । निदुग्यते । निलयते । दुलयते । प्रत्यय इति त्रिणो रूपम् ॥

अनुदात्तेत्यलक्षणमात्मनेपदमनित्यम् ॥

उदयति । ऊह वितर्क । ऊहते ॥

उपसर्गादस्यत्यूह्योर्वा ॥

आत्मनेपदम् । समूहाति समूहते ॥

उपसर्गाद्भस्व ऊहतेः ७ । ४ । २३ ॥

गादौ ङिति । समुदात् । समुदा ॥ अय युतायाः ॥ युन दीर्घा ॥

द्युतिस्वाध्याः संप्रसारणम् ७ । ४ । ६७ ॥

अनयोः अभ्यामस्य संप्रसारणम् । दिद्युते ॥

द्युज्यो लुङि १ । ३ । ९१ ॥

द्युतादिभ्यो लुङः परस्मैपदं वा । पग्मैपदेऽङ् । अद्युतत् । अद्योतिष्ट । रुच दीप्तावभिप्रीती च । द्युट पग्विचने । शुभ मंचलने । शुभ दीर्घा । भिता वर्णे । संमु विश्वाते । अन्नमन् । अन्नं भिष्ट । अंशु-संमु अवसंत्तने । धंशु अवसंत्तने गर्ता च ॥ अय घटादयः ॥ घट चेष्टायाम् । घटते । जघटे । घटादिमित्कार्यं च घटयति । अघाटे अघाटे । घाटं घाटम् । घटं घटम् इत्यादि । मय प्रख्याने । पप्रथे । व्यय मयमंचलनयोः ॥

व्ययो लिटि ७ । ४ । ६८ ॥

व्ययोऽभ्यासस्य संप्रसारणं लिटि । विव्यये । अद् मर्दने । वि-

त्वरा संभ्रमे । एते पितः ॥ अथ फणाद्याः ॥ दुभ्राजृ दीप्तौ । भ्रे-
जे । वभ्राजे । भ्राजतेरिह पाठः फणादिकार्यार्थः । पूर्वं पाठस्तु
म्रश्चादिपत्वामावार्थः । तत्र हि राजिसाहचर्यात् फणादेरेव ग्रहणम् ॥
अथ वेदः ॥ क्षमूष् सहने ॥

म्वोश्च ८ । २ । ६५ ॥

मान्तस्य धातोर्मस्य नः वमयोः । चक्षण्वहे चक्षमिमहे । अक्ष-
मिष्ट अक्षंस्त । व्रपूष् लजायाम् । त्रेपे । त्रेपाते । व्रप्ता व्रपिता ।
सह मर्षणेऽभिभवे च । ज्वलादिः । तीपेति वेद । सहिता ॥

सहिवहोरोदवर्णस्य ६ । ३ । ११२ ॥

अनयोरवर्णस्य ओत् ढलोपे । सोढा । गाहू विलोढने । जघाक्षे ।
जगाहिद्धे । जगाहिध्वे जगाद्धे । गाहिता । ढाढे लोपः । गाढा ।
गृह ग्रहणे ॥

लिङ्सिचावात्मनेपदेषु ॥

घृक्षीष्ट गृहिपीष्ट । च्लेः वसः । अघृक्षत ॥

वसस्याचि ७ । ३ । ७२ ॥

अजादौ तडि । वसस्य लोपः । अघृक्षाताम् । अघृक्षन्त ॥ अथ
श्रुतादिष्वेव वृतादयः ॥ वृतु वर्त्तने ॥

वृद्ध्यः स्यसनोः १ । ३ । ९२ ॥

वृतादिभ्यः परस्मैपदं वा स्ये सनि च ॥

न वृद्ध्यश्चतुर्भ्यः ७ । २ । ५९ ॥

एभ्यः सकारादेरार्द्धधातुकस्येण तडानयोरभावेऽवत्स्यति वर्ति-
ष्यते । अवृतत् अवर्तिष्ट । अवत्स्यत् अवर्तिष्यत् । एवं वृधु वृद्धौ ।
शृधु शन्दकुत्सायाम् । स्यन्दू प्रसवणे । सस्यन्दे । सस्यन्दिपे सस्यन्तसे ।
सस्यन्दिध्वे सस्यन्ध्वे । स्यन्दिता स्यन्ता । वृद्ध्यः इति परस्मैपदे
इद्विकल्पं बाधित्वा चतुर्ग्रहणसामर्थ्यात् वृद्ध्य इति इदनिषेधः ।
स्यन्तस्याति । स्यन्दिष्यते स्यन्तस्यते । स्यन्दिपीष्ट स्यन्तसीष्ट । पर-

स्मैपदपक्षेऽङ् नलोपः । अस्यदत् अस्यन्दिष्ट अस्यन्त । अस्य-
न्त्साताम् । अस्यन्त्सत् । अस्यन्दिष्यत् अस्यन्त्स्यत् ॥

अनुविपर्यभिनिभ्यः स्यन्दतेरप्राणिषु ८ । ३ । ७२ ॥

एभ्यः परस्याप्राणिकर्तृकस्य स्यन्दतेः सस्य पो वा । अनुष्य-
न्दते अनुस्यन्दते वा जलम् । अप्राणिषु किम् । अनुस्यन्दते हस्ती ।
अप्राणिष्वित्युक्तेः । मत्स्योदके अनुष्यन्दते इत्यत्रापि पक्षे षत्वं
भवत्येव । प्राणिषु नेत्युक्तौ तु न स्यात् । कृपू सामर्थ्ये ॥

कृपो रो लः ८ । २ । १८ ॥

कृपो रेफस्य लः । ऋकारस्य लकारः । कल्पते । चकृपे । इत्यादि
स्यंदिष्यत् ॥

लुटि च कृपः १ । ३ । ९३ ॥

लुटि स्यसनोश्च कृपेः परस्मैपदं वा ॥

तासि च कृपः ७ । २ । ६० ॥

हृपः परस्य तासिः सकारादेरार्द्धधातुकस्य चेष्टा न तडानयोर-
भावे । कल्तासि कल्पितासि । कल्तासि ॥ अथानिटः ॥ ष्मिङ्
ईपद्धतने । ऋादिनियमान्नित्यमिदं ॥

विभापेटः ॐ ॥

सिष्मिदिष्टे सिष्मिदिष्टे । अस्मेष्ट । मुष्ट मुष्ट च्युष्ट हृष्ट
गतौ । इयैष्ट गतौ । गाष्ट गतौ । गाते । गाते । गाते । जगे ।
गातासे । इष्ट एखे कृते वृद्धिः । गै । लष्ट इति । अगे । गेत । गयाता-
म् । गैरन् । गासीष्ट । गाङ्कुटादिभ्य इत्यत्र इडादेशस्यैव ग्रहणं
न त्वस्य तेनाडित्वाद् घुमास्था इतीत्वं न । अगास्त । मेष्ट
प्रणिदाने । प्रणिमयते । नेर्गदेत्यत्रास्यापि ग्रहणमिष्यते । ष्वञ्ज
परिष्वङ्गे । नलोपः । स्वजते । परिष्वजते ॥

श्रंथिग्रंथिदम्भिस्वर्जानां लिटः कित्वं वेति ॐ ॥

व्याकरणान्तरम् । सरवजे सस्वञ्जे । सस्वजिषे सस्वजिषे ।

स्वङ्गा । स्वङ्क्ष्यते । स्वजेत । स्वङ्क्षीष्ट । रमु कीडायाम् । ज्व-
लादिः । रमते ॥

व्याङ्परिभ्यो रमः १ । ३ । ८३ ॥

परस्मैपदम् । विरमतीत्यादि । व्यरंसीत् ॥

। उपाच्च १ । ३ । ८४ ॥

उपरमति ॥

विभाषाकर्मकात् १ । ३ । ८५ ॥

उपाद्मेरकर्मकात्परस्मैपदं वा । उपरमति उपरमते वा । इत्यात्म-
नेपदिनः ॥

इति ६४ अंशः ।

चायृ पृजानिशामनयोः । चायति चायते । चचाये । पच सम-
वाये । बुधिर् बुधने । अबुधत् । अबोधीत् । अबोधिष्ट । दीपज-
नेत्यत्र दिवादेरेव ग्रहणादत्र चिष् न । अस गतिदीप्त्यादानेषु ।
श्रिञ् सेवायाम् । श्रयति श्रयते । श्रयिता । चङ् अशिथि-
यत् । दान खण्डने । दीदासति दीदासते । एवं ज्ञान तेजने ।
शीशासति । अर्थविशेषे सन् अन्यत्र । दानयति । ज्ञानयति ।
खनु अवदारणे । जनसनेत्युपधालोपः । चरतु ॥

ये विभाषा ६ । ४ । ४३ ॥

जनसनखनामात्वं वा पादौ कृति । खायात् खन्यात् । लप
कान्ती । श्यन् वा । लपति लपते । भ्रेष्ट गती भ्रंशने च । मेधृ मेधा
हिंसनयोः सङ्गमे च । राज् दीप्ती । फणादिः । रेजतु । ररजतु ।
रेजे । रराज ॥ अथ वेटः ॥ गृह सवरणे ॥

ऊदुपधाया गोहः ६ । ४ । ८९ ॥

गृह उपधाया ऊत् गुणहेतावजादौ प्रत्यये । गृहति गृहते ।
गृहिता गोहा । अगृहीत् । अगृहत् ॥

लुग्वा दुहदिहलिहगृहमात्मनेपदे दुन्त्ये ७ । ३ । ७३ ॥

एषां कसस्य लुग्वा दन्त्ये तडि । अगूढ । अघुक्षत । अघु-
क्षन्त । अगुह्महि । अघुक्षावाहि ॥ अथानिटः ॥ भज सेवायाम् ।
भेजतुः । भेजे । रञ्ज रागे । रजति रजते । शप आक्रोशे । शोपिथ
शशप्य । शोपिपे । शप उपालम्भे । अकर्तृमेऽपि फले तडानी ।
कृष्णाय शपते । त्विष दीप्तौ । अत्विक्षत् । तडि अत्विक्षाताम् ।
अत्विक्षन्त ॥ अथ पट्, ह्रजन्ता यजादयः ॥ यज देवपूजासंगति-
करणदानेषु । इयाज । ईजतुः । ईजुः । इयजिथ इयष्ठ । ईजे ।
इज्यात् । डुवप् बीजसंताने छेदने च । प्रणिवपति । उवाप ।
ऊपतुः । उप्यात् । वह प्रापणे । प्रणिवहति । उवोढ । वौढा ।
अवोद्धम् ॥

प्राद्धहः १ । ३ । ८१ ॥

परस्मैपदम् । प्रवहति । परस्मैप इत्यत्र योगविभागात्पररेपीति
केचित् । परिवहति । वेञ् तन्तुसंताने ॥

वेभो वयिः २ । ४ । ४१ ॥

वा लिटि । ग्रहिज्येति यकारस्य प्राप्ते ॥

लिटि वयो यः ६ । १ । ३८ ॥

वयो यस्य संप्रसारणं न स्याल्लिटि । ऊयतुः ॥

वश्वास्यान्यतरस्यां किति ६ । १ । ३९ ॥

वयो यस्य वो वा किति लिटि । ऊवतुः । वयस्तासावभावात् ।
थलि नित्यमिट् । उवयिथ । ऊये । ऊवे । वयादेशामावपक्षे ॥

वेभः ६ । १ । ४० ॥

वेजो न संप्रसारणं लिटि । ववौ । ववतुः । व्येञ् संवरणे ॥

न व्यो लिटि ६ । १ । ४६ ॥

व्येञ् आत्वं न स्याल्लिटि । विव्याय । विव्ययतुः । इडत्यर्त्तीति
इट् । विव्ययिथ । वीयात् । वेञ् स्पर्द्धायां शब्दे च ॥

अभ्यस्तस्य च ६ । १ । ३३ ॥

अभ्यस्तीमविष्यतो द्वेजः संप्रसारणम् । ततो द्वित्वम् । जुहाव ।

जुहुवतुः ॥

लिपि सिचि ह्रस्व ३ । १ । ५३ ॥

एभ्यश्चलेरङ् । आतो लोपः । अद्वत् । अद्वत । अद्वास्त ॥

निसमुपविभ्यो ह्रः १ । ३ । ३० ॥

तडानौ । निद्वयते ॥

स्पर्द्धायामाङः १ । ३ । ३१ ॥

कृष्णश्चाणूमाद्वयते । णीञ् प्रापणे । नयति नयते । नेता ॥

सम्माननोत्सञ्जनाचार्यकरणज्ञानभृतिविगणनव्ययेषु

नियः १ । ३ । ३६ ॥

आत्मनेपदम् । शास्त्रे नयते । दण्डमुन्नयते । माणवकमुपनयते । तत्त्वं नयते । कर्मकरानुपनयते । कर विनयते । शत विनयते ॥

कर्तृस्थे चाशरीरे कर्मणि १ । ३ । ३७ ॥

नियः कर्तृस्थे कर्मणि यदात्मनेपदं प्राप्तं तच्छरीरावयवभिन्ने एव स्यात् । क्रोधं विनयते । नेह गडुं विनयति । हृत् हरणे । हरति हरते ॥

हरतेर्गतताच्छील्ये ❀ ॥

आत्मनेपदम् । पैतृकमन्त्रा अनुहरन्ते । पितुः प्रकारं अनुशीलयन्तीत्यर्थः ॥

कर्मव्यतिहारे हरतेरप्रतिषेधः ❀ ॥

संप्रहरन्ते राजानः ॥ इति भादयः ॥

इति ६५ अशाः ।

अयादादयः ॥ दुष्पु शब्दे ॥

उतो वृद्धिर्लुकि हलि ७ । ३ । ८९ ॥

लुग्विपये उतो वृद्धिः पिति हलादां सार्वधातुकेनत्वभ्यस्तस्य ।
क्षीति । क्षविता । पिथ डिन्न डिच्च पिन्नोति माप्यम् । तेन लोडि
उतो वृद्धिर्न । धुयात् । यु मिश्रणे अमिश्रणे च । णु स्तुता ॥

आडिः नुप्रच्छयोः ॥

तडानौ । आनुते । रु शब्दे ॥

तुरुस्तुशम्यमः सार्वधातुके ७ । ३ । ९५ ॥

एभ्यः परस्य सार्वधातुकस्य हलादेस्तिङ ईद्वा । रीति रवीति ।
रुतः रवीतः । रुयात् रवीयात् । क्षु तेजने । क्ष्णीति ॥

समः क्षण्वः १ । ३ । ६५ ॥

तडानौ । संक्षुते । णु प्रस्रवणे । स्त्रीति । स्त्रविता । कर्मव्य-
तिहारादावात्मनेपदे तु स्तुक्रमोरिति नियमान्नेद् । स्त्रोता । स्त्रो-
ष्यते । अस्त्रोष्ट । विद ज्ञाने ॥

विदो लटो वा ३ । ४ । ८३ ॥

वेत्तेर्लटः परस्मैपदानां णलादयो वा । वेद । विदतुः । वेत्ति ।
वित्तः । विवेद । विदाञ्चकार । विदांकुर्वन्त्वित्यामि गुणामावनि-
पातनाल्लिट्चप्यामि न गुणः ॥

विदाङ्कुर्वन्त्वित्यन्यतरस्याम् ३ । १ । ४१ ॥

वेत्तेर्लोढ्याम् गुणामावो लोटो लुङ् लोटन्तकृञ्नुप्रयोगश्च वा
निपात्यते । पुरुषवचनेनेह विवक्षिते । विदाङ्करोतु । विदाङ्कुरु-
तात् । इत्यादि । क्षेर्जुस् । अविदुः । दश्चेति सिपि रुवा । अवेः ।
अवेत् । अवेदीत् ॥

विदिप्रच्छिस्वरतीनामुपसंख्यानम् ॥

समोऽकर्मकेभ्यः एतेभ्यस्तडानौ इत्यर्थः । तत्र संवित्ते ।
संविदाते ॥

वेत्तेर्बिभाषा ७ । १ । ७ ॥

वेत्तेः परस्य श्देशस्यातो रुडागमो वा । मंविट्ते । संविदते ।

समवेदिष्ट । वश कान्तौ । वष्टि । उवाश । उघात् । अवद् । औ-
ष्टाम् । उश्यात् । उश्यास्ताम् । अस् सुवि । प्रागुक्तः । कर्मव्य-
तिहारे । व्यतिस्ते । व्यतिपाते । व्यतिपते । व्यतिपे । व्यतिध्वे ।
व्यतिहे । व्यत्यस । व्यतिपीत । व्यत्यास्त ॥

उपसर्गप्रादुर्भ्यामस्तिर्यचपरः ८ । ३ । ८७ ॥

उपसर्गोऽणः प्रादुसश्च परस्यास्तेः सस्य षः स्याद्यकारेऽचि च
परे । निष्यात् । प्रादुष्यात् । निषान्ति । प्रादुःषन्ति । यच्चपरः
किम् । अभिस्तः ॥ रुदादिषु चत्वारः स्वस्वनिदसु ॥ उदिर
अश्रुविमोचने ॥

रुदादिभ्यस्सार्वधातुके ७ । २ । ७६ ॥

एभ्यां बलादेः सार्वधातुकस्येड् । रोदिति । रुदितः । रुदिहि ॥

रुदश्च पञ्चभ्यः ७ । ३ । ९८ ॥

हलादेः पितः सार्वधातुकस्यापृक्तस्य ईड् ॥

अड् गार्ग्यगालंययोः ७ । ३ । ९९ ॥

अरोदीत् । अरोदत् । अरुदिताम् । अन्तरङ्गत्वाद्यासुर् । रुद्यात् ।
श्वस-अन प्रोणने । श्वसिहि । अश्वसीत् ॥

अनितेः ८ । ४ । १९ ॥

उपसर्गस्थाभिमित्तात्परस्यानितेर्नस्य णः । प्राणिनिति ॥ अय
सप्त जक्षादयोऽभ्यस्तसंज्ञाः ॥ जक्ष-भक्ष हसनयोः । अयं रुदादि-
ष्वपि । जक्षिति । क्षस्य अत् । जक्षति । सिजभ्यस्तेति जेर्जुस् ।
अजक्षुः । जागृ निद्राक्षये । जागर्ति । जाग्रति । जाग्राञ्चकार
जजागार ॥

जाग्रो विचिण्णलडित्सु ७ । ३ । ८५ ॥

जागर्तेर्गुणो विचिण्णलडिद्भ्योऽन्यस्मिन् वृद्धिविषये प्रतिषे-
धविषये च । जजाग्रतुः । अजागः । जुसि चेति गुणः । अजागरुः ।
जागर्यात् । अजागरीत् । दष्टिा दुर्गती । दष्टिाति ॥

इदरिद्रस्य ६ । ४ । ११४ ॥

दरिद्रातेरिकारो हलादौ कृति सार्वधातुके । दरिद्रतः । श्राभ्य-
स्तयोरातः । दरिद्रति । दरिद्राञ्चकार । ददरिद्रावित्येके ॥

दरिद्रातेरार्द्धधातुक आलोपः लुङि वा सनि ण्वुलि
ल्युटि च न ॥

दरिद्रिता । अदरिद्रात् । अदरिद्रिताम् । अदरिद्रुः । दरिद्रियात्
दरिद्र्यात् । अदरिद्रीत् । इहसकौ । अदरिद्रासीत् ॥

इति ६६ अंशाः ।

शासु अनुशिष्टौ ॥

शास इदङ् हलोः ६ । ४ । ३४ ॥

शास उपधाया इदङि हलादौ कृति च । शिष्टः । शासति ॥

शा हौ ६ । ५ । ३५ ॥

शास्तेः शादेशो हौ । तस्याभीयत्वेनासिद्धत्वाद्धेर्दिः । शाधि ॥

तिप्यनस्तेः ८ । २ । ७३ ॥

पदान्तस्य सस्य दस्तिपि न त्वस्तेः । ससजुषोरित्यस्यापवादः ।
अशात्-अशाद् ॥

सिपि धातो रुर्वा ८ । २ । ७४ ॥

पदान्तस्य धातोः सस्य रुर्वा पक्षे जश्त्वेन दः । अशाः । अशात्-इ ।
सर्तिशास्तीत्यङ् । अशिषत् । अशासिष्यत् । चकासु दीप्ती ।
चकाधि । अचकात्-अचकाद् । अचकासुः । अचकाः । अचकात् ।
दीधीवेव्यौ छान्दसौ । मृजृष् शुद्धौ ॥

मृजेर्वृद्धिः ७ । ३ । ११४ ॥

मृजेरिको वृद्धिर्धातुप्रत्यये कृत्यजादौ वेध्यते । मार्ष्टि । मृष्टः ।
मृजन्ति मार्जन्ति । मार्शि । मृष्टः । मृष्ट ॥ अयानिटः ॥ दाप्
लवने । दाति ॥

लडः शाकटायनस्यैव ३ । ४ । १११ ॥

आदन्तालडो शेर्जुस् वा । अडुः । अदात् । दायास्ताम् । अ-
दासीत् । पा रक्षणे । पायास्ताम् । अपासीत् । भा दीप्ती । रा-
दाने । ला, आदाने च । प्रा, पूरणे । श्रा पाके । ष्णा शौचे ।
या प्रापणे । वा गतिगन्धनयोः । मा माने । नेर्गदेत्यत्रास्य न
ग्रहणम् । मेयात् । ख्या प्रकथने । अयं सार्वधातुकमात्रविषयः ।
सम्पूर्वस्य ख्यातेः प्रयोगेनेति न्यासकारः । ट्रा कुत्सायाम् । प्रणि-
द्राति । प्सा भक्षणे । प्राणिप्साति । इण् गतौ ॥

इणो यण् ६ । ४ । ८१ ॥

अजादौ प्रत्यये । यन्ति । इयाय ॥

दीर्घ इणः किति ७ । ४ । ६९ ॥

इणः अभ्यासस्य दीर्घः किति लिटि । ईयतुः । ईयुः । ऐत् ।
आयन् ॥

एतेर्लिङि ७ । ४ । २४ ॥

उपसर्गात्परस्य इणोऽणो ह्रस्व आर्द्धधातुके किति लिङि । नि-
रियात् । अणः किम् । समेयात् । समीयादिति तु भ्वादिकस्य ॥

इणो गा लुङि २ । ४ । ४५ ॥

गातिस्थेति सिचो लृक् । अगात् । इक् स्मरणे । इङिकौ नित्य-
मधिपूर्वौ ॥

इण्वदिक इति वक्तव्यम् ❀ ॥

आधियन्ति । अध्यगात् । आर्द्धधातुकाधिकारोक्तस्यैवातिदेश
इति मते यण् न । ससीतयो राघवयोऽधीयन्निति भट्टिः । कु शब्दे ।
कौति । हन् हिंसागत्योः । प्राणिहन्ति । अनुदात्तोपदेशेति नर्त्य-
लोपः । हतः । जनहनेति उपधालोपः । हो हन्तेरिति कुत्वम् ।
घ्नन्ति ॥

वमोर्वा ८ । ४ । २३ ॥

उपसर्गस्थाभिमुत्तात्परस्य हन्तेर्नेस्य णो वा वमयोः । प्रहणिम
प्रहन्मि । एवं वस्मसोः । जघ्नतुः ॥

अभ्यासाच्च ७ । ३ । ५५ ॥

अभ्यासात्परस्य हन्तेर्हेस्य कुत्वम् । जघनिथ जघन्य । हनि-
प्यति । हतात् ॥

हन्तेर्जः ६ । ४ । ३६ ॥

हौ । आभीयत्वेन जस्यासिद्धत्वान्न हेर्लुक् । जहि । अहन् ॥

आर्द्धधातुके २ । ४ । ३५ ॥

इत्यधिकृत्य ॥

हनो वध लिङि २ । ४ । ४२ ॥

लुङि च २ । ४ । ४३ ॥

वधादेशोऽदन्तः । अतो लोपः । वध्यात् । अवधीत् । आढो
यमहनः इति तडानौ । तत्र आहते । आघ्राते । आघ्रते । आहते ।
आहध्वे । आघ्रे । आहवहे । आजघ्रे । आघ्रीत । आवधिपीष्ट ॥

आत्मनेपदेष्वन्यतरस्याम् २ । ४ । ४४ ॥

हनो वधादेशो वा लुङि आत्मनेपदेषु । आवधिष्ट । आवधि-
पाताम् ॥

हनः सिच् १ । २ । १४ ॥

कित् । आहत । आहसाताम् । वच् परिभाषणे । वक्ति । अय-
मन्तिपरो न प्रयुज्यते । बहुवचनपर इत्यन्ये । क्षिपर इत्यपरे ।
उवाच । वग्धि । उच्यात् ॥

अस्यतिवक्तिख्यातिभ्योऽङ् ३ । १ । ५२ ॥

एभ्यश्चलेरङ् ॥

वच् उम् ७ । ४ । २० ॥

अङि । अवोचत् ॥

चर्करीतं च ❀ ॥

यद्बलुगन्तमदादौ परस्मैपदे बोध्यम् । निष्पत् शये । रुदादिः ।
स्वपिति । सुष्वाप । सुपुपतुः । सुष्वापिथ सुष्वाप्य । स्वप्ता । सु-
प्यात् ॥ इति परस्मैपदिनः ॥

इति ६७ अंशः ।

आइशासु इच्छायाम् । आशास्तं । आशशासे । णिजि शुद्धौ ।
निङ्के । वृजि वर्जने । वृङ्के । शिजि अव्यक्ते शब्दे । वस आच्छादने ।
ववसे । पृथी संपर्चने । ईर गतौ कम्पने च । शीङ् स्वप्ने ॥

शीङः सार्वधातुके गुणः ७ । ४ । २१ ॥

धिति चेत्यस्यापवादः । शेते । शयाते ॥

शीङो रुद्र ७ । १ । ६ ॥

शीङः परस्य श्वादेशस्यास्तो रुडागमः । शेरते । शयिता ।
आस उपवेशने । आसाश्चक्रे । आध्वम् । ईड स्तुती । ईट्टे ॥

ईशः से ७ । २ । ७७ ॥

ईडजनोर्ध्वं च ७ । २ । ७८ ॥

ईशीङ्जना सेध्वेशब्दयोस्सार्वधातुकयोरिट् । ईडिपे । ईडिध्वे ।
ईडिष्व । ईडिध्वम् । विकृतिग्रहणेन प्रकृतेरग्रहणात् लडि ।
पेद्वम् । ईश ऐश्वर्ये । ईशिपे । पूड् प्राणिगर्भविमोचने । सूते ।
सुपुवे । सोता सविता । भूसुवोस्तिडि । सुवे ॥ अथानिदः ॥ इड्
अध्ययने । अधीते ॥

गाङ् लिटि २ । ४ । ४९ ॥

इडो गाङ् लिटि लावस्थाया लिटि विवक्षिते वा । अधिजगे ।
अध्येता । अध्यये । गुणायादेशयोः कृतयोरुपसर्गस्य यण् ।
पूर्वं धातुरुपसर्गेणेति दर्शनेऽन्तरङ्गाहणात्पूर्वं सवर्णदीर्घः प्राप्तः ।
णेरध्ययने वृत्तमिति निर्देशाच्च भवति । अध्येत । परत्वादियद् तत्
आद् वृद्धिः । अध्येयाताम् । अध्यैयि ॥

विभाषा लुङ्लृङोः २ । ४ । ५० ॥

इडो गाङ् ॥

गाङ्कुटादिभ्योऽष्णिङित् १ । २ । १ ॥

गाङादेशात् कुटादिभ्यश्च परे जित्त्वादिभिन्नाः प्रत्यया ङितः स्युः ॥

घुमास्यागापाजहातिसां हलि ६ । ४ । ६६ ॥

एषामात् ईत् हलादौ कृत्यार्द्धधातुके । अध्यगीष्ट अध्यष्ट ।
अध्यगीष्यत् अध्यष्यत् । हुङ् अपनयने । हुते । जुहुवे । चक्षिङ्
व्यक्तायां वाचि । चष्टे । इकारोऽनुदात्तो युज्यः । विचक्षणः । नुम्
तु न । अन्तेदित इति व्याख्यानात् ॥

चक्षिङः ख्याञ् २ । ४ । ५४ ॥

आर्द्धधातुके ॥

वा लिटि २ । ४ । ५५ ॥

अत्र भाष्ये खशादिरयमादेशः । असिद्धकाण्डे शस्य यो वेति
स्थितम् । जित्वात् पदद्वयम् । चख्यौ चख्ये । चक्षौ चक्षे ।
अस्यतिवक्तीति स्लेरङ् । अख्यत् अख्यत । अक्शासीत् अ-
क्शास्त । वर्जने कशाञ् नेष्यते । समचक्षिष्टेत्यादि ॥ इत्यात्मने-
पदिनः ॥ ऊर्णञ् आच्छादने ॥

ऊर्णोतेर्विभाषा ७ । ३ । ९० ॥

वा वृद्धिर्हलादौ पिति सार्वधातुके । ऊर्णोति ऊर्णोति । ऊर्णते ॥

ऊर्णोतेराम् न ॥

नन्द्राः संयोगादयः ६ । १ । ३ ॥

अचः पराः संयोगादयो नदरा द्विर्न । नुम्वदस्य द्वित्वम् ।
णत्वस्यासिद्धत्वात् । पूर्वत्रासिद्धीयमादित्वे इति त्वानित्यम् । उमौ
साम्यासस्येति लिङ्गात् । ऊर्णनाव ॥

विभाषोर्णोः १ । २ । ३ ॥

इडादिः प्रत्ययो वा ङित् । ऊर्णुविथ ऊर्णुनविथ । ऊर्णविता
ऊर्णविता ॥

गुणोऽपृक्ते ७ । ३ । ९५ ॥

ऊर्णोतेर्गुणोऽपृक्ते हलादी षिति सार्वधातुके । वृद्धचपवादः ।
और्णोत् और्णोः । ऊर्णयात् ऊर्णयात् । ऊर्णविषीष्ट ऊर्णविषीष्ट ।
और्णवीत् ॥

ऊर्णोतेर्विभाषा ७ । २ । ६ ॥

इडादौ सिचि परस्मैपदे वा वृद्धिः । पक्षे गुणः । और्णोवीत् ।
और्णोविषाम् । और्णवीत् ॥ अथानिटः ॥ एव स्तुतौ । स्तूति ।
स्तवीति । तुष्टुव । तुष्टुम । स्तुष्टुञ्भ्यः इति इट् । अस्तावीत् । ऋञ्
व्यक्तार्या वाचि ॥

ब्रुवः पञ्चानामादित आहो ब्रुवः ३ । ४ । ४८ ॥

ब्रुवो लटः परस्मैपदानामादितः पञ्चानां णलाद्याः पंच वा ।
ब्रुवः आहादेशश्च । आह ॥

आहस्थः ८ । २ । ३५ ॥

हलि । आत्थ ॥

ब्रुव ईट् ७ । ३ । ९३ ॥

ब्रुवः परस्य हलादेः पित ईट् । ब्रवीति । ब्रूते ॥

ब्रुवो वचिः २ । ४ । ५ ॥

आर्द्धधातुके । उवाच । ऊचतुः । ऊचे । ब्रवीतु । ब्रूयात् ।
दिच्च पित्रेत्यपित्वात् ईट् न वक्ष्यति । वच उम् । अबोचत् । द्विप
अप्रीती । द्विट् । अद्वेट् ॥

द्विपश्च ३ । ४ । ११२ ॥

लटो भ्रैर्जुस् वा । अदिपुः । अदिपन् । दिक्षीष्ट । दिह उपचये ।
मणिदेग्धि । दिग्धे । धोक्षि । अधेक् । अधिशत् । अधिशत ।
वसस्य लृक्पक्षे । अदिग्ध । अदिग्धाः । अदिहहि । पर्व दुह मृष्ट-

रणे । लिह आस्वादने । लेदि । लीढः ॥ इत्युभयपदिनः ॥ इत्य-
दादयः ॥

इति ६८ अंशाः ।

पृ पालनपूरणयोः । दीर्घान्तः । ह्रस्वान्तः इति केचित् ॥

अतिपिपत्योश्च ७ । ४ । ७७ ॥

अभ्यासस्येकारोन्तादेशः श्लो । पिपति ॥

उदोष्ठचपूर्वस्य ७ । १ । ११ ॥

अङ्गावयवौष्ठचपूर्वो य ऋत्तदन्ताङ्गस्य उत् । गुणवृद्धी इभं
वाधेते । पिपति । पिपृत्तः । पिपुरति । पपार ॥

शृङ्गप्राहस्वो वा ७ । ४ । १२ ॥

एपां किति लिटि ह्रस्वो वा पक्षे गुणः । पपरतुः पप्रतुः ।
अपिपः । अपिपरुः । शेषम् आर्द्धधातुके तृबत् । इस्थले उत् ।
परीता परिता । अपारीत् । अग्रे सर्वेऽनिटः । पृ पालनपूरणयोः ।
ह्रस्वान्तः । पिपति । पिपृतः । पिप्रति । प्रियात् । अपार्पात् ।
ओहाक् स्यामे । जहाति । ईहल्यघोः ॥

जहातेश्च ६ । ४ । ११६ ॥

इद्वा हलादी किति सार्वधातुके । पक्षे ईः । जहितः जहीतः ॥

आ च हौ ६ । ४ । ११७ ॥

जहातेहौ परे आ स्यात् चादिदीतौ । जहाहि जहिहि जहीहि ॥

लोपो यि ६ । ४ । ११८ ॥

जहातेरालोपो यादौ सार्वधातुके । जहात् हेयात् । निभीभये ॥

भियोऽन्यतरस्याम् ६ । ४ । ११९ ॥

इकारो वा हलादी किति सार्वधातुके । विमितः विभीतः ।
विभयाश्चकार विमाय । ही लज्जायाम् । जिहोति । ऋ गतौ ।
इयर्ति । इयृतः । इयति । गुणः । आर । आरतुः । यलीद् ।

आरिथ । अर्त्ता । इयराणि । ऐयः । ऐयृताम् । ऐयरुः । इयृ-
तात् अर्यात् । अङ् गुणः । आस्त । अर्त्तिश्रु इत्यात्मनेपदम् ।
तत्र समियृते । समियाते । समियूते । समारे । समाराते । अङ्
समारत । समारेताम् । मा समरत । मा समरताम् । इत्यादि ।
इति परस्मैपदिनः ॥ माङ् माने शब्दे च ॥

भृभामित् ७ । ४ । ७५ ॥

भृञ् माङ् ओहाङ् एषां त्रयाणामभ्यासस्य इत् श्लौ । प्राणि-
मिमीते । मिमाते । मातासे । ओहाङ् गतौ । जिहीते ॥ इत्या-
त्मनेपदिनौ ॥ डुदाञ् दाने । प्राणिददाति । दत्तः । ददाति । दत्ते ।
दाता । देहि । देयात् । अदात् । अदित ॥

आङो दो नास्यविहरणे १ । ३ । २० ॥

आङो दाञो मुखविकसनादन्यत्र वर्त्तमानात्तडानी । विधामा
दत्ते । नेह । मुखं व्याददाति । आस्येत्याविवक्षितम् । विपादिक
व्याददाति ॥

पराङ्कर्मकान्न निषेधः ❀ ॥

व्यादत्ते परस्य मुखम् । डुधाञ् धारणपोषणयोः । प्राणिदधाति ।

दधस्तथोश्च ८ । २ । ३८ ॥

द्विरुक्तस्य क्षपन्तस्य धाञो वशो भष् तथयोः स्ध्वोश्च परतः
धत्तः । दधति । धेहि । धेयात् । अधात् । अधित । डुभृञ् धारण
पोषणयोः । विमर्ति । विभृव । णिजिर् शौचपोषणयोः ॥

णिजां त्रयाणां गुणः श्लौ ७ । ४ । ७५ ॥

णिज्बिज्बिषामभ्यासस्य गुणः श्लौ । नेनेक्ति ॥

नाभ्यस्तस्याचि पिति सार्वधातुके ७ । ३ । ८७ ॥

लघूपधगुणो न । नेनिजानि । विजिर् पृथग्भावे । विष्त्
व्याप्ती ॥ इति जुहोत्यादयः ॥

इति ६९ अंशाः ।

ष्टिम आर्द्रिभावे । व्रीड चोदने लज्जायां च । त्रसी उद्देगे । वा
 भ्राशेति श्यन्वा । त्रस्यति त्रसति । त्रसतुः तत्रसतुः । पुष्प
 विकसने । पुह चक्यर्थे । तृप्तावित्यर्थः । पुष दाहे । कुप प्रती-
 भावे । पुष हिंसायाम् । इष गतौ । इह तीपेति नेहविकल्पः ।
 जृप् वयोहानौ । जीर्यति । जजरतुः । जेरतुः । जरिता जरीता ।
 जृस्तम्भवति वा च्लेरङ् । ऋदशोऽङि गुणः । अजरत् । अजा-
 रीत् । अजारिष्टाम् । पिबु तन्तुसंताने । सीव्यति । पिबु निर-
 सने । षीव्यति । केऽपीहमे न पठन्ति ॥ अथ नृतेः प्राक् पुपा-
 दयः ॥ भ्रंशु अधःपतने । भ्रश्यति । पुपादीति च्लेरङ् । अभ्र-
 शत् । असु क्षेपणे ॥

अस्यतेस्थुक् ७ । ४ । १७ ॥

अङि । आस्थत् । पर्यास्थत् । उपसर्गादिति वा आत्मनेप-
 दम् । अस्यतिवक्तीत्यङ् । पर्यास्थत् । निरस्यति निरस्यते ।
 यसु प्रयत्ने ॥

यसोऽनुपसर्गात् ३ । १ । ७१ ॥

श्यन् वा ॥

संयसश्च ३ । १ । ७३ ॥

यस्यति यसति । संयस्यति संयसति । क्षुभ संचलने । पुष
 दाहे । कुप क्रोधे । गुप व्याकुलत्वे । ऋधु वृद्धौ । गृधु अभिकां-
 क्षायाम् । निवृष पिपासायाम् । हृष तुष्टौ । दसु उपक्षये । पुपा-
 दिष्वेव शमादयः । शसु उपशमे ॥

शमामघानां दीर्घः श्यनि ७ । ३ । ७४ ॥

प्रणिशाम्यति । अशमत् । भ्रमु अनवस्थाने । वा भ्राशेति वा
 श्यन् तत्र दीर्घः । भ्राम्यति । अन्यत्र भ्रमति । ह्रमु ग्लानौ ।
 ह्राम्यति । श्यन्नभावे षिवुक्त्विति दीर्घः । ह्रामति । तसु कां-
 क्षायाम् । दसु उपशमे । श्रमु तपसि खेदे च ! मदी हर्षे ॥ अथ
 वेदः ॥ क्षमु सहने । अपित् । क्षान्तिः । भ्वादिस्तु पित् । क्षमा ।

क्षाम्यति । चक्षण्व चक्षमिव । इति शमाद्याः । पुष्पादिषु छिद्र
आर्दीभावे । रुप हिंसायाम् । लुभ गार्घ्ये । तीपेति वेद् । रोषिता
रोष्टा । लोमिता लोब्धा । अथ पुष्पादिष्वेव रधादयो वेदः । तृपट्पी
अनुदात्तो । रध हिंसासंराध्योः ॥

रधादिभ्यश्च ७ । २ । ४५ ॥

बलाघातार्द्धधातुकस्य वेद् । रध्यति । आचि जुम् । ररन्ध । ररं-
धतुः । ररन्धिय ररद्ध । ररन्धिव रेध्व ॥

नेत्थलिटि रधेः ७ । १ । ६२ ॥

लिङ्बर्जे इटि रधेर्नुन्न । रधिता रद्धा । अरधत् । णश अदर्शने ।
नेशिय ॥

मस्जिनशोर्झलि ७ । १ । ६० ॥

जुम् । ननष्ट । नेशिव नेश्व ॥

नशोः पान्तस्य ८ । ४ । ३६ ॥

णत्वं न । प्रनष्टा । तृप प्रीणने । ततर्पिय तत्रप्य ततर्प्य ।
लिटि सेडेवेति परे । त्रप्ता तर्प्ता तर्पिता । स्पृशमृशेति सिञ्च वा ।
अताप्सीत् अतर्पीत् अत्राप्सीत् । अटपत् । एवं हृप् हर्षमोह-
नयोः । अदाप्सीदित्यादि । दृह जिघांसायाम् । वा दृहेति वा
घः । दुद्रोग्ध दुद्रोढ । अदृहत् । एवं मुह वैचित्ये । णिगह प्रीती ।
ष्णुह उन्निरणे । एषु वा दः ॥ इति रधादयः ॥ नृती गानवि-
क्षेपे ॥

सेऽसिचि कृतचृतछृदत्तदन्तः ७ । २ । १७ ॥

एभ्यः परस्य सिञ्चमिन्नस्य सादेराद्धधातुकस्येद्धा । नर्त्तिष्यति
नत्स्यति ॥ अथानिटः ॥ क्षिप प्रेरणे । क्षिप्यति । सेप्ता । छो
छेदने ॥

ओतः इयनि ७ । २ । ७१ ॥

लोपः । उद्यति । छाता । सिचो वा छृक् । अच्छात् । अच्छा-

सीत् । दो अवखण्डने । प्रणिद्यति । देयात् । अदात् । शो तनूक-
रणे । अशासीत् । पोऽन्तकर्मणि । अभिष्यति । अभिसर्ता । प्रणि-
प्यति । सेयात् । असात् । असासीत् ॥

इति ७० अंशः । इति द्वितीयाध्यायस्य तृतीयः पादः ।

राध संसिद्धौ ॥

राधोऽकर्मकाद्द्रावेव ॥

राधधातोर्कर्मकादेव श्यन् । वृद्धावित्युदाहरणमात्रम् । राध्य-
ति । रसाधतुः । हिंसार्थस्य सकर्मकत्वादत्र राधो हिंसायामित्ये-
त्वाभ्यासलोपौ न । रसाधिय । राद्धा । व्यध ताडने । ग्रहिज्येति
संप्रसारणम् । विध्यति । विव्याध । विविधतुः । विव्यधिय
विव्यद्ध ॥ अथ वाश्रुतः प्राक् पुषादयः ॥ पुष पुष्टौ । पोषा ।
पुषादीत्यङ् । अपुषत् । क्षुध बुभुक्षायाम् । क्षोद्धा । क्षुधित इति
तु वसतिक्षुधोरिङ् । क्षिप आलिङ्गने ॥

क्षिपः ३ । १ । ४६ ॥

अस्मार्त्परस्य अनिटश्चलेः वसः ॥

आलिङ्गने ३ । १ । ४६ ॥

क्षिपश्चलेरालिङ्गन एव वसो नान्यत्र । आश्लिषत् कन्यां देव-
दत्तः । नेह । समाक्षिपज्जतु काष्ठम् । अङ्गप्रत्यासत्ताविह श्लिषिः ।
कर्मण्यनालिङ्गने सिजेव न तु वसः । एकवचने चिण् । अश्लेषि ।
अश्लिक्षाताम् । अश्लिषत । अश्लिषाः । अश्लिषम् । प्विदा-जिप्विदा
गात्रप्रक्षरणे । पिधु संराद्धौ । रुध क्रोधे । शुध शौचे । तुष
प्रीतौ । दुष वैकृत्ये । शुष शोषणे ॥ इति परस्मैपदिनः ॥ वाश्रु
शब्दे । काश्रु दीप्तौ । तूरी गतित्वरणहिंसनयोः । क्षिष उपतापे ।
वृत्तु-चावृत्तु वरणे । वृत्यते । वावृत्यते । वावर्ताश्चक्रे । दीपी दीप्तौ ।
दीपजनेति वा चिण् । अदीपि । अदीपिष्ट । एवं पूरी आप्यायने ।
गूरी हिंसागत्योः । जनी प्रादुर्भावे ॥

ज्ञानोर्जा ७ । ३ । ७९ ॥

अनयोर्जादेशः शिति । जायते । जज्ञे ॥

जनिवध्योश्च ७ । ३ । ३५ ॥

अनयोः उपधाया न वृद्धिश्चिणि ङिणति कृति च । अजनि । अजनिष्ट । अथ स्वादिरोदित् । डीङ् विहायसा गतौ । डीयते । वृङ् परितापे । अथ स्वादिरोदित् वेद् । पूङ् प्राणिप्रसवे । सूयते । लिटि नित्यामिद् । सुपुषिपे । स्वरतीति वेद् । सांता सविता ॥ अथानिदः ॥ माङ् माने शब्दे च । ईङ् गतौ । ईयते । अयांचक्रे । प्रीङ् प्रीतौ । पिप्रिये । पीङ् पाने । मन ज्ञाने । खिद् दैन्ये । विद् सत्तायाम् । युज समाधौ । युध संप्रहारे । अनोरुध कामे । पद गतौ । प्रणिपद्यते ॥

चिष् ते पदः ३ । १ । ६० ॥

पदेश्लेश्चिष् स्यात्तशब्दे । अपादि । तप ऐश्वर्ये वा । अयमैश्वर्ये वा तद्दृश्यनौ लभते । अन्यत्र शप् परस्मैपदवान् । तप्यते । तप्ता । बुध अवगमने । भुत्सीष्ट । अबोधि । अबुद्ध । सृज विसर्गे । सृजिदशोरित्यम् । सृष्टा । सृक्षीष्ट । असृष्टाअथ स्वादिष्वोदित्सु । दीङ् क्षये ॥

दीङो युडचि क्किति ६ । ४ । ३६ ॥

दीङः परस्याजादेः कृतः आर्द्धधातुकस्य युट् ॥

बुग्युट्बुवङ्ग्यणोः सिद्धौ ॥

दिदीये ॥

मीनातिमिनोतिदीङां ल्यपि च ६ । ४ । ५० ॥

एषामात्वं ल्यपि चकारात् अशित्येज्ञनिमिचे । दाता । दास्यते । धीङ् आधारे । मीङ् हिंसायाम् । रीङ् स्रवणे । लीङ् श्लेषणे ॥

विभाषा लीयतेः ६ । १ । ५१ ॥

लीलीङीरात्वं वा अशित्येज्ञविषये ल्यपि च । लेता । लाता ॥

इत्यात्मनेपादिनः । पुषादिः । शक विभाषितोऽमर्षणे । उभय-
पदीत्यर्थः । अयं सेद् इत्येके । शोक्थि । अनिद् इत्यन्ये । शोक्थि
शशक्य । मृष तितिक्षायाम् ॥

परस्मैपदम् १ । ३ । ८२ ॥

परस्मैपदम् । परिमृष्यति ॥ अथानिदो ॥ रज्ज रागे । नलोपः ।
रज्यति रज्यते । रज्जा । शप आक्रोशे । णह बन्धने । नहो धः ।
नेहिथ ननद्ध । दिवादिराकृतिगणः । तेन क्षीयते मृग्यतीत्यादि ॥
इति दिवादयः ॥

इति ७१ अंशः ।

जिधृषा प्रागल्भ्ये । परस्मैपदी सेद् । धृष्णोति । धृष्णुवन्ति ।
ऋधु वृद्धौ । आनर्द्ध । नुड्विधी ऋकारिकदेशो रेफो हलत्वेन
गृद्यते तेनानेकहलत्वाबुद् । दम्मु दम्मने । दभ्नोति । ददम्म ।
लिदो वा कित्वं नलोपः । तस्याभीयत्वेनासिद्धौ ॥

दम्भेश्च एत्वाभ्यासलोपो वाच्यौ ॥

देभतुः ददम्मतुः । इदं कित्वं पिदपिद्विपयकमित्येके । अपिद्विपक
मित्यन्ये । दम्भिता । तृप प्रीणने । धुभ्रादित्वाण्णत्वन्न । तृप्नोति ॥
अथानिदः ॥ क्षि हिंसायाम् । दुदु उपतापे । पृ प्रीतौ । साध
संसिद्धौ । शकल शक्तौ । आप्ल व्याप्तौ । हि गर्तौ वृद्धौ च ॥

हेरचडि ७ । ३ । ५६ ॥

अभ्यासात्परस्य हिनोतेर्हस्य कुत्वं नतु चडि । जिघाय ॥

हिनुमीना ८ । ४ । १५ ॥

उपसर्गस्थानिमित्तात्परस्य एतयोर्नस्य णः । प्राहिणोति । राध
संसिद्धौ ॥

राधो हिंसायाम् ६ । ४ । १२३ ॥

एत्वाभ्यासलोपो किति लिटि सेटि थलि च । अपरेधतुः । अप-
रेधुः ॥ इति परस्मैपदिनः ॥ अशू व्याप्तौ संघाते ॥

अभ्रोतेश्च ७ । ४ । ७२ ॥

दीर्घाभूतादभ्यासावर्णात्परस्य नुद् । आनशे । अशिता अष्टा ॥
इत्यात्मनेपदी ॥ सुञ् प्रागुक्तः ॥

सुनोतेः स्यसनोः ८ । ३ । ११७ ॥

स्ये सनि च सुञः पो नाविसोभ्यति । अभिपुणोति । अभ्यपुणोत् ।
अभिसुपाव । स्तृञ् आच्छादने । ऋतश्च संयोगादेः । स्तारि-
पीष्ट स्तृपीष्ट । अस्तारिष्ट अस्तृत । घृञ् कम्पने । वेद् । दुधविध
दुधोय । वमयोस्तु परमपि स्वरत्यादिविकल्पं बाधित्वा पुरस्तात्प्र-
तिपेधकाण्डारंभसामर्थ्यात् श्रुतः कितीति निपेधे प्राप्ते क्रादिनि-
यमान्नित्यमिद् । दुधुवेव । धोता धविता । स्तुसुधूञ्म्य इतीद् ।
अधावीत् । वृञ् वरणे ॥

वभूयात्ततंथजगृम्भववर्थेति निगमे ७ । २ । ४६ ॥

एषां वेदे इडभावो निपात्यते । तेन भाषायां थलीद् । ववरिथ ।
ववृव । वृतो वा । वरिता वरीता । लिङ्सिचोरात्मनेपदेषु न
लिङि । वरिपीष्ट वृपीष्ट । अवारीत् । सिचि च परस्मैपदेषु । अवा-
रिष्टाम् । अवरिष्ट अवरीष्ट अवृत ॥ अथानिदः ॥ चिञ् चयने ।
प्रणिचिनोति ॥

विभाषा चेः ७ । ३ । ५८ ॥

अभ्यासात्परस्य चिञः कुत्वं वा सनि लिटि च । चिकाय
चिचाय । शिञ् निशाने । पिञ् बन्धने । घुञ् कम्पने । कृञ् हिंसा-
याम् । डुमिञ् प्रक्षेपणे । आत्वम् । ममौ । मिम्यतुः ॥ इत्युभयप-
दिनः ॥ इति सुनोत्यादयः ॥

इति ७२ अंशाः ।

चर्च परिभाषणमर्त्तनयोः । घूर्ण अमणे । चल विलसने । मिप
स्पर्द्धायाम् । हिल भावकरणे । शिल उज्ज्हे । मिल श्लेषणे । लिख
अक्षरविन्यासे । पुण कर्मणि शुभे । शुभ शोभार्थे । घुर भीमार्थ-
शब्दयोः । घुर अग्रगमने । दमी ग्रन्थे । वृष वृषौ । दृष उत्क्लेशे ।
पृण प्रीणने । मृड सुखने । उज्ज आर्जवे । उज्ज उत्सर्गे । उच्छी

विवासे । उच्छि उञ्छे । विच्छ गती । विच्छायति । विच्छायां-
चकार । विविच्छ । स्पृशमृशेति सिञ्जविकल्पः पुपादेरेव । अत्र
तु नित्यं सिञ्च । अतर्पीत् । ऋच्छ गतीन्द्रियमलयमूर्तिमावेपु ।
ऋच्छत्युताम् । आनच्छतुः । समो गमृच्छिभ्याम् । समृ-
च्छते । समृच्छिष्यते । व्यच व्याजीकरणे । ग्रहिज्या । वि-
चति । विव्याच । विविचतुः । अव्याचीत् अव्यचीत् । व्यचेः
कुटादित्वमनासे इति तु कृत्येव न त्विह ॥ अथ तुम्फात्माक् कुटा-
दयः ॥ कुट कौटिल्ये । कुटाति । गाङ्कुटादिभ्य इति डित्वम् ।
चुकुटिथ चुकोट । चुकुट । कुटिता । अकुटीत् । खुड-भुड संवरणे ॥
शुट छेदने । वा भ्राशेति श्यन् वा । शुटति शुटयति । छुर छेदने ।
नमकुर्लराम् । छुर्यात् । स्फुर संचलने । कुच संकोचने । चुट छेदने ।
पुट संक्षेपणे । मुट आक्षेपप्रमर्दनयोः । स्फुट विकसने । ध्रुव गतिस्थे-
र्ययोः । णू स्तवने । नुवति । अनुवीत् । धू विधूनने । ध्रुवति । अधुनी-
त् । अथ तृम्फादी । तृम्फ हिंसायाम् । अनिदितामिति नलोपे ॥

शे तृम्फादीनाञ्चम् वाच्यः ॐ ॥

येऽत्र नकारानुपक्तास्ते तृम्फादयः । तुंफति । आशिषे । तु-
पयात् । तृम्फ तृप्ती । गुम्फ ग्रन्थने । उम्म पूरणे । अय द्वौ किंदिपु ।
कृ विक्षेपे । किरति । चकार । चकरतुः । करिता करीता । कीर्यात् ।
अकारीत् ॥

किरतौ लवने ६ । १ । १४० ॥

उपात् किरतेः सुट् छेदेऽर्थे । उपास्किरति ॥

अडभ्यासव्यवायेऽपि सुट् कात्पूर्व इति वक्तव्यम् ॐ ॥

उपास्किरत् । उपचस्कार ॥

हिंसायां प्रतेश्च ६ । १ । १४१ ॥

उपात् प्रतेश्च किरतेः सुट् हिंसायाम् । अपास्किगति । प्रतिस्किगति ॥

किरतेर्हर्षजीविकाकुलायककरणेष्व्वात्मनेपदमिति

वाच्यम् ॐ ॥

हर्षादयो विषयाः । तत्र हर्षो विक्षेपस्य कारणम् । इतरे फले॥

अपाचतुष्पाच्छकुनिष्वालेखने ६ । १ । १४२ ॥

अपात किरतेः सुट् ॥

सुडपि हर्षादिष्वेव वक्तव्यः ॐ ॥

अपास्किरते वृषो हृष्टः । कुकुटो मक्षार्यो । आ आश्रपार्थी ।
हर्षादिषु किम् । अपकिरति कुसुमम् । इह तद्सुटो न । हर्षादि-
मात्रविवक्षायां यद्यपि तद् प्राप्तस्तथापि सुडभावे नेष्यते इत्याहुः ।
गजोऽपकिरति । गृ निगरणे ॥

अचि विभाषा ८ । २ । २१ ॥

गिरते रेफस्य लृत्वं वाऽजादौ । गिरति गिलति ॥

अवाद् अः १ । ३ । ५१ ॥

आत्मनेपदम् । अवगिरते । गृणातिस्त्ववपूर्वो न प्रयुज्यते ॥

समः प्रतिज्ञाने १ । ३ । ५२ ॥

शब्दं नित्यं सङ्गिरते ॥ अथ वेटः ॥ ओव्रश्चू छेदने । वृश्चति ।
वव्रश्च । वव्रश्चतुः । वव्रश्चिथ वव्रष्ट । लिट्चभ्यासस्येति संप्रसारणे
न रेफस्य ऋकारः । उरत् । तस्याचः परस्मिन्निति स्थानिवद्भा-
वान्न संप्रसारण इति वस्योत्वन्न । व्रश्चिता व्रष्टा । व्रश्चिष्यति व्र-
क्ष्यति । वृश्चयात् । अव्रश्चीत् । अव्राक्षीत् । वृह् वृह्-स्वृह् हिंसायाम् ।
तार्हिता तर्ढा । अर्तुंहीत् । अतार्द्क्षीत् । अतार्ढाम् । स्तार्हिता
स्तर्ढा । इषु इच्छायाम् । इच्छवि । एपिता एष्टा । कृती छेदने ।
मुधादिः ॥

शे मुचादीनाम् ७ । १ । ५९ ॥

नुम् । कृन्तति । सेजसिचीति वेट । कर्तिष्यति कत्स्यति । अ-
कर्त्तति ॥

इति ७३ अंशाः ।

अथानिटः ॥ भुजो कीटिल्ये । रुजो भङ्गे । छुप स्पृशे । दुम-
स्जो शुद्धौ । मस्जिनशोरिति नुम् । मस्जेरन्त्यात्पूर्वो नुम् । मर्मकथ

ममज्जिथ । मङ्गा । षट्सु विगारणगत्यवसादनेषु । शदल्य शातने ।
द्वौ भ्यादिवत् । विश प्रवेशने । विशाति ॥

नेर्विशः १ । ३ । १७ ॥

आत्मनेपदम् । निविशते । स्पृश संस्पर्शने । स्पर्शा स्पर्श । अ-
स्पर्शास्पर्श । अस्पर्शादित्यादि । अस्पृक्षत् । मृश आमर्शने । अम्रा-
क्षीत् । अमार्शीत् । अमृक्षत् । मृज विसर्गे । यलि वेद अम् । गग-
र्जिय सप्तष्ट । सष्टा । मच्छ झीप्सायाम् । किगादिः । पृच्छति ।
पमच्छतुः । मष्टा । अप्राक्षीत् । आदिः नुपृच्छयोः । आपृच्छते ।
विदिमच्छ इति तङानो । तत्र संपृच्छते । समप्रष्ट । समप्रक्षाताम् ।
खिद् परिघाते मुचादिः । सिन्दति ॥ अय द्वौ गुदादी ॥ गु पुरीषो-
त्सर्गे । जुगुविथ जुगुथ । गुता । गुप्यति । अगुपीन् । अगुताम् ।
अगुपुः ॥ इति परस्मैपदिनः ॥ गुरी उद्यमने । ओलमनी धीढने ।
लज्जते । जुपी प्रीतिसेवनयोः । ओविजी भगचलनयोः । उद्विजते ॥

विज इट् १ । २ । २ ॥

विजेरिडादिः प्रत्ययो ङिट् । उदिजिता । कृद् शब्दे । गुदादिः ।
कुविता ॥ अथानिटः ॥ पृद् व्यायामे । व्यापियते । व्यापता ।
मृद् प्राणत्यागे ॥

म्रियतेलुङ्लिङ्गेश्च १ । ३ । ६१ ॥

लुङ्लिङ्गोः शितश्च मरुतिभूतान् मृदस्नद नान्यत्र । द्वित्वं स्व-
रार्थम् । म्रियते । ममार । द्वौ किरादी । इङ् आदरे । आद्रियते ।
धृङ् अवस्थाने । ध्रियते । कुङ् शब्दे । गुदादिः । कुता ॥ इत्या-
त्मनेपदिनः ॥ मिल मङ्गमे । मिलति मिलते ॥ अथानिटः ॥ दिङ्
अतिसर्जने । देष्टादेक्ष्याते । पुद् मेरणोभ्रस्ज पाके । मृज्जानि मृज्जते ॥

भ्रस्जोरोपधयोरमन्यतरस्याम् ६ । ४ । ४१ ॥

भ्रस्जे रेफस्योपधायाश्च स्याने रमागमो वा आर्द्धधातुके । रो-
पधयोर्निवृत्तिः । वमर्ज । वमर्जतुः । वभ्रज्ज । भ्रष्टा मर्ष्टा ॥

क्विति रमागमं बाधित्वा संप्रसारणं पूर्वविप्रतिषेधेन ॥

मृज्ज्यात् । क्षिप मेरणे । क्षिपति क्षिपते ॥

अभिप्रत्यतिभ्यः क्षिपः १ । ३ । ८० ॥

परस्मैपदम् । अभिक्षिपति । इत्यादि । कृप विलेखने । भ्वादि-
वत् कसः अम् च वा । तडि तु लिङ्गसिचाविति कित्वादम् न । अ-
कृष्ट । अकृक्षाताम् । अकृक्षन्त । हिसितः प्राक् मुचादयः ॥ मुच्ल
मोक्षणे । मुञ्चति मुञ्चते । मोक्ता । विट् लामे । व्याघ्रभूत्यादिमते
सेङ्कः । वेदिता । भाष्यादिमतेऽनिङ्कः । परिवेत्ता । लुप्ल छेदने ।
लिप उपदेहे । लिपि सिचीत्यङ् तडि तु वा । अलिपत् अलिपत
अलिप्त । एवं पिच क्षरणे । सिंचति ॥ इति तुदादयः ॥

इति ७४ अंशाः ।

अथ रुधादयः ॥ हिसि हिंसायाम् ॥

श्रात्रलोपः ६ । १ । १२३ ॥

श्रमः परस्य नस्य लोपः । हिनस्ति । जिहिंस । तिप्यनस्तेः ।
अहिनत्-अहिनद् । सिपि धातो र्वा पक्षे जश्त्वेन दः । आहिनः
अहिनत् । पृची संपर्क । पृणक्ति । पचिता । अपृणक् । वृजी
वर्जने । ओविजी मयचलनयोः । विज इद् । विविजिथ । विजिता ।
अविनक् । अविजीत् । तृह हिंसायाम् ॥

तृणह इम् ७ । ३ । १२ ॥

तृहः श्रमि कृते इमागमः हलादौ पिति । तृणेढि । तृण्डः ।
अतृणेट् । उन्दी क्लेदने । उन्दाश्चकार । औनत् ॥ अथ वेदः ॥ अञ्जू
व्यक्तिभ्रक्षणकान्तिगतिषु । अनक्ति । अनजानि । आनक् ॥

अञ्जेः सिचि ७ । २ । ७१ ॥

अञ्जेः सिचो नित्यमिट् । आञ्जीत् । कृती वेष्टने । आर्द्धधातुके
तुदादिवत् ॥ अथानिटः ॥ भंजो आमर्दने । मनोक्ति । भङ्गा ।
पिण्ल संचूर्णने । पिनाष्टि । हेर्दिः । जश्त्वम् । क्षरो क्षरीति वा
ढलोपः । पिण्डि पिण्डि । अपिनट् । ज्ञेयि । अपिपत् । एवं शिण्ल
विशेषणे । मुज पालनाभ्यवहारयोः । मुनक्ति ॥

भुजोऽनवने १ । ३ । ३६ ॥

आत्मनेपदम् । ओदनं मुंक्ते ॥ इति परस्मैपदिनः ॥ जिङ्न्धी
दीप्तौ । इन्धे । इन्त्से । इन्धिस्तासे ॥ अथानिटौ ॥ खिद् दैन्ये ।
खिन्ते । विद् विचारणे ॥ इत्यात्मनेपदिनः ॥ अथोभयपदिनोऽनिटः ॥
युजिर् योगे । युनक्ति । युङ्क्ते ॥

प्रोपाभ्यां युजेरयज्ञपात्रेषु १ । ३ । ६४ ॥

तडानौ ॥

स्वराद्यन्तोपसर्गादिति वाच्यम् ❀ ॥

प्रयुंक्ते । उपयुंक्ते । उद्युङ्क्ते । छिदिर् द्वैधीकरणे । भिदिर्
विदारणे । विचिर् पृथग्भावे । रिचिर् विरेचने । क्षुदिर् संपेषणे ॥
इत्युभयपदिनः ॥ इति रुधादयः ॥ तनाद्याः कृञं विना सर्वे सेटः ।
वनु याचने । वनुते । अयं चान्द्रमते परस्मैपदी । वनोति । मनु
अवबोधने । मनुते ॥ इत्यात्मनेपदी ॥ अथोभयपदिनः ॥ पणु
दाने । ये विभाषा । सायात् सन्यात् ॥

जनसनखनां सन्झलोः ६ । ४ । ४२ ॥

एषामाकारोन्तादेशो शलादौ सनि शलादौ कृति च । असात् ।
असनिष्ठाक्षणु-क्षिणु हिंसायाम् । ह्यन्तेति न वृद्धिः । अक्षणीत् ।
क्षेणीति । संज्ञापूर्वकत्वात् उपत्ययनिमित्त उपधागुणो न भवती-
त्यात्रेयादयः । भवतीत्यन्ये । क्षिणीति । एवमग्रेऽपि । वृणु अदने ।
डुवृञ् करणे । प्रागुक्तः ॥

संपरिभ्यां करोतौ भूपणे ६ । १ । १३७ ॥

समवाये च ६ । १ । १३८ ॥

संपरिपूर्वस्य करोतेः सुट् भूपणे संघे चार्ये । संस्कुर्वन्ति । अलं-
कुर्वन्ति । संधीभवन्ति वा । संपूर्वस्य कचिदभूपणेऽपि सुट् । संस्कृतं
भक्षा इति ज्ञापकात् ॥

उपात् प्रतियत्नवैकृतवाक्याध्याहारेषु च ६ । १ । १३९ ॥

उपात् कृजः सुद एष्वर्थेषु चात् पूर्वोक्तार्थयोः । उपस्कृता
कन्या । भूपिता उपस्कृताः समुदिताः एधोदकस्योपस्कुरुते । उप-
स्कृतं भुंक्ते । विकृतमित्यर्थः । उपस्कृतं ब्रूते । वाक्याध्याहारे-
णेत्यर्थः ॥

सुट् कात् पूर्वः ६ । १ । ३५ ॥

अडभ्यासव्यवायेऽपि इत्युक्तम् । संचस्कार । संचस्करतुः ।
कृष्टभस्त्रे ऋतो भारद्वाजस्येति सूत्रे च ॥

कृभोऽसुट् इति वक्तव्यम् ॐ ॥

तेन तसुट्कात्परस्येद । संचस्कारिण । सुटि गुणोतीति गुणः ।
ऋतश्च संयोगादेरिति इदं च न । संस्क्रियात् । संस्कृपीष्ट ।
समस्कृत ॥

गन्धनावक्षेपणसेवनसाहसिक्यप्रतियत्नप्रकथनोपयोगेषु
कृभः १ । ३ । ३२ ॥

आत्मनेपदम् । उत्कुरुते । सूचयतीत्यर्थः । श्येनो वार्तिकासु-
दाकुरुते । हरिसुपकुरुते । परदारान् प्रकुरुते । एधोदकस्योपस्कुरु-
ते । गाथाः प्रकुरुते । शतं प्रकुरुते ॥

अधेः प्रसहने १ । ३ । ३३ ॥

शत्रुमधिकुरुते । क्षमतेऽभिभवति वा ॥

वेः शब्दकर्मणः १ । ३ । ३४ ॥

स्वरान् विकुरुते । नेह । चित्तं विकरोति कामः ॥

अकर्मकाच्च १ । ३ । ३५ ॥

वेः कृज इत्येव । छात्रा विकुर्वते ॥

अनुपराभ्यां कृभः १ । ३ । ७९ ॥

परस्मैपदम् । अनुकरोति । पराकरोति । भावकर्मणोः कर्मकर्त्तरि
च न ॥ इति तनादयः ॥

इति ७५ अंशाः ।

दुक्तीञ् द्रव्यविनिमये । प्रायुक्तः ॥

परिव्यवेभ्यः क्रियः १ । ३ । १८ ॥

अकर्त्रभिप्रायेऽप्यात्मनेपदम् । परिक्रीणीति इत्यादि । मन्य
विलोडने ॥

हलः श्रः शानज्झौ ३ । १ । ८२ ॥

हलः परस्य श्रः शानच् आदेशः हौ । मथान । खच भृ-
तप्रादुर्भावे । अतिक्रान्तोत्पत्तावित्यर्थः । खच्चाति । वान्तोऽप्य-
मित्येके ॥

च्छोः शूडनुनासिके च ६ । ४ । १९ ॥

सतुक्कस्य छस्य वस्य च क्रमात् छा ऊर एतो स्तः अनुनासिके
कौ झलादौ च कृति । खौनाति । चखाव । खविता । शानचः पर-
त्वादूठि कृते हलन्तत्वाभावात् शानच् । खौनीहि । कुन्थ-कुथ
संश्लेषणे संश्लेशे च । पुष पुष्टौ । मुष स्तेये । मृद क्षोदे । अश
भोजने । ग्रन्थ सन्दर्भे । नलोपः । ग्रथ्नाति । श्रान्यग्रन्थीत्यादिना
कित्वपक्षे ॥

एत्वाभ्यासलोपावध्यत्र वक्तव्यो ॥

इति हरदत्तादयः । अथुः । अथुः । इदं कित्वं पितामपि इति
सुधाकरपक्षे । ग्रथिय । ग्रंथिता । एवं श्रंथ विमोचनप्रतिहर्षणसं-
दर्भेषु । क्षुभ संचलने ॥

क्षुम्नादिषु च ८ । ४ । ३९ ॥

णत्वन्न । क्षुम्नाति । स्तम्भु रोधने स्तम्भे च । स्तुम्भु रोधने
निष्कोपणे च । स्कम्भु रोधने स्तम्भे च । स्कुम्भु रोधने धारणे च ॥

स्तंभुस्तुम्भुस्कम्भुस्कुम्भुः ३ । १ । ८२ ॥

चात् श्रा । आद्याश्चत्वारः सौत्राः परस्मैपदिनः । विष्टभ्रोति
विष्टभ्राति । अवष्टभ्रोति अवष्टभ्राति । अवतष्टम् । जृस्तंभु इत्यङ् वा ।
अस्तमत् । अस्तंभीत् । व्यष्टमत् । व्यष्टमीत् । स्तुभ्रोति स्तुभ्राति ॥

वेः स्कभ्र तेनित्यम् ८ । ३ । ७७ ॥

सस्य षः । विष्कभ्रोति विष्कभ्राति । स्कुभ्रोति । स्कुभ्राति ।
अथ ह्रिः प्राक् प्वादयः ॥ कृ हिंसायाम् ॥

प्वादीनां ह्रस्वः ७ । ३ । ८० ॥

शिति । कृणाति । ऋच्छत्यृताम् । चकार । चकरतुः । श्र्युकः
कितीत्यस्य ऋादिनियमेन बाधः । चकारिव । लिटि विनार्द्धधातुके
तृवत् । एवमन्येऽपि ऋदन्ताः । गृ शब्दे । जृ वयोहानी । वृ वरणे
मरणे च । शृ हिंसायाम् । अस्य किति लिटि शृदृमामिति ह्रस्वपक्षे
यण् । अन्यत्र गुणः । शशरतुः शश्रतुः । शशरिव शश्रिव । एवं
वृ विदारणे ॥ अथ वेटः ॥ ह्रिश्च विवाधने । कुप निष्कोषणे ॥

निरः कुपः ७ । २ । ४६ ॥

निरः परस्य कुपो बलाद्यार्द्धधातुकस्येङ् वा । निष्कोपिता
निष्कोष्टा । निरकोपीत् । निररुक्षत् । इष आभीक्ष्ये । तीपेत्यत्र
अस्य इपेर्न ग्रहणमिति केचित् । ग्रहणमिति परे । एपिता एष्टा ॥
अथानिटः ॥ बन्ध बन्धने । घघ्राति । मन्त्स्यति । अमान्त्सीत् ।
पूर्वप्रासिद्धमिति मष्मावात्पूर्व श्लो श्लीति सिञ्जलोपः । प्रत्य-
यलक्षणेन सादिप्रत्ययमाश्रित्य मष्मावो न प्रत्ययलक्षणं प्रति सिञ्ज-
लोपस्यासिद्धत्वात् । अयान्धाम् । अमान्तसुः ॥ अथ द्वा प्वादी
त्यादी च । ज्या वयोहानी । ग्रहिज्येति कृते ॥

हलः ६ । ४ । २ ॥

अद्भावयवाद्दलः परं यत् संप्रसारणं तदन्ताङ्गस्य दीर्घः । इति
दीर्घं कृते प्वादीनामिति ह्रस्वः । जिनाति । जर्ज्या । ज्ञा अवचो-
धने । जानाति । अतो दीर्घो यनीति सिद्धावपि जादेशे दीर्घनि-
र्देशसामर्थ्यान्न ह्रस्वः ॥

अपह्रवे ज्ञः १ । ३ । ४४ ॥

आत्मनपदम् । शतमपजानीति ॥

अकर्मकाश्च १ । ३ । ४५ ॥

सर्पिणो जानीते ॥

संप्रतिभ्यामनाध्याने १ । ३ । ४६ ॥

शतं संजानीते । प्रतिजानीते । अनाध्याने इति योगो विभ-
ज्यते । तेन अकर्मकाद्येत्यस्य प्राप्तिरपि वार्यते । मातरं मातुर्वा
संजानाति । शेषत्वविवक्षायां षष्ठी ॥

अनुपसर्गाज्ज्ञः १ । ३ । ७६ ॥

आत्मनेपदम् । गां जानीते । विमाषोपपदेन प्रतीयमाने । स्वं
यज्ञं जानीते जानाति वा । सन्नन्तादात्मनेपदं वक्ष्यते । इति पर-
स्मैपदिनः ॥ वृद्ध सम्भक्तौ । वृणीते । वव्रे । ववृपे । ववृद्धे । वरिता
वरीता । अवरीष्ट अवरीष्ट । अवृत ॥ इत्यात्मनेपदी ॥ कृञ् शब्दे ।
ग्रह उपादाने । गृह्णाति गृह्णीते ॥

ग्रहो लिटि दीर्घः ७ । २ । ३७ ॥

एकाचो ग्रहेर्विहितस्येटो दीर्घः नहु लिटि । ग्रहीता । लिटि ।
जग्रहिय । गृह्णात् । ग्रहीषीष्ट । ह्यंतेति न वृद्धिः । अग्रहीत् । अग्रही-
ष्टाम् ॥ अथ पट् प्वादयः । पञ्च ल्वादयः ॥ पूञ् पवने । पुनाति ।
लूञ् छेदने । कृञ् हिंसायाम् । धूञ् कम्पने । आर्द्धधातुके धूनो-
तिवत् । एवं स्तृञ् आच्छादने । तथा वृञ् वरणे । आशिपि वृ-
र्यात् । वरिषीष्ट ॥ अथानिटः ॥ पिञ् बन्धने । प्रीञ् तर्पणे कान्ती
च । श्रीञ् पाके । मीञ् हिंसायाम् । मीनाति । प्रमीणाति । मी-
नातीत्येज्जविषयमात्वम् । ममौ । मिम्यतुः ॥ इत्युभयपदिनः ॥
इति न्यादयः ॥

इति ७६ अंशाः ।

पुल महत्त्वे संघाते च । चुर्वत् । दुल उत्क्षेपे । मुद संसर्गे ।
चुद संघोदने । पुय मापायाम् । मुट संचूर्णने । चुट छेदने । तिज्
निशाने । अतीतिजत् । टकि बन्धने । टङ्केति पाठश्चे इदित्करणं
सर्वचुरादीर्णचः पाक्षिकत्वे लिङ्गम् । तेन चिन्त्यात् । चिन्त्यते

इत्यादौ नलोपो नेत्याहुः । असंयोगोपधस्य इदितौ णिज्बिके-
 स्पार्थमित्येके । तेषामपि नित्यं णिजिति परे । एवं इरित उदित
 ईदित ऋकारान्ताश्च पाक्षिकाणिच इत्याहुः । पृ पूरणे । पारयति
 परति । टङ्कयति । टङ्क्यात् । पचि विस्तारवचने । मडि भृपायां
 हर्षे च । खडि-कडि भेदने । बटि विभाजने । छदि संवरणे ।
 तसि अलङ्करणे । चिति स्मृत्याम् । पिडि संघाते । कुठि-गुठि
 वेष्टने । यत्रि संकोचे । यन्त्रेति पाठ्यम् । एवन्तन्निमन्निमन्तौ ।
 लक्ष दर्शनाङ्गनयोः । घट संघाते । नट अवस्यन्दने । पट भाषा-
 याम् । तड आघाते । लड उपसेवायाम् । यत निकारोपस्का-
 रयोः । बंध संयमने । कल क्षेपे । पश बंधने । बस स्नेहच्छेदाप-
 हरणेषु । चर संशये । पाल रक्षणे । अपीपलत् । क्षल शौच-
 कर्मणि । अचिक्षलत् । श्लिप श्लेषणे । अशिश्लिपत् । स्फुट भेदने ।
 अपुस्फुटत् । चर्च अध्ययने । अचचर्चत् । गर्ज शब्दे । घट्ट चलने ।
 वर्ण प्रेरणे वर्णने च । छर्द वमने । गर्द्द अभिकांक्षायाम् । वर्ध
 छेदनपूरणयोः । भक्ष अदने । वर्ह भाषार्थे हिंसायां च । मार्ज
 शब्दे । साम-पान्त्व सामप्रयोगे । बुक्क भषणे । कुट्ट छेदनभर्त्स-
 नपूरणेषु । लुण्ठ स्तेये । भूष अलंकरणे । मूल रोहणे । शब्द
 उपसर्गादाविष्कारे । प्रतिशब्दयति । प्रतिश्रुतमाविष्करोतीत्यर्थः ।
 अनुपसर्गाच्च । शब्दयति । पूद् क्षरणे । चूर्ण संकोचने प्रेरणे
 च । पूज पूजायाम् । म्लेच्छ अव्यक्ताया वाचि । ऊर्ज बलप्रा-
 णनयोः । और्जिजत् । नन्द्राः संयोगादयः । ईड स्तुतौ । ऐडि-
 डत् । तुल उन्माने । तोलयति । तुलयति इति तु अतुलोपमाभ्या-
 भिति निपातनसिद्धान्तुलाशब्दात् तत्करोतीति णौ । श्रण दाने ।
 प्रायेणार्थं विपूर्वः । विश्राणयति ॥

काण्यादीनां वा उपधाया ह्रस्वः ॐ ॥

प्यन्ताः कणरणमणश्रंणलुपहैठह्यायिवाणिलोटिलोपयः चाणि-
 लोठी चेति द्वादश काण्यादयः । व्यशश्राणत् । व्यशिश्रणत् ।
 जमु हिंसायाम् । उदित्सामर्थ्यात्पाक्षिको णिच् । जासयति

असति । एवमग्रेऽपि । घुपिर् विशब्दने । वा णिच् । घोषयति घो-
षति । अङ् वा । अघुपत् । अधोषीत् । ज्ञा नियोगे ॥

अर्त्तिहीर्षीरीकूयीक्ष्माय्यातां पुणौ ७ । ३ । ३६ ॥

ज्ञापयति । अजिज्ञपत् । पृ पूरणे । पारयति । वा णिच् ।
परति । नित्यमिति परे । ज्ञप ज्ञानज्ञापनयोः । ज्ञपमिच्च ॥

मितां ह्रस्वः ॥

ज्ञपयति । अजिज्ञपत् । तज्ज्ञापयत्याचार्य इति तु ज्ञा नियोग
इति प्रागुक्तस्य । यम च परिवेषणे । चान्मिच् । परिवेषणमिह वेष्ट-
नम् । नतु भोजना नापि वेष्टना । यमयति चन्द्रम् । परिवेष्टत इत्यर्थः ।
चह परिकल्कने । चहयति । अचीचहत् । अदन्तस्य तु अचचहत् ।
चपेत्येके । चपयति । बल प्राणने । बलयति । रह त्यागे । रह-
यति । अरीरहत् । अदन्तस्य अररहत् । चिञ् चयने ॥

चिस्फुरोर्णौ ६ । १ । ५४ ॥

आत्वं वा । अर्त्तिहीति पुरु । चपयति । चययति । नित्वसाम-
र्थ्याणिज् वा । मणिचयति मणिचयति । इति ज्ञपादयः । नान्ये
मितोऽहेतौ स्वार्थणिचि ज्ञपादिभ्योऽन्ये मितो नेत्यर्थः । घटादयो-
ऽपि मितः । ते च केचित्पूर्वमुक्ताः । घटयति । विघटयति ।
उद्धाटनमिति तु घट संघाते इत्यस्य घाटं घाटं घटं घटम् । एवं
प्रथम्ययन्नदञित्वरादयः ॥

जनीजृषूक्तसुरजोमन्ताश्च ❀ ॥

मितः । जृप् जरयति । जृणातेस्तु जारयति ॥

न कस्यमिचमाम् ❀ ॥

मित्वम् । कामयते इत्यादि । अम रोगे । आमयति । एवं
शमादीनाममन्तत्वादिप्रत्युक्तं मित्वञ्च । अम भ्वादी तस्माद्धेतु-
मण्णौ न कस्यमिचमामिति निषेधः । आमयति । सर्वं मित्प्रकरणं
णिजन्तेषु वक्ष्यते ॥

इति ७७ अंशाः ।

पीड अवगाहने ॥

भ्राजभासभापदीपजीवमीलपीडामन्यतरस्याम् ७।४।३॥

एषामुपधाया ह्रस्वो वा चङ्परि णौ । अपीपिडत् । अपिपी
डत् । कृत संशब्दने ॥

उपधायाश्च ७।१।१०१ ॥

धातोरुपधाभूतस्य ऋत इत् रपरत्वम् । कीर्तयति ॥

उर्ऋत् ७।४।७ ॥

उपधाया ऋवर्णस्य स्थाने ऋद्वा चङ्परि णौ । इररारामपवादः ।
अचीकृतत् अचिकीर्तत् । प्रथ प्रख्याने । मित्त्वन्न । प्राथयति ॥

अत्स्मृद्वत्वरप्रथमदस्तृस्पशाम् ७।४।९५ ॥

एषामभ्यासस्याकारोन्तादेशश्चङ्परि णौ इत्वापवादः । अपप्र-
थत् । पृथ प्रक्षेपे । अपीपृथत् अपपर्यत् । भुवोऽवकल्कने । णिच् ।
मिश्रणे चिन्तने चेत्यर्थः । कृपू अवकल्कने । कल्पयति । अर्ज
प्रतियत्ने द्रव्यार्जने च । अर्ह पूजायाम् ॥ आकुस्मादात्मनेपदिनः ॥
मान स्तम्भे । मानयते । तर्ज-भर्त्स तर्जने । वञ्च प्रलम्भने । गूर उद्य-
मने । मग्नि गुप्तपरिभाषणे । शम आलोचने । शामयते । दंशि
दंशने । दंशयते । इदिस्वाणिजभावे । दंशति । आकुस्मीयमात्म-
नेपदं णिच्सन्नियोगेनैव । नलोपे तु भ्वादे रेव ग्रहणम् । गल स्रवणे ।
भल आभंडने । लल ईप्तायाम् । मद वृत्तियोगे । चित संचेतने ।
विद चेतनारख्यानविवासेषु । चुट छेदने । कूट आपदानेऽवसादने
च । कुत्स अवक्षेपणे ॥

कुस्मनामो वा ❀ ॥

कुस्मेति प्रातिपदिकं तस्माद्वात्वर्थे णिच् वा । यद्वा कुस्म कुत्सि-
तस्मयने । इति धातोर्वा णिच् । कुस्मयते । अचुकुस्मत । शेषा
आकुस्मीया वक्ष्यन्ते ॥ इत्याकुस्मीयाः ॥ आस्वदः सकर्मकात्
णिच् । लोऋ-लोच् भाषायाम् । लोकयति ग्रंथम् । नाग्लोपिशास्व-
दिताम् । अलुलोकत् । तर्क भाषायाम् । वर्ह भाषार्थे हिंसाया च ।

स्वाद आस्वादेने । पृरी आप्यायने । धूप मापार्थः । दल विदारणे ।
 इद आस्वादेने । असिष्वदत् । शेषा आस्वदीया वक्ष्यन्ते ॥
 इत्यास्वदीयाः । आधृपाद्वा णिच् । प्रीञ् तर्पणे । प्रीणयति ।
 धृञ्प्रीणोरिति हरदत्तपाठे तु प्राययति । प्रयति प्रयते । भृ प्राप्ता-
 वात्मनेपदी उदाहृतः । णिच् सन्नियोग एवात्मनेपदमित्याहुः । वृञ्
 आवरणे । धृञ् धारणे । जृ वयोहानी । अर्च पूजायाम् । आधृ-
 पीयपाठेनैव गतार्थत्वात् अर्च अर्ह इत्यादीनां भ्राष्टिषु पाठोऽसा-
 म्प्रदायिक इति परे । अर्ह हिंसायाम् । स्वरितेत् । अर्हयति अर्हति
 अर्हते । अर्ह पूजायाम् । ईर क्षेपे । मान पूजायाम् । गर्ह निंदने ।
 मार्ग अन्वेषणे । ग्रंथ संदर्भे । वंधने च । हिसि हिंसायाम् । छद
 अपवारणे । स्वरितेत् । वच परिभाषणे । वद संदेशवचने । स्वरितेत् ।
 वादयति वदति वदते । अनुदात्तेदित्येके । ववदे । पद मर्पणे । युज
 संयमने । मृज् शौचालंकारयोः । वृजी वर्जने । आइपद पदार्थः ।
 आसादयति आसीदति । असात्सीत् । तनु श्राद्धोपकरणयोः
 इत्येके । तानयति । उपसर्गाच्च दैर्घ्ये । वितानयति । तनति ।
 वितनति । शिष असर्वापयोगे । शेषयति । शेषति । शेषा ।
 अशिक्षत् । अयं विपूर्वोऽतिशये । धूप प्रसहने । शेषा आधृपीया
 वक्ष्यन्ते ॥ इत्याधृपीयाः । हन्त्यर्थाश्च । नवगण्यामुक्ता अपि
 हन्त्यर्थाः स्वार्थे णिच् लभन्ते ॥

इति ७८ अंशः ।

अथादन्ताः ॥ कल गती संख्याने च । अचकलत् । स्तन-गद
 देवशब्दे । छद अपवारणे । मह पूजायाम् । रह त्यागे । रस आ-
 स्वादनस्नेहनयोः । रच प्रतियत्ने । वस निवासे । वर ईप्सायाम् । कर्ण
 भेदने । वर्ण वर्णक्रियाविस्तारगुणवर्चनषु । ध्वन शब्दे । व्यय वित्तम-
 मुत्सर्गे । त्रण गात्रविचूर्णने । श्रथ दौर्बल्ये । दण्ड दण्डनिपातने । पार
 कर्मसमाप्ते । माज पृथक्कर्मणि । माम क्रोधे । वास उपसेवायाम् ।
 चित्र चित्रीकरणे । छिद्र कर्णभेदने करणभेदने च । मिश्र संपर्के ।
 शील उपधारणे । सुख-दुःख तत्क्रियायाम् । गुण आमंत्रणे । केतने च ।

कूट परितापे परिदाहे च । कूण संकोचने आमंत्रणे केतने च । मूत्र प्रसवणे । रूप रूपक्रियायाम् । सूत्र वेष्टने । सूच पैशुन्ये । स्पृह ईप्सायाम् । केत श्रावणे निमन्त्रणे च । स्तेन चौर्ये । गवेष मार्गणे । सभाज प्रीतिदर्शनसेवनेषु । कुमार क्रीडायाम् । सङ्केत आमन्त्रणे । निवास आच्छादने । मल धारणे । लल ईप्सायाम् । विडम्ब अनुकरणतिस्कारयोः । अत्र अदन्तेष्वपठित्वा डम्बेति डवि इति च बान्तेषु वा पठ्यते । स्वन शब्दे । बीज व्यजने । स्फुट विशरणे । रूप विच्छुरणे । मृष सहने । प्रेङ्गोल चापले । आन्दोल दील दीलायाम् । गौम उपलेपने । छेद द्वैधीकरणे । अवधीर अवज्ञायाम् । गण संख्याने । गणयति ॥

ई च गणः ७ । ४ । ९७ ॥

गणेरभ्यासस्य ई अद्य चङ्परे णौ । अजगणत् । अजी-
गणत् । सङ्ग्राम युद्धे । अयमनुदात्तेत् अकारप्रक्षेपात् ।
सङ्ग्रामयते । अससङ्ग्रामत ॥ आगर्वादात्मनेपदिनः ॥ अर्थ
याच्चायाम् । अर्थयते । ओः पुषण्ज्यपरे इत्यत्र पययोरिति
वक्तव्ये वर्गप्रत्याहारजकारग्रहो लिङ्गम् । णिचि अच आदेशो
न स्याद् द्वित्वे कर्त्तव्ये । यत्र द्विरुक्तावभ्यासोत्तरखण्डस्या-
द्योच्प्रक्रियायां परिनिष्ठिते रूपे वा अवर्णो लभ्यते तत्रैवायं निषेधः ।
ज्ञापकस्य सजातीयापेक्षत्वात्तातेन अचिकीर्त्तत् इति सिद्धम् । प्रकृते
तु अलोपात् प्राक् यदाब्दस्य द्वित्वम् । तत् उत्तरखण्डेऽलोपः आ-
र्त्तयत । एवमङ्गान्धोनादिधातुष्वपि अलोपित्वात्र दीर्घसन्वद्भा-
वी । द्वित्वप्रवृत्तिवेलायामवर्णपरत्वसम्पादकादेशस्थानिनोऽचो णिच्-
निमित्तक आदेशो न स्याद् द्वित्वे कर्त्तव्ये इति ज्ञाप्यस्वरूपं वद-
ताम्नते तु अर्चितयत इत्येव ॥

इति ७९ अंशः ।

वीर विनान्ती । वृह विस्मापने । शूर विनान्ती । स्थूल परिहृ-
णे । गृह ग्रहणे । मृग अन्वेषणे । सन संतानक्रियायाम् । गर्व

माने। गर्वयते । अदन्तत्वसामर्थ्याणि ज्विकल्पः । धातोरेन्त उदात्तो
लिटि आम् च फलम् । एवमन्यत्रापि ॥ इत्यागर्वायाः ॥ अङ् पदे
लक्षणे च । अन्ध दृष्ट्युपघाते । ऊन परिहाणे । अंश विमाजने ।
अघ पापकरणे । लजि प्रकाशने । लंजयति । अदन्तेषु पाठबला-
ददन्तत्वे वृद्धिरित्यन्ये लङ्नापयति । एवं वटि विमाजने इत्यत्रापि ।
शाकटायनस्तु अदन्तानां सर्वेषां पुक्माह । कथापयति । गणा-
पयति । इत्यादि ॥

बहुलमेतन्निदर्शनम् ❀ ॥

अदन्तधातुनिदर्शनमित्यर्थः । तेनान्ये पर्णादयोऽपि बोध्याः ।
अन्ये तु दशगणीपाठो बहुलम् । तेनापठिता अपि सौप्रलौकिक-
र्षदिका बोध्याः । अपरे तु नवगणीपाठो बहुलं तेनापठितेभ्योऽपि
क्वचित्स्वार्थे णिच् । रामो राज्यमधीकरदिति यथा इत्याहुः चुग-
दिभ्य एव बहुलं णिजित्यर्थः इत्यन्ये ॥ इति चुरादयः ॥ मन्तु
अपराधे । मन्तुञ् इत्येके । मन्तूयति मन्तूयते । असूञ् उपतापे ।
वरुण पूजामाधुर्ययोः । केला-सेला विलासे । लेला दीप्ति । मिषञ्
चिकित्सायाम् । महीङ् पूजायाम् । हणीङ् लजायाम् । अगद नी-
रोगत्वे । गह्वद वाक्स्वलने । उपस् प्रमातीभावे । सपर पूजायाम् ।
आकृतिगणोऽयम् ॥ इति कण्ठादयः ॥ लोकप्रसिद्धाः भुवन्ताः
शब्दाः कर्तृलकारान्ताः तादृशाः पाठपठिता धातवश्च समाप्ताः ।
अथ तेभ्यो भावकर्मणोर्लकारा द्वितीयखण्डे वक्ष्यन्ते ॥

इति ८० अंशाः ।

इति द्वितीयाध्यायस्य चतुर्थः पादः ।

द्वितीयोऽध्यायः समाप्तः ॥ २ ॥

खण्डः सुगमकौमुद्याः प्रथमः पूर्णतां गतः ॥

एतत्पाठेन बालानां व्युत्पत्तिं कुरुताद्धरिः ॥ १ ॥

इति श्रीमद्रहोजिकृतकौमुद्याः प्रतिविम्बरूपायां सुगमकौमुद्यां
प्रथमः खण्डः समाप्तः ॥ १ ॥

अथ द्वितीयः खण्डः ।

श्रीशं नत्वा मध्यखण्डे भावादौ लानथो कृतः ॥

कारकाणि समासादीन् शेषार्थानभिदध्महे ॥ १ ॥

व्युत्पत्तिः पूर्णकल्पा स्यान्मध्यखण्डान्तपाठिनाम् ॥

ततोऽप्यधिकमिच्छद्दिस्तृतीयः खण्ड ईक्ष्यताम् ॥ २ ॥

अथ द्वितीयखण्डस्य प्रथमो भागः । तत्र यद्यपि प्राचा क्रमेण
 णिजन्तादयो योग्यास्तथापि अत्र बहूपयोगिन एव विषयाः
 प्रथममुच्यन्त इति कर्तृलान्तप्रकरणानन्तरं भावादिलान्ताना भूया-
 नुपयोगः । प्रसङ्गश्च ततो बहूपयोगित्वात्कृतः । कारकाणि चैत्यादि-
 क्रम उक्त अतो भावकर्मणोर्लडादयः भावकर्मणोरिति तद् सार्वधा-
 तुके यक् । भावो भावना व्यापारो भावना सैवोत्पादना सैव च
 क्रिया । सा च धातुत्वेन सकलधातुवाच्या भावार्थकलकारेणानूयते ।
 युष्मदस्मद्गथा सामानाधिकरण्याभावात् प्रथमपुरुषः । तिङ्वाच्य-
 भावनाया असत्त्वरूपत्वेन द्वित्वाद्यप्रतीतेर्न द्विवचनगदे । किं त्वेकव-
 चनमेव । तस्यैतत्सर्गिकत्वेन संख्यानपेक्षत्वात् । अनभिहिते कर्त्तरि
 तृतीया । त्वया मयाऽन्यैश्च भूयते । बभूवे । स्यसिचत्सीयुद् तासिषु
 इत्यादिना स्यादिषु चिष्वद्भाव इडागमश्च । अयमिदं चिष्वद्भावस-
 न्नियोगशिष्टत्वात्तदभावे नाहर्धधातुक इत्यधिकृतं सीधुटो विशेष
 णं नेतरेषामव्यभिचारात् । चिष्वद्भावाद्विद्धिः भाविता भविता इत्या-
 दि । अनुपूर्वो भूः सकर्मकस्तस्मात्कर्मणि लकाराः । तिङोक्तत्वा-
 त्कर्मणि न द्वितीया । अनुभूयते आनन्दश्चैत्रेण त्वया मया च ।
 अनुभूयते । अनुभूयेते । त्वमनुभूयसे । अहमनुभूये । अन्वभावि ।
 अन्वभाविपाताम् अन्वभाविपाताम् । णिजन्तस्य तु णिलोपः ।
 भावयते । भावयाचक्रे । भावयावभूवे । भावयामासे । इह तद्वदस्य
 णशि इट एत्वे च कृते ह एतीति हत्वं न । तासि साहचर्यादस्ते-
 रपि व्यतिहे इत्यादौ सार्वधातुके एति हत्वप्रवृत्तेरित्याहुः । भाविता ।
 चिष्वदिट आभीयत्वेनासिद्धत्वाणिलोपः । पक्षे भावयिता । भावि-

प्यते भावयिष्यते । भाव्यताम् । अभाव्यत । भाव्येत । भाविषी-
ष्ट भावयिषीष्ट । अभावि । अभाविपातां अभावयिपाताम् । बुभृ-
ष्यते । बुभृषांचक्रे । बुभृषिता । बुभृषिष्यते । बोभूष्यते । यद्बलुगंतात्तु ।
बोभूयते । बोभवांचक्रे । बोभविता बोभाविता । अकृतसार्वेति दीर्घः ।
स्तूयते विष्णुः । तुष्टुवे । स्ताविता स्तोता । स्ताविष्यते स्तो-
ष्यते । अस्तावि । अस्ताविपातां अस्तोपाताम् । गुणोर्तीति गुणः ।
अर्यते । स्मर्यते । सस्मरे । परत्वान्नित्यत्वाच्च गुणे रपरे कृतेऽजंतत्वा-
भावेऽप्युपदेशग्रहणाच्चिष्वदिद् । आरिता अर्त्ता । स्मारिता स्मर्त्ता ।
गुणोर्त्तीत्यत्र नित्यग्रहणानुवृत्तेरुक्तत्वान्नेह गुणः । संस्क्रियते । अ-
निदितामिति नलोपः । स्रस्यते । इदितस्तु नंद्यते । संपसारणम् ।
इज्यते । अयङि कृति । शय्यते ॥

तनोतेर्यकि ६ । ४ । ४४ ॥

आकारोत्तादेशो वा । तायते तन्यते । ये विभापा । जायते
जन्यते ॥

तपोऽनुपतापे च ३ । १ । ६४ ॥

तपश्चलेश्चिण्न स्यात्कर्मकर्त्तरि अनुपतापे च । अन्वतप्त पापेन ।
पापं कर्तुं । तेनाभ्याहत इत्यर्थः । कर्मणि लुङ् । यद्वा पापेन पुंसा
कर्त्रा अशोचि । घुमास्थेतीत्वम् । दीयते । धीयते । आदेच इत्य-
त्राशितीति कर्मधारयादित्संज्ञकशकारादौ निषेधः । एश आदिशि-
त्त्वाभावात्तस्मिन्नात्वम् । जग्ले । आतो युक् चिण्कृतोः । दायिता
दाता । दायिपीष्ट दासीष्ट । अदायि । अदायिपाताम् अदिपाताम् ।
अधायिपाताम् अधिपाताम् । अग्लायिपाताम् अग्लासाताम् ।
हन्यते । अचिण्णलोऽस्त्युक्तेर्हनस्तो न । हो हंतेरिति कुत्वम् । घानि-
ता हंता । घानिष्यते हनिष्यते । आशीर्लिङ् । वधादेशस्यापवाद-
श्चिष्वद्भावः । आर्द्धधातुके सीयुटीति विशेषविहितत्वात् । घानिपीष्ट ।
पक्षे वधिपीष्ट । अधानि । अधानिपाताम् अहसाताम् । पक्षे
वधादेशः । अवधि । अवधिपाताम् । आघनिष्यत अहनिष्यत ।

नच स्वादिषु चिण्वदित्यतिदेशाद्वधादेशः स्यादिति वाच्यम् ।
अंगस्येत्यधिकारादांगस्यैवातिदेशात् ॥

इति ८१ अंशः ।

गृह्यते । चिण्वदिटो न दीर्घत्वम् । प्रकृतस्य बलादिलक्षणस्यैवेदो
ग्रहो लिटीत्यनेन दीर्घविधानात् । ग्राहिता ग्रहीता । ग्राहिष्यते
ग्रहीष्यते । ग्राहिपीष्ट ग्रहीपीष्ट । अग्राहि । अग्राहिपाताम् अग्रही-
पाताम् । दृश्यते । अदर्शि । अदर्शिपानाम् । सिचः कित्वादन्न ।
अदृक्षाताम् । गिरतेर्लुङि ध्वमि चतुरधिकं शतम् । तथा हि चिण्व-
दिटो दीर्घो नेत्युक्तम् । अगारिध्वम् । द्वितीये त्विटि वृत्तो घेति वा
दीर्घः । अगरीध्वम् अगारिध्वम् । ण्पां त्रयाणां लृत्वं ढत्वं द्वित्व-
त्रयं चेति पञ्च वैकल्पिकानि । इत्थं पण्णवतिः । लिङ्सिचोरिति
विकल्पादिङभावे उश्चेति कित्त्वम् इत्त्वं रपरत्वं हलि चेति दीर्घः ।
इणः पीध्वमिति नित्यं ढत्वम् । अगीर्ढम् । ढवमानां द्वित्वविकल्पे
अष्टौ । उक्तपण्णवत्या सह संकलने उक्ता संख्येति । इङ् दीर्घ-
श्चिण्वदिद् लृत्वे ढत्वे द्वित्वत्रिकं तथा । इत्यष्टानां विकल्पेन
चतुर्भिरधिकं शतम् ॥ हेतुमण्ण्यतात्कर्माणि लः यक् णिलोपः ।
शम्यते मोही मुकुन्देन । चिण्वदिटि मित्वात् चिण्णमुलोर्दीर्घोऽ-
न्यतरस्याम् प्रकृतो मितां ह्रस्व एव तु न विकल्पितः । ण्यंताण्यौ
ह्रस्वविकल्पासिद्धेः । दीर्घविधौ हि णिचो लोपो न स्थानिवदिति
दीर्घः सिद्ध्यति । ह्रस्वविधौ तु स्थानिवत्त्वं दुर्वारम् । भाष्ये तु पूर्व-
त्रासिद्धे न स्थानिवदित्यवष्टभ्य द्विर्वचनसवर्णानुस्वारदीर्घजश्चरः
प्रत्याख्याताः । णाविति जातिपरो निर्देशः । दीर्घग्रहणं च
मास्त्विति तदाशयः । शमिता शामिता शमयिता । शमिष्यते
शामिष्यते शमयिष्यते । यङन्ताणिञ्च । शंशम्यते । शंशामिता
॥ १८१ ॥ शंशमयिता । यङ्लुगन्ताणिञ्च्यप्येवम् । भाष्यमते
यङन्ताश्चिण्वदिटि दीर्घो नास्तीति विशेषः । ण्यंतत्वाभावे । श-
० मुनिना ॥

नोदात्तोपदेशस्य मांतस्यानाचमेः ७ । ३ । ३४ ॥

उपधाया वृद्धिर्न स्याच्चिणि ङिणति कृति च । अशमि । उदा-
त्तोपदेशस्येति किम् । अगामि । मान्तस्य किम् । अवादि । अना-
चमेः किम् । आचामि ॥

अनाचमिकमिवमीनामिति वक्तव्यम् ❀ ॥

चिणि आयादय इति णिङभावे अकामि ॥

णिङ्णिचोरप्येवम् ❀ ॥

अवामि । वध् हिंसायां हलन्तः । जनिवध्योरिति न वृद्धिः । अ-
वधि । जाग्रो विचिण्णलडित्स्वित्युक्तेर्न गुणः । अजागारि ॥

भंजेश्च चिणि ६ । ४ । ३३ ॥

नलोपो वा । अभाजि अभंजि ॥

विभाषा चिण्णमुलोः ७ । १ । ६९ ॥

लभेर्नुमागमो वा । अलंमि अलामि । व्यवस्थितविकल्पत्वात्
प्रादेर्नित्यं लुम् । प्रालंभि । द्विकर्मकाणां तु । गौणे कर्माणि दुह्यादेः
प्रधाने नीहृक्पृष्वहाम् । बुद्धिमक्षार्थयोः शब्दकर्मकाणां निजेच्छया ॥
प्रयोज्यकर्मण्यन्येषां ण्यतानां लादयो मताः ॥ गौर्दुह्यते पयः ।
अजा ग्रामं नीयते । द्वियते । कृष्यते । उह्यते । बोध्यते माणवकं
धर्मः । माणवको धर्ममिति वा । देवदत्तो ग्रामं गम्यते । अकर्म-
काणां कालादिकर्मकाणां कर्माणि भावे च लकार इष्यते । मासो
मासं वा आस्यते देवदत्तेन । णिजन्तास्तु प्रयोज्ये प्रत्ययः । मास-
मास्यते माणवकः ॥ इति भावकर्मप्रक्रिया ॥

इति ८२ अंशः ।

यदा सांकर्यातिशयं द्योतयितुं कर्तृव्यापारो न विवक्ष्यते तदा
कारकांतराण्यपि कर्तृसंज्ञा लभते स्वव्यापारे स्वतंत्रत्वात् । तेन
पूर्व करणत्वादिसत्त्वेऽपि संप्रति कर्तृत्वात्कर्त्तरि लकारः । साध्यसि-
द्धिर्नान्ति । काष्ठानि पचन्ति । स्थाली पचति । कर्मणस्तु कर्तृत्व-

विवक्षायां प्राक् सकर्मका अपि प्रायेणाकर्मकाः । तेभ्यो भावे कर्तरि
च लकाराः । पच्यते ओदनेन । भिद्यते काष्ठेन । कर्तरि तु ॥

कर्मवत् कर्मणा तुल्यक्रियः ३ । १ । ८७ ॥

कर्मस्थया क्रियया तुल्यक्रियः कर्त्ता कर्मवत् । कार्यातिदेशोऽ-
यमृतेन यगात्मनेपदचिण्विण्वदिटः स्युः कर्तुरभिहितत्वात्प्रथमा ।
पच्यते ओदनः । भिद्यते काष्ठम् । अपाचि । अभेदि । ननु भावे
लकारे कर्त्तृद्वितीया स्यात् । अस्मादतिदेशादिति चेन्न । लकारवाच्य
एव कर्त्ता कर्मवत् । लिङ्याशिष्यडिति द्विलकारकात् ल इत्यनु-
वृत्तेः भावे प्रत्यये च कर्त्तृलकारेणानुपस्थितेः अत एव कृत्यक्तत्व-
लर्थाः कर्मकर्त्तरि न भवन्ति किंतु भावे एव । पक्तव्यमोदनेन । भे-
त्तव्यं कुसूलेन । ननु पचिभिद्योः कर्मस्था क्रिया विहित्तिर्द्विधा भवन्
च । सैवेदानीं कर्त्तृस्था नतु तत्तुल्या । सत्यम् । कर्मत्वकर्तृ-
त्वावस्थाभेदोपाधिकं तत्समानाधिकरणक्रियाया भेदमाश्रित्य
व्यवहारः । कर्मणेति किम् । करणाधिकरणाभ्यां तुल्यक्रिये
पूर्वाक्ते साध्वसिरित्यादौ मा भूत् । किंच । कर्त्तृस्थक्रियेभ्यो मा
भूत् । गच्छति ग्रामः । आरोहति हस्ती । अधिगच्छति शास्त्रार्थः
स्मरति श्रद्धधाति च । यत्र कर्मणि क्रियाकृतो विशेषो दृश्यते । यथा
पक्केषु तंडुलेषु । यथा वा छिन्नेषु काष्ठेषु । तत्र कर्मस्था क्रिया नेतरत्र ।
नाहि पक्कापक्तंतंडुलेष्विव गतागतग्रामेषु वैलक्षण्यमुपलभ्यते ।
करोतिरुत्पादनार्थः । उत्पत्तिश्च कर्मस्था । तेन कारिष्यते घट
इत्यादि । यत्नार्थत्वे तु नैतत् सिद्ध्येत् । ज्ञानेच्छादिवद्यत्नस्य
कर्त्तृस्थत्वात् । एतेनानुव्यवस्यमानेऽर्थे इति व्याख्यातम् । कर्त्तृस्थ-
त्वेन यगभावाच्छब्दानि कृते ओलोपे च रूपसिद्धेः ताच्छील्यादा-
वयं चानश् नत्वात्मनेपदम् इति ॥

सकर्मकाणां प्रतिषेधो वक्तव्यः ❀ ॥

अन्योऽन्यं स्पृशतः । अजा ग्रामं नयति ॥

दुहिपच्योर्बहुलं सकर्मकयोरिति वाच्यम् ❀ ॥

न दुहस्तुनमां यक्चिणौ ३ । १ । ८९ ॥

एषां कर्मकर्त्तारि यक्चिणौ न स्तः । दुहेरनेन यक् एव निषेधः ।
चिण् तु विकल्पिष्यते । शप् । लुक् । गौः पयो दुग्धे ॥

अचः कर्मकर्त्तारि ३ । १ । ६२ ॥

अजंतात् च्लेशिण्वा कर्मकर्त्तारि तश्चन्दे परे । अकारि अकृत ॥

दुहश्च ३ । १ । ६३ ॥

अदोहि । पक्षे कसः । लुग्वेति पक्षे लुक् । अदुग्ध अधुक्षत ।
उदुंबरः फलं पच्यते । सृजियुज्योः श्यंस्तु अनयोः सकर्मकयोः ।
कर्त्ता बहुलं कर्मवत् यगपवादश्च श्यन्वाच्य इत्यर्थः ॥

सृजेः श्रद्धोपपन्ने कर्त्तर्य्येवेति वाच्यम् ❀ ॥

सृज्यते सृजं भक्तः । श्रद्धया निष्पादयतीत्यर्थः । असृजि ।
युज्यते ब्रह्मचारी योगम् ॥

भूपाकर्मकिरादिसनां चान्यत्रात्मनेपदात् ❀ ॥

भूपावाचिनां किरादीनां सन्नन्तानां च यक्चिणौ चिण्वदिट्
च नेति वाच्यमित्यर्थः । अलंकुरुते कन्या । अलमकृत । अवभिरते
हस्ती । अवाकीर्षे । गिरते । अगीर्षे । आद्रियते । आहत । किरा-
दिस्तुदाद्यन्तर्गणः । चिकीर्षते कटः । अचिकीर्षिष्ट । इच्छायाः
कर्तृस्थत्वेऽपि करोतिक्रियापेक्षमिह कर्मस्थक्रियत्वम् ॥

न रुधः ३ । १ । ६४ ॥

अस्माच्च्लेशिण्ण । अवारुद्ध गौः । कर्मकर्त्तरीत्येव । अवारोधि
गौर्गोपेन ॥

तपस्तपःकर्मकस्यैव ३ । १ । ८८ ॥

कर्त्ता कर्मवत् । विध्यर्थमिदम् । एवकारस्तु व्यर्थ एवेति घृत्य-
नुसारिणः । तप्यते तपस्तापसः । अर्जयतीत्यर्थः । तपोऽनुतापे
च इति चिण्निषेधात्सिच् । अतप्त । तपःकर्मकस्य इति किम् । उत्त-
पति सुवर्णं सुवर्णकारः । न दुहस्तुनमां यक्चिणौ । मस्तुते । प्राप्ता-

विष्ट प्राप्तोष्ट । नमते दण्डः । अनस्त । अन्तर्भावितप्यर्थोऽत्र नमिः ॥

यक्चिणोः प्रतिपेधे हेतुमणिश्रिब्रूभामुपसंख्या-
नम् ॐ ॥

कारयते । अचीकरत । उच्चयते दण्डः । उदशिश्रियत । चि-
ष्वदिद्र तु स्यादेव । कारिष्यते । उच्चयिष्यते । ब्रूते कथा । अबो-
चत । भारद्वाजीयाः पठन्ति ॥

णिश्रन्थिग्रन्थिब्रूभात्मनेपदाकर्मकाणामुपसंख्या-
नम् ॐ ॥

पुच्छमुवस्याति । उत्पुच्छयते गौः । अन्तर्भावितप्यर्थतायाम् ।
उत्पुच्छयते गाम् । पुनः कर्तृत्वविवक्षायाम् । उत्पुच्छयते गौः ।
उदपुच्छत । यक्चिणोः प्रतिपेधाच्छपूचडी । श्रन्थिग्रन्थयोराधृपी-
यत्वाणिजभावपक्षे ग्रहणम् । ग्रन्थति ग्रन्थम् । श्रन्थति मेखलां
देवदत्तः । ग्रन्थते ग्रंथः । अग्रंथिष्ट । श्रन्थते । अश्रन्थिष्ट । क्रियादि-
कयोस्तु श्रन्थीते । ग्रन्थीते स्वयमेव । विकुर्वते सैन्धवाः । वल्गंती-
त्यर्थः । वेः शब्दकर्मणः अकर्मकाश्च इति तद्धः । अन्तर्भावित-
प्यर्थस्य पुनः प्रेषणत्यागे । विकुर्वते सैन्धवाः । व्यकारिष्ट । व्यका-
रिपाताम् । व्यकारिपत । व्यकृत । व्यकृपाताम् । व्यकृपत ॥

कुपिरजोः प्राचां श्यन् परस्मैपदं च ३ । १ । ९० ॥

अनयोः कर्मकर्तारि न यक् किंतु श्यन् परस्मैपदं च । आत्मनेप-
दापवादः । कुप्यति कुप्यते पादः । रज्यति रज्यते वस्त्रम् । यग-
विपये तु नास्य प्रवृत्तिः । कोपिपीष्ट । रक्षीष्ट ॥

इति ८३ अंशाः । इति कर्मकर्तृप्रकरणम् ॥

अथ कृतां शेषः । वसेस्तव्यत्कर्तारि णिच् । वसतीति वास्तव्यः ।
पचेलिमा भाषाः पक्तव्याः । मिदेलिमाः सरलाः भेत्तव्याः । कर्मणि
केलिमर् प्रत्ययः । वृत्तिकारस्तु कर्मकर्तारि चायमिष्यते इत्याह
तद्भाष्याविरुद्धम् ॥

कृत्यचः ८ । ४ । २९ ॥

उपसर्गस्थान्निमित्तात्परस्याच उत्तरस्य कृत्यस्य नस्य णत्वम्
प्रयाणीयम् । अचः किम् । प्रमग्नः ॥

निर्विण्णस्योपसंख्यानम् ॐ ॥

अचः परत्वाभावान्नकारेण व्यवधानाद्यप्राप्ते वचनम् । परस्
णत्वम् । पूर्वस्य ह्रत्वम् । निर्विण्णः ॥

णेर्विभाषा ८ । ४ । ३० ॥

उपसर्गस्थान्निमित्तात्परस्य ण्यन्तादिहितो यः कृत्यस्य
नस्य णो वा । प्रयापणीयम् प्रयापनीयम् । सिद्धिनिर्वाणं किम्
यका व्यवधाने यथा स्यात् । प्रयाप्यमाणं ण्यम् । ण्ये दुः उपस
र्गत्वं न इत्युक्तम् । दुर्यानम् । दुर्यापनम् ॥

हलश्चेजुपधात् ८ । ४ । ३१ ॥

हलादेरिजुपधात्कृत्स्याचः परस्य णो वा । प्रकृषणीयम् प्रकृष-
णीयम् । हलः किम् । मोहणीयम् । इजुपधात् किम् । प्रपणीयम् ॥

इजादेः सनुमः ८ । ४ । ३२ ॥

सनुमश्चेद् भवति तर्हि इजादेर्हलन्तादिहितो यः कृत्यस्यस्यैव ।
मेङ्गणीयम् । इजादेः किम् । मगि समर्पणे । प्रमङ्गनीयम् । नुम-
ग्रहणमनुस्वारोपलक्षणम् । अहकुप्वाह इति सूत्रेऽप्येवम् । तेनेह न ।
मेन्वनम् । इह तु स्यादेव । प्रोम्भणम् ॥

वा निसनिक्षनिन्दाम् ८ । ४ । ३३ ॥

एषां नस्य णो वा कृति परे । प्रणिमितव्यम् प्रनिमितव्यम् ॥

न भाभूपूकमिगमिष्यायीवेपाम् ८ । ४ । ३४ ॥

एभ्यः कृत्यस्य णो न । प्रभाणीयम् प्रभानीयम् । पृथ एवेह
ग्रहणमिष्यते । पृष्ठस्तु प्रवपणीयः सोमः ॥

ण्यन्तभादीनामुपसंख्यानम् ॐ ॥

प्रभापनीयम् । कशाजः शस्य यो वा इत्युक्तम् । णत्वप्रकृषणोपरि

तद्बोध्यम् । यत्त्वस्यासिद्धत्वेन शकारव्यवधानान्न णत्वम् । प्रख्यानी-
यम् । कृत्यल्युटो बहुलम् । स्नान्त्यनेन स्नानीयं चूर्णम् । दीयतेऽस्मै
दानीयो विप्रः । अचो यत् । चैयम् । जेयम् । अजग्रहणं शक्यम-
कर्तुम् । योगविभागोऽप्येवम् । तव्यदादिष्वेव यतोऽपि सुपठत्वात् ॥

ईद्यति ६ । ४ । ६५ ॥

याति पर आत ईत् । गुणः । देयम् ॥

क्षय्यजय्यौ शक्यार्थे ६ । १ । ९१ ॥

निपात्येते । अन्यत्र । क्षेयम् । जेयम् ॥

क्रय्यस्तदर्थे ३ । १ । ८२ ॥

क्रेतारः क्रीणीयुरिति बुद्ध्या आपणे प्रसारितं क्रय्यम् क्रेयमन्यत् ।
ग्लेयम् ॥

तकिशसिचतियतिजनिभ्यो यद्वाच्यः ❀ ॥

तक्यम् । शस्यम् । चत्यम् । यत्यम् । जन्यम् । जनेर्यद्विधिः
स्वरार्थः । ण्यताऽपि रूपसिद्धेः । नच वृद्धिप्रसङ्गः । जनिवध्योश्च
इति निषेधात् ॥

हनो वा यद्वधश्च वक्तव्यः ❀ ॥

वध्यः । पक्षे वक्ष्यमाणो ण्यत् । घात्यः । पोरदुपधात् । शप्यम् ।
लभ्यम् ॥

नानुबन्धकृतमसारूप्यम् ॥

अतो न ण्यत् । तव्यदादयस्तु स्युरेव ॥

आडो यि ७ । १ । ६५ ॥

आडः परस्य लभेर्नुम् यादौ प्रत्यये विवक्षिते । नुमि कृतेऽदुप-
धत्वाभावात् ण्यदेव । आलम्भ्यो गौः ॥

उपात्प्रशंसायाम् ७ । १ । ६६ ॥

उपलम्भ्यः साधुः । स्तुतौ किम् । उपलब्धुं शक्य उपलम्भ्यः ॥

शकिसहोश्च ३ । १ । ८८ ॥

शक्यम् । सह्यम् ॥

गदमदचरयमश्चानुपसर्गे ३ । १ । १०० ॥

गद्यम् । मद्यम् । चर्यम् ॥

चरेराडि चागुरौ ❀ ॥

आचार्यो देशः । गन्तव्य इत्यर्थः । अगुरौ किम् । आचार्यो गुरुः । यमेर्नियमार्थम् । सोपसर्गान्मा भूदिति । प्रयाम्यम् । निपूर्वात्स्या-
देव । तेन न तत्र भवेद्विनियम्यम् इति वार्तिकप्रयोगात् । एतेन
अनियम्यस्य नायुक्तिः । त्वया नियम्या ननु दिव्यचक्षुषा इत्यादि
व्याख्यातम् । नियमे साधुरिति वा ॥

अवद्यपण्यवर्यागर्ह्यपणितव्या निरोधेषु ३ । १ । १०१ ॥

वदेर्नञ्युपपदे वदः सुपि इति यत्क्यपोः प्राप्तयोर्यदेव सोऽपि
गर्हायामेवेत्युभयार्थं निपातनम् । अवद्यं पापम् । गर्ह्यं किम् ।
अनुद्यं गुरुनाम । तद्धि न गर्ह्यं वचनानर्हं च । आत्मनाम गुरोर्नाम
नामातिकृपणस्य च । श्रेयस्कामो न गृहीयाज्ज्येष्ठापत्यकलत्रयोः ॥
इति स्मृतेः । पण्या गौः । व्यवहर्तव्येत्यर्थः । पाण्यमन्यत् । स्तुत्य-
र्हमित्यर्थः । अनिरोधोऽप्रतिबन्धस्तस्मिन्विषये वृद्धो यत् । शतेन
वर्या कन्या । वृत्त्याऽन्या ॥

वह्यं करणम् ३ । १ । १०२ ॥

वहन्त्यनेनेति वह्यं शकटम् । करणं किम् । बाह्यम् । वोढव्यम् ॥

अर्यः स्वामिवैश्ययोः ३ । १ । १०३ ॥

ऋ गतो अस्माद्यत् । ण्यतोऽपवादः । अर्यः स्वामी वैश्यो वा ।
अनयोः किम् । आर्यो ब्राह्मणः । प्राप्तव्य इत्यर्थः ॥

उपसर्ग्य काल्याप्रजने ३ । १ । १०४ ॥

गर्मग्रहणे प्राप्तकाला चेदित्यर्थः । उपसर्ग्य गौः । गर्माधानार्थं
वृषभेणोपगन्तुं योग्येत्यर्थः । प्रजने काल्या इति किम् । उपसर्ग्य
काशी । प्राप्तव्येत्यर्थः ॥

अजर्यै संगतम् ३ । १ । १०५ ॥

नञ्पूर्वाजीर्यतेः कर्त्तरि यत्संगतं चेद्विशेष्यम् । न जीर्यतीत्यज-
र्यम् । तेन संगतमोर्येण रामाजर्यं कुरु द्रुतम् । इति भट्टिः ।
मृगैरजर्यं जरसोपदिष्टमदेहवन्धाय पुनर्वबन्ध । इत्यत्र तु संगतामिति
विशेष्यमध्याहार्यम् । संगतं किम् । अजरीता कम्बलः । भावे तु
संगतकर्तृकेऽपि ण्यदेव । अजार्य संगतेन ॥

वदः सुपि क्यप् च ३ । १ । १०६ ॥

उत्तरसूत्रादिह भाव इत्यपकृष्यते । वदेर्भावे क्यस्याच्चाद्यदनु-
पसर्गे सुप्युपपदे । ब्रह्मोद्यम् । ब्रह्मवद्यम् । ब्रह्म वेदः तस्य वदनमि-
त्यर्थः । कर्मणि प्रत्ययावित्येके । उपसर्गे तु ण्यदेव । अनुवाद्यम् ।
अपवाद्यम् ॥

भुवो भावे ३ । १ । १०० ॥

क्यप् स्यात् । ब्रह्मणो भावो ब्रह्ममूयम् । सुपीत्येव । भव्यम् ।
अनुपसर्गे इत्येव । प्रभव्यम् ॥

हनस्त च ३ । १ । १०८ ॥

अनुपसर्गे सुप्युपपदे हन्तेर्भावे क्यप् स्यात्तकारश्चान्तादेशः ।
ब्रह्मणो हननं ब्रह्महत्या । स्त्रीत्वं लोकात् ॥

एतिस्तुशास्वृदञ्जुपः क्यप् ३ । १ । १०९ ॥

एभ्यः क्यप् । ह्रस्वस्य पिति कृति तुक् । इत्यः । स्तुत्यः । शास
इदङ्गहलोः । शिष्यः । वृ इति वृजो ग्रहणं न वृङ्गः । वृत्यः ।
वृङ्गस्तु वार्या ऋत्विजः । आद्यत्यः । जुष्यः । पुनः क्यवुक्तिः
परस्यापि ण्यतो वाधनार्या । अवश्यस्तुत्यः । शंसिदुहिगुहिभ्यो
वा इति काशिका । शस्यं शंस्यम् । दुह्यं दोह्यम् । गुह्यं गोह्यम् ।
मशस्यस्य श्रः । ईडवन्दवृशंसदुहां ण्यतः इति सूत्रद्वयवलाच्छंसेः
सिद्धम् । इतरयोस्तु मूलं मृग्यम् ॥

आङ्पूर्वादञेः संज्ञायामुपसंख्यानम् ॐ ॥

अञ्जू व्यक्तिप्रक्षणादिषु । बाहुलकात्करणे क्यप् । आनिदि-
ताम् इति नलोपः । आज्यम् । ऋदुपधाच्चाह्णपिचृतेः । वृत् वृत्यम् ।
वृध् वृध्यम् । क्लृपिचृत्योस्तु । कल्प्यम् । चर्त्यम् । तपरकरणं किम् ।
कृत् कीर्त्यम् । अनित्यण्यन्ताश्चरादय इति णिजभावे ण्यत् ।
णिजन्तास्तु यदेव ॥

ई च खनः ३ । १ । १११ ॥

चात्क्यप् । आह्वणः । खेयम् । इ च इति ह्रस्वः सुपठः ॥

भृतोऽसंज्ञायाम् ३ । १ । ११२ ॥

भृत्याः कर्मकराः । भर्तव्या इत्यर्थः । क्रियाशब्दोऽयं नतु संज्ञा ।
समश्च बहुलम् । संभृत्याः संभार्याः । असंज्ञायामेव विकल्पार्थमिदं
वार्तिकम् । असंज्ञायां किम् । भार्या नाम क्षत्रियाः । अथ कथं
भार्या वधूरिति । इह हि संज्ञायां समज इति क्यपा भाव्यम् । संज्ञा-
पर्युदासस्तु पुंति चरितार्थः । सत्यम् । विभर्तेः भू इति दीर्घान्तात्प्रचा-
देर्वा ण्यत् । क्यप् तु भरतेरेव । तदनुबन्धकग्रहणे इति परिभाषया ॥

मृजेर्विभाषा ३ । १ । ११३ ॥

मृजेः क्यच्चा । पक्षे ण्यत् । मृज्यः । चजोः कुधिण्यतोः ॥

निष्ठायामनिट इति वक्तव्यम् ❀ ॥

तेनेह न । गर्ज्यम् । मृजेर्वृद्धिः । मार्ग्यः ॥

न्यङ्कादीनां च ७ । ३ । ५३ ॥

कुत्वम् । न्यङ्कुः । नावञ्चैः इत्युपत्ययः ॥

राजसूयसूर्यमृषोद्वरुच्यकुप्यकृष्टपच्याव्यथ्याः

३ । १ । ११४ ॥

एते सप्त क्यवन्ता निपात्यन्ते । राज्ञा सोतव्योऽधिपवद्वारा
निष्पादयितव्यः । यद्वा । लतात्मकः सोमो राजा । स सूयते क-
ण्डचतेऽत्रेत्यधिकरणे क्यन्निपातनादीर्घः । राजसूयः राजसूयम् ।
अर्धर्चादिः । सरत्याकाशे सूर्यः । कर्तारि क्यन्निपातनादुत्वम् ।

यद्वा । पू मेरणे । हुदादिः । सुवति । कर्मणि लोके मेरयति ।
 क्यपो रुद्र । मृषोपपदाद्देः कर्मणि नित्यं क्यप् । मृषोद्यम् ।
 विशेष्यनिघ्नोऽयम् । उच्छ्रायसौन्दर्यशुणा मृषोद्याः । रोचते रु-
 च्यः । गुपेरादेः कृत्वं च संज्ञायाम् । सुवर्णरजतमित्रं धनं कुप्यम् ।
 गोप्यमन्यत् । कृष्टे स्वयमेव पच्यन्ते कृष्टपच्याः कर्मकर्त्तरि । शुद्धे
 तु कर्मणि कृष्टपाक्याः । न व्यथतेऽव्यथ्यः ॥

भिद्योद्धयौ नदे ३ । १ । ११५ ॥

भिदेरुज्जेश्च क्यप् उज्जेश्वरत्वं च । भिनत्ति कूलं भिद्यः । उज्ज-
 त्युदकमुद्धयः । नदे किम् । भेत्ता । उज्जिता ॥

पुण्यसिध्यौ नक्षत्रे ३ । १ । ११६ ॥

अधिकारणे क्यन्निपात्यते । पुण्यन्त्यस्मिन्नर्थाः पुण्यः । सिध्य-
 न्त्यस्मिन्सिध्यः ॥

इति ८४ अंशाः ।

विपूयविनीयजित्या मुञ्जकल्कहलिषु ३ । १ । ११७ ॥

पृञ्जनीञ्जिभ्यः क्यप् । विपूयो मुञ्जः । रज्ज्वादिकरणाय शो-
 धयितव्य इत्यर्थः । विनीयः कल्कः । पिष्ट औषधविशेष इत्यर्थः ।
 पापमिति वा । जित्यो हलिः । बलेन कृष्टव्य इत्यर्थः । कृष्टसमी-
 करणार्थं स्थूलकाष्ठम् । अन्यत्तु । विपन्वम् । विनेयम् । जेयम् ॥

प्रत्यपिभ्यां ग्रहेः ३ । १ । ११८ ॥

छन्दसीति वक्तव्यम् ❀ ॥

प्रतिगृह्यम् । अपिगृह्यम् । लोके तु । प्रतिग्राह्यम् । अपिग्राह्यम् ॥

पदास्वैरिवाद्यापक्षेषु च ३ । १ । ११९ ॥

अवगृह्यम् । प्रगृह्यं पदम् । अस्वैरी परतन्त्रः । गृह्यकाः शुकाः ।
 पञ्जरादिबन्धनेन परतन्त्रीकृता इत्यर्थः । वाद्यायाम् । ग्रामगृह्या
 सेना । ग्रामवाहिर्भूतेत्यर्थः । स्त्रीलिङ्गनिर्देशात्पुनरुक्तयोर्न । पक्षे

भवः पक्ष्यः । दिगादित्वाद्यत् । आर्यैर्गृह्यत आर्यगृह्यः । तत्पक्षा-
श्रित इत्यर्थः ॥

विभापा कृवृपोः ३ । १ । १२० ॥

क्यप् । कृत्यम् । वृष्यम् । पक्षे ऋहलोर्ण्यत् । कार्यम् । वर्ण्यम् ॥

युग्यं च पत्रे ३ । १ । १२१ ॥

पत्रं बाहनम् । युग्यो गौः । अत्र क्यप् कुत्वं च निपात्यते ॥

अमावस्यदन्यतरस्याम् ३ । १ । १२२ ॥

अमोपपदादसेरधिकरणे ण्यत् । वृद्धौ सत्यां पाक्षिको द्वस्वश्च
निपात्यते । अमा सह वसतोऽस्यां चन्द्रार्कविमावास्या अमावस्या ।
ऋहलोर्ण्यत् । चजोः इति कुत्वम् । पाक्यम् ॥

पाणौ सृजेर्ण्यद्वाच्यः ॐ ॥

ऋदुपधलक्षणस्य क्यपोऽपवादः । पाणिभ्यां सृज्यते पाणिस-
र्ग्या रज्जुः ॥

समवपूर्वाच्च ॐ ॥

समवसर्ग्या ॥

न क्वादेः ७ । ३ । ५९ ॥

क्वादेर्धातोश्चजोः कुत्वं न । गर्ज्यम् । वार्तिककारस्तु चजोः इति
सूत्रे निष्ठायामनिटः इति पूरयित्वा न क्वादेः इत्यादि प्रत्याचर्या ।
तेन अर्जितर्जिप्रभृतीनां न कुत्वं निष्ठायां सेदत्वात् । शुचुः शुचुप्र-
भृतीनां तु क्वादित्वेऽपि कुत्वं स्यादेव । सूत्रमते तु यद्यपि विपरीतं
मात्रं तथापि यथोत्तरं मुनीनां प्रामाण्यम् ॥

अजिवृज्योश्च ७ । ३ । ६० ॥

न कुत्वम् । समाजः । परिघ्राजः ॥

भुजन्वुजौ पाण्युपतापयोः ७ । ३ । ६१ ॥

एतयोरेतौ निपात्यौ । भुज्यतेऽनेनेति भुजः पाणिः । इलश्च

इति घञ् । न्युब्जन्त्यस्मिन्निति न्युब्जः । उपतापो रोगः । पाण्यु-
पतापयोः किम् । भोगः समुद्रः ॥

प्रयाजानुयाजौ यज्ञाङ्गे ७ । ३ । ६२ ॥

एतौ निपात्यौ यज्ञाङ्गे । पञ्च प्रयाजाः । त्रयोऽनुयाजाः । यज्ञाङ्गे
किम् । प्रयागः । अनुयागः ॥

वञ्चेर्गतौ ७ । ३ । ६३ ॥

कुत्वं न । वञ्च्यम् । गतौ किम् । वङ्ग्यं काष्ठम् । कुटिलीकृत-
मित्यर्थः ॥

ओक लचः के ७ । ३ । ६४ ॥

उचेर्गुणकृत्वे निपात्येते के परे । ओक' शकुन्तवृषलौ । इगुप-
धलक्षणः कः । घञा सिद्धे अन्तोदात्तार्थमिदम् ॥

पय आवश्यके ७ । ३ । ६५ ॥

कुत्वं न । अवश्यपाच्यम् । लुम्पेदवश्यमः । कृत्ये तु काममनसो-
रपि । समो वा हिततत्तयोर्मासस्य पचि युद्धघ्नोः । कर्तुंकामः ।
कर्तुमनाः । सहितं संहितम् । मास्पचनी मास्पाकः ॥

यजयाचरुचप्रवच्चर्चश्च ७ । ३ । ६६ ॥

प्ये कुत्वं न । याज्यम् । याच्यम् । रोच्यम् । प्रवाच्यं ग्रन्थ-
विशेषः । ऋच अर्च्यम् । ऋद्धपधत्वेऽप्यत एव ज्ञापकाण्यत् । त्य-
जेश्च त्याज्यम् । त्यजिपूज्योश्च इति काशिका । तत्र पूजेर्ग्रहणं
चिन्त्यं भाष्यानुक्तत्वात् ॥

पयत्प्रकरणे त्यजेरुपसंख्यानम् ॐ ॥

इति हि भाष्यम् ॥

वचोऽशब्दसंज्ञायाम् ७ । ३ । ६७ ॥

वाच्यम् । शब्दाख्याया तु वाक्यम् ॥

प्रयोज्यनियोज्यौ शक्यार्थे ७ । ३ । ६८ ॥

प्रयोक्तुं शक्यः प्रयोज्यः । नियोक्तुं शक्यो नियोज्यो भृत्यः ॥

भोज्यं भक्ष्ये ७ । ३ । ६९ ॥

भोग्यमन्यत् ॥

ण्यत्प्रकरणे लपिदभिभ्यां चेति वक्तव्यम् ❀ ॥

लाप्यम् । दभिर्धातुष्वपठितोऽपि वार्तिकबलात् स्वीकार्यः ।
दाभ्यः । ओरावश्यके । लाप्यम् । पाप्यम् ॥

आसुयुवपिरपित्रपिचमश्च ३ । १ । १२६ ॥

पुञ् । आसाप्यम् । यु मिश्रणे । याप्यम् । वाप्यम् । राप्यम् ।
त्राप्यम् । चाप्यम् ॥

आनाय्योऽनित्ये ३ । १ । १२७ ॥

आङ्पूर्वात्रयतेर्ण्यदायादेशश्च निपात्यते । दक्षिणाग्निविशेष
एवेदम् । स हि गार्हपत्यादानीयतेऽनित्यश्च सततमप्रज्वलनात् ।
आनियोऽन्यः घटादिः । वैश्यकुलादेरानीतो दक्षिणाग्निश्च ॥

प्रणाय्योऽसंमतौ ३ । १ । १२८ ॥

संमतिः प्रीतिविषयीभवनं कर्म व्यापारः । तथा भोगेष्ववादरोऽपि
संमतिः । प्रणाय्यश्चोरः । प्रीत्यनर्ह इत्यर्थः । प्रणाय्योऽन्तेवासी ।
विरक्त इत्यर्थः । प्रणयोऽन्यः ॥

पाय्यसांनाय्यनिकाय्यधाय्या मानहविर्निवाससामिधे-
नीषु ३ । १ । १२९ ॥

मीयतेऽनेन पाय्यं मानम् । ण्यद्धात्वादेः पत्वं च । आतो युक्
इति युक् । सम्यक् नीयते होमार्थमग्निं प्रतीति सांनाय्यं हविर्विशेषः ।
ण्यदायादेशः समी दीर्घश्च निपात्यते । निचीयतेऽस्मिन्धान्यादिकं
निकाय्यो निवासः । अधिकरणे ण्यत् आयो धात्वादेः कुत्वं च
निपात्यते । धीयतेऽनया समिदिति धाय्या ऋक् ॥

ऋतौ कुण्डपाय्यसंचाय्यौ ३ । १ । १३० ॥

कुण्डेन पीयतेऽस्मिन्सोमः कुण्डपाय्यः ऋतुः । संचीयतेऽर्त्ता
संचाय्यः ॥

अग्नौ परिचाय्योपचाय्यसमूह्याः ३ । १ । १३१ ॥

अग्निधारणार्थे स्थलविशेष एते साधवः । अन्यत्र तु । परिचेयम् । उपचेयम् । संवाहम् ॥

चित्याग्निचित्ये च ३ । १ । १३२ ॥

चीयतेऽसौ चित्योऽग्निः । अग्नेश्चयनमग्निचित्या ॥

प्रेपातिसर्गप्राप्तकालेषु कृत्याश्च ॥

स्वया गन्तव्यं गमनीयं गम्यम् । इह लंटा बाधा मा भूदिति पुनः कृत्याविधिः । स्याधिकारादूर्ध्वं वासरूपविधिः । कचिन्न इति ज्ञापयति । तेन कृत्युद्धतुमुन्वलयेषु न इति सिद्धम् । अहं कृत्यवृत्तश्च । स्तोतुमर्हः स्तुत्यः । स्तुतिकर्मस्तोता स्तुतिकर्ता । लिङा बाधा मा भूदिति कृत्यवृत्तचोर्विधिः ॥

भव्यगेयप्रवचनीयोपस्थानीयजन्याप्लाव्यापात्या वा ३ । ४ । ६८ ॥

एते कृत्यान्ताः कर्तरि वा निपात्यन्ते । पक्षे तयोरेवेति सकर्मकात्कर्मणि अकर्मकास्तु भावे ज्ञेयाः । भवतीति भव्यः भव्यमनेन वा । गायतीति गेयः साम्नामयं गेयं सामानेन वा इत्यादि । शक्ति लिङ् च । चात्कृत्याः । वोढुं शक्यो वोढव्यः । वहनीयो बाह्यः । लिङा बाधा मा भूदिति कृत्योक्तिः । लाघवादेनेनैव ज्ञापनसंभवे प्रैपादिसूत्रे कृत्याश्च इति सुत्यजम् । अहं कृत्यवृत्तचोर्ग्रहणं च इति कृत्यप्रकरणम् । ण्वुल्वचौ कर्तरि कृत् इति कर्त्रर्थे । युवोरनाकौ । कारकः कर्ता । वोढुमर्हो वोढा । कारिका कर्त्री । गांकुटा इति ङित्वम् । कुटिता । अङ्गिणदित्युक्तेर्न ङित्वम् । कोटकः । विज इद् । विजिता । हनस्तोऽचिण्णलोः । घातकः । आतो युक् । दायकः । नोदात्तोपदेशस्य इति न वृद्धिः । शमकः । दमकः । अनिटस्तु नियामकः । जनिवध्योश्च । जनकः । वध हिंसायाम् । वधकः । राधिजमोरधि । रंधकः । जम्भकः । नेटचलिटि रधेः । रधिता रद्धा । मस्तिजनशोः इति तुम् । मङ्गा । नंष्टा नाशिता । रभेरशब्दिलोः । रम्भकः रब्धा । लभेश्च ।

लम्भकः लब्धा । तीपसह । एपिता पृष्टा । सहिता सोढा । दरि-
द्रातेरालोपः । दरिद्रिता । ण्वुलि न । दरिद्रायकः । कृत्यल्युटः इत्येव
सूत्रमस्तु । यत्र विहितास्ततोऽन्यत्रापि स्युरित्यर्यात् । एवं च घट्ट-
लग्नहणं योगविभागेन कृन्मात्रस्यार्थव्यभिचारार्थम् । पादाभ्यां
ह्रियते पादहारकः । कर्मणि ण्वुल् ॥

क्रमेः कर्तर्यात्मनेपदविपयात्कृत इण्निपेधो वाच्यः ॥

प्रक्रन्ता । कर्तरि इति किम् । प्रक्रमितव्यम् । आत्मनेपद इति
किम् । संक्रमिता । अनन्यभावो विषयशब्दः । तेन अनुपसर्गाद्वा
इति विकल्पादस्य न निपेधः । क्रमिता । तदर्हत्वमेव तद्विषय-
त्वम् । तेन क्रन्तेत्यपीति केचित् । गमेरिद् इत्यत्र परस्मैपदग्रहणं
तडानयोरभावं लक्षयति । संजिगमिपिता । एवं न घृद्धयश्चतुर्भ्यः ।
विघृष्टिता । तडन्ताण्वुल् । अलोपस्य स्थानिवत्त्वान्न वृद्धिः ।
पापचकः । यङ्लुगन्तात्तु । पापाचकः ॥

इति ८५ अंशाः ।

नन्दिग्रहिपचादिभ्यो ल्युणिन्यचः । नन्दयतीति नन्दनः ।
जनमर्दयतीति जनार्दनः मधुसूदनः । विशेषेण भीषयतीति विभी-
षणः । लवणः । नन्द्यादिगणे निपातनाण्वत्वम् । ग्राही । स्थायी ।
मन्त्री । विशयी । वृद्धयभावो निपातनात् । विषयी । इह पत्व-
मपि । परिभावी परिमवी । पाक्षिको वृद्धयभावो निपात्यते । पचा-
दिराकृतिगणः । शिवशमरिष्टस्य करे, कर्मणि घटो ठच् इति सूत्रयोः
करोतेर्घटेश्चाक्षप्रयोगात् । अक्षप्रत्यये परे यङ्लुग्विधानाच्च । अतः
सर्वधातुभ्योऽच् । केपांचित् पाठस्त्वनुबन्धासंजनार्थः । केपांचित्प्र-
पञ्चार्थः । केपांचिद्वाधकवाधनार्थः । पचतीति पचः । नदद् चोरद्
देवद् इत्यादयष्टितः । नदी । चोरी । देवी । दीव्यतेः इगुपध इति कः
प्राप्तः । जारभरा । श्वपचा । अनयोः कर्मण्यण् प्राप्तः । न्यङ्कादिपु
पाठाच्चुपाकोऽपि । यङोऽचि च इति लुक् न धातुलोपः इति
गुणवृद्धिनिपेधः । चेक्रियः । नेन्यः । लोलुवः । पोषुवः । मरीसृजः ॥

चरिचलिपतिवदीनां वा द्वित्वमच्याक्चाभ्यासस्येति
वक्तव्यम् ॐ ॥

आगमस्य दीर्घत्वसामर्थ्यादभ्यासह्रस्वो हलादिः शेषश्च न ।
चराचरः । चलाचलः । पतापतः । वदावदः । हन्तेर्घत्वं च । घत्वम-
भ्यासस्योत्तरस्य तु अभ्यासाद्य इति कुत्वम् । घनाघनः । पाटेर्णिङ्-
क्चोक्च दीर्घश्चाभ्यासस्य । पाटूपटः । पक्षे चरः । चलः । पतः ।
वदः । हनः । पाटः । रात्रेः कृति इति वा मुम् । रात्रिचरो रात्रि-
चरः । इगुपधज्ञामीक्रिः कः । क्षिपः । लिखः । बुधः । कृजः । ज्ञः ।
मीणातीति म्रियः । किरतीति किरः । वासरूपविधिना ण्वुल्तृचारपि ।
क्षेपकः । क्षेप्ता । आतथोपसर्गे श्याद्यधा इति ण्यभ्यापवादः ।
मुगलः । प्रज्ञः ॥

पात्राध्माधेट्टशः शः ३ । १ । १३७ ॥

पिवतीति पिवः । जिघ्रः । धमः । धयः । धया कन्या । धेठ-
ष्टित्वात्स्तनंधयी इति खशीव ङीप्पाप्तः । खशीञ्चन नेप्पते इति
हरदत्तः । पश्यतीति पश्यः । ग्रः संज्ञायां न । व्याघ्रादिभिः इति
निर्देशात् ॥

अनुपसर्गालिम्पविन्दधारिपारिवेद्युदेजिचेतिसाति-
साहिभ्यश्च ३ । १ । १३८ ॥

शः । लिम्पः । विन्दः । धारयः । पारयः । वेदयः । उदेजयः ।
चेतयः । सातिः सुखार्थः । सौत्रो हेतुमण्यतः । सातयः । वासरूपन्या-
येन क्तिपि सात्परमात्मा । सात्वन्तो मक्ताः । पद मर्षणे । चुरादिः
हेतुमण्यन्तो वा । साहयः । अनुपसर्गात् किम् । प्रलिप्ः ॥

नौ लिम्पेर्वाच्यः ॐ ॥

निलिम्पा देवाः । गवादिषु विन्देः संज्ञायाम् । गोविन्दः ।
अरविन्दः ॥

ददातिदधात्योर्विभाषा ३ । १ । १३९ ॥

शः । ददः । दधः । पक्षे वक्ष्यमाणो णः । अनुपसर्गादित्येव ।
प्रदः । प्रधः ॥

ज्वलितिकसन्तेभ्यो णः ३ । १ । १४० ॥

इतिशब्दः आयर्यः । ज्वालादिभ्यः कसन्तेभ्यो णः वा पक्षेऽ-
च् । ज्वालः ज्वलः । चालः चलः । अनुपसर्गादित्येव । उज्ज्वलः ॥

तनोतेरुपसंख्यानम् ❀ ॥

इहानुपसर्गादिति विभाषेति च न संबध्यते । अवतनोतीत्य-
वतानः ॥

श्याद्यधाद्यसंस्त्रवतीणवसावहलिहक्षिपश्वसश्च ३ । १ ।

१४१ ॥

श्यैद्रमभृतिभ्यो नित्यं णः । श्यैडोऽवस्यतेश्चादन्तत्वात्सिद्धे
पृथग्ग्रहणमुपसर्गेकं बाधितुम् । अवश्यायः । प्रातिश्यायः । आत्
दायः । धायः । व्याधः । क्षु गती । आद्पूर्वः मपूर्वश्च । आस्तावः ।
संस्तावः । अत्यायः । अवसायः । अवहारः । लेहः । श्लेषः । श्वातः ॥

दुन्योरनुपसर्गे ३ । १ । १४२ ॥

णः । दुनोतीति दावः । नीसाहचर्यात्सानुबन्धकाद् दुनोतेरेव
णः । दवतेस्तु पचायच् । दवः । नयतीति नायः । उपसर्गे तु ।
प्रदवः । प्रणयः ॥

विभाषा ग्रहः ३ । १ । १४३ ॥

णो वा पक्षेऽच् । व्यवस्थितविभाषेयम् । तेन जलचरे ग्राहः ।
ज्योतिषि ग्रहः । भवतेश्च इति काशिका । भवो देवः संसारश्च ।
भावाः पदार्थाः । भाष्यमते तु प्राप्त्यर्थोभुरादिष्यन्तादच् । भावः ॥

गेहे कः ३ । १ । १४४ ॥

गेहे कर्तरि ग्रहेः कः । गृह्णाति धान्यादिकमिति गृहम् । ता-
त्स्थ्याद्गृहा दाराः ॥

शिल्पिनि ष्वुन् ३ । १ । १४५ ॥

क्रियाकौशलं शिल्पं तद्वति कर्तरि ण्युन् । नृतिखनिराञ्जिभ्य
एव । नर्तकः नर्तकी । खनकः खनकी ॥

असि अकेऽने च रञ्जेर्नलोपो वाच्यः ❀ ॥

रजकः रजकी । भाष्यमते तु नृतिखनिभ्यामेव ण्युन् । रञ्जेस्तु
कुन्शिल्पिसंज्ञयोः इति कुन् । टाप् । रजिका । पुंयोगे तु । रजकी ॥

गस्थकन् ३ । १ । १४६ ॥

गायतेस्थकन्, शिल्पिनि कर्तरि । गायकः ॥

ण्युद् च ३ । १ । १४७ ॥

गायनः । टित्त्वाहायनी ॥

हंश्च ब्रीहिकालयोः ३ । १ । १४८ ॥

हाको हाडश्च ण्युद् ब्रीहौ काले च कर्तरि । जहात्युदकमिति
हायनो ब्रीहिः । जहाति भागानिति हायनो वर्षम् । जिहीति
प्राप्नोतीति वा ॥

प्रसृत्वः समभिहारे वुन् ३ । १ । १४९ ॥

समभिहारप्रहणेन साधुकारित्वं लक्ष्यते । प्रवकः । सरकः । लवकः ।
आशिपि च । जीवतात् जीवकः । नन्दतात् नन्दकः । आशीः प्रयो-
क्तुर्धर्मः आशासितुः । पित्रादेरियमुक्तिः । कर्मण्यण् । कुम्भकारः ।
आदित्यं पश्यतीत्यादावनभिधानान्न । गङ्गाधरभूधरादौ तु कर्मणः
शेषत्वविवक्षाया पचाद्यच् । एवं च धरतीति धरः । ततो गङ्गाया धर
इति पष्ठीसमास इत्याहुः । परे तु लक्ष्यानुरोधेन पचादिषु विशि-
ष्टपाठकल्पनसामर्थ्यात् 'अणो बाधस्तेन गङ्गा धरतीत्येव विग्रह
इत्याहुः ॥

शीलिकामिभक्ष्याचरिभ्यो णः ❀ ॥

अणोऽपवादार्थं वार्तिकम् । मासशीला । मांसकामा । मांसभक्षा ।
कल्याणाचारा ॥

ईक्षिक्षमिभ्यां च ❀ ॥

सुखप्रतीक्षा । बहुक्षमा ॥

ह्वावामश्च ३ । २ । २ ॥

अण् कापवादः । स्वर्गहायः । तन्तुवायः । धान्यमायः ।
आतोऽनुपसर्गे कः । गोदः पार्ष्णित्रम् ॥

कविधौ सर्वत्र संप्रसारणिभ्यो ङः ❀ ॥

ब्रह्म जिनाति ब्रह्मज्यः । सर्वत्रग्रहणादातश्चोपसर्गे । आहः । प्रहः ॥

सुपि स्थः ३ । २ । ४ ॥

सुपीति योगो विभज्यते । सुप्युपपदे आदन्तात्कः । दाभ्या
पिबतीति द्विपः । समस्थः । विषमस्थः । ततस्थः । सुपि ति-
ष्ठतेः कः । आरम्भसामर्थ्याद् भावे । आखुनामुत्थानमाखूत्यः ॥

प्रष्टोऽग्रगामिनि ८ । ३ । ९२ ॥

प्रतिष्ठत इति प्रष्टो गौः । अग्रतो गच्छतीत्यर्थः । अग्र इति
किम् । प्रस्थः ॥

अम्बाम्बगोभूमिसव्यापद्वित्रिकुशेकुशद्विदुमज्जिपु-
ज्जिपरमेवार्हिर्दिव्यग्निभ्यः स्थः ८ । ३ । ९७ ॥

स्थः इति कप्रत्ययान्तस्यानुकरणम् । पष्ठचर्थे प्रथमा । एभ्यः
स्थस्य सस्य पः । द्विष्ठः । त्रिष्ठः । इत ऊर्ध्व कर्मणि सुपीति द्वयमप्य-
नुवर्तते । तत्राकर्मकेषु सुपीत्यस्य संबन्धः ॥

तुन्दशोकयोः परिमृजापनुदोः ३ । २ । ५ ॥

तुन्दशोकयोः कर्मणोरुपपदयोराम्बा कः ॥

आलस्यमुखाहरणयोरिति वक्तव्यम् ❀ ॥

तुन्दं परिमार्ष्टीति तुन्दपरिमृजोऽलसः । शोकापनुदः । सुख-
स्याहर्ता । अलसादन्यत्र तुन्दपरिमार्ज एव । यश्च संसारासार-
त्वोपदेशेन शोकमपनुदति स शोकापनुदः ॥

कप्रकरणे मूलविभुजादिभ्य उपसंख्यानम् ❀ ॥

मूलानि विभुजति मूलविभुजो रयः । आकृतिगणोऽयम् ।
महीध्रः । कुध्रः । गिलतीति गिलः ॥

प्रे दाज्ञः ३ । २ । ६ ॥

दारुपाज्जानातेश्च प्रोपसृष्टात्कर्मण्युपपदे कः । अणोऽपवादः ।
सर्वप्रदः । पथिप्रज्ञः । अनुपसर्ग इत्युक्तेः प्रादन्यस्मिन्सुपि न कः ।
गोसंप्रदायः ॥

समि रयः ३ । २ । ७ ॥

गोसंख्यः ॥

इति ८६ अंशाः ।

गापोष्टक् ३ । २ । ८ ॥

अनुपसृष्टाभ्यामाभ्या टक् कर्मण्युपपदे । सामगः । सामगी ।
उपसर्गे तु सामसङ्गायः ॥

पिबतेः सुराशीध्वोरिति वाच्यम् ❀ ॥

सुरापी । शीधुपी । अन्यत्र क्षीरपा ब्राह्मणी । सुरा पाति रक्ष-
तीति सुरापा ॥

हरतेरनुद्यमनेऽच् ३ । २ । ९ ॥

अंशहरः । अनुद्यमने किम् भारहारः ॥

शक्तिलाङ्गलाङ्कुशतोमरयष्टिघटघटीधनुःषु ग्रहेरुप-
संख्यामम् ❀ ॥

शक्तिग्रहः । लाङ्गलग्रहः । सूत्रे च धार्यर्ज्ये । सूत्रग्रहः । यस्तु
सूत्र केवलमुपादत्ते नतु धारयति तत्राणिव । सूत्रग्राहः ॥

वयसि च ३ । २ । १० ॥

उद्यमनार्थं सूत्रम् । कवचहरः कुमारः ॥

आङि ताच्छील्ये ३ । २ । ११ ॥

पुष्पाण्याहरति तच्छीलः पुष्पाहरः । ताच्छील्ये किम् ।
भाराहारः ॥

अर्हः ३ । २ । १२ ॥

अर्हतेरच् कर्मण्युपपदेऽणोऽपवादः । पृजार्हा ब्राह्मणी ॥

स्तम्बकर्णयो रमिजपोः ३ । २ । १३ ॥

हस्तिसूचकयोरिति वक्तव्यम् ❀ ॥

स्तम्बे रमते स्तम्बेरमो हस्ती । तत्पुरुषे कृति इति हलदन्तात्
इति वा डेरलुक् । कर्णेजपः सूचकः ॥

शमिधातोः संज्ञायाम् ३ । २ । १४ ॥

शम्भवः । शम्बदः । पुनर्धातुग्रहणं बाधकविषयेऽपि प्रवृत्त्य-
र्थम् । कृञो हेत्वादिषु टो भाभृत् । शङ्गरा नाम परिव्राजिका
तच्छीला ॥

अधिकरणे शेतेः ३ । २ । १५ ॥

खे शेते खशयः ॥

पार्श्वादिषूपसंख्यानम् ❀ ॥

पार्श्वाभ्या शेते पार्श्वशयः । पृष्ठशयः । उदरेण शेते उदरशयः ।
उत्तानादिषु कर्तृषु । उत्तानः शेते उत्तानशयः । अवमूर्धशयः ।
अवनतो मूर्धा यस्य सोऽवमूर्धा । अधोमुखः शेते इत्यर्थः ॥

गिरौ डङ्छन्दसि ❀ ॥

गिरौ शेते गिरिशः । कथं तर्हि, गिरिशमुपचचार प्रत्यहं सा
सुकेशी इति । गिरिरस्यास्तीति विग्रहे लोमादित्वाच्छः ॥

चरेष्टः ३ । २ । १६ ॥

अधिकरण उपपदे । कुरुचरः कुरुचरी ॥

भिक्षासेनादायेषु च ३ । २ । १७ ॥

भिक्षा चरतीति भिक्षाचरः । सेनाचरः । जादायेति ल्यबन्तम् ।

आदायचरः । कथम्, प्रेक्ष्य स्थिता सहचरीम् इति । पचादिषु चर-
डिति पाठात् ॥

पुरोऽग्रतोऽग्रेषु सर्तः ३ । २ । १८ ॥

पुरःसरः । अग्रतःसरः । अग्रमग्रेणाग्रे वा सरतीत्यग्रेसरः ।
सूत्रेऽग्र इत्येदन्तत्वमपि निपात्यते । कथं तर्हि, यूयं तदग्रसरगर्वित-
कृष्णसारम् इति । बाहुलकादिति हरदत्तः ॥

पूर्वे कर्त्तरि ३ । २ । १९ ॥

कर्त्तृवाचिनि पूर्वशब्द उपपदे सर्तेष्टः । पूर्वः सरतीति पूर्वसरः ।
कर्त्तरि किम् । पूर्व देशं सरतीति पूर्वसारः ॥

कृभो हेतुताच्छील्यानुलोम्येषु ३ । २ । २० ॥

एषु द्योत्येषु करोतेष्टः । अतः कृकमि इति सः । यशस्करी
विद्या । श्राद्धकरः । वचनकरः ॥

**दिवाविभानिशाप्रभाभास्कुरान्तानन्तादिवहुनान्दी-
किंलिपिलिविलिभक्तिकर्त्तृचित्रक्षेत्रसंख्याजङ्घाबाह्वहयं
तद्धनुररुःषु ३ । २ । २१ ॥**

एषु कृजष्टः अहेत्वादावपि । दिवाकरः । विभाकरः । निशाकरः ।
कस्कादित्वात्सः । भास्करः । बहुकरः । बहुशब्दस्य वैपुल्यार्थं
संख्यापेक्षया पृथग्रहणम् । लिपि-लिविशब्दौ पर्यायी । संख्या-
या एककरः । द्विकरः । कस्कादित्वादहस्करः । नित्यं समासेऽनुत्त-
रपदस्यस्य इति पत्वम् । धनुष्करः । अरुष्करः ॥

कियत्तद्बहुषु कृभोऽज्विधानम् ॐ ॥

इति वार्तिकम् । किमरा । यत्करा । तत्करा । हेत्वादी ढ वाधि-
त्वा परत्वादच् । पुयोगे ङीप् । किंक्री ॥

कर्मणि भृतौ ३ । २ । २२ ॥

कर्मशब्द उपपदे करोतेष्टः भृतौ । कर्मकरो भृतकः । कर्म-
कारोऽन्यः ॥

न शब्दश्लोककलहगाथावैरचाटुसूत्रमन्त्रपदेषु ३ । २ । २३ ॥

एषु कृजष्टो न । हेत्वादिषु प्राप्तः प्रतिपिध्यते । शब्दकार
इत्यादि ॥

स्तम्बशकृतोरिन् ३ । २ । २४ ॥

ब्रीहिवत्सयोरिति वक्तव्यम् ❀ ॥

स्तम्बकरिर्व्रीहिः । शकृत्करिर्वत्सः । ब्रीहिवत्सयोः किम् ।
स्तम्बकारः । शकृत्कारः ॥

हरतेर्दृतिनाथयोः पशौ ३ । २ । २५ ॥

दृतिनाथयोरुपपदयोर्हञ् इन् पशौ कर्तरि । दृतिं हरतीति दृति-
हरिः । नाथं नासारज्जुं हरतीति नाथहरिः । पशौ किम् । दृति-
हारः । नाथहारः ॥

फलेग्रहिरात्मम्भरिश्च ३ । २ । २६ ॥

फलानि गृह्णाति फलेग्रहिः । उपपदस्य एदन्तत्वं ग्रहेरिन्प्रत्य-
पश्च निपात्यते । आत्मानं विभर्तीति आत्मम्भरिः । आत्मनो मुमा-
गमः । भृज इन् । चात्कुक्षिमरिः । चान्द्रास्तु आत्मोदरकुक्षिष्विति
पेटुः । उयोःस्त्रावरम्ममुदरंभरयश्चक्रोराः इति मुरारिः ॥

एजेः खश् ३ । २ । २८ ॥

ण्यन्तादेजेः खश् ॥

अरुर्द्विपदजन्तस्य मुम् ६ । ३ । ६७ ॥

अरुपो द्विपदः अजन्तस्य च मुमागमः खिदन्त उत्तरपदे न
त्वव्ययस्य । शित्वाच्छवादिः । जनमेजयतीति जनमेजयः ॥

वातशुनीतिलशर्पेष्वजघेट्टुदजद्वातिभ्यः खश् उप-
संख्यानम् ❀ ॥

वातमजा मृगाः ॥

खित्यनव्ययस्य ६ । ३ । ६६ ॥

खिदन्ते परे पूर्वपदस्य ह्रस्वः । ततो मुम् । शुनिंधयः । तिलतुदं ।
शर्धजहा मापाः । शर्धोऽपानशब्दस्तं जहातीति विग्रहः । जहातिर-
न्तर्भावितण्यर्थः ॥

नासिकास्तनयोध्माधेदोः ३ । २ । २९ ॥

अत्र वार्तिकम् ॥

स्तने धेदो नासिकायां थमश्चेति वाच्यम् ❀ ॥

स्तनं धयतीति स्तनंधयः । धेदृष्टित्वात्स्तनंधयी । नासिकंधमः ।
नासिकंधयः ॥

नाडीमुष्ट्योश्च ३ । २ । ३० ॥

एतयोरुपपदयोः कर्मणोध्माधेदोः खश् । यथासंख्यं नेष्यते ।
नाडिंधमः नाडिंधयः । मुष्टिंधमः मुष्टिंधयः ॥

घटीखारीखरीपूपसंख्यानम् ❀ ॥

घटींधमः घटींधय इत्यादि । खारी परिमाणविशेषः । खरी
गर्दभी ॥

उदिकूले रुजिवहोः ३ । २ । ३१ ॥

उत्पूर्वाभ्यां रुजिवहिभ्यां कूले कर्मण्युपपदे खश् । कूलमुद्रज-
तीति कूलमुद्रजः । कूलमुद्रहः ॥

वहाभ्रे लिहः ३ । २ । ३२ ॥

वहः स्कन्धस्तं लेढीति वहंलिहो गौः । अदादित्वाच्छपो लुक् ।
खशो डित्त्वान्न गुणः । अभ्रंलिहो वायुः ॥

परिमाणे पचः ३ । २ । ३३ ॥

प्रस्यंपचा स्थाली । खारीपचः कटाहः ॥

मितनखे च ३ । २ । ३४ ॥

मितंपचा ब्राह्मणी । नखंपचा यवागूः । पचिरत्र तापवाची ॥

विध्वरूपोस्तुदः ३ । २ । ३५ ॥

विधुंतुदः । मुमि कृते संयोगान्तस्य लोपः । अरुंतुदः ॥

असूर्यललाटयोर्दक्षितपोः ३ । २ । ३६ ॥

असूर्यमित्यसमर्थगमासः । दक्षिणा नञः संबंधात् । सूर्य न प-
श्यन्तीत्यसूर्यपश्या राजदाराः । ललाटंतपः सूर्यः ॥

उग्रंपश्येरंमदपाणिधमाश्च ३ । २ । ३७ ॥

एते निपात्यन्ते । उग्रमिति क्रियाभिधेयं तस्मिन्नुपपदे दृशेः
खश् । उग्रं पश्यतीत्युग्रंपश्यः । इरोदकं तेन माद्यति दीप्यतेऽग्ने-
न्धनत्वादिति इरम्मदो मेघज्योतिः । इह निपातनात् इयन्न । पाणयो
ध्मायंतेऽस्मिन्निति पाणिधमोऽध्वा । अन्धकाराद्यापृत इत्यर्थः ।
तत्र हि सर्पाद्यपनोदनाय पाणयः शन्यन्ते ॥

प्रियवशो वदः खच्च ३ । २ । ३८ ॥

प्रियंवदः । वशंवदः ॥

गमेः सुपि वाच्यः ॥

असंज्ञार्थमिदम् । मितंगमो हस्ती ॥

विहायसो विह इति वाच्यम् । खच्च डिद्धा वाच्यः ॥

विहंगमः विहंगः । भुजंगमः भुजंगः ॥

द्विपत्परयोस्तापेः ३ । २ । ३९ ॥

खच्च ॥

खचि ह्रस्वः ६ । ४ । ९४ ॥

खचूपरे णी उपधाया ह्रस्वः । द्विपन्तं परं वा तापयतीति द्विप-
तपः । परंतपः । घटघटीग्रहणाद्विद्वविशिष्टपरिभाषाऽनित्या । तेनेह
न । द्विपती तापयतीति द्विपतीतापः ॥

इति ८७ अंशाः ।

वाचि यमो व्रते ३ । २ । ४० ॥

वाक्शब्द उपपदे यमेः खच्च व्रते गम्ये ॥

वाचंयमपुरंदरौ च ६ । ३ । ६९ ॥

वाक्पुरोरमन्तत्वं निपात्यते । वाचंयमो मौनव्रती । व्रते किम् ।
अशक्त्यादिना वाचं यच्छतीति वाग्यामः ॥

पूःसर्वयोर्दारिसहोः ३ । २ । ४१ ॥

पुरं दारयतीति पुरंदरः । सर्वसहः । सादिग्रहणमसंज्ञार्थम् । भगे
च दारेः इति काशिका । बाहुलकेन लब्धमिदमित्याहुः । भगं
दारयतीति भगंदरः ॥

सर्वकूलाभ्रकरीपेषु कपः ३ । २ । ४२ ॥

सर्वकपः खलः । कूलंकपा नदी । अभ्रंकयो वायुः । करीपंकपा
वात्या ॥

मेघर्तिभयेषु कृभः ३ । २ । ४३ ॥

मेघंकरः । ऋतंकरः । भयंकरः । भयशब्देन तदन्तविधिः ।
अभयंकरः ।

क्षेमप्रियमद्रेऽण् च ३ । २ । ४४ ॥

एषु कृजोऽण् चात् खच् । क्षेमंकरः क्षेमकारः । प्रियंकरः प्रिय-
कारः । मद्रंकरः मद्रकारः । वेति वाच्येऽणग्रहणं हेत्वादि पुटो माभू-
दिति । कथं तर्हि, अल्पाभ्यां क्षेमकरा इति । कर्मणः शेषत्व-
विवक्षायां पचाद्यच् ॥

आशिते भुवः करणभावयोः ३ । २ । ४५ ॥

आशितशब्द उपपदे भवतेः खच् । आशितो भवत्यनेनाशितं-
भव ओटनः । आशितस्य भवनमाशितंभवः ॥

संज्ञायां भृवृजिधारिसहितपिदमः ३ । २ । ४६ ॥

विश्वं विमर्तीति विश्वंभरः विश्वंभरा । रथंतरं साम । इह रथेन
तरतीति व्युत्पत्तिमात्रं न त्ववयवार्थानुगमः । पतिंवरा कन्या ।
शत्रुंजयो हस्ती । युगंधरः पर्वतः । शत्रुंतपः । शत्रुंसहः । अरिंदमः ।
दमिः शमनायां तेन सकर्मक इत्युक्तम् । मतांतरे तु अन्तर्भा-
वितण्यर्थोऽत्र दमिः ॥

गमश्च ३ । २ । ४७ ॥

सुतंगमः ॥

अन्तात्यन्ताध्वदूरपारसर्वानन्तेषु डः ३ । २ । ४८ ॥

संज्ञायामिति निवृत्तम् । एषु गमेडः । डित्वसामर्थ्यादिभ-
स्यापि देर्लोपः । अन्तं गच्छतीत्यन्तग इत्यादि ॥

सर्वत्र पन्नयोरुपसंख्यानम् ❀ ॥

सर्वत्रगः । पन्नं पतितं गच्छतीति पन्नगः । पन्नमिति पद्यतेः
क्तान्तं क्रियाविशेषणम् ॥

उरसो लोपश्च ❀ ॥

उरसा गच्छतीत्युरगः ॥

सुदुरोरधिकरणे ❀ ॥

सुखेन गच्छत्यत्र सुगः । दुर्गः ॥

अन्यत्रापि दृश्यत इति वक्तव्यम् ❀ ॥

ग्रामगः ॥

डे च विहायसो विहादेशो वक्तव्यः ❀ ॥

विहगः ॥

आशिपि हनः ३ । २ । ४९ ॥

शशुं वध्याच्छत्रुहः । आशिपि किम् । शत्रुघातः ॥

दारावाहनोऽणन्तस्य च टः संज्ञायाम् ❀ ॥

दारुशब्द उपपदे आहपूर्वाद्धन्तेरण्टकारश्चान्तादेशो वक्तव्य
इत्यर्थः । दारवाघाटः ॥

चारौ वा ❀ ॥

चारवाघाटः चारवाघातः ॥

कर्मणि समि च ❀ ॥

कर्मण्युपपदे संप्रवाद्धन्तेरुक्तं वेत्यर्थः । वर्णान्संहंतीति वर्णसं-
घाटः । पदसंघाटः । वर्णसंघातः । पदसंघातः ॥

अपे क्लेशतमसोः ३ । २ । ५० ॥

अपपूर्वाद्धन्तेर्डः । अनाशीर्यमिदम् । क्लेशापहः पुत्रः ।
तमोपहः सूर्यः ॥

कुमारशीर्षयोर्णिनिः ३ । २ । ५१ ॥

कुमारघाती । शिरसः शीर्षभावो निपात्यते । शीर्षघाती ॥

लक्षणे जायापत्योष्टक् ३ । २ । ५२ ॥

हन्तेष्टलक्षणवति कर्त्तरि । जायाघ्नो ना । पतिघ्नी स्त्री ॥

अमनुष्यकर्तृके च ३ । २ । ५३ ॥

जायाघ्नस्तिलकालकः । पतिघ्नी पाणिरेखा । पित्तघ्नं घृतम् ।
अमनुष्य इति किम् । आखुघातः शूद्रः । अय कथं बलभद्रः
मलम्बघ्नः शत्रुघ्नः कृतघ्न इत्यादि मूलविभुजादित्वासिद्धम् । चोर-
घातो नगरघातो हस्तीति तु बाहुलकादणि ॥

शक्तौ हस्तिकवाटयोः ३ । २ । ५४ ॥

हन्तेष्टक् शक्तौ द्योत्यायाम् । मनुष्यकर्तृकार्थमिदम् । हस्तिघ्नी
ना । कवाटघ्नश्चोरः । कपाटेति पाठान्तरम् ॥

पाणिघताड्यौ शिल्पिनि ३ । २ । ५५ ॥

हन्तेष्टक् टिलोपो घत्वं च निपात्यते । पाणिताड्योरुपपदयोः ।
पाणिघः । ताडघः । शिल्पिनि किम् । पाणिघातः । ताडघातः ॥

राजघ उपसंख्यानम् ॐ ॥

राजानं हंति राजघः ॥

आढ्यसुभगस्थूलपलितनग्नान्धप्रियेषु च्यवर्थेष्वच्यौ
कृजः करणे ख्युन् ३ । २ । ५६ ॥

एषु च्यवर्थेष्वच्यन्तेषु कर्मसूपपदेषु कृजः ख्युन् । अनाढ्य-

माढ्यं कुर्वन्त्यनेन आढ्यंकरणम् । अच्चौ किम् । आढ्यीकुर्व-
न्त्यनेन । इह प्रतिषेधसामर्थ्याल्ल्युटपि नेति काशिका । भाष्यमते
तु ल्युट् स्यादेव । अच्चावित्युत्तरार्थम् ॥

कर्तरि भुवः खिण्णुच्चुक्रभौ ३ । २ । ५७ ॥

आढ्यादिषु च्व्यर्थेष्वच्व्यन्तेषु भवतेरेतौ स्तः । अनाढ्य आढ्यो
भवतीति आढ्यंभविष्णुः । आढ्यंभावुकः । स्पृशोऽनुदके किन् ।
घृतस्पृक् । कर्मणीति निवृत्तम् । मन्त्रेण स्पृशतीति मन्त्रस्पृक् ।
ऋत्विग्दधृक्स्त्रिदशुष्णिगञ्चुयुजिकृश्वां च । व्याख्यातम् । त्य-
दादिषु दृशोरनालोचने कश्च ॥

समानान्ययोश्चेति वाच्यम् ❀ ॥

सदृक् । सदृशः । अन्यादृक् । अन्यादृशः ॥

क्सोऽपि वाच्यः ❀ ॥

तादृक्षः । सदृक्षः । अन्यादृक्षः ॥

सत्सूद्विपद्बुद्बुद्बुजविदभिदच्छिदजिनीराजामुपस-
गोऽपि क्तिप् ३ । २ । ६१ ॥

एभ्यः क्तिप् उपसर्गे सत्यसति च सुप्युपपदे । द्युसत् । उप-
निपत् । अण्डसूः । प्रसूः । मित्रद्विद् । प्रद्विद् । मित्रधुक् । प्रधुक् ।
गोधुक् । प्रधुक् । अश्वधुक् । प्रधुक् । वेदवित् । निविदित्यादि ॥

अग्रग्रामाभ्यां नयतेर्णो वाच्यः ❀ ॥

अग्रणीः । ग्रामणीः ॥

भजो ण्विः ३ । २ । ६२ ॥

सुप्युपसर्गे चोपपदे भजोर्ण्विः । अंशमाकू । प्रमाकू ॥

अदोऽनन्ने ३ । २ । ६८ ॥

विद् । आममत्ति आमात् । सस्यात् । अनन्ने किम् । अन्नादः ॥

ऋव्ये च ३ । २ । ६९ ॥

अदेर्विद् । पूर्वेण सिद्धे वचनमणवाधनार्थम् । ऋव्यात् आममा-
सभक्षकः । कथं तर्हि, ऋव्यादोऽक्षप आशरः इति । पक्षमासशब्द
उपपदेऽण् । उपपदस्य ऋव्यादेशः पृषोदरादित्वात् ॥

दुहः कव्यश्च ३ । २ । ७० ॥

कामदुघा ॥

अन्येभ्योऽपि दृश्यन्ते ३ । २ । ७५ ॥

उन्दसीति निवृत्तम् । मनिन्कनिव्वनिव्विच् एते प्रत्यया धातोः ॥

नेङ्गुशि कृति ७ । २ । ८ ॥

वशादेः कृत इण् । श्च सुशर्मा । प्रातारित्वा ॥

विद्वनोरनुनासिकस्यात् ६ । ४ । ४१ ॥

विजायत इति विजावा । ओण् अवावा । विच् । रोद्, रेद्,
सुगण् ॥

किप् च ३ । २ । ७६ ॥

अयमपि दृश्यते । सत्सद्विप इति त्वस्यैव प्रपञ्चः । उखास्तत् ।
पर्णध्वत् । बाहभ्रद् ॥

इति ८८ अंशाः ।

अन्तः ८ । ४ । २० ॥

पदान्तस्यानितेर्नस्य णत्वं स्यादुपसर्गस्थाक्षिमित्तात्परश्चेत् ।
हे प्राण् । शास इत् इतीत्वम् । मित्राणि शास्ति मित्रशीः ॥

आशासः कौ उपधाया इत्त्वं वाच्यम् ❀ ॥

आशीः । इत्त्वोत्त्वे । गीः । पूः ॥

इस्मन्त्रन्किपु च ६ । ४ । ९७ ॥

एषु उदेर्देस्वः । तनुच्छत् । अनुनासिकस्य कि इति दीर्घः ।
मोनो धातोः । प्रतान् । प्रशान् । च्छ्रोः इत्यृट् । अक्षष्टूः । ज्वर-
त्वर इत्यृट् । जूः । जुरो । जुरः । वृः । मूः । ऊट् वृद्धिः । जना-

नवतीति जनौ । जनावी । जनावः । मूः । मुवी । मुवः । सुमूः ।
सुम्बौ । सुम्बः । राहोपः । मृच्छा । मृः । मुरौ । मुरः । धुर्वा धूः ॥

गमः घौ ६ । ४ । ४० ॥

अनुनासिकलोपः । अङ्गत् ॥

गमादीनामिति वक्तव्यम् ❀ ॥

परीतत् । संयत् । सुनत् ॥

ऊङ् च गमादीनामिति वक्तव्यं लोपश्च ❀ ॥

अग्रेगूः । अग्रेभूः ॥

स्थः क च ३ । २ । ७७ ॥

चात्किप् । संस्थः । संस्थाः । शमिधातोः इत्यचं बाधितुं सूत्रम् ।
सुप्यजातौ णिनिस्ताच्छील्ये । उष्णभोजी । शीतभोजी । अजातौ
किम् । ब्राह्मणानामन्त्रयिता । ताच्छील्ये किम् । उष्णं भुङ्के
कदाचित् । इह वृत्तिकारेणोपसर्गभिन्न एव सुपि णिनिरिति व्याख्याय
उत्प्रतिभ्यामाङि सत्तेरुपसंख्यानमिति पठितम् । हरदत्तमाधवादि-
भिश्च तदेवानुसृतम् । एतच्च भाष्यविरोधादुपेक्ष्यम् । प्रसिद्धश्चो
पसर्गेऽपि णिनिः । स वभूवोपजीविनाम् । अनुयायिवर्गः । पतत्यधो
धाम विस्तारि । न वञ्चनीयाः प्रभवोऽनुजीविभिः इत्यादौ ॥

साधुकारिण्युपसंख्यानम् ❀ ॥

ब्रह्मणि वदः ❀ ॥

अताच्छील्यार्थं वार्तिकद्वयम् । साधुदायी । ब्रह्मवादी । कर्त-
र्युपमाने । उपपदार्थः कर्ता प्रत्ययार्थस्य कर्तृरुपमानम् । उप्
इव क्रोशति उप्क्रोशी । ध्वाङ्गरावी । अताच्छील्यार्थं जात्यर्थं
च सूत्रम् । कर्तरि किम् । अपूपानिव मक्षयति मापान् । उपमाने
किम् । उप्ः क्रोशति । व्रते । स्पण्डिलशायी । बहुलमाभीक्ष्ण्ये ।
क्षीरपायिण उशीनराः ॥

मनः ३ । २ । ८२ ॥

सुपि मन्यतेर्णिनिः । दर्शनीयमानी ॥

आत्ममाने खश्च ३ । २ । ८३ ॥

स्वकर्मके मनने वर्तमानान्मन्यतेः सुपि खश्च चाणिनिः । पण्डित-
तमात्मानं मन्यते पण्डितमन्यः । पण्डितमानी । खित्यनव्ययस्य ।
कालिमन्या । अनव्ययस्य किम् । दिवामन्या ॥

इच एकाचोऽम्प्रत्ययवञ्च ६ । ३ । ६८ ॥

इजन्तादेकाचोऽस्य च स्वाद्यम्बत्वदन्ते परे । औतोम्शसोः ।
गांमन्यः । वाम्शसोः । त्रियंमन्यः । र्छीमन्यः । नृ । नरंमन्यः ।
भुवंमन्यः । श्रियमात्मानं मन्यते श्रिमन्यं कुलम् । भाष्यका-
खचनाच्छ्रीशब्दस्य ह्रस्वो मुममोरभावश्च ॥

भूते ३ । २ । ८४ ॥

अधिकारोऽयम् । वर्तमाने लट् इति यावत् ॥

करणे यजः ३ । २ । ८५ ॥

करण उपपदे भृतार्याद्यर्जेर्णिनिः कर्त्तरि । सोमेनेष्टवान्सोमयाजी ।
अग्निष्टोमयाजी ॥

कर्मणि हनः ३ । २ । ८६ ॥

पितृव्यघाती । कर्मणीत्येतत् सहे च इति यावदधिक्रियते ॥

ब्रह्मभूणवृत्रेषु किप् ३ । २ । ८७ ॥

एषु कर्मसूपपदेषु हन्तेर्भूते किप् । ब्रह्महा । भूणहा । वृत्रहा । किप्
च इत्येव सिद्धे नियमार्थमिदम् । ब्रह्मादिष्वेव हन्तेरेव भूत एव
क्विवेवेति चतुर्विधोऽत्र नियम इति काशिका । ब्रह्मादिष्वेव क्विवे-
वेति द्विविधो नियम इति भाष्यम् ॥

सुकर्मपापमन्त्रपुण्येषु कृञः ३ । २ । ८९ ॥

सुकर्मादिषु च कृञः किप् । त्रिविधोऽत्र नियम इति काशिका ।
सुकृत् । कर्मकृत् । पापकृत् । मन्त्रकृत् । पुण्यकृत् । क्विवेवेति
नियमात्कर्म कृतवानित्यत्राण् । कृञ एवेति नियमान्मन्त्रमधीत-

यान्मन्त्राध्यायः अत्र न किप् । भूत एवेति नियमान्मन्त्रं करोति
करिष्यति वेति विवक्षायां न किप् । स्वादिष्वेवेति नियमाभावाद-
म्यास्मिन्नप्युपपदे किप् । शास्त्रकृत् । भाष्यकृत् ॥

सोमे सुभः ३ । २ । ९० ॥

सोमसुत । चतुर्विधोऽत्र नियम इति काशिका । एवमुत्तरसूत्रेऽपि ॥

अग्नौ चेः ३ । २ । ९१ ॥

आग्नौचित् ॥

कर्मण्यग्न्याख्यायाम् ३ । २ । ९२ ॥

कर्मण्युपपदे कर्मण्येव कारकेचिनोतेः किप् अग्न्याधारस्थलविशे-
पस्याख्यायाम् । श्येन इव चितः श्येनचित् ॥

कर्मणीनिर्विक्रियः ३ । २ । ९३ ॥

कर्मण्युपपदे विपूर्वात् क्रीणातेरिति ॥

कुत्सितग्रहणं कर्तव्यम् ❀ ॥

सोमविक्रयी । घृतविक्रयी ॥

दृशेः कनिष् ३ । २ । ९४ ॥

कर्मणि भूत इत्येव । पारं दृष्ट्वान् पारदृष्ट्वा ॥

राजनि युधि कृभः ३ । २ । ९५ ॥

कनिष् । युधिरन्तर्भावितण्यर्थः । राजानं योधितवान् राजयुध्वा ।
राजकृत्वा ॥

सहे च ३ । २ । ९६ ॥

कर्मणीति निवृत्तम् । सहयुध्वा । सहकृत्वा ॥

सप्तम्यां जनेर्दः ३ । २ । ९७ ॥

सरसिजम् । मन्दुरायां जातो मन्दुरजः । दद्यापोः इति ह्रस्वः ॥

पञ्चम्यामजातौ ३ । २ । ९८ ॥

जातिवाचिशब्दवर्जिते पञ्चम्यन्त उपपदे जनेर्दः । संस्कारजः ।
अदृष्टजः ॥

उपसर्गे च सैज्ञायाम् ३ । २ । ९९ ॥

प्रजा स्यात्संततौ जने ॥

अनौ कर्मणि ३ । २ । १०० ॥

अनुपूर्वाजनेः कर्मण्युपपदे डः । पुमासमनुरुध्य जाता पुमनुजा ॥

अन्येष्वपि दृश्यते ३ । २ । १०१ ॥

अन्येष्वप्युपपदेषु जनेर्डः । अजः । द्विजः । ब्राह्मणजः । अपि-
शब्दः सर्वोपाधिव्यभिचारार्थः । तेन धात्वन्तरादपि कारकान्तरे-
ष्वपि क्वचित् । परितः खाता परिखा । क्तक्तवत् निष्ठा । निष्ठा ।
स्नातं मया । स्तुतस्त्वया विष्णुः । विष्णुर्विश्व कृतवान् ॥

निष्ठायामप्यदर्थे ६ । ४ । ६० ॥

प्यदर्थो भावकर्मणी ततोऽन्यत्र निष्ठायाम् क्षियो दीर्घः ॥

क्षियो दीर्घात् ८ । २ । ४६ ॥

दीर्घात् क्षियो निष्ठातस्य नः । क्षीणवान् । भावकर्मणोस्त-
क्षितः कामो मया । श्रुक् किति । श्रितः । श्रितवान् । भृत-
भृतवान् । क्षुतः ॥

ऊर्णोर्णवद्भावो वाच्यः ❀ ॥

तेन एकाचत्वाच्चेद् । ऊर्णुतः । नुतः । नृतः ॥

रदाभ्यां निष्ठातो नः पूर्वस्य च दः ८ । २ । ४२ ॥

रेफदकाराभ्यां परस्य निष्ठातस्य नः निष्ठापेक्षया पूर्वस्य धा-
तोर्दकारस्य च । शृ ऋत इत् रपरः णत्वम् । शीर्णः । बाहिरग-
त्वेन वृद्धेरसिद्धत्वाच्चेद् । कृतस्यापत्यं कार्तिः । भिन्नः । छिन्नः ॥

संयोगादेरातो धातोर्यण्वतः ८ । २ । ४३ ॥

निष्ठातस्य नः । द्राणः । स्त्यानः । श्यानः ॥

त्वादिभ्यः ८ । २ । ४४ ॥

एवविंशतेर्लृजादिभ्यः प्राग्वत् । लूनः । ज्या । ग्रहिज्या । जीनः ।

दुग्धोर्दोर्धश्च । दु गतौ । दूनः । दुदु उपताप इत्यर्थं तु न गृह्यते ।
सानुबन्धकत्वात् । मृदुतया दुतया इति माघः । गूनः । पूजो
विनाशे । पूना यवाः । विनष्टा इत्यर्थः । पृतमन्यत् । सिनोतेर्ग्रा-
सकर्मकर्तृकस्य । सिनो ग्रासः । ग्रास इति किम् । सिता
पाशेन सूकरी । कर्मकर्तृक इति किम् । सितो ग्रासो देवदत्तेन ॥

ओदितश्च ८ । २ । ४५ ॥

भुजो भुजः । दुओश्च उच्छूनः । ओहाक् प्रहीणः । स्वादय
ओदितः इत्युक्तम् । सूनः सूनवान् । दूनः दूनवान् । ओदिन्मध्ये
डीङ् । पाठसामर्थ्याच्चेद् । उड्डीनः ॥

द्रवमूर्तिस्पर्शयोः श्यः ६ । १ । २४ ॥

द्रवस्य मूर्तौ काठिन्ये स्पर्शं चार्थे श्यैङ् । संप्रसारणं निष्ठायाम् ॥

श्योऽस्पर्शे ८ । २ । ४७ ॥

श्यैङो निष्ठातस्य नः स्यादस्पर्शेऽर्थे । हल इति दीर्घः । शीनं
घृतम् । अस्पर्शं किम् । शीतं जलम् । द्रवमूर्तिस्पर्शयोः किम् ।
संश्यानो वृश्चिकः । शीतात्संकुचित इत्यर्थः ॥

प्रतेश्च ६ । १ । २५ ॥

प्रतिपूर्वस्य श्यः संप्रसारणं निष्ठायाम् । प्रतिशीनः ॥

विभापाऽभ्यवपूर्वस्य ६ । १ । २६ ॥

श्यः संप्रसारणं वा । अभिश्यानं अभिशीनं घृतम् । अवश्यानोऽ
वशीनो वृश्चिकः । व्यवस्थितविभापेयम् । तेनेह न । समवश्यानः ॥
इति ८९ अंशाः ।

अञ्चोऽनपादाने ८ । २ । ४८ ॥

अञ्चो निष्ठातस्य नः स्यान्नत्वपादाने ॥

यस्य विभापा ७ । २ । १५ ॥

यस्य कचिद्विभापयेद्विहितस्ततो निष्ठाया इण् । उदितो वा

इति क्त्वायां वेदत्वादिह नेद् । समक्तः । अनपादाने किम् । उद-
क्तमुदर्कं कृपात् । नत्वस्यासिद्धत्वात् ब्रश्च इति पत्वे प्राप्ते ॥

निष्ठादेशः पत्वस्वरप्रत्ययेङ्घ्रिषु सिद्धो वाच्यः ❀ ॥
वृक्कणः । वृक्कणवान् ॥

परिस्कन्दः प्राच्यभरतेषु ८ । ३ । ७५ ॥

पूर्वेण मूर्धन्ये प्राप्ते तदभावो निपात्यते । परिस्कन्दः । प्राच्येति
किम् । परिष्कन्दः परिस्कन्दः । परैश्च इति विकल्पः । स्तम्भेः
इति पत्वे प्राप्ते ॥

प्रतिस्तब्धजिस्तब्धौ च ८ । ३ । ११४ ॥

अत्र पत्वं न ॥

दिवोऽविजिगीषायाम् ८ । २ । ४९ ॥

दिवो निष्ठातस्य नः अविजिगीषायाम् । दूनः । विजिगीषायां
तु दूतम् ॥

निर्वाणोऽवाते ८ । २ । ५० ॥

अवात इति च्छेदः । निःपूर्वोद्वातेर्निष्ठातस्य नत्वं वातश्चेत्कर्ता न ।
निर्वाणोऽग्निर्मुनिर्वा । वाते तु निर्वातो वातः ॥

शुपः कः ८ । २ । ५१ ॥

निष्ठातस्य । शुष्कः ॥

पचो वः ८ । २ । ५२ ॥

पक्कः ॥

क्षायो मः ८ । २ । ५३ ॥

क्षामः ॥

स्त्यः प्रपूर्वस्य ६ । १ । २३ ॥

प्रात्स्त्यः । संप्रसारणं निष्ठायाम् ॥

प्रस्त्योऽन्यतरस्याम् ८ । २ । ५४ ॥

निष्ठातस्य मो वा । प्रस्तीमः । प्रस्तीतः । प्रात् । किम् स्त्यानः ॥

अनुपसर्गात्फुल्लक्षीवकृशोल्लाघाः ८ । २ । ५५ ॥

विफला फुल्लः । निष्ठातस्य लत्वं निपात्यते । क्तवत्वेकदेश-
स्यापीदं निपातनमिष्यते । फुल्लवान् । क्षीवादिषु तु क्तप्रत्यय-
स्यैव तलोपः । तस्यासिद्धत्वात्प्राप्तस्येदोऽभावश्च निपात्यते । क्षीवो
मत्तः । कृशस्तनुः । उल्लाघो नीरोगः । अनुपसर्गात् किम् ॥

आदितश्च ७ । २ । १६ ॥

आकारेतो निष्ठाया इण्ण ॥

ति च ७ । ४ । ८९ ॥

चरफलोत्त उत् तादौ किति । प्रफुल्लतः । प्रक्षीवितः । प्रकृ-
शितः । प्रोल्लाघितः । कथं तर्हि, लोघ्रदुर्म सानुमतः प्रफुल्लम् इति ।
फुल्ल विकसने । पचाद्यच् । सूत्रं तु फुल्लादिनिवृत्त्यर्थम् ॥

उत्फुल्लसंफुल्लयोरुपसंख्यानम् ॥

नुदविदोन्दन्नाग्राहीभ्योऽन्यतरस्याम् ८ । २ । ५६ ॥

एभ्यो निष्ठातस्य नो वा । नुन्नः नुत्तः । विद विचारणे ।
रौधादिक एव गृह्यते उन्दिना परेण साहचर्यात् । विन्नः वित्तः ।
वेत्तेस्तु विदितः । विद्यतेर्विन्नः । उन्दी ॥

श्रीदितो निष्ठायाम् ७ । २ । १४ ॥

श्वयतेरीदितश्च निष्ठाया इण्ण । उन्नः उत्तः । घ्राणः ज्ञातः ।
घ्राणः घ्रातः । हीणः हीतः ॥

न ध्याख्यापृमूर्च्छिमदाम् ८ । २ । ५७ ॥

एभ्यो निष्ठातस्य नत्वं न । ध्यातः । ख्यातः । पूतः । राहोपः ।
मूर्तः । मत्तः ॥

वित्तो भोगप्रत्यययोः ८ । २ । ५८ ॥

विन्दतेर्निष्ठान्तस्य निपातोऽयं भोग्ये प्रतीते चार्थे । वित्तं ध-
नम् । वित्तः पुरुषः । अनयोः किम् । विन्नः । विभाषा गमहन
इति कसौ वेदत्वादिह नेद् ॥

भित्तं शकलम् ८ । २ । ५९ ॥

भिन्नमन्यत् ॥

ऋणमाधमर्ण्ये ८ । २ । ६० ॥

ऋधातोः क्तः तकारस्य नत्व निपात्यते आधमर्ण्यव्यवहारे ।

ऋतमन्यत् ॥

स्फायः स्फी निष्ठायाम् ६ । १ । २२ ॥

स्फीतः ॥

इण् निष्ठायाम् ७ । २ । ४७ ॥

निरः कुपो निष्ठाया इद् । यस्य विभाषा इति निषेधे प्राप्ते पुनविधिः । निष्कुपितः ॥

वसतिक्षुधोरिद् ७ । २ । ५२ ॥

आभ्या क्तवानिष्ठयोर्नित्यमिद् । उपितः । क्षुधितः ॥

अश्वेः पूजायाम् ७ । २ । ५३ ॥

पूजार्थादश्वेः क्तवानिष्ठयोरिद् । अश्वितः । गतौ त्वक्तः ॥

लुभो विमोहने ७ । २ । ५४ ॥

लुभः क्तवानिष्ठयोर्नित्यमिद् नह गार्ध्वे । लुभितः । गार्ध्वे तु लुब्धः ॥

क्लिशः क्तवानिष्ठयोः ७ । २ । ५० ॥

इडा । क्लिश उपतापे । नित्य प्राप्ते । क्लिशु विवाधने । अस्य क्त्वाया विकल्पे सिद्धेश्च निष्ठाया निषेधे प्राप्ते विकल्पः । क्लिशितः क्लिष्टः ॥

पूढश्च ७ । २ । ५१ ॥

पूढः क्तवानिष्ठयोरिडा ॥

पूढः क्त्वा च १ । २ । २२ ॥

पूढः क्त्वा निष्ठा च सेद् क्लि । पवितः । पूतः । क्त्वाग्रहण-मुत्तरार्थम् । नोपधात् इत्यत्र हि क्त्वं वृत्तव्यते ॥

निष्ठा शीङ्स्विदिमिदिक्षिदिधृपः १ । २ । १९ ॥

एभ्यः सेणिनष्ठा किञ्च । शयितः शयितवान् । अनुबन्धनिर्देशो
यङ्लुङिबृत्त्यर्थः । शेषितः शेषितवान् ॥

आदिकर्मणि निष्ठा वक्तव्या ❀ ॥

आदिकर्मणि क्तः कर्तरि च ३ । ४ । ७१ ॥

आदिकर्मणि यः क्तः स कर्तरि चाद्वाचकर्मणोः ॥

विभाषा भावादिकर्मणोः ७ । २ । १७ ॥

भाव आदिकर्मणि चादितो निष्ठाया इङ्गा । प्रस्वेदितश्चैत्रः ।
प्रस्वेदितं तेन । जिप्विदा इति भ्वादिप्रत्ययगृह्यते । ऋद्धिः साहच-
र्यात् । स्विद्यतेस्तु स्वादित इत्येव । जिमिदा-जिदिषदा दिवादी
भ्वादी च । प्रमेदितः प्रमेदितवान् । प्रस्वेदितः प्रस्वेदितवान् ।
प्रधर्पितः प्रधर्पितवान् । धर्पितं तेन । सेट् किम् । प्रस्विन्नः ।
प्रस्विन्नं तेनेत्यादि ॥

मृपस्तितिक्षायाम् १ । २ । २० ॥

सेणिनष्ठा किञ्च । मर्पितः मर्पितवान् । क्षमायां किम् । अपमृ-
पितं वाक्यम् । अविस्पष्टमित्यर्थः ॥

उदुपधाद्भावादिकर्मणोरन्यतरस्याम् १ । २ । २१ ॥

उदुपधात्परा भावादिकर्मणोः सेणिनष्ठा वा किञ्च । द्युतितं द्योति-
तम् । मुदितं मोदितं साधुना । प्रद्युतितः प्रद्योतितः । प्रमुदितः
प्रमोदितः साधुः । उदुपधात् किम् । विदितम् । भावेत्यादि किम् ।
रुचितं कार्पापणम् । सेट् किम् । कुष्टम् । शक्विकरणेभ्य एवेभ्यते
नेह । गुह्यतेर्गुहितम् ॥

निष्ठायां सेटि ६ । ४ । ५२ ॥

णेलोपः । भावितः भावितवान् । श्वादितः इति नेट् संप्रसारण-
म् । शूनः । दीप्तः । गुह् गूढः । वनु वतः । वनु ततः । पतेः सनि
वेङ्गत्वादिङभावे प्राप्ते द्वितीया श्रित इति सूत्रे निष्ठातनादि ।

पतितः । सेऽसिचि इति वेङ्कत्वात्सिद्धे कृन्तत्यादीनामीदित्वेनानि-
त्यत्वज्ञापनाद्वा । तेन धावितमिभराजधिया इत्यादि । यस्य विभाषा
इत्यत्रैकाच इत्येव । दारिद्रितः ॥

ध्रुब्धस्वान्तध्वान्तलग्नम्लिष्टविरिब्धफाण्टवाढानि म-
न्थमनस्तमःसक्ताविस्पष्टस्वरांनायासभृशेषु ७ । २ । १८ ॥

ध्रुब्धादीन्यष्टावनिष्कानि निपात्यन्ते समुदायेन मन्थादिषु वा-
च्येषु । द्रवद्रव्यसंपृक्ताः सक्तवो मन्थः मन्थनदण्डश्च । ध्रुब्धो
मन्थश्चेत् । स्वान्तं मनः । ध्वान्तं तमः । लग्नं सक्तम् । निष्ठानत्व-
मपि निपातनात् । म्लिष्टमविस्पष्टम् । विरिब्धः स्वरः । म्लेच्छ रेभृ
अनयोरुपधाया इत्वमपि निपात्यते । फाण्टमनायाससाध्यः कषा-
यविशेषः । माधवस्तु नवनीतभावात्प्रागवस्थापन्नं द्रव्यं फाण्टमिति
वेदभाष्य आह । वाढं भृशम् । अन्यत्र तु ध्रुभितम् । ध्रुब्धो
राजेति त्वागमशास्त्रस्यानित्यत्वात् । स्वनितम् । ध्वनितम् । लघि-
तम् । म्लेच्छितम् । विरेभितम् । फणितम् । वाहितम् ॥

धृपिशसी वैयात्ये ७ । २ । १९ ॥

एतौ निष्ठायामविनय एवानिदौ । धृष्टः । विशस्तः । अन्यत्र
धर्षितः । विशसितः । भावादिकर्मणोस्तु वैयात्ये धृपिर्नास्ति । अत
एव नियमार्थमिदं सूत्रमिति वृत्तिः । धृपेरादित्वे फलं चिन्त्य-
मिति हरदत्तः । माधवस्तु भावादिकर्मणोरैवात्ये विकल्पमाह ।
धृष्टं धर्षितम् । प्रधृष्टः प्रधर्षितः ॥

दृढस्थूलबलयोः ७ । २ । २० ॥

स्थूले बलवति च निपात्यते । दृढ-दृहि वृद्धौ । क्तस्येडभावः
तस्य ढत्वं हस्य लोपः इदितो नलोपः । दृहितः । दृंहितोऽन्यः ॥

प्रभौ परिवृढः ७ । २ । २१ ॥

वृह-वृहि वृद्धौ । निपातनं प्राग्वत् । परिबृहितः । परिवृंहितोऽन्यः ॥

कृच्छ्रगहनयोः कपः ७ । २ । २२ ॥

कषो निष्ठाया इण्ण एतयोरर्थयोः । कष्टं दुःखं तत्कारणं च ।
स्या-कष्टं कृच्छ्रमाभीलम् । कष्टो मोहः । कष्टं शास्त्रम् । दुरवगा-
हमित्यर्थः । कषितमन्यत् ॥

घुपिरविशब्दने ७ । २ । २३ ॥

घुपिर्निष्ठायामनिट् । घुष्टा रज्जुः । अविशब्दने किम् । घुपितं
वाक्यम् । शब्देन प्रकटीकृताभिप्रायमित्यर्थः ॥

अर्देः संनिविभ्यः ७ । २ । २४ ॥

एतत्पूर्वाददेर्निष्ठाया इण्ण । समर्णः । न्यर्णः । व्यर्णः । अर्दि-
तोऽन्यः ॥

अभेश्चाविदूर्ये ७ । २ । २५ ॥

अभ्यर्णम् । नातिदूरमासन्नं वा । अभ्यर्दितमन्यत् ॥

णेरध्ययने वृत्तम् ७ । २ । २६ ॥

प्यन्ताद्धृतेः क्तस्येडभावो णिलुक्चाधीयमानेऽर्थे । वृत्तं छन्द-
ःछात्रेण संपादितम् । अधीतमिति यावत् । अन्यत्र तु वर्तिता रज्जुः ॥

शृतं पाके ६ । १ । २७ ॥

श्रातिश्रपयत्योः क्ते शृभावो निपात्यते क्षीरहविषोः पाके । शृ-
तं क्षीरम् । स्वयमेव विस्त्रिंशं पक्कं वेत्यर्थः । क्षीरहविभ्यामन्यत् ।
श्राणं श्रपितम् ॥

वा दान्तशान्तपूर्णदस्तरूपष्टच्छत्रज्ञप्ताः ७ । २ । २७ ॥

एते णिचि निष्ठान्ता वा निपात्यन्ते । पक्षे, दमितः । शमितः ।
पूरितः । दासितः । स्पाशितः । छादितः । ज्ञापितः ॥

इति ९० अंशाः । इति तृतीयाध्यायस्य प्रथमः पादः ।

रुप्यमत्वरसंधुपास्वनाम् ७ । २ । २८ ॥

एभ्यो निष्ठाया इड्वा । रुपितः रुष्टः । आन्तः अमितः । तूर्णः
त्वरितः । अस्यादित्त्वे फलं मंदम् । संधुष्टः संधुषितः । आस्वान्तः
आस्वनितः ॥

हृपेलोमसु ७।२।२९ ॥

हृपेर्निष्ठाया इद्वा लोमसु विषये । हृष्टं हृषितं लोम ॥

विस्मितप्रतिघातयोश्च ❀ ॥

हृष्टो हृषितो मेघः । विस्मितः प्रतिहतो वेत्यर्थः । अन्यत्र तु ।
हृषु अलीके । उदित्वान्निष्ठायां नेह । हृष तुष्टौ । इह ॥

अपचितश्च ७।२।३० ॥

चायतेर्निपातोऽयं वा । अपचितः अपचायितः ॥

प्यायः पी ६।१।२८ ॥

पी वा निष्ठायाम् । व्यवस्थितविभागेयम् । तेन स्वाङ्गे नित्यम् ।
पीनं मुखम् । अन्यत्र । प्यानः पीनः स्वेदः । सोपसर्गस्य न ।
प्रप्यानः । आहपूर्वस्यान्धूधसोः स्यादेव । आपीनोऽन्धुः । आपी
नमूधः ॥

ह्लादो निष्ठायाम् ६।४।९५ ॥

हस्यः । प्रहस्यः ॥

द्यतिस्यतिमास्थामिति किति ७।४।४० ॥

एषामिकारोऽन्तादेशः तादी किति । ईत्वदद्भावयोरपवादः ।
दितः । सितः । मा माह । मेहः मितः । स्थितः ॥

शाच्छोरन्यतरस्याम् ७।४।४१ ॥

शितः शातः । छितः छातः । व्यवस्थितविभापात्वात् व्रतवि-
षये श्यतेर्नित्यम् । संशितं व्रतम् । सम्यक्संपादितमित्यर्थः । सं-
शितो ब्राह्मणः । व्रतविषयक्यत्रवानित्यर्थः ॥

दधातेर्हिः ७।४।४२ ॥

तादी किति । अभिरितम् । निहितम् ॥

दो ददोः ७।४।४६ ॥

घुसंज्ञकस्य दा इत्यस्य दद् स्यात्तादी किति । चत्थम् । दत्तः ।
घोः किम् । दातः । तान्तो वायमादेशः । न चैवं विदत्तमित्यादां-

कषो निष्ठाया इण्ण एतयोरर्थयोः । कष्टं दुःखं तत्कारणं च ।
स्यान्कष्टं कृच्छ्रमाभीलम् । कष्टो मोहः । कष्टं शास्त्रम् । दुस्वगा-
हमित्यर्थः । कपितमन्यत् ॥

घुपिरविशब्दने ७ । २ । २३ ॥

घुपिर्निष्ठायामनिट् । घुष्टा रज्जुः । अविशब्दने किम् । घुपितं
वाक्यम् । शब्देन प्रकटीकृताभिप्रायमित्यर्थः ॥

अर्देः संनिविभ्यः ७ । २ । २४ ॥

एतत्पूर्वादर्देर्निष्ठाया इण्ण । समर्णः । न्यर्णः । व्यर्णः । अर्दि-
तोऽन्यः ॥

अभेश्चाविदूये ७ । २ । २५ ॥

अभ्यर्णम् । नातिदूरमासन्नं वा । अभ्यर्दितमन्यत् ॥

णेरध्ययने वृत्तम् ७ । २ । २६ ॥

प्यन्ताद्भूतेः क्तस्येडभावो णिलुक्चाधीयमानेऽर्थे । वृत्तं छन्द-
श्छात्रेण संपादितम् । अधीतमिति यावत् । अन्यत्र तु वर्तिता रज्जुः ॥

श्रुतं पाके ६ । १ । २७ ॥

श्रातिश्रयत्योः क्त श्रुभावो निपात्यते क्षीरहविषोः पाके । श्रु-
तं क्षीरम् । स्वयमेव विक्लिन्नं पक्वं वेत्यर्थः । क्षीरहविर्भ्यामन्यत् ।
श्राणं श्रपितम् ॥

वा दान्तशान्तपूर्णदस्तरूपष्टच्छत्रज्ञाताः ७ । २ । २७ ॥

एते णिचि निष्ठान्ता वा निपात्यन्ते । पक्षे, दमितः । शमितः ।
पूरितः । दासितः । स्पाशितः । छादितः । ज्ञापितः ॥

इति ९० अंशाः । इति तृतीयाध्यायस्य प्रथमः पादः ।

रूप्यमत्वरसंघुपास्वनाम् ७ । २ । २८ ॥

एभ्यो निष्ठाया इङ्गा । रूपितः रुपः । आन्तः अमितः । तूर्णः
त्वरितः । अस्यादित्त्वे फलं मंदम् । संघुष्टः संघुपितः । आस्वान्तः
आस्वनितः ॥

हृपेलोमसु ७।२।२९ ॥

हृपेर्निष्ठाया इद्वा लोमसु विषये । हृष्टं हृषितं लोम ॥

विस्मितप्रतिधातयोश्च ❀ ॥

हृष्टो हृषितो मैत्रः । विस्मितः प्रतिहतो वेत्यर्थः । अन्यत्र तु । हृषु अलीके । उदिच्चान्निष्ठाया नेट् । हृष तुष्टौ । इट् ॥

अपचितश्च ७।२।३० ॥

चायतेर्निपातोऽयं वा । अपचितः अपचायितः ॥

प्यायः पी ६।१।२८ ॥

पी वा निष्ठायाम् । व्यवस्थितविभाषेयम् । तेन स्वाङ्गे नित्यम् । पीनं मुखम् । अन्यत्र । प्यानः पीनः स्वेदः । सोपसर्गस्य न । प्रप्यानः । आङ्पूर्वस्यान्धूधसोः स्यादेव । आपीनोऽन्धुः । आपीनमुधः ॥

ह्लादो निष्ठायाम् ६।४।९५ ॥

ह्रस्वः । प्रहृन्नः ॥

द्यतिस्यतिमास्थामिति किति ७।४।९० ॥

एपाभिकारोऽन्तादेशः तादौ किति । ईत्वदद्भावयोरपवादः । दितः । सितः । मा माङ् । मेङ् मितः । स्थितः ॥

शाच्छोरन्यतरस्याम् ७।४।९१ ॥

शितः शातः । छितः छातः । व्यवस्थितविभाषात्वात् व्रतविषये श्यतेर्नित्यम् । सशितं व्रतम् । सम्यक्संपादितमित्यर्थः । संशितो ब्राह्मणः । अतविषयक्यन्नवानित्यर्थः ॥

दधातोर्हिः ७।४।९२ ॥

तादौ किति । अभिहितम् । निहितम् ॥

दो ददोः ७।४।९६ ॥

धुसंज्ञकस्य दा इत्यस्य दद् स्यात्तादौ किति । चर्त्यम् । दत्तः । धोः किम् । दातः । तान्तो वायमादेशः । न चैवं विदत्तामित्यादा-

वुपसर्गस्य दस्ति इति दीर्घापत्तिः । तकारादौ तद्धिधानात् दान्तो वा धान्तो वा । न च दान्तत्वे निष्ठानत्वं धान्तत्वे ह्यस्तथोः इति धत्वं शङ्क्यम् । संनिपातपरिभाषाविरोधात् ॥

अच उपसर्गात्तः ७ । ४ । ४७ ॥

अजन्तादुपसर्गात्परस्य दा इत्यस्य घोरचस्तः तादौ किति । चर्त्वम् । प्रत्तः । अवत्तः । अवदत्तं विदत्तं च प्रदत्तं चादिकर्मणि । सुदत्तमनुदत्तं च निदत्तमिति चेप्यते ॥ चशब्दाद्यथाप्राप्तम् ॥

दस्ति ६ । ३ । १२४ ॥

इगन्तोपसर्गस्य दीर्घः दादेशो यस्तकारस्तदादावुत्तरपदे । खरि च इति चर्त्वमाश्रयात्सिद्धम् । नीत्तम् । सूत्तम् । धुमास्था इतीत्त्वम् । धेद् । धीतम् । गीतम् । पीतम् । जनसन इत्यात्वम् । जातम् । सातम् । खातम् ॥

अदो जग्धिर्ल्यप्ति किति २ । ४ । ३६ ॥

ल्यपिति लुप्तसप्तमीकम् । अदो जग्धिः स्याल्ल्यपि तादौ किति च । इकार उच्चारणार्थः । ध्वत्वम् । शरो शरि । जग्धः । आदिकर्मणि क्तः कर्तरि च । प्रकृतः कटं सः । प्रकृतः । कटः तेन निष्ठायामण्यदर्थे इति दीर्घः । क्षियो दीर्घात् इति नत्वम् । प्रक्षीणः सः ॥

वा क्रोशदैन्ययोः ६ । ४ । ६१ ॥

क्षियो निष्ठायां दीर्घो वाऽऽक्रोशे दैन्ये च । क्षीणायुर्मप । क्षितायुर्वा । क्षीणोऽयं तपस्वी । क्षितो वा ॥

निनदीभ्यां स्नातेः कौशले ८ । ३ । ८९ ॥

आभ्यां स्नातेः सस्य पः कौशले गम्ये । निष्णातः शास्त्रेषु । नद्यां स्नातीति नदीष्णः । सुपि इति कः ॥

सूत्रं प्रतिष्णातम् ८ । ३ । ९० ॥

प्रतेः स्नातेः पत्वम् । प्रतिष्णातं सूत्रम् । शुद्धमित्यर्थः । अन्यत्र । प्रतिस्रातम् ॥

कपिष्ठलो गोत्रे ८ । ३ । ९१ ॥

कपिष्ठलो नाम यस्य कापिष्ठलिः पुत्रः । गोत्रे किम् । कपीनां स्थलं कपिस्थलम् ॥

विकुशमिपरिभ्यः स्थलम् ८ । ३ । ९६ ॥

एभ्यः स्थलस्य सस्य षः । विष्ठलम् । कुष्ठलम् । शमिष्ठलम् । परिष्ठलम् । गत्यर्थकर्मकश्चिपशीङ्स्थासवसजनरुहजीर्यतिभ्यश्च । गङ्गां गतः । गङ्गां प्राप्तः । म्लानः सः । लक्ष्मीमाश्छिष्टो हरिः । शेषमधिशयितः । वैकुण्ठमधिष्ठितः । शिवमुपासितः । हरिदिनमुपोषितः । राममनुजातः । गरुडमारूढः । विश्वमनुजीर्णः । पक्षे, प्राप्ता गङ्गा तेनेत्यादि ॥

क्तोऽधिकरणे च ध्रौव्यगतिप्रत्यवसानार्थेभ्यः ३ । ४ । ७६ ॥

एभ्योऽधिकरणे क्तः चायथाप्राप्तम् । ध्रौव्यं स्थैर्यम् । मुकुन्दस्यासितमिदमिदं यातं रमापतेः । भुक्तमेतदनन्तस्येत्यूचुर्गोप्यो दिदृक्षवः ॥ पक्ष आसितकर्मकत्वात्कर्तरि भावे च । आसितो मुकुन्दः । आसितं तेन । गत्यर्थेभ्यः कर्तरि कर्मणि च । रमापतिरिदं यातः । तेनेदं यातम् । भुजेः कर्मणि । अनन्तेनेदं भुक्तम् । कथं भुक्ता ब्राह्मणाः इति । भुक्तमास्ति एषामिति मत्वर्थीयोऽच् । वर्तमान इत्यधिकृत्य ॥

भीतः क्तः ३ । २ । १८७ ॥

विश्विदा-क्षित्रः । निहन्धी-इद्धः ॥

मतिबुद्धिपूजार्थेभ्यश्च ३ । २ । १८८ ॥

मतिरिद्धेच्छा बुद्धेः पृथगुपादानात् । राज्ञां मतः इष्टः । तिरिप्पमाण इत्यर्थः । बुद्धः । विदितः । पूजितः । अर्चितः । चकारोऽभुक्तममुष्यार्थः । शीलितो रक्षितः । क्षान्त आकृष्टो जुष्ट इत्यादि । नर्पुमके भावे क्तः कृत्वत्त्वविशिष्टे भावे कालसामान्ये क्तल्युट् ल्युट् इति । जल्पितम् । शयितम् । दसितम् । जल्यनम् । शयनम् । दशनम् ॥

सुयजोर्ङ्गनिप् ३ । २ । १०३ ॥

सुनोतेर्यजेश्च ङ्गनिप् भृते । सुत्वा । सुत्वानी । यज्वा । यज्वानी ॥

जीर्यतेरत्तृन् ३ । २ । १०४ ॥

भूत इत्येव । जरन् । जरन्तौ । जरन्तः । वासरूपन्यायेन नि-
ष्ठापि । जीर्णो जीर्णवान् ॥

छन्दसि लिट् ३ । २ । १०५ ॥

लिटः कानज्वा ३ । २ । १०६ ॥

कसुश्च ३ । २ । १०७ ॥

इह भूतसामान्ये छन्दसि लिट् । तस्य विधीयमानौ कसुकान-
चावपि छन्दसाविति त्रिसुनिमतम् । कवयस्तु बहुलं प्रयुज्यते । तं
तस्थिवांसं नगरोपकण्ठे श्रेयांसि सर्वाण्यधिजग्मुपस्ते । इत्यादि ॥

वस्वेकाजादिसाम् ७ । २ । ६७ ॥

कृतद्विर्वचनानामेकाचामादन्तानां घसेश्च यसोरिद् नान्येषाम् ।
एकाच् आरिवान् । आत-ददिवान् । जक्षिवान् । एपां किम् ।
बभूवान् ॥

भाषायां सदवसश्रुवः ३ । २ । १०८ ॥

सदादिभ्यो भूतसामान्ये भाषायां लिट्वा । तस्य च नित्यं
कसुः । निपेदुपीमासनबन्धधीरः । अध्वपुपस्ताममवज्जनस्य ।
शुश्रुवान् ॥

उपेयिवाननाश्वाननूचानश्च ३ । २ । १०९ ॥

एते निपात्यन्ते । उपपूर्वादिणो भाषायामपि भूतमात्रे लिट्वा ।
तस्य नित्यं कसुः । इद् । उपेयिवान् । उपेयुषः स्वामपि मूर्तिम-
य्याम् । उपेयुर्षा । उपेत्यविवाक्षितम् । ईयिवान् । सगीयिवान् ।
नञ्पूर्वादश्रानेः कसुरिडभावश्च । धृतजयधृतेरनाशुषः इति भारविः ।
अनुपूर्वाद्वेचः कर्तरि कानच् । वेदस्यानुवचनं कृतवाननूचानः ॥

विभाषा गमहनविदविशाम् ७ । २ । ६८ ॥

ऐभ्यो वसोरिद्धा । जग्मिवान् जगन्वान् । जग्मिवान् जघन्वान् ।
 विविदिवान् विविद्वान् । विविशिवान् विविश्वान् । विशिना साहच-
 र्याद्विन्दतेग्रहणम् । वेत्तेस्तु विविद्वान् । नेद्भुशि कृति इतीप्तिपेधः ।
 दृशेश्च । ददृशिवान् ददृश्वान् । लटः शतृशानचावप्रथमासमानाधि-
 करणे । पचन्तं चैत्रं पश्य । आने मुक् । पचमानं चैत्रं पश्य ।
 लङित्यनुवर्तमाने पुनर्लङ्ग्रहणमधिकविधानार्थम् । तेन प्रथमा सा-
 मानाधिकरण्येऽपि कचित् । सन्ब्राह्मणः ॥

माङ्याक्रोश इति वाच्यम् ॐ ॥

मा जीवन्त्यः परावज्ञा दुःखदग्धोऽपि जीवति । माङि लुङ् इति
 प्राप्ते एतद्वचनसामर्थ्याल्लट् ॥

संवोधने च ३ । २ । १२५ ॥

हे पचन् हे पचमान ॥

लक्षणहेत्वोः क्रियायाः ३ । २ । १२६ ॥

क्रियायाः परिचायके हेतौ चार्थे वर्तमानाद्धातोर्लटः शतृशा-
 नचौ स्तः । शयाना भुञ्जते यवनाः । अर्जयन्वसति । हरिं पश्य-
 न्मुच्यते । हेतुः फलं कारणं च । कृत्यचः । प्रपीयमाणः सोमः ॥

ईदासः ७ । २ । ८३ ॥

आप्तः परस्यानस्येत् । आदेः परस्य । आसीनः ॥

विदेः शतुर्वसुः ७ । १ । ३६ ॥

वेत्तेः परस्य शतुर्वसुरादेशो वा । विदन् विद्वान् विदुषी ॥

लटः सद्वा ३ । ३ । १४ ॥

व्यवस्थितविभाषेयम् । तेनाप्रथमासामानाधिकरण्ये प्रत्ययोत्तर-
 पदयोः संवोधने लक्षणहेत्वोश्च नित्यम् । करिष्यन्तं करिष्यमाणं
 पश्य । करिष्यतोऽपत्यं कारिष्यतः । करिष्यद्भक्तिः । हे करि-
 ष्यन् । अर्जयिष्यन्वसति । प्रथमासमानाधिकरण्येऽपि कचित् । करि-
 ष्यतीति करिष्यन् ॥

पूङ्यजोः शानन् ३ । २ । १२८ ॥

वर्त्तमाने । पवमानः । यजमानः ॥

ताच्छील्यवयोवचनशक्तिषु चानश् ३ । २ । १२९ ॥

एषु द्योत्येषु कर्तरि चानश् । भोगं भुञ्जानः । क्वचं विभ्राणः ।
वृत्तं निघ्नानः ॥

इङ्धार्योः शत्रुकृच्छ्रिणि ३ । २ । १३० ॥

आभ्यां शत्रु स्यादकृच्छ्रिणि कर्तरि । अधीयन् । धारयन् ।
मकृच्छ्रिणि किम् । कृच्छ्रेणाधीते धारयति ॥

द्विपोऽमित्रे ३ । २ । १३१ ॥

द्विपञ्छश्रुः ॥

सुभो यज्ञसंयोगे ३ । २ । १३२ ॥

सर्वे सुन्वन्तः । सर्वे यजमानाः सत्रिणः ॥

अर्हः प्रशंसायाम् ३ । २ । १३३ ॥

अर्हन् ॥

इति ९१ अंशाः ।

आक्तेस्तच्छीलतद्धर्मतत्साधुकारिषु । तन् । कर्ता वदम् ॥

अलंकृन्निराकृन्प्रजनोत्पचोत्पतोन्मदरुच्यपत्रपवृत्त-

वृधुसहचर इष्णुश्च ३ । २ । १३६ ॥

अलंकरिष्णुः । निराकरिष्णुः । प्रजनिष्णुः । उत्पचिष्णुः ।

उत्पातिष्णुः । उन्मदिष्णुः । रोचिष्णुः । अपत्रपिष्णुः । वर्तिष्णुः ।

वर्धिष्णुः । सहिष्णुः । चरिष्णुः ।

णेङ्छन्दसि ३ । २ । १३७ ॥

वीरुधः पारयिष्णवः ॥

भुवश्च ३ । २ । १३८ ॥

छन्दसीत्येव । भविष्णुः । कथं तर्हि, जगत्प्रमोरप्रभविष्णु वैष्णवम् । इति निरकुशाः कवयः । चकारोऽनुक्तसमुच्चयार्थं । भ्राजिष्णु रिति वृत्तिः । एवं क्षयिष्णुः । नैतद्भाष्ये दृष्टम् ॥

ग्लजिस्थश्च ग्स्तुः ३ । २ । १३९ ॥

छन्दसीति निवृत्तम् । गिदयं नह कित् । तेन स्थ ईत्वं न । ग्ला-
स्तुः । गित्त्वान्न गुणः । जिष्णुः । स्यास्तुः । चाद्भुवः । श्र्युकः किति
इत्यत्र गकारप्रक्षेपान्नेट् । भूष्णुः ॥

दंशेश्छन्दस्युपसंख्यानम् ॐ ॥

दङ्क्षणवः पशवः ॥

त्रसिगृधिधृपिक्षिपेः कृः ३ । २ । १४० ॥

नस्तुः । गृध्रः । धृष्णुः । क्षिप्रुः ॥

शमित्यष्टाभ्यो घिनुण् ३ । २ । १४१ ॥

उकार उच्चारणार्थ इति काशिका । अनुबन्ध इति भाष्यम् ।
तेन शमिनितरा शमिनीतरेत्यत्र उगितश्च इति ह्रस्वविकल्पः । न
चैव शमी शमिनावित्यादौ नुम्प्रसङ्गः । शल्ग्रहणमपकृष्य शल-
न्तानामेव तद्विधानात् । नोदात्तोपदेशस्य इति वृद्धिनिषेधः । शमी ।
तमी । दमी । श्रमी । त्रमी । भ्रमी । कृमी । प्रमादी । उत्पूर्वा-
न्मदेः अलकृवादिसूत्रेणेषुनुक्तो वासरूपविधिना घिनुणपि ।
उन्मादी । ताच्छील्लिकेषु वासरूपविधिर्नास्ति इति तु प्रायिकम् ॥

संपृचानुरुधाढ्यमाढ्यसपरिसृसंसृजपरिदेविसंज्वर-
परिक्षिपपरिरटपरिवदपरिदहपरिमुहदुपद्विपद्बुहदुहयुजा-
क्रीडविविचत्यजरजभजातिचरापचरामुपाभ्याहनश्च
३ । २ । १४२ ॥

घिनुण् । सपर्की । अनुरोधी । आयामी । आयासी । परिसारी ।
ससर्गी । परिदेवी । संज्वारी । परिक्षेपी । परिराटी । परिवादी । प-
रिदाही । परिमोही । दोषी । द्वेपी । द्रोही । दोही । योगी ।

आक्रीडी । विवेकी । त्यागी । रागी । भागी । अतिचारी । अप-
चारी । आमोषी । अभ्याघाती ॥

वौ कपलसकत्थस्रम्भः ३ । २ । १४३ ॥

विकापी । विलासी । विकत्थी । विस्रम्भी ॥

अपे च लपः ३ । २ । १४४ ॥

चाद्वौ । अपलापी । विलापी ॥

प्रेलपसृद्रुमथवदवसः ३ । २ । १४५ ॥

प्रलापी । प्रसारी । प्रद्रावी । प्रमाथी । प्रवादी । प्रवासी ॥

निन्दहिंसक्लिशखादविनाशपरिक्षिपपरिरटपरिवादिव्या-
भाषासूयो बुञ्ज ३ । २ । १४६ ॥

पञ्चम्यर्थे प्रथमा एभ्यो बुञ्ज । निन्दकः । हिंसक इत्यादि ।
ण्डुला सिद्धे बुञ्जवचनं ज्ञापकं तच्छीलादिषु वासरूपन्यायेन तृजा-
दयो नेति ॥

देविकुशोश्चोपसर्गे ३ । २ । १४७ ॥

आदेवकः । आक्रोशकः । उपसर्गे किम् । देवयिता । क्रोष्टा । च-
लनशब्दार्थादकर्मकाद्युच् चलनः । चोपनः । कम्पनः । शब्दनः ।
खणः । अकर्मकात् किम् । पठिता विद्याम् । अनुदात्तेश्च ह-
लादेः । वर्तनः । वर्धनः । अनुदात्तैः किम् । भविता । हलादेः
किम् । एधिता । अकर्मकात् किम् । वसिता वस्त्रम् ॥

जुचङ्क्रम्यदन्द्रम्यसृगृधिज्वलशुचलपपतपदः ३ ।
२ । १५० ॥

जु इति सौत्रो धातुर्गतौ वेगे च । जवनः । चद्रमणः । द-
न्द्रमणः । सरणः । पूर्वेण सिद्धे पदग्रहणं लपपतपद इत्युक्ता
बाधा मा भूदिति । तेन ताच्छीलिकेषु परस्परं वासरूपविशिनां-
स्तीति तेनालंकृत्यस्तु । क्रुधमण्डार्येभ्यः । क्रोधनः । रोषणः ।
मण्डनः । भूषणः ॥

सृघस्यदः वमरत्र ३ । २ । १६० ॥

सुमरः । घस्मरः । अन्नरः ॥

भञ्जभासमिदो घुरत्र ३ । २ । १६१ ॥

मङ्गुरः । भासुरः । मेदुरः ॥

विदिभिदिच्छिदेः कुरत्र ३ । २ । १६२ ॥

विदुरः । मिदुरम् । छिदुरम् ॥

इण्णशजिसर्तिभ्यः करप् ३ । २ । १६३ ॥

इत्वरः । इत्वरी । नश्वरः । जित्वरः । सृत्वरः ॥

गत्वरश्च ३ । २ । १६४ ॥

गमेरनुनासिकलोपोऽपि निपात्यते । गत्वरी ॥

जागुरूकः ३ । २ । १६५ ॥

जागर्तेरूकः । जागरूकः ॥

यजजपदशां यङः ३ । २ । १६६ ॥

एभ्यो यङन्तेभ्य ऊकः । दशामिति भाविना नलोपेन निर्देशः ।
यायजूकः । जज्ञजूकः । दन्दजूकः ॥

नमिकम्पिस्म्यजसकमर्हिसदीपो रः ३ । २ । १६७ ॥

नम्रः । कम्पः । स्मेरः । जसिर्नञ्पूर्वः क्रियासातत्ये वर्तते । ज-
जसं संततमित्यर्थः । कम्पः । हिंसः । दीपः । सनागसमिष्ट ङः ।
चिकीर्षुः । आशंसुः । मिश्रुः ॥

विन्दुरिच्छुः ३ । २ । १६९ ॥

वेत्तेर्नुमिपेक्षत्व च निपात्यते । वेत्ति तच्छीलो विन्दुः । इच्छते
इच्छुः ॥

क्याच्छन्दसि ३ । २ । १७० ॥

देवाञ्जिगाति सुम्रयुः ॥

आह्वगमहनजनः किकिनौ लिह च ३ । २ । १७१ ॥

आदन्ताददन्ताद्गमादिभ्यश्च किकिनौ स्तश्छन्दसि तौ च लिङ्गत् ।
 पपिः सोमम् । दीर्गाः । बभ्रिर्वज्रम् । जग्मिर्युवा । जग्मिर्वृत्रम-
 मित्रियम् । जज्ञिः । भाषायां धाङ्कृष्टगमिजनिनमिभ्यः । दीधिः ।
 चक्रिः । सस्रिः । जग्मिः । जज्ञिः । नेमिः ॥

सासहिवावहिचाचलिपापतीनामुपसंख्यानम् ❀ ॥

यङन्तेभ्यः सहेत्यादिभ्यः किकिनौ पतेर्नीगभावश्च निपात्यते ॥

स्वपितृपोर्नजिङ् ३ । २ । १७२ ॥

स्वमक् । वृष्णक् । वृष्णजौ । वृष्णजः । धृपेश्च इति वाच्य-
 मिति काशिकादौ । धृष्णक् ॥

श्रृवन्द्योरारुः ३ । २ । १७३ ॥

शरारुः । वन्दारुः ॥

भियः कुङ्कनौ ३ । २ । १७४ ॥

मीरुः । मीलुकः ॥

कुक्कन्नपि वाच्यः ❀ ॥

मीरुकः ॥

स्थेशभासपिसकसो वरत्र ३ । २ । १७५ ॥

स्थावरः । ईश्वरः । भास्वरः । पेस्वरः । कस्वरः ॥

यश्च यङः ३ । २ । १७६ ॥

यातेर्यङन्ताद्वरच् । अतो लोपः । नस्य अचः परस्मिन् इति
 स्थानिवद्भावे प्राप्ते न पदान्तेति तस्य यलोपं प्रति स्थानिवद्भावनि-
 पेधात् लोपो व्योः इति यलोपः । अलोपस्य स्थानिवत्त्वमाश्रि-
 त्यातो लोपे प्राप्ते वरे लुप्तं न स्थानिवत् । यायावरः ॥

इति ९२ अंशाः ।

आजभासधुर्विद्युतोर्जिपृजुग्रावस्तुवः क्तिप् ३ । २ ।
 १७७ ॥

विभ्राट् । भाः । भासौ । धूः । धुरो । विद्युत् । ऊर्कः । पूः ।
पुरौ । दशिग्रहणस्यापकर्षाज्ज्वतेर्दीर्घः । जूः । जुवौ । जुवः । ग्रावश-
ब्दस्य धातुना समासः सूत्रे निपात्यते । ततः क्तिप् । ग्रावस्तुत् ॥

अन्येभ्योऽपि दृश्यते ३ । २ । १७८ ॥

क्तिप् । छित् भिद् दशिग्रहणं विध्यन्तरोपसंग्रहार्थम् । कचिदीर्घः ।
क्चिदसंप्रसारणं कचिद्वे कचिद्स्वः । तथा च वार्तिकम् ॥

क्विच्चिप्रच्छयायतस्तुकटप्रजुश्रीणां दीर्घोऽसंप्र-
सारणं च ❀ ॥

क्विच्चितीत्यादिनोणादिसूत्रेण केषांचित्सिद्धे तच्छीलादौ वृत्ता
बाधा मा भूदिति वार्तिके ग्रहणम् । वक्तीति वाक् । पृच्छतीति प्राट् ।
प्राशौ । आयतं स्तौति आयतस्तुः । कटं प्रवते कटप्रूः । जुरुक्तः श्रय-
ति हरिं श्रीः । द्युतिगमिजुहोतीनां द्वे च । दशिग्रहणादभ्याससंज्ञा
दिद्युत् । जगत् । जुहोतेर्दीर्घश्च । जुहूः । ह मये । अस्य ह्रस्वश्च ।
दीर्यति ददृत् । ध्यायतेः संप्रसारणं च । धीः ॥

भुवः संज्ञान्तरयोः ३ । २ । १७९ ॥

मित्रभूर्नाम कश्चित् धनिकाधमर्णयोरन्तरे यास्तिष्ठति विश्वासार्थं
स प्रतिभूः ॥

विप्रसंभ्यो द्वसंज्ञायाम् ३ । २ । १८० ॥

एभ्यो भुवो दुः नतु संज्ञायाम् । विभुर्व्यापकः । प्रभुः स्वामी
संभुर्जनिता । संज्ञायां तु विभूर्नाम कश्चित् ॥

मितद्वादिभ्य उपसंख्यानम् ❀ ॥

मितं द्रवतीति मितद्वः । शतद्वः । शंभुः । अन्तर्भावितण्यर्थो-
ऽत्र भवतिः ॥

धः कर्मणि घृन् ३ । २ । १८१ ॥

धेटो धाजश्च कर्मण्यर्थे घृन् । धात्री जनन्यामलकीवसुमत्युप-
मातृषु ॥

दाम्नीशसयुयुजस्तुतुदसिसिचमिहपतदशनहः करणे
३ । २ । १८२ ॥

दाम्न्यादे. प्रन्करणेऽर्थे । दान्त्यनेन दात्रम् । नेत्रम् । तितुत्रयेति
नेद । शस्त्रम् । योत्रम् । योक्रम् । स्तोत्रम् । तोत्रम् । सेत्रम् । सेक्रम् ।
मेद्रम् । पत्रम् । दंष्ट्रा । नध्री ॥

हलसूकरयोः पुवः ३ । २ । १८३ ॥

पूङ्पूजोः करणे प्रन् । तच्चेत्करणं हलसूकरयोखयवः । हलस्य
सूकरस्य वा पोत्रम् । मुखमित्यर्थः ॥

अर्तिलूधूसूखनसहचर इत्रः ३ । २ । १८४ ॥

अरित्रम् । लवित्रम् । धवित्रम् । सवित्रम् । खनित्रम् । सहि-
त्रम् । चरित्रम् ॥

पुवः संज्ञायाम् ३ । २ । १८५ ॥

पवित्रम् । येनाज्यमुत्पूयते यच्चानामिकावेष्टनम् ॥

कर्तरि चर्पिदेवतयोः ३ । २ । १८६ ॥

पुव इत्रः ऋषौ करणे देवताया कर्तरि । ऋषिर्वेदमन्त्रः । तदु-
क्तमृषिणेति दर्शनात् । पूयतेऽग्नेनेति पवित्रम् । देवताया तु अग्निः
पवित्र समा पुनातु ॥

उणादयो बहुलम् ३ । ३ । १ ॥

एते वर्तमाने संज्ञाया च बहुल केचिदविहिता अप्यूह्याः ।
संज्ञासु धातुरूपाणि प्रत्ययाश्च ततः परे । कार्याद्विद्यादनूषन्धमेत-
च्छास्त्रमुणादिषु ॥

भूतेऽपि दृश्यन्ते ३ । ३ । २ ॥

भविष्यति गम्यादयः ३ । ३ । ३ ॥

दाशगोघ्नौ संप्रदाने ३ । ४ । ७३ ॥

एतौ संप्रदाने कारके निपात्येते । दाशन्ति तस्मै दाश । गा हन्ति
तस्मै गोघ्नोऽतिथिः ॥

भीमादयोऽपादाने ३ । ४ । ७४ ॥

भीमः । भीष्मः । प्रस्कन्दनः । प्ररक्षः । मूर्खः । खलतिः ॥

ताभ्यामन्यत्रोणादयः ३ । ४ । ७५ ॥

संप्रदानापादानपरामर्शार्थताभ्यामिति । ततोऽसौ भवति तन्तुः । तं तदिति वर्त्म । चरितं तदिति चर्म । तुमुन्बुलौ क्रियाया क्रियार्था । कृष्णं द्रष्टुं याति कृष्णं दर्शको याति । अत्र वासरूपेण । जादयो न पुनर्बुलुक्तेः । समानकर्तृकेषु तुमुन् । अक्रियार्थोपपदा-
मेतत् । इच्छति भोक्तुम् । वष्टि वाञ्छति वा ॥

शकधृपज्ञाग्लाघटरभलभक्रमसहार्हास्त्यर्थेषु तुमुन्
३ । ४ । ६५ ॥

एषूपपदेषु धातोस्तुमुन् । शक्नोति भोक्तुम् । एवं धृष्णोत्यादौ ।
अर्थग्रहणमस्तिनैव संबध्यते अनन्तरत्वात् । अस्ति भवति विद्यते
वा भोक्तुम् ॥

पर्याप्तिवचनेष्वलमर्थेषु ३ । ४ । ६६ ॥

पर्याप्तिः पूर्णता तद्वाचिषु सामर्थ्यवचनेषूपपदेषु तुमुन् । पर्याप्ति
भोक्तुं प्रवीणः । कुशलः । पटुरित्यादि । पर्याप्तिवचनेषु किम् ।
अलं भुक्त्वा । अलमर्थेषु किम् । पर्याप्तं भुङ्क्ते । प्रभूततेह गम्यते ।
नतु भोक्तुः सामर्थ्यम् ॥

कालसमयवेलासु तुमुन् ३ । ३ । १६७ ॥

पर्यायोपादानमर्थोपलक्षणार्थम् । कालार्थेषूपपदेषु तुमुन् । कालः
समयो वेलानेहा वा भोक्तुम् । प्रेपादिग्रहणमिहानुवर्तते । तेनेह न ।
भूतानि कालः पचतीति वार्ता ॥

भाववचनाश्च ३ । ३ । ११ ॥

भाव इत्यधिकृत्य वक्ष्यमाणा घञादयः क्रियार्यायां क्रियाया
भविष्यति स्युः । यागाय याति ॥

अण् कर्मणि च ३ । ३ । १२ ॥

कर्मण्युपपदे क्रियार्थायां क्रियाणां चाण् । ण्वुलोऽपवादः । का-
ण्डलावो व्रजति । परत्वादयं कादीन् बाधते । कम्बलदायो व्रजति ॥

पदरुजविशस्पृशो घञ् ३ । ३ । १६ ॥

भविष्यतीति निवृत्तम् । पद्यतेऽसौ पादः । रुजतीति रोगः ।
विशतीति वेशः । स्पृशतीति स्पर्शः ॥

सु स्थिरे ३ । ३ । १७ ॥

सु इति लुप्तविभक्तिकं सतः स्थिरे कर्तरि घञ् । सरति काला-
न्तरमिति सारः ॥

व्याधिमत्स्यबलेषु चेति वाच्यम् ❀ ॥

अतीसारो व्याधिः । अन्तर्भावितण्यर्थोऽत्र सरतिः । रुधिरा-
दिक्रमातिशयेन सारयतीत्यर्थः । विसारो मत्स्यः । सारो बले दृढांशे
च । मावे । पाकः पाका ॥

स्फुरतिस्फुलत्योर्घञि ६ । १ । ४७ ॥

अनयोरेच आत्वं घञि । स्फारः । स्फालः । उपसर्गस्य घञि
इति वक्ष्यमाणेन दीर्घः । परीहारः । इकः काशे । नीकाशः । नो-
दात्तोपदेश इति न वृद्धिः । जमः । आचमादेस्तु । आचामः ।
कामः । वामः । विश्राम इति त्वपाणिनीयम् ॥

स्यदो जवे ६ । ४ । २८ ॥

स्यन्देर्घञि नलोपो वृद्धघमावश्च निपात्यते । स्यदो वेगः ।
अन्यत्र स्यन्दः ॥

अवोदोऽग्नप्रथयहिमथयाः ६ । ४ । २९ ॥

अवोदोऽग्नहृदनम् । पथ इन्धनम् । ओष उन्दनम् । श्रन्थेर्नलोपो
वृद्धघमावश्च । अकर्तरि च कारके गङ्गायाम् ॥

घञि च भावकरणयोः ६ । ४ । २७ ॥

गङ्गेर्नलोपः । रागः । अनयोः किम् । रज्यत्यास्मिन् रङ्गः ।

मास्यत इति प्राप्तः । संज्ञायाम् इति प्रायिकम् । को भवता लामो
लब्धः । इत उत्तरं मासे अकर्तरि कारके इति कृत्यल्फुटो बहुलम्
इति यावद्वयमप्यनुवर्तते ॥

परिमाणाख्यायां सर्वेभ्यः ३ । ३ । २० ॥

घञ् । अजपोर्वाधनार्थमिदम् । एकस्तण्डुलनिचायः । द्वौ
शूर्पनिष्पावौ । द्वौ कारौ ॥

दारजारौ कर्तरि णिलुक्च ❀ ॥

दारयन्तीति दाराः । जारयन्तीति जाराः ॥

इङश्च ३ । ३ । २१ ॥

घञ् । अचोऽपवादः । उपेत्यस्मादधीयते उपाध्यायः ॥

अपादाने स्त्रियामुपसंख्यानं तदन्ताच्च वा ङीप् ❀ ॥

उपाध्याया उपाध्यायी ॥

शृ वायुवर्णनिवृत्तेषु ❀ ॥

शृ इत्यविभक्तिको निर्देशः । शारो वायुः । करणे घञ् । शारो
वर्णः । चित्रीकरणमिह धात्वर्थः । निव्रियते आव्रियतेऽनेनेति
निवृत्तमावरणम् । बाहुलकात् करणे क्तः । गौरिवाकृतनीशारः प्रायेण
शिशिरे कृशः । अकृतमावरण इत्यर्थः ॥

उपसर्गे रुवः ३ । ३ । २२ ॥

घञ् । संरावः । उपसर्गे किम् । रुवः ॥

अभिनिस्तः स्तनः शब्दसंज्ञायाम् ८ । ३ । ८६ ॥

अस्मात्स्तनः सस्य मूर्धन्यः । अभिनिष्ठानो वर्णः । शब्दसंज्ञायां
किम् । अभिनिःस्तनति मृदङ्गः ॥

समियुद्गुदुवः ३ । ३ । २३ ॥

संयूयते मिश्रीक्रियते गुडादिभिरिति संयावः पिष्टविकारोऽपूप-
विशेषः । संद्रावः । संदावः ॥

श्रिणी भुवोऽनुपसर्गे ३ । ३ । २४ ॥

श्रायः । नायः । भावः । अनुपसर्गे किम् । प्रश्रवः । प्रणयः ।
प्रभवः । कथं प्रभावो राज्ञः । इति प्रकृत्यो भाव इति प्रादिसमासः ।
कथं राज्ञो नय इति बाहुलकात् ॥

वौ क्षुश्रुवः ३ । ३ । २५ ॥

विक्षावः । विश्रावः । वौ किम् । क्षवः । श्रवः ॥

अवोदोर्नियः ३ । ३ । २६ ॥

अवनायोऽधोनयनम् । उन्नायः ऊर्ध्वनयनम् । कथम् उन्नयः ।
उत्प्रेक्षा इति बाहुलकात् ॥

प्रे द्रुस्तुवः ३ । ३ । २७ ॥

प्रद्रावः । प्रस्तावः । प्रे इति किम् । द्रवः । स्तवः । सवः ॥

निरभ्योः पूत्वोः ३ । ३ । २८ ॥

निष्पूयते शूर्पादिभिरीति निष्पावो धान्यविशेषः । अभिलावः
निरभ्योः किम् । पवः । लवः ॥

इति ९३ अंशाः ।

उङ्योर्ग्रः ३ । ३ । २९ ॥

उद्गारः । निगारः । उङ्योः किम् । गरः ॥

कृ धान्ये ३ । ३ । ३० ॥

कृ इत्यस्माद्धान्यविषयकादुङ्योर्ध्वञ् । उत्कारो निकारो धा-
न्यस्य विक्षेप इत्यर्थः । धान्यं किम् । भिक्षोत्करः । पुष्पनिकरः ॥

यज्ञे समिस्तुवः ३ । ३ । ३१ ॥

समेत्य स्तुवन्ति यस्मिन्देसे छन्दोगाः स देशः । संस्तावः । यज्ञे
किम् । संस्तवः परिचयः ॥

प्रेस्त्रोऽयज्ञे ३ । ३ । ३२ ॥

अयज्ञे इति छेदः । यज्ञे इति प्रकृतत्वात् प्रस्तारः । अयज्ञे
किम् । वार्हिपः प्रस्तारो मुष्टिविशेषः ॥

प्रथने वावशब्दे ३ । ३ । ३३ ॥

विपूर्वात्स्त्वृणातेर्घञ् । अशब्दविषये प्रथने । पटस्य विस्तरः ।
प्रथने किम् । तृणविस्तरः । अशब्दे किम् । ग्रन्थविस्तरः ॥

छन्दोनाम्नि च ३ । ३ । ३४ ॥

स्त्रः इत्यनुवर्तते । विष्टारपङ्क्तिश्छन्दः । विस्तीर्यन्तेऽस्मिन्नक्षरा-
णीत्याधिकरणे घञ् ततः कर्मधारयः ॥

छन्दोनाम्नि च ८ । ३ । ९४ ॥

विपूर्वात्स्त्वृणातेर्घञन्तस्य सस्य पत्वं छन्दोनाम्नि । इति पत्वम् ॥

उदि ग्रहः ३ । ३ । ३५ ॥

उद्गाहः ॥

समि मुष्टौ ३ । ३ । ३६ ॥

मलस्य संग्राहः । मुष्टौ किम् । द्रव्यस्य संग्रहः ॥

परिन्योर्नीणोर्धूताभ्रेपयोः ३ । ३ । ३७ ॥

परिपूर्वाभ्यतेर्निपूर्वादिणश्च घञ् क्रमेण द्यूतेऽभ्रेपे च विषये ।
परिणयेन शारान्वन्ति । समन्ताभ्रयनेनेत्यर्थः । एषोऽत्र न्यायः उ-
चितमित्यर्थः । द्यूताभ्रेपयोः किम् । परिणयो विवाहः । न्ययो नाशः ॥

परावनुपात्यय इणः ३ । ३ । ३८ ॥

क्रमप्राप्तस्यानातिपातोऽनुपात्ययः । तव पर्यायः । अनुपात्यये
किम् । कालस्य पर्यायः । अतिपात इत्यर्थः ॥

व्युपयोः शेतेः पर्याये ३ । ३ । ३९ ॥

तव विशायः । तव राज्ञोपशायः । पर्याये किम् । विशयः ।
संशयः । उपशयः समीपशयनम् ॥

हस्तादाने चेरस्तेये ३ । ३ । ४० ॥

हस्तादान इत्यनेन प्रत्यासत्तिरादेयस्य लक्ष्यते । पुष्पप्रचायः ।
हस्तादाने किम् । वृक्षाग्रस्थानां फलानां यष्ट्या प्रचयं करोति ।
अस्तेये किम् । पुष्पप्रचयश्चौर्येण ॥

निवासचितिशरीरोपसमाधानेष्वदेश्व कः ३।३।४१ ॥

एषु चिनोतेर्धञ्स्यात् आदेश्व ककारः । उपसमाधानं राशीकरणं तच्च धात्वर्थः । अन्ये प्रत्ययार्थस्य कारकस्योपाधिभूताः । निवासे-काशीनिकायः । चितौ-आकायमार्गे चिन्वीत । शरीरे-चीयतेऽस्मिन्नस्थ्यादिकमिति कायः । समूहे-गोमयनिकायः । एषु किम् । चयः । चः क इति वक्तव्ये आदेरित्युक्तेर्यङ्लुक्पादेरेव इति । गोमयानां निकेचायः । पुनःपुना राशीकरणमित्यर्थः ॥

संघे चानौत्तराधये ३।३।४२ ॥

घेर्घञादेश्व कः । भिक्षुनिकायः । प्राणिनां समूहः संघः । अनौत्तराधये किम् सूकर निचयः । संघे किम् । ज्ञानकर्मसमुच्चयः ॥

कर्मव्यतिहारे णच् स्त्रियाम् ३।३।४३ ॥

स्त्रीलिङ्गे भावे णच् ॥

णचः स्त्रियामञ् ५।४।१४ ॥

न कर्मव्यतिहारे ७।३।६ ॥

अन ऐज्ज । व्यावक्रोशी । व्यावहासी ।

अभिविधौ भाव इनुण् ३।३।४४ ॥

अणिनुणः ५।४।१५ ॥

इनप्यनपत्ये इति वक्ष्यमाणः प्रकृतिभावः । सांराविणं वर्तते ॥

आक्रोशेऽवन्योर्ग्रहः ३।३।४५ ॥

अवानि एतयोर्ग्रहेर्धञ्ज्ञापे । अवग्राहस्ते भूयात् । अभिमव इत्यर्थः । निग्राहस्ते भूयात् । बाध इत्यर्थः । आक्रोशे किम् । अवग्रहः पदस्य । निग्रहश्चोरस्य ॥

प्रे लिप्सायाम् ३।३।४६ ॥

पात्रमप्रादेण चरनि भिक्षुः ॥

परो यज्ञे ३।३।४७ ॥

उत्तरः परिग्राहः । स्पष्टेन वेदेः स्वीकरणम् ॥

नौ वृ धान्ये ३ । ३ । ४८ ॥

वृ इति लुप्तपञ्चमीकम् । नीवाराः । धान्ये किम् । निवरा कन्या ।
क्तिन्विपयेऽपि बाहुलकादप् । प्रवरा सेतिवत् ॥

उदि श्रयतियौतिपूद्रुवः ३ । ३ । ४९ ॥

उच्छ्रायः । उद्यावः । उत्पावः । उद्ग्रावः । कथं पतनान्ताः ।
समुच्छ्रायाः इति बाहुलकात् ॥

विभापा ङि रूपुवोः ३ । ३ । ५० ॥

आरावः आरवः । आष्ठावः आष्ठवः ॥

अवे ग्रहो वर्षप्रतिबन्धे ३ । ३ । ५१ ॥

विभापेति वर्तते । अवग्रहः अवग्राहः । वर्षप्रतिबन्धे किम् ।
अवग्रहः पदस्य ॥

प्रे वणिजाम् ३ । ३ । ५२ ॥

प्रे ग्रहेर्धञ्वा वणिजां संबन्धी चेत्प्रत्ययार्थः । तुलासूत्रमिति
पावत् । तुलाप्रग्राहेण चरति तुलाप्रग्रहेण ॥

रश्मौ च ३ । ३ । ५३ ॥

प्रग्रहः प्रग्राहः ॥

वृणोतेराच्छादने ३ । ३ । ५४ ॥

विभापा प्र इत्येव । प्रवारः ॥

परौ भुवोऽवज्ञाने ३ । ३ । ५५ ॥

परिभावः परिभवः । अवज्ञाने किम् । सर्वतो भवनं परिभवः । एर-
च् । चयः । जयः ॥

भयादीनामुपसंख्यानं नपुंसके क्तादिनिवृत्त्यर्थम् ❀ ॥

मयम् । वर्षम् । ऋदोरप् । करः । गरः । शरः । यवः । लवः ।
स्तवः । पवः ॥

वृक्षासनयोर्विष्टरः ८ । ३ । ९३ ॥

अनयोर्विपूर्वस्य स्त्रः पत्वं निपात्यते । विष्टरो वृक्ष आसनं च ।
वृक्ष इति किम् । वाक्यस्य विस्तरः ॥

ग्रहवृद्धनिश्चिगमश्च ३ । ३ । ५८ ॥

अप् । घञचोरपवादः । ग्रहः । वरः । दरः । निश्चयः । गमः ॥

वशिरण्योरुपसंख्यानम् ❀ ॥

वशः । रणः ॥

घभर्थे कविधानम् ❀ ॥

प्रत्ययः । विघ्नः ॥

द्वित्वप्रकरणे के कृभादीनामिति वक्तव्यम् ❀ ॥

चक्रम् । चिह्नदम् । चक्रतः ॥

उपसर्गेऽदः ३ । ३ । ५९ ॥

अप् ॥

घभपोश्च २ । ४ । ३८ ॥

अदेर्वस्त्वाद् स्याद् घञ्यपि च । प्रघसतः । विघसतः । उपसर्गे
किम् । घासतः ॥

नौ ण च ३ । ३ । ६० ॥

नौ उपपदे अदेर्णः अप्च । न्यादः । निघसतः ॥

व्यघजपोरनुपसर्गे ३ । ३ । ६१ ॥

अप् । व्यघः । जपः । उपसर्गे तु, आख्यायः । उपजापः ॥

स्वनहसोर्वा ३ । ३ । ६२ ॥

अप् । पक्षे घञ् । स्वनः । स्नानः । हसतः । हामः । अनुपसर्गे
इत्ये । प्रम्बानः । प्रहामः ॥

यमः समुपनिविषु च ३ । ३ । ६३ ॥

एष्वनुपसर्गे च यमेरष्वा । संयमः । संयामः उपयमः । उप-
यमः । नियमः नियामः । वियमः । वियामः यमः यामः ॥

नौ गदनदपठस्वनः ३ । ३ । ६४ ॥

अब्बा । निगदः निगादः । निनदः निनादः । निपठः
नेपाठः । निस्वनः निस्वानः ॥

क्वणो वीणायां च ३ । ३ । ६५ ॥

नावनुपसर्गे च वीणाविषयाच्च क्वणतेरब्बा । वीणाग्रहणं प्राद्य-
म् । निक्वणः निक्वाणः । क्वणः क्वाणः । वीणाया तु । प्रक्वणः
प्रक्वाणः ॥

नित्यं पणः परिमाणे ३ । ३ । ६६ ॥

अप् । मूलकपणः । शाकपणः । व्यवहारार्थं मूलकादीनां
परिमितो मुष्टिर्वध्यते सोऽस्य विषयः । परिमाणे किम् । पाणः ॥

मदोऽनुपसर्गे ३ । ३ । ६७ ॥

धनमदः । उपसर्गे तु, उन्मादः ॥

प्रमदसंमदौ द्वे ३ । ३ । ६८ ॥

द्वे किम् । प्रमादः । संमादः ॥

समुदोरजः पशुषु ३ । ३ । ६९ ॥

संपूर्वोऽजिः समुदाय उत्पूर्वश्च प्रेरणे तस्मात्पशुविषयकादप् ।
रघवपोः इत्युक्तेर्वीभावो न । समजः पशूना संघः । उदजः
शूना प्रेरणम् । पशुषु किम् । समाजो ब्राह्मणानाम् । उदाजः
त्रियाणाम् ॥

अक्षेषु गृहः ३ । ३ । ७० ॥

अक्षशब्देन देवं लक्ष्यते । तत्र यत्पणरूपेण ग्राह्यं तत्र गृहः
इति निपात्यते । अक्षस्य गृहः । व्यात्युक्षीमाभिसरणगृहामदी-
न्यन् । अक्षेषु किम् । पादस्य ग्रहः ॥

प्रजने सर्तेः ३ । ३ । ७१ ॥

द्वुपचप-पात्रेन निर्वृत्तं पत्रिमम् । द्वुप-उत्त्रिमम् । द्वितोऽथुच ।
द्वेपृ वेपथुः-श्वयथुः ॥

यजयाचयतविच्छप्रच्छरक्षोऽनङ् ३ । ३ । ९० ॥

यज्ञः । याच्या । यज्ञः । विश्रः । प्रश्रः । प्रश्रे चासन्न इति
ज्ञापकान्न संप्रसारणम् । डित्वं तु विश्र इत्यत्र गुणनिषेधाय । रक्षणः ॥

स्वपो नन् ३ । ३ । ९१ ॥

स्वमः ॥

उपसर्गे घोः किः ३ । ३ । ९२ ॥

प्रधिः । अन्तर्धिः । उपाधीयतेऽनेनेत्युपाधिः ॥

कर्मण्यधिकरणे च ३ । ३ । ९३ ॥

कर्मण्युपपदे घोः किः अधिकरणेऽर्थे । जलानि धीयन्तेऽस्मि-
न्निति जलधिः । स्त्रिया क्तिन् । घञोऽपवादः । अजपौ तु परत्वा-
द्वाधते । कृतिः । चितिः । स्तुतिः । स्फायी । स्फातिः । स्फीति-
कामः इति तु प्रामादिकम् । क्तान्ताद्वात्वर्थे णिचि अच इः इति
वा समाधेयम् ॥

श्रुयजीपिस्तुभ्यः करणे ॐ ॥

श्रूयतेऽनया श्रुतिः । यजेरिपेश्च । इष्टिः । स्तुतिः ॥

ऋत्वादिभ्यः क्तिन्निष्ठावद्वाच्यः ॐ ॥

तेन नत्वम् । गीर्णिः । लूनिः । घूनिः । शूनिः । ह्लादः इति
योगविभागात् क्तिनि ह्रस्वः । प्रह्वन्निः । ति च । चूर्तिः । फुल्लिः ॥

चायतेः क्तिनि चिभावो वाच्यः ॐ ॥

अपचितिः । संपदादिभ्यः क्तिप् । संपत् । विपत् । क्तिन्नपी-
ष्यते । संपत्तिः । विपत्तिः ॥

स्थागापापन्नो भावे ३ । ३ । ९५ ॥

क्तिन्स्यादङोऽपवादः । प्रस्थितिः । उपस्थितिः । संगीतिः ।

मंपीतिः । पाक्तिः । कथम् अवस्था मंस्था इति । व्ययस्यायाम्
इति ज्ञापकात् ॥

अतियूतिजूतिसातिहेतिकीर्तयश्च ३ । ३ । ९७ ॥

अवतेः ज्वर त्वर इत्यूट् । ऊतिः स्वरार्थं वचनम् । उदात्त इति
हि वर्तते । यूतिः । जूतिः । अनयोर्दीर्घत्वं च निपात्यते । स्यनेः
मातिः । यतिस्यतिमास्या इतीच्चे प्राप्त इत्वाभासो निपात्यते ।
सनोतेर्वा जनसन इत्यात्वे कृते स्वार्थं निपातनम् । हन्तेर्दिनोतेर्वा
हेतिः । कीर्तिः ॥

ब्रजयजोर्भावे क्यप् ३ । ३ । ९८ ॥

ब्रज्या । इज्या ॥

संज्ञायां समजनिपदनिपतमनविदपुत्रशीङ्भृभिणः
३ । ३ । ९९ ॥

गमजादिभ्यः स्त्रियां भावादी क्यप् स चांदात्तः संज्ञायाम् ॥

अजेः क्यपि वीभावो नेति वाच्यम् ❀ ॥

समजन्त्यस्यामिति समज्या सभा । निपीदन्त्यस्यामिति निपद्या
आपणः । निपतन्त्यस्यामिति निपत्या पिच्छिला भूमिः । मन्य-
तेऽनयेति मन्या गलपार्श्वगिरा । विदन्त्यनया विद्या । मुत्याभि-
पवः । शय्या । भृत्या । ईयतेऽनया इत्या शिथिका ॥

कृन्ः श च ३ । ३ । १०० ॥

कृन्ः इति योगप्रभागः । कृन्ः क्यप् कृन्त्या श च । चा-
त्किन् । क्रिया कृनिः ॥

इच्छा ३ । ३ । १०१ ॥

इपेर्भावे शो यगमावश्च निपात्यते । इच्छा ॥

परिचर्यापरिसर्यामृगयाटस्थानामुपसंस्थानम् ❀ ॥

शो यक्च निपात्यते । परिचर्या पूजा । परिसर्या परिमरणम् ।
अत्र गुणोऽपि । मृग अन्वेषणे । चुरादावदन्तः । अतो लोपाभा-

वोऽपि । शे यकि णिलोपः । मृगया । अटतेः शे यकि ट्यशब्दस्य
द्वित्वं पूर्वभागे यकारनिवृत्तिर्दीर्घश्च । अटाट्या ॥

जागर्तैरकारो वा ❀ ॥

पक्षे शः । जागरा जागर्ता । अप्रत्ययात् । चिकीर्षा । पुत्रका-
म्या । गुरोश्च हलः । ईहा । ऊहा । गुगेः किम् । भक्तिः । हल
किम् । नीतिः ॥

निष्ठायां सेट इति वक्तव्यम् ❀ ॥

नेह । आसिः । तितुत्र इति नेह । दीप्तिः ॥

तितुत्रेष्वगृहादीनामिति वाच्यम् ❀ ॥

निगृहीतिः । निपठितिः । पिद्भिदादिभ्योऽङ् । जृप् । ऋदृशोऽ-
ङि गुणः । जरा । ञ्पूप् त्रपा । भिदा । विदारण एवायम् ।
भित्तिरन्या । छिदा । मृजा ॥

ऋपेः संप्रसारणं च ❀ ॥

कृपा ॥

चिन्तिपूजिकथिकुम्बिचर्चश्च ३ । ३ । १०५ ॥

अङ् युचोऽपवादः । चिन्ता । पूजा । कथा । कुम्भा । चर्चा ।
आतश्चोपसर्गः । प्रदा । उपदा ॥

श्रदन्तरोरुपसर्गवद्भूतिः ❀ ॥

श्रद्धा । अन्तर्धा । उपसर्गं धोः किः इत्यनेन किः । अन्तर्धि
प्यामश्रन्थो युच् । कारणा । हारणा । आसना । श्रन्थना ॥

घट्टिवन्दिविदिभ्यश्चेति वाच्यम् ❀ ॥

घट्टना । वन्दना । वेदना ॥

इपेरनिच्छार्थस्य ❀ ॥

अन्वेषणा ॥

परेर्वा ❀ ॥

पर्येषणा । परोष्टिः ॥

रोगाख्यायां ण्वुत्वहुलम् ❀ ॥

प्रच्छदिका । प्रमाहिका । विचर्चिका ॥

क्वचिन्न ❀ ॥

शिरोर्तिः ॥

धात्वर्थानर्देशे ण्वुत्वक्तव्यः ❀ ॥

आसिका । शायिका । इकाशितपादय उक्ताः । पचिः पचतिः ।
अकारः ककारः । रादिफः रेफः । मत्वर्थीयः । आजिः । जातिः ।
वापिः । वासिः । कृषिः । गिरिः ॥

संज्ञायाम् ३ । ३ । १०९ ॥

अत्र धातोर्णुल् । उद्दालकपुष्पमञ्जिका ॥

विभाषाख्यानपरिप्रश्नयोरिञ्च ३ । ३ । ११० ॥

परिप्रश्न आख्याने च गम्य इञ् चाण्णुल् विभाषोक्तैर्यथाप्राप्त
मन्येऽपि । का त्व कारि कारिका क्रिया कृत्या कृति वाकार्पाः ।
सर्वा कारि कारिका क्रिया कृत्या कृति वाकार्यम् । एवं गणि
गणिका गणनाम् । पाचि पाचिका पचा पक्तिम् ॥

पर्यायार्हणोत्पत्तिषु ण्वुच् ३ । ३ । १११ ॥

पर्यायः । परिपाटी क्रमः । अर्हणमर्हः योग्यता । पर्यायादिषु
द्योत्येषु ण्वुज्वा । भवत आसिका । शायिका । अग्रगामिका ।
भवानिधुमशिकामर्हति । ऋणे-इधुमशिका मे धारयति । उत्पत्तौ-
इधुमशिका उदपादि । आम्नोशे नञ्यनिः अजीवनिस्ते शठ भू-
यात् । अप्रयाणिः । कृत्यलघुटो बहुलम् । मावे । कर्तरि च कारके
संज्ञायामिति च निवृत्तम् । राज्ञा भुज्यन्ते राजभोजनाः शालयः ।
नपुंसके मावे क्तः । ल्युट् च । हसितं हसनम् । योगविभाग उत्तरार्थः ॥

कर्मणि च येन संस्पर्शात्कर्तुः शरीरसुखम् ३ । ३ ।

११६ ॥

येन स्पृश्यमानस्य कर्तुः शरीरमुखमुत्पद्यते तस्मिन्कर्मण्युपपदे
ल्युट् । पूर्वेण सिद्धे नित्यसमासार्थं वचनम् । पयःपानं सुखम् ।
कर्तरि इति किम् । गुरोः स्नापनं सुखम् । नेह गुरुः कर्ता क्तितु कर्म ॥

इति ९५ अंशाः ।

वायौ २ । ४ । ५७ ॥

अजेर्वी वायौ । प्रवयणम् । प्राजनम् । करणाधिस्तरणयोश्च ।
ल्युट् । इध्मप्रव्रश्चनः कुठारः । गोदोहनी स्याली । खलः । प्राकर-
णाधिकरणयोरित्यधिकारः ॥

अन्तरदेशे ८ । ४ । २४ ॥

अन्तःशब्दादन्तेर्नस्य णः । अन्तर्हणनम् । देशे तु अन्तर्हणनो
देशः । अत्पूर्वस्येत्येव । अन्तर्गन्ति । तपरः किम् । अन्तरघाति ॥

अयनं च ८ । ४ । २५ ॥

अयनस्य णोऽन्तःशब्दात्परस्य । अन्तरयणम् । अदेश इत्येव ।
अन्तरयनो देशः ॥

पुंसि संज्ञायां घः प्रायेण ३ । ३ । ११८ ॥

छादेर्घेऽद्व्युपसर्गस्य ६ । ४ । ९६ ॥

द्विप्रभृत्युपसर्गहीनस्य छादेर्ह्रस्वः घे परे । दन्ताश्छाद्यन्तेऽनेन
दन्तच्छदः । आकुर्वन्त्यस्मिन्नाकरः ॥

गोचरसंचरवहव्रजव्यजापणनिगमाश्च ३ । ३ । ११९ ॥

घान्ता निपात्यन्ते । हलश्च इति वक्ष्यमाणस्य घञोऽपवादः ।
गावश्चान्त्यस्मिन्निति गोचरो देशः । संचरन्तेऽनेन संचरो मार्गः ।
वहन्त्यनेन वहः स्कन्धः व्रजः । व्यजस्तालवृन्तम् । निपातनाट्टी-
भावो न । आपणः पण्यस्थानम् । निगच्छन्त्यनेन निगमश्छन्दः ।
चात्कपः । निकषः ॥

अवे तृस्रोर्घञ ३ । ३ । १२० ॥

अवतारः कृपादेः । अवस्तारो जवनिका । हलश्च । रमन्ते
योगिनोऽस्मिन्निति रामः । अपमृज्यतेऽग्नेन व्याध्यादिभित्त्यपा-
मार्गः । विमार्गः । समूहनी ॥

अध्यायन्यायोद्यावसंहाराश्च ३ । ३ । १२२ ॥

अधीयतेऽस्मिन्नध्यायः । नियन्त्युद्युवन्ति संहरन्त्यनेनेति विग्रहः ॥

अवहाराधारावायानामुपसंख्यानम् ❀ ॥

उदङ्कोऽनुदके ३ । ३ । १२३ ॥

उत्पूर्वादश्चेतेर्घञ् नतूदके । घृतमुदच्यते उद्ध्ययतेऽस्मिन्निति
घृतादङ्गश्चर्ममयं भाण्डम् । अनुदके किम् । उदकोदश्चनः ॥

जालमानायः ३ । ३ । १२४ ॥

आनीयन्ते मत्स्यादयोऽग्नेनेत्यानायः । जालम् इति किम् ।
आनयः ॥

खनो घ च ३ । ३ । १२५ ॥

चाद्वञ् । आखनः आखानः । धित्करणमन्यतोऽप्ययमिति
ज्ञापनार्थम् । तेन भगः पदमित्यादि ॥

खनेर्दुडरेकेकवका वाच्याः ❀ ॥

आखः । आखरः । आखनिक आखनिकवकः । एते खनित्रवचनाः ।
ईषद्दुःसुपु कृच्छ्राकृच्छ्रार्थेषु खल् । करणाधिकरणयोरिति निवृत्तम् ।
कृच्छ्रे-दुष्करः कटो भवता । अकृच्छ्रे-ईषत्करः सुकरः ॥

निमिर्मालियां खलचोरात्वं नेति वाच्यम् ❀ ॥

ईषन्निमयः । दुष्प्रमयः । सुविलयः । निमयः । मयः । लयः ॥

उपसर्गात् खल्वभोः ७ । १ । ६७ ॥

उपसर्गादेव लभेर्नुम् । ईषत्प्रलम्भः । दुष्प्रलम्भः । सुप्रलम्भः ।
उपालम्भः । उपसर्गात् किम् । ईषत्प्रलम्भः । लम्भः ॥

न सुदुर्भ्यां केवलभ्याम् ७ । १ । ६८ ॥

उपसर्गान्तररहिताभ्यां सुदुर्भ्यां लभेर्नुन्न खल्वञ्जोः । सुलभम् ।
दुर्लभम् । केवलाभ्यां किम् । सुप्रलम्भः । अतिदुर्लम्भः । कथं तर्हि
अतिसुलभमिति दुर्लभमिति । यदा स्वती कर्मप्रवचनीर्या तदा भवि-
ष्यति ॥

कर्तृकर्मणोश्च भूकृजोः ३ । ३ । १२७ ॥

कर्तृकर्मणोरीपदादिषु चोपपदेषु भूकृजोः खल्व यथासंख्यं न
ष्यते कर्तृकर्मणी च धातोरव्यवधानेन प्रयोज्ये । ईपदादयस्तु ततः
प्राक् ॥

कर्तृकर्मणोश्च्यर्थयोरिति वाच्यम् ❀ ॥

खित्त्वान्मुम् । अनादत्तेन दुःखेन भूयते दुरादचम्भवम् । ईप
दादचम्भवम् । स्वादचम्भवम् । ईपदादचङ्करः । दुरादचङ्करः । स्वा
दचङ्करः । च्यर्थयोः किम् । आदत्तेन सुभूयते । आतो युच् ।
खलोऽपवादः । ईपत्पानः सोमो भवता । दुष्पानः ॥

भापायां शासियुधिदृशिधृपिभ्यो युज्वाच्यः ❀ ॥

दुःशासनः । दुर्योधन इत्यादि ॥

पात्पदान्तात् ८ । ४ । ३४ ॥

नस्य णो न । निष्पानम् । सर्पिष्पानम् । पात् किम् । निर्णयः ।
पदान्तात् किम् । पुष्णाति । पदेऽन्तः पदान्तोऽयमिति सप्तमीस-
मासोऽयम् । तेनेह न । सुसर्पिष्केण । आवश्यककाधमर्ण्ययोर्णिनिः ।
अवश्यंकारी । शतंदायी । कृत्याश्च । आवश्यककाधमर्ण्ययोरित्येव ।
अवश्यं हरिः सेव्यः । शतं देयम् । क्तिक्तौ च संज्ञायाम् । तितुन
इति नेट् । भवतादृतिः ॥

न क्तिचि दीर्घश्च ६ । ४ । ३९ ॥

अनिटां वनतितनोत्यादीनां च दीर्घानुनासिकलोपौ न स्तः ।
क्तिचि परे । यन्तिः । रन्तिः । वन्तिः । तन्तिः ॥

सनः क्तिचि लोपश्चास्यान्यतरस्याम् ६ । ४ । ४५ ॥

सनोतेः क्तिच्यात्वं वा लोपश्च वा । सनुतात् । सातिः सतिः
नन्तिः । देवा एनं देयामुर्देवदत्तः । अलंखल्वोः प्रतिषेधयोः प्राचां
क्त्वा । प्राचां ग्रहणं पूजार्थम् । अमैवाव्ययेन इति नियमान्नोपपद-
समासः । दोदद्वो । अलं दत्त्वा । घुमास्या । पीत्वा खलु । अलं-
खल्वोः किम् । माकार्पात् । प्रतिषेधयोः किम् । अलंकारः ॥

उदीचां माङो व्यतीहारे ३ । ४ । १९ ॥

व्यतीहारेऽर्थे माङः क्त्वा । अपूर्वकालार्थमिदम् ॥

मयतेरिदन्यतरस्याम् ६ । ४ । ७० ॥

मेड इकारोऽन्तादेशः वा ल्यपि । अपमित्य याचते अपमाय ।
उदीचाग्रहणाद्ययाप्राप्तमपि । याचित्वा अपमयते ॥

परावरयोगे च ३ । ४ । २० ॥

परेण पूर्वस्यावरेण परस्य योगे गम्ये धातोः क्त्वा । अमाध्य
नदीं पर्वतः । परनदी योगोऽत्र पर्वतस्य । अतिक्रम्य पर्वतं स्थिता
नदी । अवरपर्वतयोगोऽत्र नद्याः । समानकर्तृकयोः पूर्वकाले । भु-
क्त्वा व्रजति । द्वित्वमतन्त्रम् । स्नात्वा भुक्त्वा पीत्वा व्रजति । अनु-
दात्त इत्यनुनासिकलोपः । विष्णुं नत्वा स्तौति ॥

स्वरत्यादेः श्र्युकः किति इति नित्यमिडभावः पूर्ववि-
प्रतिषेधेन ❀ ॥

स्थृत्वा । सूत्वा । धूत्वा ॥

क्त्वा स्कान्दिस्यन्दोः ६ । ४ । ३१ ॥

एतयोर्नलोपे न स्यात्क्त्वा परे । स्कन्त्वा । ऊढित्वादिद्वा । स्य-
न्त्वा स्यन्दित्वा ॥

न क्त्वा सेट् १ । २ । १८ ॥

सेट् क्त्वा किन्न । अयित्वा । सेट् किम् । कृत्वा ॥

मृडमृदगुधकुपक्लिशवदवसः क्त्वा १ । २ । ७ ॥

एभ्यः सेट् क्त्वा कित् । मृडित्वा । क्लिप्त्वा । क्तत्वा इति वेद ।
 क्लिशित्वा क्लिप्त्वा । उदित्वा । उपित्वा । रुदित्वा इति कित्त्वम् ।
 रुदित्वा । विदित्वा । मुपित्वा । गृहीत्वा ॥

नोपधात्थफान्ताद्वा १ । २ । २३ ॥

सेट् क्त्वा कित्त्स्याद्वा । श्रथित्वा । श्रन्थित्वा । शुफित्वा । शुम्फित्वा ।
 नोपधात्थ किम् । शोधित्वा । रोपित्वा ॥

वञ्चित्वा १ । २ । २४ ॥

सेट् क्त्वा कित्वा । वचित्वा । वञ्चित्वा । लुचित्वा । लुञ्चित्वा ।
 ऋतित्वा । अतित्वा ॥

तृपिमृपिकृशेः काश्यपस्य १ । २ । २५ ॥

एभ्यः सेट् क्त्वा कित्वा । तृपित्वा । तर्पित्वा । मृपित्वा । मर्पित्वा ।
 कृशित्वा । कर्शित्वा । रलो व्युपधात् इति वा कित्त्वम् । कृतित्वा ।
 द्योतित्वा । लिखित्वा । लोखित्वा । रलः किम् । सेवित्वा । व्युपधात्
 किम् । वर्तित्वा । इलादेः णिम् । एपित्वा । सेट् किम् । भुक्त्या ।
 वसतिधुधोरिद् । उपित्वा । धुधित्वा । क्षोधित्वा । अश्ने । पूजायाम्
 इति नित्यमिद् । अश्नित्वा । गतौ तु अक्त्वेत्यपि । लुभित्वा । लोभि-
 त्वा । लुभो विमोहने इतीद् । विमोहने तु । लुब्ध्या ॥

जृब्रश्च्योः कित् ७ । २ । ५५ ॥

आभ्या परस्य क्त इट् । जरीत्वा । जग्मिन् । प्रथित्वा ॥

उदितो वा ७ । २ । ५६ ॥

उदितः परस्य क्त इट् । जग्मिन् । अनुनामिकस्य कि इति
 दीर्घ । जग्मिन् । कृत्वा । देवित्वा ॥

इति ९६ अंशाः ।

क्रमश्च कित् ६ । ४ । १८ ॥

क्रमपधाया वा दीर्घः । क्रम्यतीति णे । क्रम्यत्वा । क्रम्यत्वा ।
 शाले किम् । क्रमिता । प्रहश्च इति वेद । पवित्वा । पृत्वा ॥

जान्तनशां विभापा ६ । ४ । ३२ ॥

जान्तानां नशेश्च नलोपो वा क्तिव परे । मत्त्वा भङ्गत्वा । रक्त्वा
गङ्गत्वा । मस्तिजनशोः इति नुम् । तस्य पक्षे लोपः । नष्टा नष्टा ।
ग्धादिभ्यश्च इतीदृशे । नाशित्वा ॥

झलादाविति वाच्यम् ॐ ॥

नेह । अञ्जित्वा । ऊदित्वाद्देष्टृपक्षे । अत्त्वा अङ्गत्वा । जन-
मन इत्यात्वम् । खात्वा खनित्वा । द्यतिस्यति इतीत्वम् । दित्वा ।
मित्वा । मित्वा । स्थित्वा । दधानेर्धिः । हित्वा ॥

जहातेश्च क्तिव ७ । ४ । ४३ ॥

हित्वा । हाडस्तु हात्वा । अदो जग्धिः । जग्ध्वा । ममानेड-
नञ्पूर्वे ततो ल्यप् तुक् । प्रकृत्य । अनञ् किम् । अकृत्वा ।
पर्युदासाश्रयणान्नेह । परमकृत्वा ॥

पत्वतुकोरसिद्धः ६ । १ । ८६ ॥

पत्वे तुकि च कर्तव्ये एकादेशशास्त्रमसिद्धम् कोऽपि चत् । इह
पत्वं न । अधीत्य । प्रेत्य । ह्रस्वस्य इति तुक् ॥

वा ल्यपि ६ । ४ । ३८ ॥

अनुदात्तोपदेशानां वनतितनांत्यादीनामनुनामिकलोपो वा
न्याह्यपि । व्यवस्थितविभाषेयम् । तेन मान्तानिटां वा नान्ता-
निटां वनादीनां च नित्यम् । आगत्य । आगम्य । प्रणत्य ।
प्रणम्य । प्रहृत्य । प्रमत्य । प्रवत्य । वितत्य । अदो जग्धिः ॥

अन्तरङ्गानपि विधीन्वहिरङ्गो ल्यञ्चाधते ॥

जग्धिविधौ ल्यञ्प्रहणात् तेन हित्वदत्त्वात्वे त्वदीर्घत्वश्रुतिदो
ल्यपि न । विधाय । प्रदाय । प्रबन्ध । प्रस्थाप । प्रक्रम्य । आपृ-
च्छय । प्रदीव्य ॥

न ल्यपि ६ । ४ । ६९ ॥

ल्यपि पञ्च घुमास्यादेरीत्वं न । धेद् । प्रधाय । प्रमाय । प्रगाय ।

प्रपाय । प्रहाय । प्रसाय । मीनातिमिनोति इत्यात्वम् । प्रमाय ।
निमाय । उपदाय । विभापा लीयतेः । विलाय विलीय । णिलोपः ।
उत्तार्य । विचार्य ॥

ल्यपि लघुपूर्वात् ६ । ४ । ५६ ॥

लघुपूर्वात्परस्य णेरयादेशो ल्यपि । विगणय्य । प्रणमय्य । प्र-
वेभिदय्य । लघुपूर्वात् किम् । संप्रधार्य ॥

विभापापः ६ । ४ । ५७ ॥

आप्तेणेरयादेशो वा ल्यपि । प्रापय्य प्राप्य ॥

क्षियः ६ । ४ । ५९ ॥

क्षियो ल्यपि दीर्घः । प्रक्षीय ॥

ल्यपि च ६ । १ । ४१ ॥

वेजो ल्यपि संप्रसारणं न । प्रवाय ॥

ज्यश्च ६ । १ । ४२ ॥

प्रज्याय ॥

व्यश्च ६ । १ । ४३ ॥

उपव्याय ॥

विभापा परेः ६ । १ । ४४ ॥

परेर्व्येजो वा संप्रसारणं ल्यपि । तुर्कं बाधित्वा परत्वात् हलः
इति दीर्घः । परिबीय परिव्याय । कथं मुखं व्यादाय स्वपिति नेत्रे
निमीलय हसति इति । व्यादानसंमीलनोत्तरकालेऽपि स्वापहासयो-
रनुवृत्तेस्तदंशविवक्षया भविष्यति । आभीक्ष्ण्ये णमुल्च । स्मारं स्मारं
नमति शिवम् । स्मृत्वा स्मृत्वा । पायं पायम् । भोजं भोजम् ।
श्रावं श्रावम् । चिण्णमुलोः इति णमुल्परे णौ वा दीर्घः । गोमं
गामम् । गमं गमम् । विभापा चिण्णमुलोः इति नुम्वा । लम्भं
लम्भम् । लाभं लाभम् । व्यवस्थितविभापयोपसृष्टस्य नित्यं नुम् ।
प्रलम्भं प्रलम्भम् । जाग्रोऽविचिण् इति गुणः । जागरं जागरम् । प्य-
न्तस्याप्येवम् ॥

न यद्यनाकाङ्क्षे ३ । ४ । २३ ॥

यच्छब्द उपपदे पूर्वकाले यत्प्राप्तं तन्न । यत्र पूर्वोत्तरे क्रिये त-
द्वाक्यमपरं नाकाङ्क्षते चेत् । यदयं भुङ्क्ते ततः पठति । इह क्त्वाण-
मुलौ न । अनाकाङ्क्षे किम् । यदयं भुक्त्वा व्रजति ततोऽधीते ॥

विभाषाग्रेप्रथमपूर्वेषु ३ । ४ । २४ ॥

आभीक्ष्ण्य इति नानुवर्तते । एषूपपदेषु समानकर्तृकयोः पूर्व-
काले क्त्वाणमुलौ वा । अग्रेभोजं व्रजति । अग्रेभुक्त्वा । प्रथमं भो-
जम् । प्रथमं भुक्त्वा । पूर्वं भोजम् । पूर्वं भुक्त्वा । पक्षे लडादयः ।
अग्रे भुङ्क्ते ततो व्रजति । आभीक्ष्ण्ये तु । पूर्वविप्रतिषेधेन नित्यमेव
विधिः । अग्रे भोजं भोजं व्रजति । भुक्त्वा भुक्त्वा ॥

कर्मण्याक्रोशे कृञः खमुञ् ३ । ४ । २५ ॥

कर्मण्युपपद आक्रोशे गम्ये चौरंकारमाक्रोशति । करोतिरुच्चा-
रणे । चौरशब्दमुच्चार्येत्यर्थः ॥

स्वादुमि णमुल् ३ । ४ । २६ ॥

स्वादुर्येषु कृञो णमुल् । एककर्तृकयोः पूर्वकाले पूर्वपदस्य मा-
न्तत्वं निपात्यते । अस्मादुं स्वादुं कृत्वा भुङ्क्ते स्वादुंकारं भुङ्क्ते ।
संपन्नंकारम् । लवणंकारम् । संपन्नलवणशब्दौ स्वादुपर्यायौ । वा-
सरूपेण क्त्वापि । स्वादुं कृत्वा भुङ्क्ते ॥

अन्यथैवंकथमित्थंसुसिद्धाप्रयोगश्चेत् ३ । ४ । २७ ॥

एषु कृञो णमुल् । सिद्धोऽप्रयोगोऽस्यैवंभूतश्चेत्कृञ्ब्यर्थत्वात्प्र-
योगानर्ह इत्यर्थः । अन्यथाकारम् । एवंकारम् । कथंकारम् ।
इत्थंकारं भुङ्क्ते । इत्थं भुङ्क्ते इत्यर्थः । सिद्ध इति किम् । शिरोऽन्यथा
कृत्वा भुङ्क्ते ॥

यथातथयोरसूयाप्रतिवचने ३ । ४ । २८ ॥

कृञः सिद्धाप्रयोग इत्येव । असूयाया प्रतिवचने । यथाकारमहं
भोक्ष्ये । तथाकारं भोक्ष्ये । किं त्वानेन ॥

कर्मणि दृशिविदोः साकल्ये ३ । ४ । २९ ॥

कर्मण्युपपदे णमुल् कन्यादर्शं वरयति । सर्वाः कन्या इत्यर्थः ।
ब्राह्मणवेदं भोजयति । यं यं ब्राह्मणं जानाति लभते विचारयति
त तं सर्वं भोजयतीत्यर्थः ॥

यावति विन्दजीवोः ३ । ४ । ३० ॥

यावद्वेदं भुङ्के । यावल्लभते तावदित्यर्थः । यावज्जीवमधीते ॥

चर्मोदरयोः पूरेः ३ । ४ । ३१ ॥

कर्मणीत्येव । चर्मपूरं स्तृणाति । उदरपूरं भुङ्के ॥

वर्षप्रमाण ऊलोपश्चास्यान्यतरस्याम् ३ । ४ । ३२ ॥

कर्मण्युपपदे पूरेणमुल् स्यादूकारलोपश्च वा । समुदायेन वर्षप्र-
माण्ये गम्ये । गोष्पदपूरं वृष्टो देवः । गोष्पदग्रं वृष्टो देवः । अस्य
इति किम् । उपपदस्य मा मृत् । मृपिकाविलप्रम् ॥

चेले क्रीपेः ३ । ४ । ३३ ॥

चेलार्येषु कर्मसूपपदेषु क्रीपेणमुल् वर्षप्रमाणे । चेलक्रीपं वृष्टो
देवः । वन्रक्रीपम् । वसनक्रीपम् ॥

निमूलसमूलयोः कपः ३ । ४ । ३४ ॥

कर्मणीत्येव कपादिष्वनुप्रयोगं वक्ष्यति । अत्र प्रकरणे पूर्वकाल
इति न संबध्यते । निमूलकापं कपति । समूलकापं कपति । निमूलं
गमूलं कपतीत्यर्थः । एकस्यापि धात्वर्थस्य निमूलादिप्रिशेषणसं-
बन्धाद्वेदः । तेन सामान्यविशेषमात्रेण विशेषणप्रिशेष्यभावः ॥

शुष्कचूर्णरूक्षेषु पिपः ३ । ४ । ३५ ॥

एषु कर्मसु पिपेणमुल् । शुष्कपेपं पिनाष्टि । शुष्कं पिनष्टीत्यर्थः ।
चूर्णपेपम् । रूक्षपेपम् ॥

समूलावृत्तजीवेषु हन्कृञ्ग्रहः ३ । ४ । ३६ ॥

कर्मणीत्येव । गमूलग्रानं हन्ति । अहृतकारं करोति । जीवपादं

गृह्णाति । जीवतीति जीवः । इगुपधलक्षणः कः । जीवन्तं
गृह्णातीत्यर्थः ॥

करणे हनः ३ । ४ । ३७ ॥

पादघातं हन्ति । पादेन हन्तीत्यर्थः । यथाविध्यनुप्रयोगार्थः ।
मन्त्रित्यसमासार्थोऽयं योगः । भिन्नधातुसंबन्धे तु हिंसार्यानां च
इति बध्यते ॥

स्नेहने पिपः ३ । ४ । ३८ ॥

स्निह्यते येन तस्मिन्करणे पिपेर्णमुल् । उदपेयं पिनाष्टि । उदकेन
पिनष्टीत्यर्थः ॥

हस्ते वर्तिग्रहोः ३ । ४ । ३९ ॥

हस्तार्थे करणे । हस्तवर्तं वर्तयति । करवर्तम् । हस्तेन गुलिर्वा
करोतीत्यर्थः । हस्तग्राहं गृह्णाति । स्तग्राहम् । पाणिग्राहम् ॥

स्वे पुपः ३ । ४ । ४० ॥

करण इत्येव । स्व इत्यर्थग्रहणं तेन स्वरूपे पर्याये विशेषे च
णमुल् । स्वपोषं पुष्णाति । धनपोषम् । गोपोषम् ॥

अधिकरणे बन्धः ३ । ४ । ४१ ॥

चक्रबन्धं बध्नाति । चक्रे बध्नातीत्यर्थः ॥

इति ९७ अंशाः ।

संज्ञायाम् ३ । ४ । ४२ ॥

मध्नातेर्णमुल्संज्ञायाम् । क्रौञ्चबन्धं उद्ध । मयूरीकाबन्धम् ।
अट्टालिकाबन्धम् । बंधविशेषाणां संज्ञा ण्ताः ॥

कर्त्रोर्जीवपुरुषयोर्नशिवहोः ३ । ४ । ४३ ॥

जीवनाशं नश्यति । जीवो नश्यतीत्यर्थः । पुरुषवाहं वहति ।
पुरुषो वहतीत्यर्थः ॥

ऊर्ध्वे शुचिपूरोः ३ । ४ । ४४ ॥

ऊर्ध्वं कर्तरि । ऊर्ध्वशोषं शुष्यति । वृक्षादिरूध्व एव तिष्ठञ्छु-
ष्यतीत्यर्थः । ऊर्ध्वपूरं पूर्यते । ऊर्ध्वमुख एव घटादि वर्षोदकादिना
पूर्णा भवतीत्यर्थः ॥

उपमाने कर्मणि च ३ । ४ । ४५ ॥

चात्कर्तरि । घृतनिधायं निहितं जलम् । घृतमिव सुरक्षितमि-
न्यर्थः । अजकनाशं नष्टः । अजक इव नष्ट इत्यर्थः ॥

कपादिषु यथाविध्यनुप्रयोगः ३ । ४ । ४६ ॥

यस्माष्णमुलुक्तः । स एवानुप्रयोक्तव्य इत्यर्थः । तथैवोदाहृतम् ॥

उपदंशस्तृतीयायाम् ३ । ४ । ४७ ॥

इतः प्रभृति पूर्वकाल इति संबध्यते । तृतीयाप्रभृतीन्यन्यतर-
स्याम् इति वा समासः । मूलकोपदंशं भुङ्क्ते । मूलकेनोपदंशम् ।
दृश्यमानस्य मूलकस्य भुजिं प्रति करणत्वात्तृतीया । यद्यप्युपदंशिना
सह न शाब्दः संबन्धस्तथाप्यायौस्त्येव कर्मत्वात् । एतावतेव
सामर्थ्येन प्रत्ययः समासश्च तृतीयायामिति वचनसामर्थ्यात् ॥

हिसार्थानां च समानकर्मकाणाम् ३ । ४ । ४८ ॥

तृतीयान्त उपपदेऽनुप्रयोगधातुना समानकर्मकादिसार्थात्
णमुल् । दण्डोपघातं गाः कालयति । दण्डेनोपघातम् । दण्ड-
ताडम् । समानकर्मकाणाम् इति किम् । दण्डेन चोस्मादित्य गाः
कालयति ॥

सप्तम्यां चोपपीडरूपकर्पः ३ । ४ । ४९ ॥

उपपूर्वेभ्यः पीडादिभ्यः सप्तम्यन्ते तृतीयान्ते चोपपदे णमुल् ।
पार्श्वोपपीडं शेते । पार्श्वयोरुपपीडम् । पार्श्वभ्यामुपपीडम् ।
व्रजोपरोधं गाः स्थापयति । व्रजेन व्रजे उपरोधं वा । पाण्युपकर्प
यानाः संगृह्णाति । पाण्युपकर्पम् । पाणिनोपकर्पम् ॥

समासतौ ३ । ४ । ५० ॥

तृतीया सप्तम्योर्धातोर्णमुल् संनिकर्षे गम्यमाने । केशग्राहं
युध्यन्ते । केशेषु गृहीत्वा । हस्तग्राहम् । हस्तेन गृहीत्वा ॥

प्रमाणे च ३ । ४ । ५१ ॥

तृतीयासप्तम्योरित्येव । द्व्यंगुलोत्कर्षं खण्डिकां छिनत्ति । द्व्यंगु-
लेन द्व्यंगुले चोत्कर्षम् ॥

अपादाने परीप्सायाम् ३ । ४ । ५२ ॥

परीप्सा त्वरा । शय्योत्थायं धावति ॥

द्वितीयायां च ३ । ४ । ५३ ॥

परीप्सायामित्येव । यष्टिग्राहं युध्यन्ते । लोष्टग्राहम् ॥

अपगुरो णमुलि ६ । १ । ५३ ॥

गुरी उद्यमने इत्यस्यैचोवात् णमुलि । अस्यपगोरं युध्यन्ते ।
अस्यपगारम् ॥

स्वाङ्गेऽध्रुवे ३ । ४ । ५४ ॥

द्वितीयायामित्येव । अध्रुवे स्वाङ्गे द्वितीयान्ते धातोर्णमुल् ।
भ्रूविक्षेपं कथयति । भ्रुवं विक्षेपम् । अध्रुवे किम् । शिर उत्क्षिप्य
येन विना न जीवनं तद् ध्रुवम् ॥

परिक्रिश्यमाने च ३ । ४ । ५५ ॥

सर्वतो विवाध्यमाने स्वाङ्गे द्वितीयान्ते णमुल् । उरः प्रतिपेपं
युध्यन्ते । कृत्स्नमुरः पीडयन्त इत्यर्थः । उरोविदारं प्रतिचस्क्रे
नत्वेः । ध्रुवार्थमिदम् ॥

विशिपतिपदिस्कन्दां व्याप्यमानासेव्यमानयोः ३ ।

४ । ५६ ॥

द्वितीयायामित्येव । द्वितीयान्त उपपदे विश्यादिभ्यो णमुल् ।
व्याप्यमान आसेव्यमाने चार्थे गम्ये गेहादिद्रव्याणां विश्यादि-
क्रियाभिः साकल्येन संबन्धो व्याप्तिः । क्रियायाः पौनःपुन्यमा-
सेवा । नित्यवीप्सयोः इति द्वित्वं तु न भवति । समासेनैव स्वभा-
वतस्तयोरुक्तत्वात् । यद्यप्यामीक्ष्ये णमुलुक्त एव तथापि उपपद-
संज्ञार्थमासेवायामिह पुनर्विधिः । गेहानुप्रवेशमास्ते गेहं गेहमनु-

प्रवेशम् । गेहमनुप्रवेशमनुप्रवेशम् । एवं गेहानुप्रपातम् । गेहानु
प्रपादम् । गेहानुस्कन्दम् । असमाप्ते तु गेहस्य णमुलन्तस्य च
पर्यायेण द्वित्वम् ॥

अस्यतितृपोः क्रियान्तरे कालेषु ३ । ४ । ५७ ॥

क्रियामन्तरयति व्यवधत्त इति क्रियान्तर्गः तस्मिन्धात्वर्थे वर्त-
मानादस्यतेस्त्वृष्यतेश्च कालत्राचिषु द्वितीयान्तेषूपपदेषु णमुल ।
ब्रह्मात्म्यासंगाः पाययति ब्रह्ममत्यासम् । ब्रह्मर्तपम् ब्रह्मन्तर्पम् । अ-
त्यसनेन तर्पणेन च गवां पानाक्रिया व्यवधीयते । अथ पाययित्वा ।
ब्रह्ममतिक्रम्य पुनः पाययतीत्यर्थः ॥

नाम्यादिशिग्रहोः ३ । ४ । ५८ ॥

द्वितीयायामित्येव । नामादेशमाचष्टे । नामग्राहमाह्वयति ॥

अव्ययेऽयथाभिप्रेताख्याने कृञः क्त्वाणमुलौ ३ । ४ । ५९ ॥

अयथाभिप्रेताख्याने नाम । अप्रियस्याच्चैः प्रियस्य च नीचैः
कथनम् । उच्चैःकृत्य । उच्चैःकृत्वा । उच्चैः कारमप्रियमाचष्टे । नीचैः-
कृत्य । नीचैःकृत्वा । नीचैःकारं प्रियं ब्रूते ॥

तिर्य्यच्यपवर्गे ३ । ४ । ६० ॥

तिर्य्यकशब्दे उपपदे कृञः क्त्वाणमुलौ समाप्तौ गम्यायाम् ।
तिर्य्यकृच्य तिर्य्यकृत्वा गतः तिर्य्यकारम् । समाप्त्य गत इत्यर्थः ।
अपवर्गे किम् । तिर्य्यकृत्वा काष्ठं गतः ॥

स्वाङ्गे तस्प्रत्यये कृमुवोः ३ । ४ । ६१ ॥

मुखतः कृन्त्य गतः मुखतः कृत्वा । मुखतःकारम् । मुखतोभूय ।
मुखतोभूत्वा । मुखतोभावम् ॥

नाधार्थप्रत्यये च्व्यर्थे ३ । ४ । ६२ ॥

नाधार्थप्रत्ययान्ते च्व्यर्थाविषये उपपदे कृमुवोः क्त्वाणमुलौ ।
अनाना नानाकृत्वा नानाकृत्य नानाकारम् । विनाकृत्य विनाकृत्वा
विनाकारम् । नानाभूय नानामूत्वा नानाभावम् । अनेकं द्रव्यमेकं

कृत्वा एकधाभूय एकधाभूत्वा एकधामावम् । एकधाकृत्य एकधा-
कृत्वा एकधाकारम् ॥

तूष्णीमि भुवः ३ । ४ । ६३ ॥

तूष्णींशब्दे उपपदे भुवः क्त्वाणमुलौ । तूष्णीभूय तूष्णीभूत्वा
तूष्णींभावम् ॥

अन्वच्यानुलोम्ये ३ । ४ । ६४ ॥

अन्वक्शब्द उपपदे आनुकूल्ये गम्ये भुवः क्त्वाणमुलौ । अन्व-
भूय आस्ते । अन्वग्भूत्वा अन्वग्भावम् । अग्रतः पार्श्वतः पृष्ठतो
वाञ्छिकूलो भूत्वा आस्त इत्यर्थः । आनुलोम्ये किम् । अन्वग्भूत्वा-
तिष्ठति । पृष्ठतो भूत्वेत्यर्थः । इति कृत ॥

इति ९८ अंशाः ।

अनभिहिते कर्मादौ द्वितीयादय उक्ताः । अभिहिते तु कर्मादां
प्रातिपदिकार्ये इति प्रथमैव । अभिधानं तु प्रायेण तिङ्कृतद्वित-
समासैः । तिङ्-हरिः सेव्यते । कृत्-लक्ष्म्या सेवितः । तद्धितः-शतेन
क्रीतः शत्यः । समासः-प्राप्त आनन्दो यं प्राप्तानन्दः । कचिन्नि
पातेनाभिधानम् । यथा, विपवृक्षोऽपि संवर्ध्य स्वयं छेतुमसांप्रतम् ।
असांप्रतमित्यत्यनद्युष्यत इत्यर्थः ॥

तथायुक्तं चानीप्सितम् १ । ४ । ६० ॥

ईप्सिततमवतिरुयया युक्तमनीप्सितमपि कारकं कर्मसंज्ञम् ।
गामं गच्छंस्त्वृणं स्पृशति । ओदनं भुञ्जानो विपं भुङ्गे ॥

अकथितं च १ । ४ । ६१ ॥

अपादानादिविशेषैरविवक्षितं कारकं कर्मसंज्ञम् । दुह्याच्चूद-
ण्डरुधिप्रच्छिचिन्नशासुनिमथ्मुषाम् । कर्मयुक्स्यादकथितं तथा
म्यान्नीहृक्ष्वहाम् ॥ दुहादीनां द्वादशानां नीप्रभृतीनां चतुर्णां च
कर्मणा यद्युज्यते तदेवाकथितं कर्म इति परिगणनं कर्तव्यमित्यर्थः ।
गां दोग्धि पयः । वलिं याचते वसुधाम् । अविनीतं विनयं या-
चते । तण्डुलानोदनं पचति । गर्गाञ्छतं दण्डयाति । व्रजमवरु-

णाद्धि गाम् । माणवकं पन्थानं पृच्छति । वृक्षमवचिनोति फलानि ।
माणवकं धर्मं वृत्ते शास्ति वा । शतं जयति देवदत्तम् । सुधा क्षी-
रनिधिं मथ्नाति । देवदत्तं शतं मुष्णाति । ग्राममजा नयति हरति
कर्पति वहति वा । अर्धनिवन्धनेयं संज्ञा । बलिं भिक्षते वसुधाम् ।
माणवकं धर्मं मापते अभिधत्ते वक्तीत्यादि । कारकं किम् । माणव-
कस्य पितरं पन्थानं पृच्छति ॥

अकर्मकधातुभिर्योगे देशः कालो भावो गन्तव्योऽ-
ध्वा च कर्मसंज्ञक इति वाच्यम् ॥

कुर्वन्स्वपिति । मासमास्ते । गोदाहमास्ते । क्रोशमास्ते ॥

गतिबुद्धिप्रत्यवसानार्थशब्दकर्माकर्मकाणामणि कर्ता
स णौ १ । ४ । ५२ ॥

गत्वाद्यर्थानां शब्दकर्मणामकर्मकाणां चाणौ यः कर्ता स णौ
कर्म स्यात् । शत्रून्गमयत्स्वर्गं वेदार्यं स्वानवेद्यत् । आशयञ्चामृतं
देवान्वेदमध्यापयद्विधिम् ॥ आसयत्सालिले पृथ्वीं यः स मे श्रीह-
रिर्गतिः । गति इत्यादि किम् । पाचयत्योदनं देवदत्तेन । अप्य-
न्तानां किम् । गमयति देवदत्तो यज्ञदत्तं तमपरः प्रयुङ्क्ते । गमयति
देवदत्तेन यज्ञदत्तं विष्णुमित्रः ॥

नीवह्योर्न ॥

नाययति बाहयति बाभारं भृत्येन ॥

नियन्तृकर्तृकस्य बह्वेकनिषेधः ॥

बाहयति रथं बाहान्सूतः ॥

आदिखाद्योर्न ॥

आदयति खादयति वान्नं वटुना ॥

भक्षेरहिंसार्थस्य न ॥

भक्षयत्यन्नं वटुना । अहिंसार्थस्य किम् । भक्षयति बलीवर्दा-
न्सस्यम् ॥

जल्पतिप्रभृतीनामुपसंख्यानम् ❀ ॥

जल्पयति भाषयति वा धर्मं पुत्रं देवदत्तः ॥

दृशेत् ❀ ॥

दर्शयति हरिं भक्तान् । सूत्रे ज्ञानसामान्यार्थानामेव ग्रहणं न तु तद्विशेषार्थानामित्यनेन ज्ञाप्यते । तेन स्मरति जिघ्रति इत्यादीनां न । स्मारयति घ्रापयति देवदत्तेन ॥

शब्दायतेर्न ❀ ॥

शब्दाययति देवदत्तेन । धात्वर्थसंगृहीतकर्मत्वेनाकर्मकत्वात्प्राप्तिः । येषां देशकालादिभिन्नं कर्म न संभवति तेऽत्राकर्मकाः नत्वविवक्षितकर्मणोऽपि । तेन मासमासयति देवदत्तम् इत्यादौ कर्मत्वं भवति । देवदत्तेन पाचयति इत्यादौ तु न ॥

हृकोरन्यतरस्याम् १ । ४ । ५३ ॥

हृकोरणौ यः कर्ता स णौ वा कर्मसंज्ञः । हारयति काययति वा भृत्यं भृत्येन वा वटम् ॥

अभिवादिदृशोरात्मनेपदे वेति वाच्यम् ❀ ॥

अभिवादयते दर्शयते देवं भक्तं भक्तेन वा ॥

अधिशीङ्स्थासां कर्म १ । ४ । ४६ ॥

अधिपूर्वाणामेवामाधारः कर्म स्यात् । अधिशेते अधितिष्ठति अध्यास्ते वा वैकुण्ठं हरिः ॥

अभिनिविशश्च १ । ४ । ४७ ॥

अभिनीत्येतत्संघातपूर्वस्य विजतेराधारः कर्म स्यात् । अभिनिविशते सन्मार्गम् । परिक्रयणे संप्रदानम् इति सूत्रादिह मण्डूकपुत्यान्यतरस्यां ग्रहणमनुवर्त्य व्यवस्थितविभाषाश्रयणात्काचिन्न । पापेऽभिनिवेशः ॥

उपान्वध्याङ्सः १ । ४ । ४८ ॥

उपादिपूर्वस्य वसतेराधारः कर्म स्यात् । उपवसति अनुवसति अधिवसति आवसति वा वैकुण्ठं हरिः ॥

अभुवत्यर्थस्य न ❀ ॥

वने उपवसति । उभसर्वतसोः कार्या विगुपर्यादिषु त्रिषु ।
द्वितीयाध्वेडितान्तेषु ततोऽन्यत्रापि दृश्यते ॥ उभयतः कृष्ण गोपा ।
सर्वतः कृष्णम् । धिक् कृष्णामक्तम् । उपर्युपरि लोकं हरिः ।
अध्यधिलोकम् । अधोऽधोलोकम् । अभितःपरित.समयानिकपा
हाप्रतियोगेऽपि । अभितः कृष्णम् । परितः कृष्णम् । समया ग्रामम् ।
निकपा लङ्काम् । हा कृष्णामक्तम् । तस्य शोच्यत इत्यर्थः । वुमु
क्षितं न प्रतिभाति किञ्चित् ॥

इति ९९ अंशाः ।

अन्तरान्तरेण युक्ते २ । ३ । ४ ॥

आभ्या योगे द्वितीया । अन्तरा त्वा मा हरिः । अन्तरेण हरि
न सुखम् ॥

कर्मप्रवचनीयाः १ । ४ । ८३ ॥

इत्यधिकृत्य ॥

अनुलक्षणे १ । ४ । ८४ ॥

लक्षणे द्योत्येऽनुरुक्तसंज्ञः । गत्युपसर्गसज्ञापवादः ॥

कर्मप्रवचनीययुक्ते द्वितीया २ । ३ । ८ ॥

एतेन योगे द्वितीया । जपमनुप्रावर्षत् । हेतुभूतजपोपलक्षित
उपेणमित्यर्थः । परापि हेतौ तृतीयानेन बाध्यते । लक्षणेत्थभृत
इत्यादिना सिद्धे पुनः संज्ञाविधानसामर्थ्यात् ॥

तृतीयार्थे १ । ४ । ८५ ॥

जस्मिन्द्योत्येऽनुरुक्तसंज्ञः । नदीमन्ववसिता सेना । नद्या सह
संयद्धेत्यर्थः । पित्र बन्धने क्तः ॥

हीने १ । ४ । ८६ ॥

हीने द्योत्येऽनुरुक्तः प्राग्वत् । अनुहरिं मुराः । हरेर्हीना इत्यर्थः ॥

उपोऽधिके च १ । ४ । ८७ ॥

अधिके हीने च द्योत्य उपेत्यव्ययं प्राक्संज्ञम् अधिके सप्तमी
वक्ष्यते । हीने उपहरिं सुराः ॥

लक्षणेत्थंभूताख्यानभागवीप्सासु प्रतिपर्यनवः १।४।९०॥

एष्वर्थेषु विषयभूतेषु प्रत्यादय उक्तसंज्ञाः । लक्षणे वृक्षं-प्रति परि
तु वा विद्योतते विद्युत् । इत्थंभूताख्याने भक्तो विष्णुं प्रति परि
तु वा । भागे लक्ष्मीर्हरिं प्रति परि अनु वा । हरेर्भाग इत्यर्थः ।
सायां वृक्षं वृक्षं प्रति परि अनु वा सिञ्चति । अत्रोपमर्गत्वाभा-
न पत्वम् । एषु किम् । परिपिञ्चति ॥

अभिरभागे १।४।९१ ॥

भागवर्जे लक्षणादावभिरुक्तसंज्ञः स्यात् । हरिमभिवर्तते भक्तो
मभि । देवं देवमभिसिञ्चति । अभागे किम् । यदत्र ममाभि-
त्तदीयताम् ॥

अधिपरी अनर्थकौ १।४।९२ ॥

उक्तसंज्ञौ । कुतोऽभ्यागच्छति । कुतः पर्यागच्छति । गतिसं-
पाधात् । गतिर्गतौ इति निघातो न ॥

सुः पूजायाम् १।४।९३ ॥

सुसिक्तम् । सुस्तुतम् । अनुपमर्गत्वान्न पः । पूजायां किम् ।
पेक्तं किं तवात्र । आक्षेपोऽयम् ॥

अतिरतिक्रमणे च १।४।९५ ॥

अतिक्रमणे पूजायां चाति उक्तसंज्ञः । अतिदेवान्कृष्णः ॥

अपिः पदार्थसंभावनान्ववसर्गगर्हासमुच्चयेषु १।४।९६॥

एषु द्योत्येष्वपिरुक्तसंज्ञः । सर्पिपोऽपि स्यात् । अनुपसर्गत्वान्न
संभावनाया लिङ् । तस्या एव विषयभूते भवने कर्तृदौर्लभ्यम-
क्तं दौर्लभ्यं द्योतयन्नपिशब्दः स्यादित्यनेन संबध्यते । सर्पिपः
त पष्ठी त्वपिशब्दबलेन गम्यमानस्य विन्दोखयवावयविभावसं-
धे इयमेव ह्यपिशब्दस्य पदार्थद्योतकता नाम । द्वितीया तु नेह

प्रवर्तते । सर्पिपो विन्दुना योगो न त्वपि नेत्युक्तत्वात् । अपि
स्तुयाद्विष्णुम् । संभावनं शक्त्युत्कर्षमाविष्कर्तुमत्युक्तिः । अपि-
स्तुहि । अन्वयसर्गः कामचारानुज्ञा । धिग्देवदत्तमपि स्तुयादृष-
लम् । गर्हा । आपिसिञ्च । अपिस्तुहि । समुद्ये ॥

कालाध्वनोरत्यन्तसंयोगे २ । ३ । ५ ॥

इह द्वितीया मासे कल्याणो मासमधीते । मासं शुद्धधानाः ।
क्रौंशं कुडिला नदी । क्रौंशमधीते । क्रौंशं गिरिः । अत्यन्तसंयोगे
किम् । मासस्य द्विरधीते । क्रौंशस्यैकदेशे पर्वतः ॥

दिवः कर्म च १ । ४ । ४३ ॥

दिवः साधकतमं कारकं कर्मसंज्ञं स्याच्चात्करणसंज्ञम् । अक्षै-
रक्षान्वा दीव्यति ॥

अपवर्गे तृतीया २ । ३ । ६ ॥

अपवर्गः फलप्राप्तिः तस्यां द्योत्यायां कालाध्वनोरत्यन्तसंयोगे
तृतीया । अह्ना क्रौंशेन वातुवाकोऽधीतः अपवर्गे किम् । मासम-
धीतो नायातः ॥

येनाङ्गविकारः २ । ३ । २० ॥

येनाङ्गेन विकृतेनाङ्गिनो विकारो लक्ष्यते ततस्तृतीया । अक्ष्णा
काणः । अक्षिसंघंधिकाणत्वविशिष्ट इत्यर्थः । अङ्गविकारः किम् ।
अक्षिकाणमस्य ॥

इत्थंभूतलक्षणे २ । ३ । २१ ॥

किंचित्प्रकारं प्राप्तस्य लक्षणे तृतीया । जटाभिस्तापसः । जटाज्ञा-
प्यतापसत्वविशिष्ट इत्यर्थः ॥

संज्ञोऽन्यतरस्यां कर्मणि २ । ३ । २२ ॥

संपूर्वस्य जानातेः कर्मणि तृतीया वा । पित्रा पितरं वा संजा-
नीते ॥

हेतौ २ । ३ । २३ ॥

किम् । पुष्पेभ्यो वने स्पृहयति । ईप्सितमात्र इयं संज्ञा । प्रकर्षविव-
क्षायां तु परत्वात्कर्मसंज्ञा । पुष्पाणि स्पृहयति ॥

क्रुधद्रुहेर्ष्यासूयार्थानां यं प्रति कोपः १ । ४ । ३७ ॥

क्रुधाद्यर्थानां प्रयोगे यं प्रति कोपः स उक्तसंज्ञः । हरये क्रुध्यति
द्रुह्यति ईर्ष्यति असूयति । यं प्रति कोपः किम् । भार्यामीर्ष्यति ।
मैनामन्योऽद्राक्षीदिते । क्रोधोऽमर्षः । द्रोहोऽपकारः । ईर्ष्याऽक्षमा ।
असूया गुणेषु दोषाविष्करणम् । द्रोहादयोऽपि कोपप्रभवा एव
गृह्यन्ते । अतो विशेषणं सामान्येन यं प्रति कोपः इति ॥

क्रुधद्रुहोरुपसृष्टयोः कर्म १ । ४ । ३८ ॥

सोपसर्गयोरनयोर्योगे यं प्रति कोपस्तत्कारकं कर्मसंज्ञम् ।
क्रूरमभिक्रुध्यति । अभिद्रुह्यति ॥

राधीक्ष्योर्यस्य विप्रश्नः १ । ४ । ३९ ॥

एतयोः कारकं संप्रदानम् । यदीयो विविधः प्रश्नः क्रियते ।
कृष्णाय राध्यति ईक्षते वा । पृष्टो गर्गः । शुभाशुभं पर्यालोच-
यतीत्यर्थः ॥

प्रत्याङ्भ्यां श्रुवः पूर्वस्य कर्ता १ । ४ । ४० ॥

आभ्या परस्य शृणोतेर्योगे पूर्वस्य प्रवर्तेनरूपव्यापारस्य
कर्ता संप्रदानम् । विप्राय गां प्रतिशृणोति आशृणोति वा । विप्रेण
मह्यं देहीति प्रवर्तितस्तत्प्रतिजानीत इत्यर्थः ॥

अनुप्रतिगृणश्च १ । ४ । ४१ ॥

आभ्या गृणातेः कारकं पूर्वव्यापारस्य कर्तृभूतमुक्तसंज्ञम् ।
होत्रेऽनुगृणाति । प्रतिगृणाति । होता प्रथमं शंसति । तमध्वर्युः
प्रोत्साहयतीत्यर्थः ॥

परिक्रयणे संप्रदानमन्यतरस्याम् १ । ४ । ४४ ॥

नियतकालं भृत्या स्वीकरणं पणित्रयणं तस्मिन् साधकतमं
कारकं संप्रदानसंज्ञं वा । शतेन शताय वा परिक्रीतः ॥

तादर्थ्ये चतुर्थी वाच्या ॐ ॥

मुक्तये हारं भजति ॥

कृपि संपद्यमाने च ॐ ॥

भक्तिर्ज्ञानाय कल्पते संपद्यते जायत इत्यादि ॥

उत्पातेन ज्ञापिते च ॐ ॥

वाताय कपिला विष्टुत् ॥

हितयोगे च ॐ ॥

ब्राह्मणाय हितम् ॥

क्रियार्थोपपदस्य च कर्मणि स्थानिनः २ । ३ । १४ ॥

क्रियार्था क्रिया उपपदं यस्य तस्य स्थानिनोऽप्रयुज्यमानस्य तुमुनः कर्मणि चतुर्थी । फलेभ्यो याति । फलान्याहर्तुं यातीत्यर्थः । नमस्कृत्यो नृसिंहाय । नृसिंहमनुकूलयितुमित्यर्थः । एवं स्वयंमुने नमस्कृत्य इत्यादावपि ॥

तुमर्थाच्च भाववचनात् २ । ३ । १५ ॥

भाववचनाश्च इति सूत्रेण यो निहितस्तदन्ताण्यतुर्थी स्यात् । यागाय याति । यष्टुं यातीत्यर्थः ॥

उपपदविभक्तेः कारकविभक्तिर्वलीयसी ॥

नमस्करोति देवान् । प्रजाभ्यः स्वस्ति । अग्नये स्वाहा । पितृभ्यः स्वधा । अलमिति पर्याप्त्यर्थग्रहणम् । तेन दैत्येभ्यो हरितलं प्रभुः समर्थः शक्त इत्यादि । प्रभ्वादियोगे पष्ठचापि साधुः । तस्मै प्रभवति । स एषां ग्रामणीः इति निर्देशात् । तेन 'प्रभुर्बुध्नुर्बुध्नवन्नयस्य' इति सिद्धम् । वषट्तिन्द्राय । चकारः पुनर्विधानार्थः । तेनाजीर्विवक्षायां परामपि चतुर्थी चाशिपि इति पष्ठो बाधित्वा चतुर्थ्येव भवति । स्वस्ति गोभ्यो भूयात् ॥

मन्यकर्मण्यनादरे विभाषाऽप्राणिषु २ । ३ । १७ ॥

प्राणिवर्जे मन्यतेः कर्मणि चतुर्थी वा स्याच्चिरस्कारे । न त्वां

तृणं मन्ये तृणाय वा । श्यना निर्देशात्तानादिकयोगे न । न त्वां
तृणं मन्ये ॥

अप्राणिष्वित्यपनीय नौकाकान्नशुकशृगालवर्जेष्वि-
ति वाच्यम् ॐ ॥

तेन न त्वां नावं मन्ये इत्यत्राप्राणित्वेऽपि चतुर्थी न । न त्वां
शुने मन्ये इत्यत्र प्राणित्वेऽपि भवत्येव ॥

गत्यर्थकर्मणि द्वितीयाचतुर्थ्यौ चेष्टायामनध्वनि २ ।
३ । १२ ॥

अध्वभिन्ने गत्यर्थानां कर्मण्येते स्तश्चेष्टायाम् । ग्रामं ग्रामाय
वा गच्छति । चेष्टायाम् किम् । मनसा हरिं व्रजति । अनध्वनि
इति किम् । पन्थानं गच्छति । गन्त्राधिष्ठितेऽध्वन्येवायं निषेधः ।
यदा तूत्पथात्पन्था एवाक्रामेतुमिष्यते तदा चतुर्थी भवत्येव । उ-
त्पथेन पथे गच्छति ॥

इति १०१ अंशाः ।

ध्रुवमपायेऽपादानम् । कारकमित्येव । नेह । वृक्षस्य पर्णं पतति ॥

जुगुप्साविरामप्रमादार्थानामुपसंख्यानम् ॐ ॥

पापाञ्जुगुप्सते विरमति । धर्मात्प्रमाद्यति ॥

। भीत्रार्थानां भयहेतुः १ । ४ । २५ ॥

मयार्थानां त्राणार्थानां च प्रयोगे भयहेतुरपादानम् । चौराद्वि-
मेति । चौरात्रायते । भयहेतुः किम् । अरण्ये विमेति त्रायते वा ॥

पराजेरसोढः १ । ४ । २६ ॥

पराजेः प्रयोगेऽसोढ्योऽर्थोऽपादानम् । अध्ययनात्पराजयते ।
ग्रायतीत्यर्थः । असोढः किम् । शत्रून्पराजयते । अभिमेवती-
त्यर्थः ॥

वारणार्थानामीप्सितः १ । ४ । २७ ॥

प्रवृत्तिविधातो वारणम् । वारणार्थानां धातूनां प्रयोग ईप्सितोऽ-

यांश्चादानम् । यवेभ्यो गां वारयति । इप्सितः किम् । यवेभ्यो गां वारयति क्षेत्रे ॥

अन्तर्धा येनादर्शनमिच्छति १ । ४ । २८ ॥

व्यवधाने सति यत्कर्तृकस्यात्मनो दर्शनस्याभासमिच्छति तद-
पादानम् । मातुर्निलीयते कृष्णः । अन्तर्धा किम् । चांगत्र दिदृ-
क्षने । इच्छतिग्रहणं किम् । अदर्शनेच्छायां सत्यां सत्यपि दर्शने
यथा स्यात् । देवदत्ताद्यज्ञदत्तो निलीयते ॥

आख्यातोपयोगे १ । ४ । २९ ॥

नियमपूर्वकविद्यास्वीकारे वक्ता प्राक्मंज्ञः । उपाध्यायादधीते ।
उपयोगे किम् । नटस्य गायं शृणोति ॥

जनिकर्तुः प्रकृतिः १ । ४ । ३० ॥

जायमानस्य हेतुरपादानम् । ब्रह्मणः प्रजाः प्रजायन्ते ॥

भुवः प्रभवः १ । ४ । ३१ ॥

भवनं भूः भूकर्तुः प्रभवस्तथा । हिमवतो गङ्गा प्रभवति । तत्र
प्रथमं प्रकाशत इत्यर्थः ॥

ल्यल्लोपे कर्मण्यधिकरणे च ॥

प्राप्तादात्प्रेक्षते । आसनात्प्रेक्षते । ग्रामाद्मारुत आसने उपविश्य
प्रेक्षत इत्यर्थः । श्वशुराज्जिदेति । श्वशुरं वीक्ष्येत्यर्थः । गम्यमानाजपि
क्रिया कारकविभक्तीनां निमित्तम् । कस्मात्त्वं नचाः ॥

**यतश्चाध्वकालनिर्माणं तत्र पञ्चमी । तद्युक्तादध्वनः
प्रथमासप्तम्यौ । कालात्सप्तमी च वक्तव्या ॥**

वनाद्ग्रामो योजनं योजने वा । कार्तिक्या आग्रहायणां मासे ।
अन्यारादितर्गते इत्यादिभिर्योगे पञ्चमी विहिता तत्र अन्य इत्यर्थ-
ग्रहणम् । इतरग्रहणं प्रपञ्चार्यम् । अन्यो भिन्न इतरे वा कृष्णात् ।
आरादनात् । ऋते कृष्णान् । पूर्वो ग्रामान् । दिशि दृष्टः शब्दो
दिक्शब्दः । तेन संप्रति देशकालवृत्तिना योगेऽपि भवति । चित्रा-

त्पूर्वः फाल्गुनः । अवयववाचियोगे तु न । तस्य परमाश्रेडितम्
इति निर्देशात् । पूर्वं कायस्य । अञ्चूत्तरपदस्य तु दिक्शब्दत्वेऽपि
पष्ठ्यतसर्थ इति षष्ठीं वाधितुं पृथग्रहणम् । प्राक् प्रत्यग्वा ग्रामात् ।
आच् दक्षिणा ग्रामात् । आहि-दक्षिणाहि ग्रामात् । अपादाने
पञ्चमी इति सूत्रे कार्तिक्याः प्रभृति इति भाष्यप्रयोगात्प्रभृत्यर्थ-
योगे पञ्चमी । भवात्प्रभृते आरभ्य वा सेव्यो हरिः । अपपरिवहिः
इति समासविधानाज्ज्ञापकाद्वाहिर्योगे पञ्चमी । ग्रामाद्वाहिः ॥

अपपरी वर्जने १ । ४ । ८८ ॥

एतां वर्जने कर्मप्रवचनीयौ ॥

आङ् मर्यादावचने १ । ४ । ८९ ॥

आङ् मर्यादायामुक्तसङ्गः । वचनग्रहणादभिविधावपि ॥

पञ्चम्यपाङ्परिभिः २ । ३ । १० ॥

एतैः कर्मप्रवचनीयैर्योगे पञ्चमी । अप हरेः परि हरेः सं-
सारः । परिरत्र वर्जने । लक्षणादौ तु । हरि परि आमुक्तेः संसारः ।
आसक्लाङ्गल ॥

प्रतिः प्रतिनिधिप्रतिदानयोः १ । ४ । ९२ ॥

एतयोरर्थयोः प्रतिरुक्तसङ्गः ॥

प्रतिनिधिप्रतिदाने च यस्मात् २ । ३ । ११ ॥

अत्र कर्मप्रवचनीयैर्योगे पञ्चमी । प्रगुन्न* कृष्णात्प्रति । तिले-
भ्यः प्रतियच्छति मापान् ॥

अकर्तृपृणे पञ्चमी २ । ३ । २४ ॥

कर्तृवर्जित यदृण हेतुभूत तत् पञ्चमी । शताद्वद्* । अकर्तृरि-
किम् । शतेन वन्धितः ॥

विभाषा गुणेऽस्त्रियाम् २ । ३ । २५ ॥

गुणे हेतावस्त्रीलिङ्गे पञ्चमी वा । जाड्यात् जाड्येन वा वद्धः ।
गुणे किम् । धनेन कुटम् । अम्बिया किम् । बुद्ध्या मुक्त* । वि-

भाषा इति योगविभागादगुणे स्त्रियां च कचित् । धृमादग्निमान् ।
नास्ति घटोऽनुपलब्धेः ॥

पृथग्विनानानाभिस्तृतीयाऽन्यतरस्याम् २।३।३२ ॥

एभिर्योगे तृतीया स्यात् । पञ्चमी द्वितीये च । अन्यतरस्यां ग्रहणं
समुच्चयार्थम् । पञ्चमीद्वितीये चाऽनुवर्तते पृथग्रांमण रामात् रामं
वा । एवं विना नाना ॥

करणे च स्तोकाल्पकृच्छ्रकतिपयस्यासत्त्ववचनस्य
२।३।३३ ॥

एभ्योऽद्रव्यवचनेभ्यः करणे तृतीयापञ्चम्यां स्तः । स्तोत्रेण स्तो-
काद्वा मुक्तः । द्रव्ये तु, स्तोकेन विषेण हतः ॥

पष्ठी हेतुप्रयोगे २।३।२६ ॥

हेतुशब्दप्रयोगे हेतौ द्योत्ये पष्ठी । अन्नस्य हेतोर्वसति ॥

सर्वनाम्नस्तृतीया च २।३।२७ ॥

सर्वनाम्नो हेतुशब्दस्य च प्रयोगे हेतौ द्योत्ये तृतीया पष्ठी च ।
केन हेतुना वसति । कस्य हेतोः ॥

निमित्तपर्यायप्रयोगे सर्वासां प्रायदर्शनम् ❀ ॥

किं निमित्तं वसति । केन निमित्तेन । कस्मै निमित्तायेत्यादि ।
एवं किकारणम् । को हेतुः । किं प्रयोजनम् इत्यादि । प्रायग्रहणाद-
सर्वनाम्नः प्रथमाद्वितीये न स्तः । ज्ञानेन निमित्तेन हरिः सेव्यः ।
ज्ञानाय निमित्तायेत्यादि ॥

पष्ठचतसर्थप्रत्ययेन २।३।३० ॥

एतद्योगे पष्ठी । दिक्छन्द इति पञ्चम्या अपवादः । ग्रामस्य
दक्षिणतः । पुरः पुरस्तात् । उपरि उपरिष्ठात् ॥

एनपा द्वितीया २।३।३१ ॥

एनवन्तेन योगे द्वितीया । एनपा इति योगविभागात्पष्ठचपि ।
दक्षिणेन ग्रामं ग्रामस्य वा । एवमुत्तरेण ॥

दूरान्तिकार्थः पष्ठ्यन्यतरस्याम् २ । ३ । ३४ ॥

एतैर्योगे षष्ठी पञ्चमी च । दूरं निकटं ग्रामस्य ग्रामादा ॥

इति १०२ अंशाः ।

ज्ञोऽविदर्थस्य करणे २ । ३ । ५१ ॥

जानातेरज्ञानार्थस्य करणे शेषत्वेन विवक्षिते षष्ठी । सर्पिषो ज्ञानम् । शेषे षष्ठीति षष्ठीसिद्धावापि प्रतिपदविधाना षष्ठी न समस्यते । इति समासनिवृत्तये प्रकरणम् । अत एव तिङन्तं नोदाह्रियते । सर्पिषो जानीते, इत्यादां तु शेषे षष्ठीत्येव षष्ठी-
त्याहुः । काशिकादां तु ज्ञोऽविदर्थेत्यादां तिङन्तमुदाहरतम् । अन्येऽपि बहवस्तिङन्तमुदाहरन्ति ॥

अधीगर्थद्वयेषां कर्मणि २ । ३ । ५२ ॥

एषां कर्मणि शेषे षष्ठी । मातुः स्मरणम् । सर्पिषो दैन्यनमी-
शनं वा ॥

कृजः प्रतियत्ने २ । ३ । ५३ ॥

प्रतियत्नो गुणाधानं कृजः कर्मणि शेषे षष्ठी स्याद्वृणाधाने ।
एधोदकस्योपस्करणम् ॥

रुजार्थानां भाववचनानामज्वरेः २ । ३ । ५४ ॥

भावकर्तृकाणां ज्वरिर्जितानां रुजार्थानां कर्मणि शेषे षष्ठी ।
चौरस्य रोगस्य रुजा ॥

अज्वरिसंताप्योरिति वाच्यम् ❀ ॥

रोगस्य चौरज्वरः चौरसंतापो वा । रोगकर्तृकं चौरसंबन्धि ज्व-
रादिकमित्यर्थः ॥

आशिपि नाथः २ । ३ । ५५ ॥

आशीरर्थस्य नाथतेः शेषे कर्मणि षष्ठी । सर्पिषो नाथनम् ।
आशिपि इति किम् । माणवकनाथनम् । तत्संबन्धिनी याच्चेत्यर्थः ॥

जासिनिप्रहणनाटकाथपिपां हिंसायाम् २ । ३ । ५६ ॥

हिंसार्थानामेषा शेषे कर्मणि षष्ठी । चौरस्योज्जासनम् । निप्रो-
संहर्तौ विपर्यस्तौ व्यस्तौ वा । चौरस्य निप्रहणनं प्रणिहननं निह-
ननं प्रहणनं वा । नट अवस्यन्दने चुरादिः । चौरस्योज्जादनम् ।
चौरस्य क्राथनम् । वृषलस्य पेपणम् । हिंसाया किम् । धाना-
पेपणम् ॥

व्यवहृपणोः समर्थयोः २ । ३ । ५७ ॥

शेषे कर्मणि षष्ठी । शूते क्रयविक्रयव्यवहारे चानयोस्तुष्ट्वार्थता ।
शतस्य व्यवहरणं पणनं वा । समर्थयोः किम् । शलाकाव्यवहारः ।
गणनेत्यर्थः । ब्राह्मणपणनं स्तुतिरित्यर्थः ॥

दिवस्तदर्थस्य २ । ३ । ५८ ॥

द्व्यर्थस्य क्रयविक्रयरूपव्यवहारार्थस्य च दिवः कर्मणि षष्ठी ।
शतस्य दीव्यति । तदर्थस्य किम् । ब्राह्मणं दीव्यति ।
स्तौतीत्यर्थः ॥

विभापोपसर्गे २ । ३ । ५९ ॥

पूर्वयोगापवादः । शतस्य शतं वा प्रतिदीव्यति ॥

प्रेष्यश्रुवोर्हविषो देवतासंप्रदाने २ । ३ । ६१ ॥

देवतासंप्रदानकेऽर्थे वर्तमानयोः प्रेष्यश्रुवोः कर्मणो हविर्विशेषस्य
वाचकाच्छब्दात्षष्ठी । अग्नये छागस्य हविषो वपाया मेदसः प्रेष्य
अनुब्रूहि वा ॥

कृत्वोर्थप्रयोगे कालेऽधिकरणे २ । ३ । ६४ ॥

कृत्वोर्थानां प्रयोगे कालवाचिन्याधिकरणे शेषे षष्ठी । पञ्चकृ-
त्वोश्चो भोजनम् । द्विरहो भोजनम् । शेषे किम् । द्विरहन्यध्ययनम् ।
कर्तृकर्मणोः कृति । गुणकर्मणि वेष्यते । नेताश्वस्य सुघ्नस्य सुघ्नं
वा । कृति किम् । तद्धिते मा मृन् । कृतपूर्वी कटम् ॥

उभयप्राप्तौ कर्मणि २ । ३ । ६६ ॥

उभयोः प्राप्त्यस्मिन्कृति तत्र कर्मण्येव पृष्ठी । आश्रयो गवां
 दोहोऽगोपेन । स्त्रीप्रत्यययोस्काकाग्योर्नायं नियमः । भेदिका
 विभित्सा वा रुद्रस्य जगतः । शेषे विमापा । स्त्रीप्रत्यय इत्येके ।
 विचित्रा जगतः कृतिर्हरेः हरिणा वा । केचिदविशेषेण विमापामि-
 च्छन्ति । शब्दानामनुशासनमाचार्येण आचार्यस्य वा ॥

क्तस्य च वर्तमाने २ । ३ । ६७ ॥

वर्तमानार्थस्य क्तस्य योगे पृष्ठी । नलोकइति निषेधस्यापवादः ।
 राज्ञां मतो बुद्धः पूजितो वा ॥

अधिकरणवाचिनश्च २ । ३ । ६८ ॥

क्तस्य योगे पृष्ठी । इदमेवामासितं शयितं गतं भुक्तं वा ॥

अकेनोर्भविष्यदाधमर्ण्ययोः २ । ३ । ७० ॥

भविष्यत्यक्तस्य भविष्यदाधमर्ण्यार्थेनश्च योगे पृष्ठी न । ततः
 पालकोऽभ्यतरति । व्रजंगामी । शतंदायी ॥

कृत्यानां कर्तरि वा २ । ३ । ७१ ॥

पृष्ठी । मया मम वा सेव्यो हरिः । कर्तरि इति किम् । गेयो
 माणवकः साम्नाम् । भव्यगेय इति कर्तरि यद्विधानादनभिहितं
 कर्म । अत्र योगो विभज्यते कृत्यानाम् । उभयमासी इति न इति
 चानुवर्तते । तेन नेतव्या व्रजं गावः कृष्णेन । ततः कर्तरि वा
 उक्तोऽर्थः ॥

तुल्यार्थैस्तुलोपमाभ्यां तृतीयान्यतरस्याम् २ । ३ । ७२ ॥

तुल्यार्थयोगे तृतीया वा स्यात्पक्षे पृष्ठी । तुल्यः सदृशः समो
 वा कृष्णस्य कृष्णेन वा । अतुलोपमाभ्यां किम् । तुला उपमा वा
 कृष्णस्य नास्ति ॥

इति १०३ अंशाः ।

**चतुर्थी चाशिष्यायुप्यमद्रभद्रकुशलसुखार्थहितैः २ ।
 ३ । ७३ ॥**

एतदर्थैर्योगे चतुर्थी वा पक्षे षष्ठी आशिषि । आयुष्यं चिं
जीवितं कृष्णाय कृष्णस्य वा भूयात् । एवं मद्रं मद्रं कुशलं निगमयं
मुखं शम् अर्थः प्रयोजनं हितं पथ्यं वा भूयात् आशिषि किम् ।
देवदत्तस्यायुष्ममास्ति । व्याख्यानात्मवैत्रार्थग्रहणम् । मद्रमद्रयोः
पर्यायत्वादन्यतरो न पठनीयः ॥

क्तस्येन्विपयस्य कर्मण्युपसंख्यानम् ❀ ॥

अधीती व्याकरणे । अधीतमनेनेति विग्रहे इष्टादिभ्यश्च इति
कर्तरीनिः ॥

साध्वसाधुप्रयोगे च ❀ ॥

साधुः कृष्णो मातरि । असाधुर्मातुले । निमित्तात्कर्मयोगे
निमित्तमिह फलम् । योगः संयोगसमवायात्मकः । चर्मणि
द्वीपिनं हन्ति दन्तयोर्हन्ति कुञ्जरम् । केशेषु चर्मरौ हन्ति सीमि
पुष्कलको हतः ॥ हेतौ तृतीयात्र प्राप्ता । सीमाण्डकोशः । पुष्क-
लको गन्धमृगः । योगविशेषे किम् । वेतनेन धान्यं लुनाति ।
यस्य च भावेनेति सप्तम्युक्ता । अर्हाणां कर्तृत्वेऽनर्हाणामकर्तृत्वे
तद्विपरीत्ये च । सत्सु तरत्सु असन्त आसते । असत्सु तिष्ठत्सु
सन्तस्तरन्ति । सत्सु तिष्ठत्सु असन्तस्तरन्ति । असत्सु तगत्सु
सन्तस्तिष्ठन्ति ॥

षष्ठी चानादरे २ । ३ । ३८ ॥

अनादराधिक्ये भावलक्षणे षष्ठीसप्तम्यौ । रुदति रुदतो वा
प्राव्राजीत् । रुदन्तं पुत्रादिकमनादृत्य संन्यस्तवानित्यर्थः ॥

स्वामीश्वराधिपतिदायादसाक्षिप्रतिभूप्रसूतैश्च २ । ३ । ३९ ॥

एतैः सप्तभिर्योगे षष्ठीसप्तम्यौ । षष्ठ्यामेव प्राप्तायां साक्षिक-
सप्तम्यर्थं वचनम् । गवां गोषु वा स्वामी । गवां गोषु वा प्रसूतः ।
गा एवानुभवितुं जात इत्यर्थः ॥

आयुक्तकुशलाभ्यां चासेवायाम् २ । ३ । ४० ॥

आभ्यां योगे पञ्चीसप्तम्यौ स्तस्तात्पर्येऽर्थे । आयुक्तो व्यापा-
रितः आयुक्तः कुशलो वा हरिपूजने हरिपूजनस्य वा । आसेवा-
याम् किम् । आयुक्तो गौः शकटे । ईपद्युक्त इत्यर्थः ॥

पञ्चमी विभक्ते २ । ३ । ४२ ॥

विभागो विभक्तं निर्धार्यमाणस्य यत्र भेद एव तत्र पञ्चमी ।
माधुराः पाटलिपुत्रकेभ्य आद्यतराः ॥

साधुनिपुणाभ्यामर्चायां सप्तम्यप्रतेः २ । ३ । ४३ ॥

आभ्यां योगे सप्तमी स्यादर्चायाम् नतु प्रतेः प्रयोगे । मातरि
साधुनिपुणो वा । अर्चायां किम् । निपुणो राज्ञो भृत्यः । इह
नत्वकथने तात्पर्यम् ॥

अप्रत्यादिभिरिति वक्तव्यम् ❀ ॥

साधुनिपुणो वा मातरं प्रति पर्यनु वा ॥

प्रसितोत्सुकाभ्यां तृतीया च २ । ३ । ४४ ॥

आभ्यां योगे तृतीया स्याद्यात्सप्तमी । प्रसित उत्सुको हरिणा
हसौ वा ॥

नक्षत्रे च लुपि २ । ३ । ४५ ॥

नक्षत्रे प्रकृत्यर्थे यो लुप्तज्ञया लुप्यमानस्य प्रत्ययस्यार्थस्तत्र
वर्तमानातृतीयासप्तम्यौ । अधिकरणे—मूलेनावाहयेदेवीं श्रवणन
विसर्जयेत् । मूले श्रवण इति वा । लुपि किम् । पुण्ये शनिः ॥

सप्तमीपञ्चम्यौ कारकमध्ये २ । ३ । ७ ॥

शक्तिद्वयमध्ये यौ कालाध्वानौ ताभ्यामेते स्तः । अद्य भुक्त्वायं
व्यदे व्यहाद्वा भोक्ता । कर्तृशक्त्योर्मध्येऽयं कालः । इहस्योऽयं क्रोशे
क्रोशाद्वा लक्ष्यं विध्येत् । कर्तृकर्मशक्त्योर्मध्येऽयं देशः । अधिक-
शब्देन योगे सप्तमीपञ्चम्याविष्येते । तदास्मिन्नधिकम् इति य-
स्मादधिकम् इति च सूत्रनिर्देशात् । लोके लोकाद्वाधिको हरिः ॥

अधिरीश्वरे १ । ४ । ९७ ॥

रुपः । तिङा-पर्यभूषयत् । नाम्ना-कुम्भकारः । धातुना-कटग्रूः ।
 अजस्रम् । तिङां तिङा-पिबतखादता खादतमोदता । तिङां
 सुपा-कृन्तविचक्षणेति यस्यां क्रियायां मा कृन्तविचक्षणा । एही-
 डादयोऽन्यपदार्थे इति मयूरव्यंसकादौ पाठात्ममासः । समर्थः
 पदविधिः इति प्राग्व्याख्यातमनुसन्धेयम् ॥

प्राक्कडारात्समासः २ । १ । ३ ॥

कडाराः कर्मधारये इत्यतः प्राक् समास इत्यधिक्रियते ॥

सह सुपा २ । १ । ४ ॥

सह इति योगो विमज्यते । सुवन्तं समर्थेन सह समस्यते ।
 योगविभागस्येष्टसिद्धचर्धत्वात्कतिपयतिङन्तीत्तरपदोऽयं समासः ।
 स च छन्दस्येव । पर्यभूषयत् । अनुव्यचलत् । सुपा सुप्सुपा सह
 सस्यते । समासत्वात्प्रातिपादिकत्वम् । सुपो धात्विति सुपो लुक् ।
 भूतपूर्वं चरट् इति निर्देशाद् भूतशब्दस्य पूर्वनिपातः । पूर्व भूतो
 भूतपूर्वः । इवेन समासो विभक्त्यलोपश्च । जीभूतस्येव ॥

अव्ययीभावः २ । १ । ५ ॥

अधिकारोऽयम् । अव्ययं विभक्तीति सूत्रेऽव्ययमिति योगो
 विमज्यते । अव्ययं समर्थेन समस्यते सोऽव्ययीभावः । दिशयोर्म-
 ध्यमपदिशम् । ह्रीवाव्ययं त्वपदिशं दिशोर्मध्ये विदिक् स्त्रिया-
 मित्यमरः । अयं विभक्त्यर्थादिषु । हरी इत्यधि हरि । सप्तम्यर्थस्यै-
 वात्र द्योतकोऽधिः । अत्र निपातेनाभिहितेऽप्याधिकरणे वचनसाम-
 र्थ्यात्सप्तमी । समीपे-कृष्णस्य समीपमुपकृष्णम् । समया ग्रामम् ।
 निकषा लङ्गाम् । आरादनादित्यत्र तु नाव्ययीभावः । अभितः
 ५।१७. अन्यारात् इति द्वितीयापञ्चम्योर्विधानसामर्थ्यात् । मद्राणां
 समृद्धिः सुमद्रम् । बहुलग्रहणात्सुमद्रमुन्मत्तगङ्गामित्यादां मत्तम्या
 नित्यमम्भावः । यवनानां वृद्धिर्दुर्वयनम् । विगता ऋद्धिर्दुद्धिः ।
 माशिकाणामभावो निर्मोक्षिकम् । हिमस्यात्ययोऽतिहिमम् । अत्ययो
 ध्वंसः निद्रा मंप्राति न युज्यत इत्यतिनिद्रम् । हरिशब्दस्य प्रकाश

अपविष्णु संसारः अपविष्णोः । परिविष्णु परिविष्णोः ।
वहिर्वनं वहिर्वनात् । प्राग्वनं प्राग्वनात् ॥

इति १०५ अंशः ।

आङ्मर्यादाभिविध्योः २ । १ । १३ ॥

एतयोराङ् पञ्चम्यन्तेन वा समस्यते सोऽव्ययीभावः । आमु-
क्ति संसारः आमुक्तेः । आवालं हरिमक्तिः आवालेभ्यः ॥

लक्षणेनाभिप्रती आभिमुख्ये २ । १ । १४ ॥

आभिमुख्यद्योतकाभिप्रती चिद्ववाचिना सह प्राग्वत् । अभ्यग्नि
शलमाः पतन्ति अग्निमभि । प्रत्यग्नि अग्नि प्रति ॥

पारे मध्ये पष्ठ्या वा २ । १ । १८ ॥

पारमध्यशब्दौ पष्ठ्यन्तेन सह वा समस्यते । एदन्तत्वं चान-
योर्निपात्यते । पक्षे पष्ठीतत्पुरुषः । पारेगङ्गादानय गङ्गापारात् ।
मध्येगङ्गात् गङ्गामध्यात् । महाविभापया वाक्यमपि । गङ्गायाः
पारात् । गङ्गाया मध्यात् ॥

समासान्ताः ५ । ४ । ६८ ॥

इत्यधिकृत्य ॥

अव्ययीभावे शरत्प्रभृतिभ्यः ५ । ४ । १०७ ॥

शरदादिभ्यष्टच्स्यात्समासान्तोऽव्ययीभावे । शरदः समीपमुप-
शरदम् । प्रतिविपाशम् । शरद् विपाश् अनस् मनस् उपानह
दिब् हिमवत् अनडुह् दिश् दृश् विश् चेतस् चतुर् त्यद् तद् यद्
कियत् जराया जरस् च उपजरसम् । प्रतिपरसमनुभ्योऽक्ष्णः य-
स्येति च प्रत्यक्षम् । अक्ष्णः परम् इति विग्रहे समासान्तविधानसा-
मर्थ्यादव्ययीभावः । परोक्षे लिट् इति निपातनात्परस्यौकारादेशः ।
परोक्षम् । परोक्षा क्रिया इत्यादि तु अर्श आद्यचि । समक्षम् ।
अन्वक्षम् ॥

अनश्च ५ । ४ । १०८ ॥

अन्नन्तादव्ययीमावाहृत् ॥

नस्तद्धिते ६ । ४ । १४४ ॥

नान्तस्य भस्य देहोपस्तद्धिते । उपगजम् । अग्यागम् ॥

नपुंसकादन्यतरस्याम् ५ । ४ । १०९ ॥

अन्नन्तं यत्कीर्षं तदन्तादव्ययीमावाहृत् । उपनमम् उपनमम् ॥

ज्ञयः ५ । ४ । १११ ॥

अपन्तादव्ययीमावाहृत् । उपममिध उपममिन् ॥

गिरेश्व सेनकस्य २ । ४ । ११२ ॥

गिर्यन्तादव्ययीमावाहृत् । उपगिर् उपगिर् । इत्यव्ययीमावः ॥

तत्पुरुषः २ । १ । २२ ॥

प्राग्वद्ब्रह्मोद्धारधिकारः ॥

द्विगुश्च २ । १ । २३ ॥

द्विगुरपि तत्पुरुषगंज्ञः । इदं सर्वं त्यक्तुं शक्यम् । गंख्यापूर्वो द्वि-
गुश्चेति पठित्वा चक्राग्नयेन संज्ञाद्वयसमावेशस्य भुवचत्वात् ।
समामान्तः प्रयोजनम् । पञ्चगजम् ॥

द्वितीयाश्रितातीतपतितगतात्यस्तप्राप्तापन्नेः २ । १ ।
२४ ॥

द्वितीयान्तं श्रितादिप्रकृतिकैः भुवन्तः मह वा समम्यन्ते स
तत्पुरुषः । कृष्णं श्रितः कृष्णश्रितः । दुःखमर्त्तानो दुःखार्त्तानः ॥

गम्यादीनामुपसंख्यानम् ॥ ॥

प्राप्तं गमी प्राप्तगमी । अक्षं बुभुक्षुन्नबुभुक्षुः ॥

पूर्वसदृशसमोनार्थकलहनिपुणमिश्रइलङ्घ्यः २ । ३ । ३१ ॥

द्वितीयान्तमेतः प्राग्वत् । मामपूर्वः । मात्रमदशः । निवृत्तमः ।
ऊनापे मापोनं कर्षाणम् । मापारिक्तम् । वास्तवः । आचार-
निपुणः । गुदमिश्रः । आचारइलङ्घ्यः । मिश्रप्रदणे मोहनगंस्यादि

ग्रहणम् । मिश्रं चानुपसर्गमसंधौ इत्यत्रानुपसर्गग्रहणात् । गुडसंमिश्रा धानाः ॥

अवरस्योपसंख्यानम् ॐ ॥

मासेनावरो मासावरः । कर्तृकरणे कृता बहुलम् । हरित्रातः । नखभिन्नः । कृद्ग्रहणे गतिकारकपूर्वस्यापि ग्रहणम् । नखनिर्भिन्नः । कर्तृकरणे इति किम् । भिक्षामिरूपितः । हेतवेया तृतीया । बहुलग्रहणं सर्वोपाधिव्यभिचारार्थम् । तेन दात्रेण लूनवान् इत्यादी न । कृता किम् । काष्ठैः पचतितराम् ॥

अन्नेन व्यञ्जनम् २ । १ । ३४ ॥

संस्कारकद्रव्यवाचकं तृतीयान्तमन्नेन प्राग्वत् । दध्ना ओदनो दध्योदनः । इहान्तर्भूतोपसेकक्रियाद्वारा सामर्थ्यम् ॥

भक्ष्येण मिश्रीकरणम् २ । १ । ३५ ॥

गुडेन धाना गुडधानाः । मिश्रणक्रियाद्वारा सामर्थ्यम् ॥

चतुर्थी तदर्थार्थबलिद्वितसुखरक्षितैः २ । १ । ३६ ॥

चतुर्थ्यन्तार्थाय यत्तद्वाचिनार्थादिभिश्च चतुर्थ्यन्तं वा प्राग्वत् । तदर्थेन प्रकृतिविकृतिभाव एव । बलिरक्षितग्रहणाज्ज्ञापकात् । यृपाय दारु यूपदारु । नेह । रन्धनाय स्थाली । अश्वघासादयस्तु पृष्ठीसमासाः ॥

अर्थेन नित्यसमासो विशेष्यलिङ्गता चेति वक्तव्यम् ॐ ॥

द्विजायार्थं द्विजार्थः सूपः । द्विजार्था यवागूः । द्विजार्थं पयः । भृतबलिः । गोद्वितम् । गोसुखम् । गोरक्षितम् ॥

पञ्चमी भयेन २ । १ । ३७ ॥

चोराद् भय चोरमयम् । पृष्ठी-राजपुरुषः ॥

भयभीतभीतिभीभिरिति वाच्यम् ॐ ॥

वृकभीतः ॥

स्तोकान्तिकदूरार्थकृच्छ्राणि क्तेन २ । १ । ३९ ॥

स्तोकान्मुक्तः । अल्पान्मुक्तः । अन्तिकादागतः । अभ्याशादा-
गतः । दूरादागतः । विमृष्टादागतः । कृच्छ्रादागतः । पञ्चम्या-
स्तोकादिभ्यः इत्यलुक् ॥

याजकादिभिश्च २ । २ । ९ ॥

एभिः पष्ठ्यन्तं समस्यते । वृजकाभ्यां कर्त्तरि इत्यस्य प्रतिप्रस-
वोऽयम् । ब्राह्मणयाजकः । देवपूजकः ॥

गुणात्तरेण तरलोपश्चेति वक्तव्यम् ॐ ॥

तरयन्तं यद्वृणवाचि तेन सह समासस्तर्लोपश्च । न निर्धा-
रणे इति पूरणगुण इति च निषेधस्य प्रतिप्रसवोऽयम् । सर्वेषां श्वेत-
तरः सर्वश्वेतः । सर्वेषां महत्तरः सर्वमहान् ॥

इति १०६ अंशः ।

कृद्योगा च पष्ठी समस्यत इति वाच्यम् ॐ ॥

इध्मस्य व्रश्चन इध्मव्रश्चनः ॥

न निर्धारणे २ । २ । १० ॥

निर्धारणे या पष्ठी सा न समस्यते । नृणां द्विजः श्रेष्ठः ॥

प्रतिपदविधाना पष्ठी न समस्यत इति वाच्यम् ॐ ॥

सर्पिषो ज्ञानम् ॥

पूरणगुणसुहितार्थसद्व्ययतव्यसमानाधिकरणे न २ ।

२ । ११ ॥

पूरणाद्यर्थः सदादिभिश्च पष्ठी न समस्यते । पूरणे-मता पष्ठः ।
गुणे-वाकस्य काष्ण्यम् । ब्राह्मणस्य शुक्राः । यदा प्रकृष्णादिना
दन्ता इति विशेष्यं ज्ञातं तदेदमुदाहरणम् । अनित्योभ्यं गुणेन
निषेधः । तदशिष्यं संज्ञाप्रमाणत्वात् इत्यादिनिर्देशात् । तेन अर्थ-
गौरवं बुद्धिमान्द्यं इत्यादि सिद्धम् । सुहितार्थास्त्वस्यथाः । फलानां
सुहितः । तृतीयासमामस्तु स्यादेव । स्वरं विशेषः । सत्-द्विजस्य

कुर्वन् कुर्वाणो वा । किंकर इत्यर्थः । अव्ययम्—ब्राह्मणस्य कृत्वा । पूर्वोत्तरसाहचर्यात्कृदव्ययमेव—गृह्यते । तेन तदुपरि इत्यादिसिद्धमिति रक्षितः । तव्यः—ब्राह्मणस्य कर्तव्यम् । तव्यता तु भवत्येव । स्वकर्तव्यम् । स्वरे भेदः समानाधिकरणे । तक्षकस्य सर्पस्य विशेषणसमासस्त्विह बहुलग्रहणान्न । गोर्धेनोः इत्यादिषु षोडशुवति इत्यादीना विमत्त्यन्तरे चरितार्थानां परत्वाद्वाधकः षष्ठीसमासः प्राप्तः सोऽप्यनेन वार्यते ॥

क्तेन च पूजायाम् २ । २ । १२ ॥

मतिबुद्धि इति सूत्रेण विहितो यः क्तस्तदन्तेन षष्ठी न समस्यते । राज्ञा मतो बुद्धः पूजितो वा । राजपूजितः इत्यादी तु भूते क्तान्तेन सह तृतीयान्तस्य समासः ॥

अधिकरणवाचिना च २ । २ । १३ ॥

क्तेन षष्ठी न समस्यते । इदमेवामासितं गतं भुक्तं वा ॥

कर्मणि च २ । २ । १४ ॥

उभयमासी कर्मणि इति या षष्ठी सा न स मस्यते । आश्चर्यो गवां दोहोऽगोपेन ॥

तृजकाभ्यां कर्तरि २ । २ । १५ ॥

कर्त्रर्थतृजकाभ्या षष्ठ्या न समासः । अपां स्रष्टा । व्रजस्य भर्ता । ओदनस्य पाचकः । कर्तरि किम् । इक्षूणां भक्षणमिक्षुभक्षिका । पत्यर्थमर्तृशब्दस्य याजकादेत्वात्समासः । भूभर्ता । कथं तर्हि, घटानां निर्मातुस्त्रिभुवनविधातुश्च कलहः इति । शेषषष्ठ्या समासः इति कैयटः ॥

कर्तरि च २ । २ । १६ ॥

कर्तरि षष्ठ्या अकेन न समासः । भवतः शायिका । नेह तृजनुवर्तते । तद्योगे कर्तुरभिहितत्वेन कर्तृषष्ठ्या अभावात् ॥

नित्यं क्रीडाजीविकयोः २ । २ । १७ ॥

एतयोरर्थयोरकेन नित्यं पृष्ठी समस्यते । उद्दालकपुष्पमञ्जिका ।
क्रीडाविशेषस्य संज्ञा । संज्ञायाम् इति भावे ण्वुल् । जीविकायां
दन्तलेखकः । तत्र क्रीडायां विकल्पे जीविकायां वृजकाभ्यां कर्तरि
इति निषेधे प्राप्ते वचनम् ॥

पूर्वापराधरोत्तरमेकदेशिनैकाधिकरणे २ । २ । १ ॥

अवयविना सह पूर्वादयः समस्यन्ते । एकत्वसंख्याविशिष्टश्चेद-
वयवी । पृष्ठीसमाप्तापवादः । पूर्वं कायस्य पूर्वकायः । अपरकायः ।
एकदेशिना किम् । पूर्वं नामेः कायस्य । एकाधिकरणे किम् ।
पूर्वशब्दाप्राणाम् । सर्वोऽप्येकदेशोऽज्ञा समस्यते । संख्याविज्ञाय इति
ज्ञापकात् । मध्याद्वा । सायाद्वा । केचित्तु सर्व एकदेशः कालेन
समस्यते न त्वद्वैव ज्ञापकस्य सामान्यापेक्षत्वात् । तेन मध्यरात्रः ।
वपारताः पश्चिमरात्रगोचरात् इत्यादि सिद्धम् इत्याहुः ॥

अर्धं नपुंसकम् २ । २ । २ ॥

समांशवाच्यार्धशब्दो नित्यं स्त्रीवे प्राग्वत् ॥

एकविभक्तावपष्टयन्तवचनम् ॥

एकदेशिसमासविषयकोऽयमुपसर्जनसंज्ञानिषेधः । तेन पञ्चखटी
इत्यादि सिध्यति । अर्धं पिप्पल्या अर्धपिप्पली । स्त्रीने किम् ।
ग्रामार्धः । द्रव्यैक्य एव । अर्धं पिप्पलीनाम् ॥

सप्तमी शौण्डैः २ । १ । ४० ॥

सप्तम्यन्तं शौण्डादिभिः प्राग्वद्वा । अक्षेणु शौण्डोऽक्षशौण्डः ।
अधिशब्दोऽत्र पठ्यते । अपडक्षेत्यादिना अध्युत्तर्गदात् खः ।
ईश्वराधीनः ॥

संज्ञायाम् २ । १ । ४४ ॥

सप्तम्यन्तं मुषा प्राग्वत्संज्ञायाम् । वाक्येन संज्ञानवगमान्नित्य-
समासोऽयम् । अण्ये तिलकाः । वने कञ्जोरुकाः । दलदन्तात्सप्तम्याः
इत्यलुक् ॥

क्षेपे २ । १ । ४७ ॥

मत्स्यन्तं क्तान्तेन प्राग्वन्निन्दायाम् । अवतप्ते नकुलस्थितं
त एतत् ॥

पात्रे समितादयश्च २ । १ । ४८ ॥

एते निपात्यन्ते क्षेपे । पात्रे समिताः भोजनसमय एव संगता
न तु कार्ये । गेहे शूरः । गेहे नदी । आकृतिगणोऽयम् । चकारोऽभ-
धारणार्थः । तेनैषा समासान्तरे घटकतया प्रवेशो न । परमाः
पात्रे समिताः ॥

पूर्वकालैकसर्वजरत्पुराणनवकेवलाः समानाधिकर-
णेन २ । १ । ४९ ॥

विशेषणं विशेष्येण इति सिद्धे पूर्वेनिपातनियमार्थं सूत्रम् ।
एकशब्दस्य दिक्संख्ये संज्ञायाम् इति नियमबाधनार्थं च । पूर्वं
स्नातः पश्चादनुलिप्तः स्नातानुलिप्तः । एकनाथः । सर्वपाशिकाः ।
जरन्नैकायिकाः । पुराणमीमासकाः । नवपाठकाः । केवलवैयाकरणाः ॥
इति १०७ अंशाः ।

दिक्संख्ये संज्ञायाम् २ । १ । ५० ॥

समानाधिकरणेन इत्यापादपरिसमाप्तेरधिकारः । संज्ञायामेव
इति नियमार्थं सूत्रम् । पूर्वेषुकामशमी । सत्तर्पयः । नेह । उत्तरा
वृक्षाः । पञ्च ब्राह्मणाः ॥

तद्धितार्थोत्तरपदसमाहारे च २ । १ । ५१ ॥

तद्धितार्थे विषयउत्तरपदे च परतः समाहारे च वाच्ये, दिक्सं-
ख्ये प्राग्वद्वा । पूर्वस्था शालाया भव. पूर्वशालः । समाप्ते कृते
दिक्पूर्वपदादसंज्ञाया अ. इति अः ॥

सर्वनाम्नो वृत्तिमात्रे पुंवद्भावः ❀ ॥

अपरशालः । पूर्वा शाला प्रिया यस्येति त्रिपदेवहुव्रीहौ कृते
प्रियाशब्द उत्तरपदे पूर्वयोस्तत्पुरुषः । तेन शालाशब्द आकार
उदात्तः । पूर्वशालाप्रियः । दिक्षु समाहारो नास्त्यनभिधानात् ।

ख्यायास्तद्धितायै। पण्णां मातृणामपत्यं पाण्मातुरः । पञ्च गावो नं यस्येति त्रिपदे बहुव्रीह्यान्तरतत्पुरुषस्य विकल्पे प्राप्ते ढन्ढ-
त्पुरुषयोरुत्तरपदे नित्यसमासवचनम् ॥

गोरतद्धितलुकि ५ । ४ । ९२ ॥

गोऽन्तात्तत्पुरुषादृच्स्यात्समासान्तो न तद्धितलुकि । पञ्चगव-
नः । उत्तरपदे त्रयाणां लोकानां नाथस्त्रिलोकनाथ इत्यप्युदाह-
रति । तादृशान्यन्ये न मन्यन्ते । पञ्चानां गवां समाहारः ।
ख्यापूर्वो द्विगुः । द्विगुरेकवचनम् । स नपुंसकम् । पञ्चगवम् ।
हगोरिति ङीष् । पञ्चपात्रम् । विशेषणं विशेष्येण बहुलम् ।
लेमुत्पलं नीलोत्पलम् । बहुलग्रहणात् कचेन्नित्यम् । कृष्णसर्पः ।
चित्र । रामो जामदग्न्यः ॥

पूर्वापरप्रथमचरमजघन्यसमानमध्यमध्यमयीराश्च २ ।

। ५८ ॥

पूर्वनिपातनियमार्थमिदम् । पूर्ववैयाकरणः । अपराध्यापकः ॥

अपरस्यार्थे पञ्चभागो वक्तव्यः ❀ ॥

अपरश्चासावर्धश्च पञ्चार्धः । कथम् एकवीर इति । पूर्वकालेन
ति बाधित्वा परत्वादेन समासे वीरैक इति हि स्यात् । बहुलग्र-
णाद् भविष्यति ॥

श्रेण्यादयः कृतादिभिः २ । १ । ५९ ॥

श्रेण्यादिषु च्यर्थवचनं कर्तव्यम् ❀ ॥

अश्रेणयः श्रेणयः कृताः श्रेणीकृताः ॥

तेन नञ्विशिष्टेनानञ् २ । १ । ६० ॥

नञ्विशिष्टेन क्तान्तेनानञ्क्तान्तं समस्यते । कृतं च तदकृतं च
कृताकृतम् ॥

**शाकपार्थिवादीनां सिद्धय उत्तरपदलोपस्योपसंख्या-
म् ❀ ॥**

शाकप्रियः प्रार्थिवः शाकप्रार्थिवः । देवब्राह्मणः ॥

सन्महत्परमोत्तमोत्कृष्टाः पूज्यमानैः २ । १ । ६१ ॥

संदयः । वक्ष्यमाणेन महत् आकारः । महावियाकरणः । पूज्य-
मानैः किम् । उत्कृष्टो गौः । पञ्चादुद्धृत इत्यर्थः ॥

किं क्षेपे २ । १ । ६२ ॥

कुत्सितो राजा किं राजा यो न रक्षति । पुंवत् कर्मधारयजाती-
यदेशीयेषु पृष्णीप्रियादिष्वमाप्तः पुंवद्भावोऽनेन विधीयते । महा-
नवमी । कृष्णचतुर्दशी । महाप्रिया । तथा कोपधादेः प्रतिपिद्धः
पुंवद्भावः कर्मधारयादौ प्रतिपसूयते । पाचकस्त्री । दत्तमार्या ।
पञ्चममार्या । सौम्यमार्या । सुवेशमार्या । ब्राह्मणमार्या । एवं
पाचकजातीया । पाचकदेशीया इत्यादि ॥

प्रशंसावचनैश्च २ । १ । ६३ ॥

पतः सह जातिः प्राग्बत् । गोमतल्लिका । गोमचरिका ।
गोप्रफण्डम् । गोपटः । गोतल्लजः । प्रगस्ता गौरित्यर्थः । मत-
ल्लिकादयो नियतलिङ्गा नतु विशेष्यनिष्ठाः । जातिः किम् । कु-
मारी मतल्लिका ॥

मयूरव्यंसकादयश्च २ । १ । ७२ ॥

एते निपात्यन्ते । मयूरो व्यंगकः मयूरव्यंगकः । व्यंगको
पुनः । उदाहृ चाराकृ चोपासनम् । निश्चितं च प्रयितं च निश्च-
यम् । नास्ति किञ्चन यस्य गोशरिचनः । नास्ति पुनोऽपि मये
यस्य गोऽपुनोमयः । अन्यो गता गतान्तरम् । सिद्धं चिन्मात्रम् ॥

आख्यातमाख्यातेन क्रियासानत्ये ॥

भग्रीन विवर्तयेत् गतं यत्राभिधीयते गाभ्रीनविपत्ता ।
तत्तत्तत्तत् । आदत्तमोदता ॥

पद्मीदादयोऽन्यपदार्थे ॥

परीर इति यस्मिन्मन्त्रे नोदरीरम् । पारिषयम् । उदर को-

ष्ठादुत्सृज देहीति यस्यां क्रियायां सोद्वरोत्सृजा । उद्धमविधमा ।
असातत्यार्थमिह पाठः ॥

जहिकर्मणा बहुलमाभीक्ष्ण्ये कर्तारं चाभिदधाति ॥

जहीत्येतत्कर्मणा बहुलं समस्यते आभीक्ष्ण्ये गम्ये । समासेन
चेत्कर्ताभिधीयत इत्यर्थः । जहिजोडः । जहिस्तम्बः । नञ् । अत्रा-
हणः । अनश्वः । अर्थमावेज्ययीभावेन सहायं विकल्प्यते ।
रक्षोहागमलब्धसंदेहाः प्रयोजनम् इति । अद्भुतायामसंहितम् इति
च भाष्यवार्तिकप्रयोगात् । तेन अनुपलब्धिः । अविवादः । अवि-
घ्नम् । इत्यादि मिद्धम् । नञो नलोपस्तिङि क्षेपे । अपचसि त्वं
जालम् । नैकधा इत्यादौ तु नशब्देन सह सुपा इति समासः ॥

नभ्राण्नपान्नवेदानासत्यानमुचिनकुलनखनपुंसकन-
क्षत्रनक्रनाकेषु प्रकृत्या ६ । ३ । ७५ ॥

पाद् इति शत्रन्तः । वेदाः इत्यमुन्नन्तः । न सत्या असत्याः न
असत्या नासत्याः । न मुञ्चतीति नमुचिः । न कुलमम्य । न ख-
मस्य । न स्त्री पुमान् । स्त्रीपुंसयोः पुंसकमावो निपातनात् । न
क्षरतीति नक्षत्रम् । क्षीयतेः क्षरतेर्वा क्षत्रमिति निपात्यते । न
क्रामतीति नक्रः । क्रमेर्ङः । न अक्मस्मिन्निति नाकः ॥

नगोऽप्राणिष्वन्यतरस्याम् ६ । ३ । ७७ ॥

नग इत्यत्र नञ्प्रकृत्या वा । नगाः अगाः पर्वताः । अप्राणिषु
इति किम् । अगो वृषलः । शीते न ॥

इति १०८ अंशः ।

कुगातिप्रादयः । कुपुरुषः । ऊर्यादिच्चिडाचश्च । ऊरीकृत्य ।
शुक्लीकृत्य । पटपटाकृत्य ॥

कारिकाशब्दस्योपसंख्यानम् ❀ ॥

कारिका क्रिया कारिकाकृत्य ॥

अनुकरणं चानितिपरम् १ । ४ । ६२ ॥

खाद्कृत्य अनितिपरं किम् । खाडिति कृत्वा निरष्टीवत् ॥

आदरानादरयोः सदसती १ । ४ । ६३ ॥

सत्कृत्य । असत्कृत्य ॥

भूषणेऽलम् १ । ४ । ६४ ॥

अलंकृत्य । भूषणे किम् । अलं कृत्वौदनं गतः । पर्याप्तमित्यर्थः ।

अनुकरणम् इत्यादिप्रिसूत्री स्वभावात्कृत्विविषया ॥

पुरोऽव्ययम् १ । ४ । ६७ ॥

पुरस्कृत्य ॥

तिरोऽन्तर्धौ १ । ४ । ७१ ॥

तिरोभूय ॥

विभाषा कृञि १ । ४ । ७२ ॥

तिरस्कृत्य तिरकृत्य तिरकृत्वा ॥

साक्षात्प्रभृतीनि च १ । ४ । ७४ ॥

कृञि वा गतिसंज्ञानि स्युः ॥

चवर्थ इति वाच्यम् ❀ ॥

साधात्कृत्य साक्षात्कृत्वा । लवणं कृत्य लवणं कृत्वा । मान्तत्वं निपातनात् ॥

अनत्याधान उरसिमनसी १ । ४ । १५ ॥

उरसिकृत्य उरसिकृत्वा । अभ्युपगम्येत्यर्थः । मनसिकृत्य मनसिकृत्वा । निश्चित्येत्यर्थः । अत्याधानमुपश्लेषणं तत्र न । उरसि कृत्वा पाणिं शेते ॥

नित्यं हस्ते पाणावुपयमने १ । ४ । ७७ ॥

कृञि । उपयमनं विवाहः । स्वीकारमात्रम् इत्यन्ये । हस्ते कृत्य । पाणौ कृत्य । कुगतीत्यत्र प्रादिग्रहणमगत्यर्थम् । सुपुरुषः । अत्र वार्तिकानि । प्रादयो गताद्यर्थे प्रथमया । प्रगत आचार्यः प्राचार्यः । अत्यादयः क्रान्ताद्यर्थे द्वितीयया । अतिक्रान्तो मालामतिमालः ।

अवादयः कुष्टाद्यर्थे तृतीयया । अवकुष्टः कोकिलयावकोकिलः ।
पर्यादयो ग्लानाद्यर्थे चतुर्थ्या । परिग्लानोऽध्ययनाय पर्यध्ययनः ।
निरादयः क्रान्ताद्यर्थे पञ्चम्या । निष्क्रान्तः कौशाम्ब्याः निष्कौ-
शाम्बिः । कर्मप्रदचनीयानां प्रतिषेधः । वृक्षं प्रति । उपपदमतिङ् ।
कुम्भकारः । गतिकारकोपपदानां कृद्भिः सह समासवचनं प्राक्^{२४}
सुबुत्पत्तेः । व्याघ्री । अश्वक्रीती । कच्छपी । इदं परिभाषामु^{२५}
स्फुटीभविष्यति ॥

अभैवाव्ययेन २ । २ । २० ॥

अभैव तुल्यविधानं यदुपपदं तदेवाव्ययेन सह समस्यते ।
स्वादुंकारम् । नेह । कालसमयवेलासु तुमुन् । कालः समयो वेला वा
भोक्तुम् । अभैव इति किम् । अग्रेभोजम् । अग्रे भुक्त्वा । विभा-
षाग्रे प्रथमपूर्वेषु इति क्त्वाणमुलौ । अमा चान्येन च तुल्यविधान-
मेतत् ॥

तृतीयाप्रभृतीन्यन्यतरस्याम् २ । २ । २१ ॥

उपदंशस्त्वृतीयायाम् इत्यादीन्युपपदान्यमन्तेनाव्ययेन सह वा
समस्यन्ते । मूलकेनोपदंशं भुंक्ते मूलकोपदंशम् ॥

क्त्वा च २ । २ । २२ ॥

तृतीयाप्रभृतीन्युपपदानि क्त्वान्तेन सह वा समस्यन्ते । उच्चैः-
कृत्य उच्चैः कृत्वा । अव्ययेऽयथाभिप्रेत इति क्त्वा । तृतीयाप्र-
भृतीनि इति किम् । अलंकृत्वा । खलुकृत्वा ॥

तत्पुरुषस्याङ्गुलेः संख्याव्ययादेः ५ । ४ । ८६ ॥

संख्याव्ययादेरङ्गुल्यन्तस्य तत्पुरुषस्य समासान्तोऽच्स्यात् । द्वे
अङ्गुली प्रमाणमस्य व्यङ्गुलं दारु । निर्गतमङ्गुलिभ्यो निरङ्गुलम् ॥

अहःसर्वैकदेशसंख्यातपुण्याच्च रात्रेः ५ । ४ । ८७ ॥

एभ्यो रात्रेरच्स्याच्चात्संख्याव्ययादेः । अहर्ग्रहणं द्वन्द्वार्थम् ।
अहश्च रात्रिश्चाहोरात्रः । सर्वा रात्रिः सर्वरात्रः । पूर्व रात्रेः पूर्वरात्रः ।

संख्यातंरात्रः । पुण्यरात्रः । द्वयो रात्र्योः समाहारो द्विरात्रम् ।
अतिक्रान्तो रात्रिमतिरात्रः ॥

राजाहःसखिभ्यष्टच् ५ । ४ । ९१ ॥

एतदन्तात्तत्पुरुषाष्टच् । परमराजः । अतिराजी । कृष्णसखः ॥

अह्णष्टखोरेव ६ । ४ । १४५ ॥

एतयोरेव परतोऽह्णष्टिलोपः स्यान्नान्यत्र । उत्तमाहः । द्वे अहनी
भृतो व्यहीनः क्रतुः । तद्धितार्थे द्विगुः । तमधीष्टः इत्यधिकारे
द्विगोर्वा इत्यनुवृत्तौ रात्र्यहःसंवत्सराच्च इति खः । लिङ्गावेशिष्टप-
रिभाषाया अनित्यत्वान्नेह । मद्राणां राज्ञी मद्रराज्ञी ॥

अह्नोऽह्ण एतेभ्यः ५ । ४ । ८८ ॥

सर्वादिभ्यः परस्याहन्शब्दस्याह्नादेशः स्यात्समाप्तान्तेपरे ॥

अह्नोऽदन्तात् ८ । ४ । ७ ॥

अदन्तपूर्वपदस्थाद्रेफात्परस्याह्नोऽह्नादेशस्य नस्य णः । सर्वाह्नः ।
पूर्वाह्नः । संख्याताह्नः । द्वयोर्ह्नोर्मवः । कालाह्न । द्विगोर्लुगनपत्ये
इति ठञो लुक् । व्यह्नः । स्त्रियामदन्तत्वाद्वाप् । व्यह्ना । व्यह्नप्रियः ।
अत्यह्नः ॥

क्षुभ्रादिषु च ८ । ४ । ३९ ॥

एषु णत्वं न स्यात् । दीर्घाह्नी प्रावृट् । एवं चैतदर्थमह्न इत्यद-
न्तानुकरणश्लेशो न कर्तव्यः । प्रातिपदिकान्त इति णत्ववारणाय ।
क्षुभ्रादिषु पाठस्यावश्यकत्वात् । अतः इति तपरकरणान्नेह । पग-
गतमहः पराह्नः ॥

न संख्यादेः समाहारे ५ । ४ । ८९ ॥

समाहारे वर्तमानस्य संख्यादेरह्नादेशो न । संख्यादेः इति स्प-
ष्टार्थम् । द्वयोर्ह्नोः समाहारो व्यहः । व्यहः ॥

इति १०९ अंशाः ।

उत्तमैकाभ्यां च ५ । ४ । ९० ॥

आभ्यामद्वादेशो न । उत्तमशब्दोऽन्त्यार्थः पुण्यशब्दमाह ।
पुण्यैकाभ्याम् इत्येव सूत्रयितुमुचितम् । पुण्याहम् । सुदिनाहम् ।
सुदिनशब्दः प्रशस्तवाची । एकाहः । उत्तमग्रहणमुपान्त्यस्यापि
संग्रहार्थम् इत्येके । संख्याताहः ॥

अनोऽमायःसरसां जातिमंज्ञयोः ५ । ४ । ९१ ॥

टच्स्याज्जाती संज्ञायां च । उपानसम् । अमृताश्मः । काला-
यसम् । मण्डूकसरसम् । इति जातिः । महानसम् । पिण्डाश्मः ।
लोहितायसम् । जलसरसम् । इति संज्ञा ॥

ग्रामकौटाभ्यां च तक्षः ५ । ४ । ९२ ॥

ग्रामस्य तक्षा ग्रामतक्षः । साधारण इत्यर्थः । कुट्यां भवः
कौटः स्वतन्त्रः । स चासौ तक्षा च कौटतक्षः ॥

अतेः शुनः ५ । ४ । ९३ ॥

अतिश्वो वराहः । अतिश्वी सेना ॥

उपमानादप्राणिषु ५ । ४ । ९४ ॥

अप्राणिविषयकोपमानवाचिनः शुनष्ट्च । आकर्षः श्वेवाकर्षश्वः ।
अप्राणिषु किम् । वानरः श्वेव वानरश्वा ॥

उत्तरमृगपूर्वाच्च सक्थः ५ । ४ । ९५ ॥

चादुपमानात् । उत्तरसक्थम् । मृगसक्थम् । पूर्वसक्थम् । फल-
कामिव सक्थि फलकसक्थम् ॥

नावो द्विगोः ५ । ४ । ९६ ॥

नौशब्दान्ताद्विगोष्ट्च नतु तद्धितलुकि । द्वाभ्यां नौभ्यामागतौ
द्विनावरूप्यः । द्विगोर्लुगनपत्ये इत्यत्र अचि इत्यस्यापकर्षणादला-
देर्न लुक् । पञ्चनावभियः । द्विनावम् । त्रिनावम् । अतद्धितलुकि
इति किम् । पञ्चभिर्नौभिः क्रीतः पञ्चनौः ॥

अर्धाच्च ५ । ४ । ९७ ॥

अर्धान्नावष्टच् । नागोर्धम् अर्धनावम् । ह्रीवत्वं लोकात् ॥

स्वार्याः प्राचाम् ५ । ४ । १०१ ॥

द्विगोरर्धाच्च स्वार्याष्टज्वा । द्वितारम् द्वितारि । अर्धस्वारम् अर्धस्वारि ॥

द्वित्रिभ्यामञ्जलेः ५ । ४ । १०२ ॥

दज्वा द्विगौ । द्यञ्जलम् द्यञ्जलि । अतद्वितलुकि इत्येव । द्वाभ्यामञ्जलिभ्या क्रीतो द्यञ्जलिः ॥

आन्महतः समानाधिकरणजातीययोः ६ । ३ । ४६ ॥

महत आकारोन्तादेशः समानाधिकरण उत्तरपदे जातीये च परे । महादेवः । महाजातीयः । समानाधिकरणे किम् । महत्-सेवा महत्सेवा । लाक्षणिकं विहाय प्रतिपदोक्तः सन्महत इति समासो ग्रहीष्यत इति चेत् महाबाहुर्न स्यात्तस्मात् लक्षणप्रतिपदोक्तयोः प्रतिपदोक्तस्य इति परिभाषा नेह प्रवर्तते समानाधिकरणग्रहणसामर्थ्यात् । आत् इति योगविभागादात्वं प्रागेकादशभ्यः इति निर्देशाद्वा । एकादश । महतीशब्दस्य पुंवत्कर्मधारय इति पुंवद्भावे कृत आत्वम् । महाजातीया ॥

महदात्वे घासकरविशिष्टेषूपसंख्यानं पुंवद्भावश्च ॥

असमानाधिकरण्यार्थमिदम् । महतो महत्या वा घासो महा घासः । महाकरः । महाविशिष्टः । अष्टनः कपाले हविषि । अष्टा-कपालः । गवि च युक्ते । गोशब्दे परे युक्त इत्यर्थे गम्येष्टन आत्वम् । अष्टागवं शकटम् । अच्यत्यन्वक् इत्यत्र अच् इति योगविभागाद्बहुव्रीहावप्यच् । अष्टाना गवा समाहारोऽष्टागवम् । तद्युक्तत्वाच्छकटमष्टागवमिति वा ॥

व्यष्टनः संख्यायामवहुव्रीह्यशीत्योः ६ । ३ । ४७ ॥

आत् । द्वौ च दश च द्वादश व्यधिकादशेति वा । द्वाविंशतिः । अष्टादश । अष्टाविंशतिः । अवहुव्रीह्यशीत्योः किम् । द्वित्रा. व्यशीतिः ॥

प्राक्शताद्वक्तव्यम् ॐ ॥

नेह । द्विशतम् । द्विसहस्रम् ॥

त्रेस्रयः ६ । ३ । ४८ ॥

त्रिशब्दस्य त्रयम् स्यात्पूर्वविषये । त्रयोदश । त्रयोविंशतिः । बहुव्रीहौ तु त्रिदश त्रिदशाः । मुज्ये बहुव्रीहिः । अंशीर्ता तु त्र्यशीतिः । प्राक्छतात् इत्येव । त्रिशतम् । त्रिसहस्रम् ॥

विभाषा चत्वारिंशत्प्रभृतौ सर्वेषाम् ६ । ३ । ४९ ॥

व्यष्टनोस्त्रिंशश्च प्रागुक्तं वा स्याच्चत्वारिंशदादौ परे । द्विचत्वारिंशत् द्वाचत्वारिंशत् । अष्टचत्वारिंशत् अष्टाचत्वारिंशत् । त्रिचत्वारिंशत् त्रयश्चत्वारिंशत् । एवं पञ्चाशत्पष्टिसप्ततिनवतिषु ॥

एकादिश्चैकस्य चादुक् ६ । ३ । ७६ ॥

एकादिर्नञ् प्रकृत्या स्यादेकस्य चादुगागमश्च । नञो विंशत्या समासे कृत एकशब्देन सह तृतीया इति योगविभागात्समासः । अनुनासिकाविकल्पः । एकेन न विंशतिः एकात्रविंशतिः । एकाद्विंशतिः । एकोनविंशतिरित्यर्थः ॥

पप उत्वं दत्तदशधासूत्तरपदादेः घुत्वं च धासु वेति वाच्यम् ॐ ॥

पोडन् पोडश । पोडा पङ्क्था । समाहारे द्विगुर्द्वन्द्वश्च । नपुंसक-मित्युक्तम् । पञ्चगवम् । अकारान्तोत्तरपदो द्विगुः स्त्रियामिष्टः । पञ्च-मूली । आवन्तो वा । पञ्चखट्वा पञ्चखट्वम् । अनो नलोपश्च वा च द्विगुः स्त्रियाम् । पञ्चतक्षी पञ्चतक्षम् ॥

पात्राद्यन्तस्य न ॐ ॥

॥ पञ्चपात्रम् । त्रिभुवनम् । चतुर्युगमित्याद्यन्यदापि लिङ्गानुशा-सने ज्ञेयम् । सामान्ये नपुंसकम् । मृदु पचति । प्रातः कमनीयम् । इति तत्पुरुषः ॥

इति ११० अंशाः । इति तृतीयाध्यायस्य तृतीयः पादः ।

शेषो बहुव्रीहिः । अनेकमन्यपदार्थे । प्राप्तोदको ग्राम इत्यादि ।
प्रथमार्थे तु न । वृष्टे देवे गतः । व्यधिकरणानामपि न । पञ्चभि-
र्भुक्तमस्य ॥

प्रादिभ्यो धातुजस्य वाच्यो चाचोत्तरपदलोपः ॥

अविद्यमानपुत्रोऽपुत्रः । अस्ति इति विभक्तिप्रतिरूपकमव्ययम् ।
अस्तिक्षीरा गौः । स्त्रियाः पुंवदित्यादिना पुंवद्भावः । चित्रा गावो
यस्येति लौकिकविग्रहं चित्रगुः । रूपवद्भार्यः । चित्रा जरती
गौर्यस्येति विग्रहे अनेकोक्तेर्वहूनामपि बहुव्रीहिः । अत्र केचित् ।
चित्रा जरतीगुः जरती चित्रागुर्वा । एवं दीर्घातन्वी जहः ।
तन्वीदीर्घा जहः । त्रिपदे बहुव्रीहौ प्रथमं न पुंवत् । उत्तरपदस्य
मध्यमेन व्यवधानात् । द्वितीयमपि न पुंवत् । पूर्वपदत्वाभावात् ।
उत्तरपदशब्दो हि समासस्य चरमावयवे रूढः । पूर्वपदशब्दस्तु
प्रथमावयवे इति वदन्ति । वस्तुतस्तु नेह पूर्वपदमाक्षिप्यते । आनङ्
श्रुतः इत्यत्र यथा तेनोपान्त्यस्य पुंवदेव चित्रा जरद्गुः इत्यादि ।
अत एव चित्राजरत्यौ गावौ यस्येति द्वन्द्वगर्भेऽपि चित्राजरद्गुः
इति भाष्यम् । कर्मधारयपूर्वपदे तु द्वयोरपि पुंवत् । जरश्चित्रगुः ।
कर्मधारयोत्तरपदे तु चित्रजरद्गवौकः । पूरण्यां तु ॥

अपूरणीप्रमाण्योः ५ । ४ । ११६ ॥

पूरणार्थप्रत्ययान्तं यत्स्त्रीलिङ्गं तदन्तात्प्रमाण्यन्ताच्च बहुव्रीहेरप् ।
कल्याणी पञ्चमी यासां रात्रीणां ताः कल्याणीपञ्चमा रात्रयः ।
स्त्रीप्रमाणी यस्य स स्त्रीप्रमाणः । पुंवद्भावप्रतिषेधोऽप्रत्ययश्च
प्रधानपूरण्यमेव । रात्रिः पूरणी वाच्या चेत्युक्तोदाहरणे मुख्या ।
अन्यत्र तु नष्टतश्चेति कप् । कल्याणी पञ्चमी यत्र स कल्याणप-
ञ्चमीकः पक्षः । अत्र तिरोहितावयवभेदस्य पक्षस्यान्यपदार्थतया
रात्रिप्रधानम् । बहुकर्तृकः । अप्रियादिषु किम् । कल्याणीप्रियः ।
प्रिया । मनोज्ञा । कल्याणी । सुमगा । दुर्भगा । भक्तिः ।
सचिवा । स्वसा । कान्ता । क्षान्ता । समा । चपला । दुहिता ।

वामा । अवला । तनया । सामान्ये नपुंसकम् । दृढं भाक्तिर्यस्य
स दृढभक्तिः स्त्री ॥

तसिलादिष्वाकृत्वसुचः ६ । ३ । ३५ ॥

तसिलादिष्वाकृत्वसुजन्तेषु परेषु स्त्रियाः पुंवत् । परिगणनं कर्त-
व्यम् । अव्याप्त्यतिव्याप्तेपरिहाराय त्रतसौ । तरतमपौ । चरट्-
जातीयरौ । कल्पपदेशीयरौ । रूपप्पाशपौ । थाल् । तिलथ्यनौ ।
वह्नीषु बहुत्र बहुतः । दर्शनीयतरा दर्शनीयतमा । घरूप इति
वक्ष्यमाणो ह्रस्वः परत्वात्पुंवद्भावं, बाधते । पटितरा पटितमा ।
पटुचरी पटुजातीया । दर्शनीयकल्पा दर्शनीयदेशीया । दर्शनी-
यरूपा । दर्शनीयपाशा । बहुथा । प्रशस्ता वृकी वृकतिः । अजा-
भ्यो हिता अजध्या ॥

शसि बहुलपार्थस्य पुंवद्भावो वक्तव्यः ❀ ॥

वह्नीभ्यो देहि बहुशः । अल्पाभ्यो देहि अल्पशः । त्वतलोर्गु-
णवचनस्य । शुक्लाया भावः शुक्लत्वम् । गुणवचनस्य किम् ।
कर्त्र्या भावः कर्त्रीत्वम् । शरदः कृतार्थता इत्यादौ तु सामान्ये
नपुंसकम् । भस्याढे तद्धिते । हस्तिनीनां समूहो हास्तिकम् । अढे
किम् । रौहिणेयः । स्त्रीभ्यो ढक् इति ढोऽत्र गृह्यते । अग्नेर्ढक् इति
ढकि तु पुंवदेव । अग्रायी देवतास्य स्थालीपाकस्याग्नेयः ।
सपत्नीशब्दस्त्रिधा । शत्रुपर्यायात्सपत्नशब्दाच्छार्ङ्गत्वादित्वान्डी-
न्येकः । समानः पतिर्यस्या इति विग्रहे विवाहनिबन्धनं पतिश-
ब्दमाश्रित्य नित्यस्त्रीलिङ्गो द्वितीयः । स्वामिपर्यायपतिशब्देन भा-
पितपुंस्कस्त्वृतीयः । आद्ययोः शिवाद्यण् । सपत्न्या अपत्यं सा-
पत्नः । तृतीयात्तु लिङ्गविशिष्टपरिभाषया पत्युत्तरपदलक्षणो ण्य एव
न त्वण् । शिवादौ रूढयोरेव ग्रहणात्सापत्यः । ढक्छसोश्च ।
भवत्याश्छात्रा भावत्काः भवदीयाः । एतद्वार्तिकम् एकतद्धिते च
इति सूत्रं च न कर्तव्यम् । सर्वनाम्नो वृत्तिमात्रे पुंवद्भावः इति
भाष्यकारेष्ट्या गतार्थत्वात् । सर्वकाम्याति । सर्विका आर्या यस्य

सर्वकमार्यः । सर्वप्रिय इत्यादि । पूर्वस्यैवेदम् । मर्खपाजाज्ञाद्रा
इति लिङ्गात् । तेनाकच्येकशेषवृत्तौ च न । सर्विका सर्वाः । कुक्कु-
ट्यादीनामण्डादिषु । कुक्कुट्या अण्डं कुक्कुटाण्डम् । मृग्याः पदं
मृगपदम् । मृगक्षीरम् । काकशावः ॥

वयङ् मानिनोश्च ६ । ३ । ३६ ॥

एतयोः परतः पुंवत् । एनीवाचरत्येतायते । श्येनीवाचरति
श्येतायते । स्वभिन्नां कांचिद्दर्शनीयां मन्यते दर्शनीयमानिनी ।
दर्शनीयां स्त्रियं मन्यते दर्शनीयमानी चैत्रः ॥

न कोपधायाः ६ । ३ । ३७ ॥

कोपधायाः स्त्रियाः न पुंवत् । पाचिकाभार्यः । रतिकाभार्यः ।
मद्रिकायते । मद्रिकामानिनी ॥

कोपधप्रतिपेधे तद्धितबुग्रहणम् ❀ ॥

नेह । पाका भार्या यस्य स पाकभार्यः ॥

इति १११ अंशः ।

संज्ञापूरण्योश्च ६ । ३ । ३८ ॥

अनयोर्न पुंवत् । दत्ताभार्यः । दत्तामानिनी । दानक्रियानिमित्तः
स्त्रियां पुंसि च संज्ञाभूतोऽयमिति भाषितपुंस्कत्वमस्ति । पञ्चमी-
भार्यः । पञ्चमीपाशा ॥

वृद्धिनिमित्तस्य च तद्धितस्यारक्तविकारे ६ । ३ । ३९ ॥

वृद्धिशब्देन विहिता या वृद्धिस्तद्धेतुर्यस्तद्धितोऽरक्तविकारार्थ-
स्तदन्ता स्त्री न पुंवत् । सौम्रीभार्यः । माथुरीयते । माथुरीमानिनी ।
वृद्धिनिमित्तस्य किम् । मध्यमभार्यः । तद्धितस्य किम् । काण्डला-
वभार्यः । वृद्धिशब्देन किम् । तावद्भार्यः । रक्ते तु, काषायी
कन्या यस्य स काषायकन्यः । विकारे तु, हैमी मुद्रिका यस्येति
हममुद्रिक । वृद्धिशब्देन वृद्धिं प्रति फलोपधानामावादिह पुंवत् ।
वैयाकरणभार्यः । सौवर्णभार्यः ॥

स्वाङ्गाच्चेतः ६ । ३ । ४० ॥

स्वाङ्गाद्य ईकारस्तदन्ता स्त्री न पुंवत् । सुकेशीभार्यः । स्वाङ्गात् किम् । पटुभार्यः । ईतः किम् । अकेशभार्यः ॥

अमानिनीति वक्तव्यम् ॥

सुकेशमानिनी ॥

जातेश्च ६ । ३ । ४१ ॥

जातेः परो यः स्त्रीप्रत्ययस्तदन्तं न पुंवत् । शूद्राभार्यः । ब्राह्मणीभार्यः । सौत्रस्यैवायं निषेधः तेन हस्तिनीनां समूहो हास्तिकमित्यत्र भस्यादे इति तु भवत्येव ॥

संख्ययाव्ययासन्नादूराधिकसंख्याः संख्येये २ । २ । २५ ॥

संख्येयार्थया संख्ययाव्ययादयः समस्यन्ते स बहुव्रीहिः । दशानां समीपे ये सन्ति त उपदशाः । नव एकादश वेत्यर्थः । बहुव्रीहौ संख्येये इति वक्ष्यमाणो ङच् ॥

तिविंशतेर्ङिति ६ । ४ । १४२ ॥

विंशतेर्भस्य तिशब्दस्य लोपः स्यादिति । आसन्नविंशाः । विंशतेरासन्ना इत्यर्थः । अदूरत्रिंशाः । अधिकचत्वारिंशाः । द्वौ वा त्रयो वा द्वित्राः । द्विरावृत्ता दश द्विदशाः । विंशतिरित्यर्थः ॥

दिङ्नामान्यन्तराले २ । २ । २६ ॥

दिशो नामान्यन्तराले वाच्ये प्राग्वत् । दक्षिणस्याः पूर्वस्याश्च दिशोऽन्तरालं दक्षिणपूर्वा । नामग्रहणाद्यौगिकानां न । पेन्द्रयाश्च कौवेर्याश्चान्तरालं दिक् ॥

तत्र तेनेदमिति सरूपे २ । २ । २७ ॥

सप्तम्यन्ते ग्रहणविषये सरूपे पदे तृतीयान्ते च ग्रहणविषय इदं युद्धं प्रवृत्तमित्यर्थं समस्येते कर्मव्यतिहारे द्योत्ये स बहुव्रीहिः । इतिशब्दादयं विषयविशेषो लभ्यते । इत्समासान्तो वक्ष्यते । तिष्ठद्युप्रभृतिष्विच्छप्रत्ययस्य पाठादव्ययीभावत्वमव्य-

यत्वं च । अन्येषामपि दृश्यते इति दीर्घः । केशेषु केशेषु गृहीत्वेदं
 युद्धं प्रवृत्तं केशाकेशि । दण्डैश्च दण्डैश्च ग्रहत्येदं युद्धं प्रवृत्तं दण्डा-
 दण्डि । मुष्टीमुष्टिओर्गुणः । अवादेशः । वाहूवाहवि । ओर्गुण इत्यत्र
 ओरोत् इति वक्तव्ये गुणोक्तिः । संज्ञापूर्वको विधिरनित्यः इति
 ज्ञापयितुम् । तेन स्वायंभुवः इत्यादि सिद्धम् । सरूपे इति किम् ।
 ह्यलेन मुसलेन । तेन सहेति तुल्ययोगे वोपसर्जनस्य सपुत्रः सह-
 पुत्रः । तुल्ययोगवचनं प्रायिकम् । सकर्मकः । सलोमकः ॥

प्रकृत्याशिपि ६ । ३ । ८३ ॥

सहशब्दः प्रकृत्या स्यादाशिपि । स्वस्तिराज्ञे सहपुत्राय ।
 सहामात्याय ॥

अगोवत्सहलेष्विति वाच्यम् ❀ ॥

सगवे । सवत्साय । सहलाय ॥

बहुव्रीहौ संख्येये ङजबहुगणात् ५ । ४ । ७३ ॥

संख्येये यो बहुव्रीहिस्तस्माद्ङच् । उपदशाः । अवहुगणात्
 किम् । उपबहवः । उपगणाः । अत्र स्वरे विशेषः ॥

संख्यायास्तत्पुरुषस्य वाच्यः ❀ ॥

निर्गतानि त्रिंशतो निस्त्रिंशानि वर्षाणि चैत्रस्य । निर्गतत्रिं-
 शतोऽंशुलिभ्यो निस्त्रिंशः खड्गः ॥

बहुव्रीहौ सक्थ्यक्ष्णोः स्वाङ्गात्पच् ५ । ४ । ११३ ॥

व्यत्ययेन षष्ठी । स्वाङ्गाच्चिसक्थ्यक्ष्यन्ताद्बहुव्रीहेः पच् ।
 दीर्घे सक्थिनी यस्य स दीर्घसक्थः । जलजाक्षी । स्वाङ्गात् किम् ।
 दीर्घसक्थि शक्यम् । स्थूलाक्षा वेषुषाष्टिः । अक्ष्णोऽदर्शनात्
 इत्यत्र ॥

अंगुलेर्दारुणि ५ । ४ । ११४ ॥

अंगुल्यन्ताद्बहुव्रीहेः पच् दारुण्यर्थे । पञ्चांगुलयो यस्य तत्प-
 ञ्चांगुलं दारु । अंगुलिसदृशावयवं धान्यादिरिक्षेपणकाष्ठमुच्यते ।

बहुव्रीहेः किम् । षे अंगुली प्रमाणमस्या ब्यंगुला यष्टिः । तद्वितार्थे
तत्पुरुषे तत्पुरुषस्यांगुलेः इत्यच् । दारुणि किम् । पञ्चांगुलिर्हस्तः॥

द्वित्रिभ्यां प मूर्ध्नेः ५ । ४ । ११५ ॥

आभ्या मूर्ध्नेः पः बहुव्रीहो । द्विमूर्ध्नेः । त्रिमूर्ध्नेः ॥

नेतुर्नक्षत्रे अव्यक्तव्यः ॐ ॥

मृगो नेता चासा ता मृगनेत्रा रात्रयः । पुष्यनेत्रा ॥

अन्तर्वहिभ्यां च लोमः ५ । ४ । ११७ ॥

आभ्या लोमोऽपू बहुव्रीहौ । अन्तर्लोमः बहिर्लोमः ॥

इति ११२ अंशाः ।

अनासिकायाः संज्ञायां नसं चास्थूलात् ५ । ४ । ११८ ॥

नासिकान्ताद्बहुव्रीहेरच् । नासिकाशब्दश्च नसं प्राप्नोति नतु
स्थूलपूर्वात् ॥

पूर्वपदात्संज्ञायामगः ८ । ४ । ३ ॥

पूर्वपदस्थानिमित्तात्परस्य नस्य णः स्यात्संज्ञायां नतु गकार-
व्यवधाने । दृष्टिर्ब नासिकास्य दृणसः । खरणसः । अगः किम् ।
ऋचामयनमृगयनम् । अणृगयनादिभ्यः इति निपातनाण्णत्वाभावा-
माश्रित्य अगः इति प्रत्याख्यातं भाष्ये । अस्थूलात् किम् । स्थू-
लनासिकः ॥

खुरखराभ्यां वा नस् ॐ ॥

खुरणाः खरणाः । पक्षेऽजपीष्यते । खुरणसः ॥

उपसर्गाच्च ५ । ४ । ११९ ॥

प्रादेर्यो नासिकाशब्दस्तदन्ताद्बहुव्रीहेरच् नासिकाया नसादेशश्च ।
असंज्ञार्थं वचनम् । उन्नता नासिका यस्य स उन्नसः । उपस-
र्गादनोत्परः इति सूत्रं तद् मङ्क्त्वा माष्यकार आह ॥

उपसर्गाद्बहुलम् ८ । ४ । २८ ॥

उपसर्गस्यान्निमित्तात्परस्य नसो नस्य णः बहुलम् । प्रणसः ॥

वेग्रो वक्तव्यः ॥

विगता नासिकास्य विग्रः ॥

रत्यश्च ॥

विरुध्यः । कथं तर्हि, विनसा हतवान्धवा इति भट्टिः । विग-
तया नासिकयोपलक्षितेति व्याख्येयम् ॥

सुप्रातसुश्वसुदिवशारिकुक्षचतुरश्रैणीपदाजपद-

प्रोष्ठपदाः ५ । ४ । १२० ॥

एते बहुव्रीहयोऽम्प्रत्ययान्ता निपात्यन्ते । शोभनं प्रातरस्य
सुप्रातः । शोभनं श्वोऽस्य सुश्वः । शोभनं दिवास्य सुदिवः । शारे-
रिव कुक्षिरस्य शारिकुक्षः । चतस्रोऽश्रयोऽस्य चतुरश्रः । एण्या
इव पादावस्यैणीपदः । अजपदः । प्रोष्ठो गौस्तस्येव पादावस्य
प्रोष्ठपदः ॥

नित्यमसिचप्रजामेधयोः ५ । ४ । १२२ ॥

नन्दुःसुभ्यः इत्येव । अप्रजाः । दुष्प्रजाः । सुप्रजाः । अमेधाः ।
दुर्मेधाः । सुमेधाः ॥

धर्मादनिच केवलात् ५ । ४ । १२४ ॥

केवलात्पूर्वपदात्परो यो धर्मशब्दस्तदन्ताद्बहुव्रीहेरनिच् । कल्या-
णधर्मा । केवलात् किम् । परमः स्वोधर्मो यस्येति त्रिपदे बहुव्रीहौ
मा भूत् । स्वशब्दो हीह न केवलं पूर्वपदं सित्तु मध्यमत्वादापेक्षि-
कम् । मंदिग्धसाध्यधर्मा इत्यादी तु धर्मधारणपूर्वपदो बहुव्रीहिः ।
एवं च परमम्बधर्मा इत्यपि साध्येव । निवृत्तिधर्मा । अनुविछात्ति-
धर्मा इत्यादिवत् । पूर्वपदं तु बहुव्रीहिणा सिध्यते ॥

दक्षिणेमां लुब्धयोगे ५ । ४ । १२६ ॥

दक्षिणे ईमं प्रण यस्य दक्षिणेमां मृगः । व्याधेन मृतप्रण
इत्यर्थः ॥

इच्च कर्मव्यतिहारे ५ । ४ । १२७ ॥

कर्मव्यतिहारे यो बहुव्रीहिस्तस्मादिच्छमासान्तः । केशाकेशि ।
मुसलामुसलि ॥

द्विदण्ड्यादिभ्यश्च ५ । ४ । १२८ ॥

तादर्थ्ये चतुर्थ्येपा एषां सिद्धचर्थमिच्छत्ययः । द्वौ दण्डौ यस्मि-
न्प्रहरणे तद्विदण्डि प्रहरणम् । द्विमुसलि । उभाहस्ति । उभया-
हस्ति ॥

प्रसंभ्यां जानुनोर्जुः ५ । ४ । १२९ ॥

आभ्यां परयोर्जानुशन्दयोर्जुरादेशो बहुव्रीहि । प्रगते जानुनी
यस्य प्रजुः । संजुः ॥

ऊर्ध्वाद्धिभाषा ५ । ४ । १३० ॥

ऊर्ध्वजुः । ऊर्ध्वजानुः ॥

धनुषश्च ५ । ४ । १३२ ॥

धनुरन्तस्य बहुव्रीहेरनडादेशः । शार्ङ्गधन्वा ॥

वा संज्ञायाम् ५ । ४ । १३३ ॥

शतधन्वा । शतधनुः ॥

जायाया निङ् ५ । ४ । १३४ ॥

जायान्तस्य बहुव्रीहेर्निङादेशः । लोपो व्योर्वलि । पुंवदूभावः ।
युवतिर्जायास्य युवजानिः ॥

गंधस्येदुत्पूतिसुसुरभिभ्यः ५ । ४ । १३५ ॥

एभ्यो गन्धस्येकारोऽन्तादेशः । उद्गंधिः । पूतिगन्धिः । सुग-
न्धिः । सुरभिगन्धिः ॥

गंधस्येत्वे तदेकान्तग्रहणम् ॥

एकान्त एकदेश इवाविभागेन लक्ष्यमाण इत्यर्थः । अत्र गुण-
वाचिनो गन्धशब्दस्य ग्रहणमित्याशयः । सुगंधि पुष्पं सलिलं च ।

विशेष्यभूतान्यपदार्थगतगंधस्यैव ग्रहणमिति वृत्त्यादिमते तु सुगन्धि पुष्पमित्येव साधु सुगंधि सलिलम् । अयुक्च्छदयुच्छमुगन्धयः इत्यादित्वसाधु । अत एव मट्टिः । आघ्रायिवान् गन्धवहः सुगन्ध इति । तदेकान्तेति किम् । शोमना गंधा द्रव्याण्यस्य स सुगंधः । आपाणिकः ॥

अल्पाख्यायाम् ५ । ४ । १३६ ॥

सूपस्य गंधो लेशो यस्मिंस्तत्सूपगन्धि भोजनम् । घृतगन्धि । गन्धो गन्धक आमोदे लेशो संबंधगर्वयोः । इति विश्वः ॥

उपमानाच्च ५ । ४ । १३७ ॥

पद्मस्येव गन्धोऽस्य पद्मगंधिः ॥

पादस्य लोपोऽहस्त्यादिभ्यः ५ । ४ । १३८ ॥

हस्त्यादिर्वाजिंतादुपमानात्परस्य पादशब्दस्य लोपो बहुव्रीहौ । स्थानिद्वारेणार्थं समानान्तः । व्याघ्रस्येव पादावस्य व्याघ्रपात् । अहस्त्यादिभ्यः किम् । हस्तिपादः । कुसलपादः ॥

संख्यासुपूर्वस्य ५ । ४ । १४० ॥

पादस्य लोपः समासान्तो बहुव्रीहौ । द्विपात् । सुपात् ॥

वयसि दन्तस्य दत् ५ । ४ । १४१ ॥

संख्यासुपूर्वस्य दन्तस्य दत् इत्यादेशो वयसि । द्विदन् । चतुर्दन् । पट् दन्ता अस्य षोडश । सुदन् । सुदती । वयसि किम् । द्विदन्तः करो । सुदन्तो नदः ॥

इति ११३ अंशाः ।

सुहृद्दुर्हृदौ मित्रामित्रयोः ५ । ४ । १५० ॥

सुदुर्म्या हृदयस्य हृद्भावो निपात्यते । सुहन्मित्रम् । दुर्हृदमित्रः । अन्यत्र सुहृदयः । दुर्हृदयः ॥

उरःप्रभृतिभ्यः कप् ५ । ४ । १५१ ॥

व्यूहोत्स्कः । प्रियसर्पिष्कः । इह पुमान् । अनङ्गान् । पयः । नोः । लक्ष्मीः । इत्येकवचनान्तानि पठ्यन्ते । द्विवचनबहुवचनान्तेभ्यस्तु

शेषाद्विभाषा इति विकल्पेन कप् । द्विषुमान् । द्विषुंस्कः । अर्था-
न्नजः । अनर्थकम् । नजः किम् । अपार्थम् । अपार्थकम् ॥

इनः स्त्रियाम् ५ । ४ । १५२ ॥

बहुदण्डिका नगरी ॥

अनिनस्मन्ग्रहणान्यर्थवता चानर्थकेनापि तदन्तविधिं
प्रयोजयन्ति ॥

बहुवाग्मिका । स्त्रियाम् किम् । बहुदण्डी । बहुदण्डिको ग्रामः ॥

शेषाद्विभाषा ५ । ४ । १५४ ॥

अनुक्तसमासान्ताच्छेषाधिकारस्याद्बहुव्रीहेः कब्बा । महायश-
स्कः । महायशाः । अनुक्त इत्यादि किम् । व्याघ्रपात् । सुगंधिः
प्रियपथः । शेषाधिकारस्यात् किम् । उपबहवः । उत्तरपूर्वा ।
सपुत्रः । तन्त्रादिना शेषशब्दोऽर्थद्वयपरः ॥

आपोऽन्यतरस्याम् ७ । ४ । १५५ ॥

कप्यावन्तस्य ह्रस्वो वा । बहुमालकः बहुमालकः । कवभावे
बहुमालः ॥

न संज्ञायाम् ५ । ४ । १५६ ॥

शेषात् इति प्राप्तः कन्न संज्ञायाम् । विश्वे देवा अस्य विश्वे देवः ॥

ईयसश्च ५ । ४ । १५६ ॥

ईयमन्तोत्तरपदान्न कप् । बहवः श्रेयांसोऽस्य बहुश्रेयान् । गो-
स्त्रियोः इति ह्रस्वत्वे प्राप्ते ॥

ईयसो बहुव्रीहेर्नेति वाच्यम् ❀ ॥

बह्वचः श्रेयस्योऽस्य बहुश्रेयसी । बहुव्रीहेः किम् । अतिश्रेयासिः ॥

निष्प्रवाणिश्च ५ । ४ । १६० ॥

कवभावोऽत्र निपात्यते । प्रपूर्वाद्वयतेल्युट् । प्रवाणी तन्तुवाय-
शलाका । निर्गता प्रवाण्यस्य निष्प्रवाणिः पटः । समाप्तवानः ।
नव इत्यर्थः ॥

सप्तमीविशेषणे बहुव्रीहौ २ । २ । ३५ ॥

सप्तम्यन्तं विशेषणं च बहुव्रीहौ पूर्वं प्रयोज्यम् । कण्ठेकालः ।
अत एव ज्ञापकाद्यधिकरणपदो बहुव्रीहिः । चित्रगुः ॥

सर्वनामसंख्ययोरुपसंख्यानम् ❀ ॥

सर्वश्वेतः । द्विशुक्लः । मिथोज्ञयोः समामे संख्यापूर्वं शब्दपर-
विप्रतिषेधात् । द्व्यन्यः । संख्याया अल्पीयस्याः । द्वित्राः । द्वन्द्वे
यि द्वादश वा प्रियस्य । गुडप्रियः । प्रियगुडः ॥

गङ्गादेः परा सप्तमी ❀ ॥

गङ्गुकण्ठः । कचिन्न । वहेगङ्गुः ॥

निष्ठा २ । २ । ३६ ॥

निष्ठान्तं बहुव्रीहौ पूर्वम् । कृतकृत्यः ॥

जातिकालसुखादिभ्यः परा निष्ठा वाच्या ❀ ॥

सारङ्गजग्धी । मासजाता । मुखजाता । प्रायिकं चेदम् । कृत-
कटः । पीतोदकः ॥

बाहिताग्न्यादिषु २ । २ । ३७ ॥

आहिताग्निः अग्न्याहितः । आकृतिगणोऽयम् ॥

प्रहरणार्थेभ्यः परे निष्ठासप्तम्यौ ❀ ॥

अस्त्युद्यतः । दण्डपाणिः । कचिन्न । विवृतासिः । इति बहुव्रीहिः ।

चार्ये द्वन्द्वः । समुच्चयान्वाचयेतरेतरयोगसमाहाराश्चार्थाः । पर-
स्परनिरपेक्षस्यानेकस्यैकस्मिन्नन्वयः समुच्चयः । अन्यतरस्यानुप-
ङ्गिकत्वेऽन्वाचयः । मिलितानामन्वय इतरेतरयोगः । समूहः समाहारः ।
तत्रेश्वरं गुरुं च भजस्व इति समुच्चये भिक्षामटं गां चानय इत्यन्वा-
चये च न समासोऽस्मात्पर्यात् । धवखदिरौ । संज्ञापरिमाणम् ।
अनेकोक्तेः होतृपोतृनेष्टोद्गातारः । द्वयोर्द्वयोर्द्वंद्वं कृत्वा पुनर्द्वंद्वे तु
आनङ्गं ऋत इति वक्ष्यमाणे आनङ्गि होता पोता नेष्टोद्गातारः ॥

राजदन्तादिषु परम् २ । २ । ३८ ॥

एषु पूर्वप्रयोगार्हं परम् । दन्तानां राजा राजदन्तः ॥

धर्मादिष्वनियमः ❀ ॥

अर्थधर्मो धर्मार्थो । दम्पती । जम्पती जायापती । जायाश-
ब्दस्य जम्माशो दम्भावश्च वा निपात्यते । आकृतिगणोऽयम् ॥

द्वन्द्वे वि २ । २ । ३२ ॥

द्वन्द्वे विसंज्ञं पूर्वम् । हरिश्च हरश्च हरिहरौ ॥

अनेकप्राप्तावेकत्र नियमोऽनियमः शेषे ❀ ॥

हरिगुरुहराः । हरिहगुरुवः ॥

अजाद्यदन्तम् २ । २ । ३३ ॥

इदं द्वन्द्वे पूर्वम् । ईशकृष्णौ । चहुष्वनियमः । अश्वरथेन्द्राः
इन्द्राश्वरथाः । द्यन्तादजाद्यदन्तं विप्रतिषेधेन । इन्द्राग्री ॥

अल्पात्तरम् २ । २ । ३४ ॥

शिवकेशवौ । ऋतुनक्षत्राणां समाक्षराणामानुपूर्व्येण । हेमन्त-
शिर्शिरवसन्ताः । कृत्तिकारोहिण्यौ । समाक्षराणां किम् । ग्रीष्मव-
सन्तौ । लघ्वक्षरं पूर्वम् । कुशकाशम् । अभ्यर्हितं च । तापसपर्वतौ ।
वर्णानामानुपूर्व्येण । ब्राह्मणक्षत्रियविद्भूद्राः । भ्रातृज्यायसः ।
युधिष्ठिरार्जुनौ ॥

द्वन्द्वश्च प्राणितूर्यसेनाङ्गनाम् २ । ४ । २ ॥

एषां द्वन्द्व एकवत् । पाणिपादम् । मार्दङ्गिकपाणविकम् । रथि-
काश्वारोहम् । समाहारस्यैकत्वादेकत्वे सिद्धे नियमार्थं प्रकरणम् ।
प्राण्यङ्गादीनां समाहार एव यथा स्यात् ॥

इति ११४ अंशाः ।

गवाश्वप्रभृतीनि च २ । ४ । ११ ॥

यथोच्चारितानि माधूनि स्युः । गवाश्वम् । दासीदासमित्यादि ॥

न दधिपयआदीनि २ । ४ । १४ ॥

एतानि नैकवत्स्यः । दधिपयसी । इध्मावर्हिणी । निपातनादीर्घः ।
ऋक्सामे । वाङ्मनसे ॥

आनङ् ऋतो द्वन्द्वे ६ । ३ । २५ ॥

विद्यायोनिसंबंधवाचिनामृदन्तानां द्वन्द्वे आनङ् स्यादुत्तरपदे
परे । होतापोतारा । होतृपोतृनेष्टोद्गातारः । मातापितरौ । पुत्रे-
ऽन्यतरस्थाम् इत्यतो मण्डूकप्लुत्या पुत्रे इत्यनुवृत्तेः । पितापुत्रौ ॥

देवताद्वन्द्वे च ६ । ३ । २६ ॥

इहोत्तरपदे पर आनङ् । मित्रावरुणौ । वायुशब्दप्रयोगे प्रति-
पेधः । अग्निवायू । वाय्वग्नी । पुनर्द्वन्द्वग्रहणं प्रसिद्धसाहचर्यस्य परिग्र-
हार्थम् । तेन ब्रह्मप्रजापती इत्यादौ नानङ् । एतद्धि नैकहविर्भागत्वेन
श्रुतं नापि लोके प्रसिद्धसाहचर्यम् ॥

ईदग्नेः सोमवरुणयोः ६ । ३ । २७ ॥

देवताद्वन्द्वे ॥

अग्नेः स्तुतस्तोमसोमाः ८ । ३ । ८२ ॥

अग्नेः परेषामेषां सस्य षः समासे । अग्निष्टुत अग्निष्टोमः ।
अग्नीषोमी । अग्नीवरुणौ ॥

इदृद्धौ ६ । ३ । २८ ॥

वृद्धिमत्युत्तरपदे अग्नेरिदादेशो देवताद्वन्द्वे । अग्रामरुतौ देवते
अस्य आग्निमारुतं कर्म । अग्नीवरुणौ देवते अस्य अग्निवारुणम् ।
देवताद्वन्द्वे च इत्युभयपदवृद्धिः । अलौकिकवाक्य आनङ्मीत्वं च
वाधित्वा इत् । वृद्धौ किम् । आग्नेन्द्रः । नेन्द्रस्य परस्य इत्युत्तरपद-
वृद्धिप्रतिपेधः । विष्णौ न । अग्नविष्णवम् ॥

दिवो द्यावा ६ । ३ । २९ ॥

देवताद्वन्द्वे उत्तरपदे । द्यावाभूमी । द्यावाक्षमे ॥

दिवसश्च पृथिव्याम् ६ । ३ । ३० ॥

दिवः इत्येव चाद्यावा । आदेशोऽङ्कारोच्चारणं सकारस्य रुत्वं
मा भूदित्येतदर्थम् । यौश्च पृथिवी च दिवस्पृथिव्यौ द्यावापृथि-
व्यौ । छन्दसि दृष्टानुविधिः । द्यावाचिदस्मै पृथिवी दिवस्पृथिव्यो-
ररतिः इत्यत्र पदकारा विसर्गं पठन्ति ॥

उपासोपसः ६ । ३ । ३१ ॥

उपस्शब्दस्योपासादेशो देवताद्वन्द्वे । उपासा स्येम् ॥

मातरपितराबुदीचाम् ६ । ३ । ३२ ॥

मातरपितरौ । उदीचां किम् । मातापितरौ ॥

द्वन्द्वान्बुदपहान्तात्समाहारे ५ । ४ । १०६ ॥

चवर्गान्तादपहान्ताच्च द्वन्द्वादृच्ममाहारे । वाक् च त्वक् च वा-
यत्त्वचम् । त्वक् सजम् । शमीदपदम् । वाक्त्वचम् । छत्रोपानहम् ।
समाहारे किम् । प्रावृद्दशरदौ । इति द्वन्द्वसमासः ॥

सरूपाणामेकशेषः । रामौ । रामाः । विरूपाणामपि समाना-
र्थानाम् । वक्रदण्डश्च कुटिलदण्डश्च वक्रदण्डौ कुटिलदण्डौ ॥

वृद्धो यूना तल्लक्षणश्चेदेव विशेषः १ । २ । ६५ ॥

यूना सहोक्ता गोत्रं शिष्यते गोत्रयुवप्रत्ययमात्रकृतं चेत्तयोः
कृत्स्नं वैरूप्यम् । गार्ग्यश्च गार्ग्यायणश्च गार्ग्यौ । वृद्धः किम् ।
गर्गगार्ग्यायणौ । यूना किम् । गार्ग्यगर्गौ । तल्लक्षणः किम् ।
भागवित्तिभागवित्तिकौ । कृत्स्नं किम् । गार्ग्यवात्स्यायनौ ॥

स्त्री पुंवच्च १ । २ । ६६ ॥

यूना सहोक्ता वृद्धा स्त्री शिष्यते तदर्थश्च पुंवत् । गार्गी च
गार्ग्यायणौ च गर्गाः । अस्त्रियाम् इत्यनुवर्तमाने यजजोश्च इति
लुक् । दाक्षी च दाक्षायणश्च दाक्षी ॥

पुमान् स्त्रिया १ । २ । ६७ ॥

स्त्रिया सहोक्ता पुमाञ्छिष्यते तल्लक्षण एव विशेषश्चेत् । इंसी
च इंसश्च इंसी ॥

भ्रातृपुत्रौ स्वसृदुहितृभ्याम् २ । १ । ६८ ॥

भ्राता च स्वसा च भ्रातरौ । पुत्रश्च दुहिता च पुत्रौ ॥

नपुंसकमनपुंसके नैकवच्चास्यान्यतरस्याम् १ । २ । ६९ ॥

अक्लीवेन सहोक्तौ क्लीबं शिष्यते तच्च वा एकवत्तल्लक्षण एव विशेषश्चेत् । शुक्लः पटः । शुक्ला शायी । शुक्लं वस्त्रम् । तदिदं शुक्लम् । तानीमानि शुक्लानि ॥

पिता मात्रा १ । २ । ७० ॥

मात्रा सहोक्तौ पिता वा शिष्यते । माता च पिता च पितरौ मातापितरौ वा ॥

श्वशुरः श्वश्रवा १ । २ । ७१ ॥

श्वश्रवा सहोक्तौ श्वशुरो वा शिष्यते तल्लक्षण एव विशेषश्चेत् । श्वश्रूश्च श्वशुरश्च श्वशुरौ श्वश्रूश्चश्वशुरौ ॥

त्यदादीनि सर्वैर्नित्यम् १ । २ । ७२ ॥

सर्वैः सहोक्तौ त्वदादीनि नित्यं शिष्यन्ते । स च देवदत्तश्च तौ । त्यदादीना मिथः सहोक्तौ यत्परं तच्छिष्यते । स च यश्च यौ । पूर्वशेषोऽपि दृश्यते इति भाष्यम् । स च यश्च तौ । त्यदादितः शेषे पुनपुसक्तो लिङ्गवचनानि । सा च देवदत्तश्च तौ । तच्च देवदत्तश्च यज्ञदत्ता च तानि । पुनपुसक्तयोस्तु परत्वान्नपुसक्तं शिष्यते । तच्च देवदत्तश्च ते ॥

अद्वन्द्वतत्पुरुषविशेषणानामिति वक्तव्यम् ❀ ॥

कुङ्कुमयूर्याविमे । मयूरीकुङ्कुटाविमौ । तच्च सा च अर्धपिप्पल्यौ ते ॥

ग्राम्यपशुसंघेष्वतरुणेषु स्त्री १ । २ । ७३ ॥

एषु सहविवक्षायां स्त्री शिष्यते । शुमान्स्त्रिया इत्यस्यापवादः । गावः इमाः । ग्राम्य इति किम् । रुख इमे । पशुग्रहणं किम् । ब्राह्मणा इमे । संघेषु किम् । एतां गावौ । अतरुणेषु किम् । वन्सा इमे ॥

अनेकशफेष्विति वाच्यम् ❀ ॥

अथा इमे । इह सर्वत्रैकशेषे कृतेऽनेकसुबन्ताभावाद्बन्धो न । तेन शिरसी शिरांसि इत्यादौ समासस्येत्यन्तोदात्तः । प्राण्यङ्गत्वादेकचद्भावश्च न । पन्थानौ पन्थानः इत्यादौ समासान्तो न । इत्येकशेषः ॥

इति ११५ अंशाः ।

ऋक्पूरब्धूः पथामानक्षे ५ । ४ । ७४ ॥

अ अनक्ष इति च्छेदः । ऋगाद्यन्तस्य समासस्य अप्रत्ययोऽन्तावयवः । अक्षे या धूस्तदन्तस्य तु न । अर्धर्चः । अनृचबद्धचावध्येतर्येव । नेह । अनृक् साम । बहृक् सूक्तम् । विष्णोः पृर्विष्णुपुरम् । ह्रीवत्वं लोकात् । विमलार्प सरः ॥

अन्तरूपसर्गेभ्योऽप ईत् ६ । ३ । ९७ ॥

अप इति कृतसमासान्तस्यानुकरणम् । पष्ठचर्थे प्रथमा एभ्योऽपस्य ईत् । दिर्गता आपो यस्मिन्निति द्वीपम् । अन्तरीपम् । प्रतीपम् । समीपम् । समापो देवयजनमिति तु समा आपो यस्मिन्निति बोध्यम् । कृतसमासान्तग्रहणान्नेह । स्वप् । स्वपी । अवर्णान्ताद्वा । प्रेपम् परेपम् । प्रापम् । परापम् ॥

उदनोर्देशे ६ । ३ । ९८ ॥

अनो परस्यापस्य उद्देशे अनूपो देशः । राजधुरा । अक्षे तु अक्षधूः । दृढधूरक्षः । सखिपथोरम्यपथो देशः ॥

अचप्रत्यन्ववपूर्वात्सामलोमः ५ । ४ । ७५ ॥

एतत्पूर्वात्सामलोमान्तात्समासादच् । प्रतिसामम् । अनुसामम् । अवसामम् । प्रतिलोमम् । अनुलोमम् ॥

कृष्णोदकपाण्डुसंख्यापूर्वाया भूमेरजिप्यते ❀ ॥

कृष्णभूमः । उदग्भूमः । पाण्डुभूमः । डिभूमः प्रासादः । संख्याया नदीगोदावरीभ्यां च । पञ्चनदम् । सप्तगोदावरम् । अच् इति योगविभागादन्यत्रापि । पद्मनामः ॥

अक्ष्णोऽदर्शनात् ५ । ४ । ७६ ॥

अचक्षुःपर्यायादक्ष्णोऽच् समासान्तः । गजामक्षीव गवाक्षः ॥

अचतुरविचतुरसुचतुरस्त्रीपुंसधेन्वनडुहवर्सामवाङ्मन-
साक्षिभ्रुवदारगवोर्वष्ठीवपदष्ठीवनक्तंदिवरात्रिदिवाहर्दिवस-
रजसनिःश्रेयसपुरुषायुपद्म्यायुष्यायुपर्यङ्गुपजातोक्षमहो-
क्षवृद्धोक्षोपशुनगोष्ठ्याः ५ । ४ । ७७ ॥

एते पञ्चविंशतिरजन्ता निपात्यन्ते । आद्यास्तयो बहुव्रीहयः ।
अविद्यमानानि चत्वार्यस्य अचतुरः । विचतुरः । सुचतुरः ॥

त्र्युपाभ्यां चतुरोऽजिप्यते ॐ ॥

त्रिचतुराः । चतुर्णां समीपे उपचतुराः । तत एकादश द्वन्द्वाः ।
स्त्रीपुंसौ । धेन्वनडुही । ऋक्सामे । वाङ्मनसे । आक्षिणी च भ्रुवौ
चाक्षिभ्रुवम् । दाराश्च गावश्च दारगवम् । ऊरू च अष्ठीवन्तौ च
ऊर्वष्ठीवम् । निपातनाटिलोपः । पदष्ठीवम् । निपातनात्पादशब्दस्य
पद्मावः । नक्तं च दिवा च नक्तंदिवम् । रात्रौ च दिवा च रात्रि-
दिवम् । रात्रेर्मान्तत्वं निपात्यते । अहनि च दिवा चाहर्दिवम् ।
वीप्ताया द्वन्द्वो निपात्यते । अहन्यहनीत्यर्थः । सरजसमिति सा-
कल्येऽव्ययीभावः । बहुव्रीहौ तु सरजः पङ्कजम् । निश्चितं श्रेयो
निःश्रेयसम् । तत्पुरुष एव नेह । निश्रेयान्पुरुषः । पुरुषस्यायुः
पुरुषायुषम् । ततो द्विगुः । द्यायुषम् । व्यायुषम् । ततो द्वन्द्वः ।
ऋग्यजुषम् । ततस्त्रयः कर्मधारयाः । जातोक्षः । महोक्षः । वृ-
द्धोक्षः । शुनः समीपमुपशुनम् । टिलोपाभावः संप्रसारणं च निपा-
त्यते । गोष्ठेऽश्वा गोष्ठश्च ॥

ब्रह्महस्तिभ्या वर्चसः ५ । ४ । ७८ ॥

अच् । ब्रह्मवर्चसम् । हस्तिवर्चसम् ॥

पत्न्यराजभ्यां चेति वक्तव्यम् ॐ ॥

पल्यवर्चसम् । राजवर्चसम् ॥

अवसमन्धेभ्यस्तमसः ५ । ४ । ७९ ॥

अवतमसम् । सन्तमसम् । अन्धयतीत्यन्धम् । पचाद्यच् । अ-
न्धं तमोऽन्धतमसम् ॥

श्वसो वसीयःश्रेयसः ५ । ४ । ८० ॥

वसुशब्दः प्रशस्तवाची तत् ईयसुनि वसीयः । श्वसशब्द उत्ता-
पदार्थप्रशंसामाशीर्विषयतामाह । मयूरव्यसकाटित्वात् समासः ।
श्वोवसीयसम् । श्वःश्रेयसं ते भूयात् ॥

अन्ववतसाद्रहसः ५ । ४ । ८१ ॥

अनुरहसम् । अवरहसम् । तसरहसम् ॥

प्रतेरुरसः सप्तमीस्थात् ५ । ४ । ८२ ॥

उरसि इति प्रत्युरसम् । विभक्त्यर्थेऽव्ययीभासः ॥

अनुगवमायामे ५ । ४ । ८३ ॥

एतन्निपात्यते दीर्घत्वे । अनुगवं यानम् । यस्य चायामः इति
समासः ॥

द्विस्तावा त्रिस्तावा वेदिः ५ । ४ । ८४ ॥

अच्प्रत्ययषष्ठिलोपः समासश्च निपात्यते । यावती प्रकृता वेदि-
स्ततो द्विगुणा त्रिगुणा वाश्वमेधादी तत्रेदं निपातनम् । वेदिः इति
किम् । द्विस्तावती त्रिस्तावती रज्जुः ॥

उपसर्गाद्ध्वनः ५ । ४ । ८५ ॥

प्रगतोऽध्वानं प्राध्वो रथः ॥

न पूजनात् ५ । ४ । ८६ ॥

पूजनार्थात्परेभ्यः समासान्ता न स्युः । मुराजा । जतिराजा ।
स्वतिभ्यामेव नेह । परमराजः । पूजनात् किम् । गायतिक्रान्तोऽ-
तिगवः । बहुव्रीहौ सक्थ्यक्ष्णोः इत्यतः प्रागेवायं निषेधः । नेह ।
सुसक्थः । स्वक्षः ॥

किमः क्षेपे ५ । ४ । ७० ॥

क्षेपे यः किञ्चन्दस्ततः परं यत्तदन्तात्समासान्ता न स्युः । कु-
त्सितो राजा किराजा । किंसखा । किङ्गीः । क्षेपे किम् । किराजः ।
किमखः । किङ्गवः ॥

नभस्तत्पुरुषात् ५ । ४ । ७१ ॥

नमामान्तो न । अराजा । असखा । तत्पुरुषात् किम् । अधुरं
शकटम् ॥

पथो विभाषा ५ । ४ । ७२ ॥

नञपूर्वात्पथो वा समासान्तः । अपथम् । जपन्थाः । तत्पुरुषात्
इत्येव । जपयो देशः । अपथं वर्तते । इति सर्वममासान्ताः ॥

अलुगुत्तरपदे ६ । ३ । १ ॥

अदुगधिकाः प्रागानङ् उत्तरपदाधिकास्त्वापादसमाप्तेः ॥

पञ्चम्याः स्तोत्रादिभ्यः ६ । ३ । २ ॥

पञ्चम्यः पञ्चम्याः अदुक् उत्तरपदे । स्तोत्रान्युक्तः । एवमन्तिकार्थ-
द्वयार्थकृच्छ्रेभ्यः । उत्तरपदे किम् । निष्क्रान्तः स्तोत्राभिस्तोत्रः ॥

ब्राह्मणाच्छंसिन उपसंख्यानम् ॥

ब्राह्मणे पिदितानि श्रग्राण्युपनागः ब्राह्मणानि तानि शंसतीति
ब्राह्मणाच्छंसि श्रग्राण्युपनागः । द्वितीयां पञ्चम्युपमंरानादेर ॥

श्रीजःसद्गोम्भस्तमसस्तृतीयायाः ६ । ३ । ३ ॥

श्रीजमा गृहमित्यादि ॥

वज्रस उपसंख्यानम् ॥

वज्रमा गृहम् । आम्भेन गृहमित्यर्थः ॥

पुंगवानुजो जनुपान्ध इति च ॥

पुंगवाश्च पुंगवान् पुंगवानुजः । जनुपान्धो जापान्धः ॥

श्री ११६ भंजाः ।

मनसः संज्ञायाम् ६ । ३ । ४ ॥

मनसा गुप्ता ॥

आज्ञायिनि च ६ । ३ । ५ ॥

मनसः इत्येव । मनसा ज्ञातुं शीलमस्य मनसाज्ञायी ॥

आत्मनश्च ६ । ३ । ६ ॥

आत्मनस्त्वृतीयाया अलुक् ॥

पूरण इति वक्तव्यम् ❀ ॥

पूरणप्रत्ययान्त उत्तरपद इत्यर्थः । आत्मना पञ्चमः । जनार्दनस्त्वात्मचतुर्थ एव । इति बहुव्रीहिर्वोध्यः । पूरणे किम् । आत्म-
कृतम् ॥

वैयाकरणाख्यायां चतुर्थ्याः ६ । ३ । ७ ॥

आत्मनः इत्येव । आत्मनेपदम् । आत्मनेभाषा । तादृथ्ये
चतुर्थी । चतुर्थी इति योगविभागात्समासः ॥

परस्य च ६ । ३ । ८ ॥

परस्मैपदम् । परस्मैभाषा ॥

हलदन्तात्सप्तम्याः संज्ञायाम् ६ । ३ । ९ ॥

हलन्ताददन्ताच्च सप्तम्या अलुक् संज्ञायाम् । त्वचिसारः ॥

गवियुधिभ्यां स्थिरः ८ । ३ । १५ ॥

आभ्यां स्थिरस्य सप्तम्यः । गविष्ठिरः । अत्र गवीति वचना-
देवालुक् । युधिष्ठिरः । अरण्येतिलकः । अत्र संज्ञायाम् इति
सप्तमीसमासः । ह्रस्वभ्यां च । ह्रदिस्पृक् । दिविस्पृक् ॥

अमूर्धमस्तकात्स्वाङ्गादकामे ६ । ३ । १२ ॥

कण्ठेकालः । उरसिलोमा । अमूर्धमस्तकात् किम् । मूर्धाशैलः ।
मस्तकाशैलः । अङ्गमे किम् । मुखे कामोऽस्य मुखकामः ॥

तत्पुरुषे कृति बहुलम् ६ । ३ । १४ ॥

स्तम्बेरमः स्तम्बरमः । कर्णेजपः कर्णजपः । कचिन्न । कुरुचरः ॥

प्रावृट्शरत्कालदिवां जे ६ । ३ । १५ ॥

प्रावृषिजः । शरदिजः । कालेजः । दिविजः । पूर्वस्यायं प्रपञ्चः ॥

घकालतनेषु कालनामः ६ । ३ । १७ ॥

सप्तम्या विभाषया लुक् । घः—पूर्वाह्नेतरे पूर्वाह्नेतरे । पूर्वाह्नेतमे
पूर्वाह्नेतमे । कालः—पूर्वाह्नेकाले पूर्वाह्नेकाले । तनः—पूर्वाह्नेतने पूर्वा-
ह्नेतने ॥

शयवासवासिष्वकालात् ६ । ३ । १८ ॥

खेशयः खशयः । ग्रामेवासः ग्रामवासः । ग्रामेवासी ग्राम-
वामी । हलदन्तात् इत्येव । भूमिशयः । अपो योनियन्मतुषु । अप्सु
योनिरुत्पत्तिर्यस्य सोऽप्सुयोनिः । अप्सु भवोऽप्सव्यः । अप्सुमन्ता-
वाज्यमागौ । अत्र मतुषु इत्यत्र मतिषु इति युक्तः पाठ इति परे ॥

नेन्सिद्धवभ्रातिषु च ६ । ३ । १९ ॥

इन्नन्तादिषु सप्तम्या अलुग्र । स्थण्डिलगायी । सांकाश्यसिद्धः ।
चक्रबन्धः ॥

स्थे च भाषायाम् ६ । ३ । २० ॥

सप्तम्या अलुग्र । समन्थः । भाषायां किम् । कृष्णोऽस्या खरेष्ठः ॥

पष्ट्या आक्रोशे ६ । ३ । २१ ॥

चौरस्य कुलम् । आक्रोशे किम् । ब्राह्मणकुलम् ॥

वाग्दिक्पश्यद्भ्यो युक्तिदण्डद्वारेषु ॥

वाचोयुक्तिः । दिग्गोदण्डः । पश्यतोदरः ॥

आमुप्यायणामुप्यपुत्रिकामुप्यकुलिकेति च ॥

अमुप्यायणामुप्यायणः । नडादित्वात्फक् । अमुप्य पुत्रस्य
माय आमुप्यपुत्रिका । मनोहादित्वादृश् । एवमामुप्यकुलिका ॥

देवानां प्रिय इति च मूर्ते ॥

मन्थत्र देवप्रियः ॥

शेषपुच्छलांगूलेषु शुनः ❀ ॥

शुनःशेषः । शुनःपुच्छः । शुनोलांगूलः ॥

दिवश्च दासे ❀ ॥

दिवोदासः ॥

पुत्रेऽन्यतरस्याम् ६ । ३ । २२ ॥

पष्ठ्याः पुत्रे परेऽलुग्वा निन्दायाम् । दास्याः पुत्रः दासीपुत्रः ।
निन्दायां किम् । ब्राह्मणीपुत्रः ॥

ऋतो विद्यायोनिसंबन्धेभ्यः ६ । ३ । २३ ॥

विद्यासंबन्धयोनिसंबन्धवाचिन ऋदन्तात्पष्ठ्या अलुक् । होतुर-
न्तेवासी होतुःपुत्रः । पितुरन्तेवासी पितुःपुत्रः ॥

विद्यायोनिसंबन्धेभ्यस्तत्पूर्वोत्तरपदग्रहणम् ❀ ॥

नेह । होतृधनम् ॥

विभाषा स्वसृपत्योः ६ । ३ । २४ ॥

ऋदन्तात्पष्ठ्या अलुक् वा स्वसृपत्योः परयोः ॥

मातुःपितृभ्यामन्यतरस्याम् ८ । ३ । ८५ ॥

आभ्यां स्वसुः सस्य षो वा । समासे मातुःष्वसा मातुःस्व-
सा । पितुःष्वसा पितुःस्वसा । लुक्पक्षे तु ॥

मातृपितृभ्यां स्वसा ८ । ३ । ८४ ॥

आभ्यां परस्य स्वसुः सस्य षः समासे । मातृष्वसा । पितृष्वसा ।
असमासे तु मातुः स्वसा । पितुः स्वसा । इत्यलुक्समासाः ॥

घरूपकल्पचेलद्भ्रुवगोत्रमतहतेषु ङ्योऽनेकाचो ह्र-
स्वः ६ । ३ । ४३ ॥

भापितपुंस्काद्यो ङी तदन्तस्यानेकाचो ह्रस्वः । घरूपकल्पप्प्रत्य-
येषु परेषु चेलडादिषु चोत्तरपदेषु । ब्राह्मणितरा । ब्राह्मणितमा ।
ब्राह्मणिरूपा । ब्राह्मणिकल्पा । ब्राह्मणिचेली । ब्राह्मणिध्रुवा ।

ब्राह्मणिगोत्रेत्यादि । ब्रूजः पचाद्यचि वच्चादेशगुणयोरभावोऽपि
निपात्यते । चेलडादीनि वृत्तिविषये कुत्सनवाचीनि तैः कुत्सिता-
नि कुत्सनैः इति समासः । डचः किम् । दत्तातरा । भाषित-
पुंस्कात् किम् । आमलकीतरा । कुवलीतरा ॥

नद्याः शेषस्यान्यतरस्याम् ६ । ३ । ४४ ॥

अडयन्तनद्या डचन्तस्यैकाचश्च घादिषु ह्रस्वो वा । ब्रह्मबन्धु-
तरा ब्रह्मबंधूतरा । स्त्रितरा स्त्रीतरा । कृन्नद्या न । लक्ष्मीतरा ॥

उगितश्च ६ । ३ । ४५ ॥

उगितः परा या नदी तदन्तस्य घादिषु ह्रस्वो वा । विदुषितरा ।
ह्रस्वाभावपक्षे तु तसिलादिषु इति पुंवत् । विदत्तरा । वृत्त्यादिषु
विदुषीतरा । इत्यप्युदाहृतं तन्निर्मूलम् ॥

उदकस्योदः संज्ञायाम् ६ । ३ । ५७ ॥

उदमेघः ॥

उत्तरपदस्य चेति वक्तव्यम् ॐ ॥

क्षीरोदः ॥

पेपं वासवाहनधिषु च ६ । ३ । ५८ ॥

उदपेपं पिनष्टि उदवासः । उदवाहनः । उदधिर्घटः । समुद्रे तु
पूर्वेण सिद्धम् ॥

इति ११७ अंशाः ।

इको ह्रस्वोऽङ्चो गालवस्य ६ । ३ । ६१ ॥

इगन्तम्याङ्चन्तस्य ह्रस्वो वा उत्तरपदे । ग्रामणिपुत्रः ग्राम-
णीपुत्रः । इकः किम् । रमापतिः । अङ्चः इति किम् । गौरीपतिः ।
गालवग्रहणं पूजार्थम् । अन्यतरस्याम् इत्यनुवृत्तेः ॥

इयद्वन्द्वाभिनामव्ययानां च नेति वाच्यम् ॐ ॥

श्रीमदः । श्रीमद्गः । श्रीमात्रः ॥

अभ्रुकुंसादीनामिति वक्तव्यम् ❀ ॥

भ्रुकुंसः भ्रुकुंसः । भ्रुकुटिः भ्रुकुटिः । अकारोऽनेन विधीयत
इति व्याख्यान्तरम् । भ्रुकुंसः । भ्रुकुटिः । भ्रुवा कुंसो भाषणं
शोभा वा यस्य स स्त्रीविषयवारी नर्तकः । भ्रुवः कुटिः कौटिल्यम् ॥

डच्चापोः संज्ञाछन्दसोर्वेदुलम् ६ । ३ । ६३ ॥

स्वतिपुत्रः । अजक्षीरम् ॥

त्वे च ६ । ३ । ६४ ॥

त्वप्रत्यये डच्चापोर्वा ह्रस्वः । अजत्वम् अजात्वम् । रोहिणित्वम्
रोहिणीत्वम् ॥

इष्टकेपीकामालानां चित्ततूलभारिषु ❀ ॥

इष्टकादीनां तदन्तानां च पूर्वपदानां चित्तादिषु क्रमादुत्तरपदेषु
ह्रस्वः स्यात् । इष्टकचित्तम् पकेष्टकचित्तम् । इपीकतूलम् मुञ्जेपीक-
तूलम् । मालभारी उत्पलमालभारी ॥

कारे सत्यागदस्य ६ । ३ । ७० ॥

मुम् । सत्यंकारः । अगदंकारः ॥

अस्तोश्चेति वक्तव्यम् ❀ ॥

अस्तुंकारः ॥

धेनोर्भव्यायाम् ❀ ॥

धेनुंभव्या ॥

लोकस्य पृणे ❀ ॥

लोकेपृणः । पृणः इति मूलविभुजादित्वात्कः ॥

इत्येऽनभ्याशस्य ❀ ॥

अनभ्याशमित्यः । दूरतः परिहर्तव्य इत्यर्थः ॥

भ्राष्ट्राग्र्योरिन्धे ❀ ॥

भ्राष्ट्रमिन्धः । अग्निमिन्धः ॥

गिलेऽगिलस्य ❀ ॥

तिमिगिलः । अगिलस्य किम् । गिलगिल ॥

गिलगिले च ❀ ॥

तिमिगिलगिलः ॥

उष्णभद्रयोः करणे ❀ ॥

उष्णंकरणम् । भद्रंकरणम् ॥

रात्रेः कृति विभाषा ६ । ३ । ७२ ॥

रात्रिचरः रात्रिचरः । रात्रिमटः राज्यटः । अखिदर्थमिदं सूत्रम् ।
विति तु अरुर्द्धिपत् इति नित्यमेव वक्ष्यते । रात्रिम्मन्यः ॥

समानस्य च्छन्दस्य मूर्धप्रभृत्युदर्केषु ६ । ३ । ८४ ॥

समानस्य सः उत्तरपदे नतु मूर्धादिषु । अनुभ्राता सगर्भ्यः ।
अनुसत्ता मयूथ्यः । योनः सनुत्यः । तत्र भव इत्यर्थे सगर्भसयूथ-
सनुतायत् । अमूर्धादिषु किम् । समानमूर्धा । समानप्रभृतयः ।
समानोदकाः । समानस्य इति योगो विभज्यते । तेन सपक्षः साध-
र्म्यं सजातीयमित्यादि सिद्धमिति काशिका । अथवा सह-
शब्दः सहशब्दचनोऽस्ति । सहशः सख्या ससखीति यथा । तेनायम-
स्यपदविग्रहो बहुव्रीहिः । समानः पक्षोऽस्येत्यादि ॥

ज्योतिर्जनपदरात्रिनाभिनामगोत्ररूपस्थानवर्णवयो-
वचनपञ्चुषु ६ । ३ । ८५ ॥

एषु द्वादशसूत्रपदेषु समानस्य मः । सज्योतिः । सजनपद
इत्यादि ॥

चरणे ब्रह्मचारिणि ६ । ३ । ८६ ॥

ब्रह्मचारिण्युत्तरपदे समानस्य मः चरणे समानत्वेन गम्यमाने ।
चरणं शाखा ब्रह्म वेदः तदध्ययनार्थं व्रतमपि ब्रह्म तथगतीति
ब्रह्मचारी । ममागः मः स ब्रह्मचारी ॥

तीर्थे ये ६ । ३ । ८७ ॥

तीर्थ उत्तरपदे यादो प्रत्यये विवक्षिते समानस्य सः । सतीर्थः
एकगुरुकः । समानतीर्थेवासी इति यत्प्रत्ययः ॥

विभापोदरे ६ । ३ । ८८ ॥

यादो प्रत्यये विवक्षित इत्येव । सोदर्यः ममानोदर्यः ॥

दृग्दृशवतुषु ६ । ३ । ८९ ॥

सदृक् सदृशः ॥

दृक्षे चेति वक्तव्यम् ❀ ॥

सदृक्षः । वतुरुत्तरार्थः ॥

इदंकिमोरीशकी ६ । ३ । ९० ॥

दृग्दृशवतुषु इदम ईश् किमः की । ईदृक् ईदृशः । कीदृक्
कीदृशः । वतूदाहरणं वक्ष्यते ॥

दृक्षे चेति वक्तव्यम् ❀ ॥

ईदृक्षः । कीदृक्षः । आसर्वनाम्नः दृक्षे च । तादृक् तादृशः
तावान् तादृक्षः । दीर्घः मत्वोत्वे । अमूदृशः अमूदृक् अमूदृक्षः ॥

ज्योतिरायुपः स्तोमः ८ । ३ । ८३ ॥

आभ्या स्तोमस्य सस्य मूर्धन्यः समासे । ज्योतिष्टोमः ।
आयुष्टोमः । समासे किम् । ज्योतिषः स्तोमः ॥

सुपामादिषु च ८ । ३ । ९८ ॥

सस्य मूर्धन्यः । शोभनं साम यस्य सुपामा । सुपन्धिः ॥

एतिसंज्ञायामगात् ८ । ३ । ९९ ॥

सस्य मूर्धन्यः । हरिपेणः । एति किम् । हरिसक्थम् । संज्ञाया
किम् । पृथुसेनः । अगकारात्किम् । विष्वक्सेनः । इण्कोरित्येव ।
सर्वसेनः ॥

नक्षत्राद्वा ८ । ३ । १०० ॥

एतिसस्य संज्ञायामगकारान्मृद्धेन्यो वा । रोहिणीपेणः । रोहि-
णीसेनः । गकारात्तु शतभिषवसेनः । आकृतिगणोऽधम् ॥

अपठ्यतृतीयास्थस्यान्यस्य दुगाशीराशास्था-
स्थितोत्सुकोत्तिकारकरागच्छेषु ६ । ३ । ९९ ॥

अन्यशब्दस्य दुगागमः आशीरादिषु परेषु । अन्यदाशीः ।
अन्यदाशा । अन्यदास्था । अन्यदास्थितः । अन्यदुत्सुकः ।
अन्यदूतिः । अन्यद्रागः । अन्यदीयः । अपष्ठी इत्यादि किम् ।
अन्यस्यान्येन वाशीरन्याशीः । कारके छे च नायं निषेधः । अ-
न्यस्य कारकोऽन्यत्कारकः । अन्यस्यायमन्यदीयः । गहादेराकृति-
गणात्वाच्छः ॥

अर्थे विभाषा ६ । ३ । १०० ॥

अन्यदर्थः अन्यार्थः ॥

इति ११८ अंशाः ।

कोः कत्तत्पुरुषेऽचि ६ । ३ । १०१ ॥

अजादावुत्तरपदे । कुत्तितोऽश्वः कदश्वः । कदन्नम् । तत्पुरुषे
किम् । कूप्ती राजा ॥

त्रौ च ❀ ॥

कुत्तितत्तत्त्रयः कत्रयः ॥

रथवदयोश्च ६ । ३ । १०२ ॥

कद्रथः । कद्रदः ॥

तृणे च जातौ ६ । ३ । १०३ ॥

कत्तृणम् ॥

कापथ्यक्षयोः ६ । ३ । १०४ ॥

कापथम् । काक्षः । अक्षगन्धेन तत्पुरुषः । अक्षिशब्देन बहु-
व्रीदिवर्त्ता ॥

ईपदर्थे ६ । ३ । १०५ ॥

ईपजलं काजलम् । अजादापि पगत्वात्कादेशः । काम्लः ॥

विभाषा पुरुषे ६ । ३ । १०६ ॥

कापुरुषः । कुपुरुषः । अप्राप्तविभाषेयम् । ईपदर्थे हि प्रविप्र-
तिषेधान्नित्यमेव । ईपत्पुरुषः कापुरुषः ॥

कवं चोष्णे ६ । ३ । १०७ ॥

उष्णशब्द उत्तरपदे कवं का च वा । कवोष्णम् । कोष्णम् ।
कदुष्णम् ॥

पृषोदरादीनि यथोपदिष्टम् ६ । ३ । १०९ ॥

पृषोदरप्रकाराणि त्रिष्टय्यथोच्चारितानि तथैव साधूनि । पृषदुदरं
पृषोदरम् । तलोपः । वारिवाहको बलाहकः । पूर्वपदस्य वः ।
उत्तरपदादेश्च लत्वम् । भवेद्वर्णागमाद्धंसः सिंहो वर्णविपर्ययात् ।
गूढोत्मा वर्णविकृतेर्वर्णनाशात् पृषोदरम् ॥ दिक्शब्देभ्यस्तीगस्य
तारभावो वा । दक्षिणतारम् दक्षिणतीरम् । उत्तरतागम् उत्तरतीरम् ॥

दुरोदाशनाशदभ्येष्टत्वमुत्तरपदादेः घृत्वं च ॥

दुःखेन दाश्यते दूडाशः । दुःखेन नाश्यते दूणाशः । दुःखेन
दभ्यते दूडभः । खलत्रिभ्यः दंभेर्नलोपो निपात्यते । दुःखेन
ध्यायतीति दूढघः । आतश्च इति कः । भ्रुवन्तोऽस्यां सीदन्तीति
चृसी । भ्रुवच्छब्दस्य वृ आदेशः । सदेरधिकरणे ङट् । आकृतिग-
णोऽयम् ॥

नहिवृतिवृषिव्यधिरुचिसहितनिषु कौ ६ । ३ । ११६ ॥

क्विवन्तेषु परेषु पूर्वपदस्य दीर्घः । उपानत् । नीवृत् । प्रावृत् ।
मर्मोवित् । नीरुक् । अभीरुक् । ऋतीपट् । परीतत् । की इति क्तिम् ।
परीणहनम् । विभाषा पुरुषे इत्यतो मण्डकप्लुत्या विभाषा अनु-
वर्तते । सा च व्यवस्थिता । तेन गतिकाम्कयोरेव नेह । पटुरुक् ।
तिग्मरुक् ॥

बले ६ । ३ । ११८ ॥

बलप्रत्यये परे दीर्घः संज्ञायाम् । कृषीउलः ॥

मतौ बह्वचोऽनजिरादीनाम् ६ । ३ । ११९ ॥

अमरावती । अनजिरादीना किम् । अजिरवती । बह्वचः किम् ।
ब्रीहिमती । संज्ञायाम् इत्येव नेह । बलयवती ॥

शरादीनां च ६ । ३ । १२० ॥

शरावती ॥

उपसर्गस्य घञ्यमनुष्ये बहुलम् ६ । ३ । १२२ ॥

उपसर्गस्य बहुलं दीर्घः घञन्ते परे ननु मनुष्ये । परीपाकः
परिपाकः । अमनुष्ये किम् । निपाडः ॥

इकः काशे ६ । ३ । १२३ ॥

इगन्तस्योपसर्गस्यैव दीर्घः काशे । वीकाशः । नीकाशः । इकः
किम् । प्रकाशः ॥

अष्टनः संज्ञायाम् ६ । ३ । १२५ ॥

उत्तरपदे दीर्घः । अष्टापदम् । संज्ञाया किम् । अष्टपुत्रः ॥

नरे संज्ञायाम् ६ । ३ । १२९ ॥

विश्वानरः ॥

मित्रे चर्पो ६ । ३ । १३० ॥

विश्वामित्रः । ऋषौ किम् । विश्वमित्रो माणवकः ॥

पानं देशे ८ । ४ । ९ ॥

पूर्वपदस्थान्निमित्तात्परस्य पानस्य नस्य णत्वं देशे गम्ये ।
क्षीरं पानं येषां ते क्षीरपाणा उशीनराः । सुरापाणाः प्राच्याः ।
पीयत इति पानम् । कर्मणि ल्युट् ॥

वा भावकरणयोः ८ । ४ । १० ॥

पानस्य इत्येव । क्षीरपानम् क्षीरपाणम् ॥

गिरिनद्यादीनां वा ॐ ॥

गिरिनदी गिरीणदी । चक्रनितम्बा चक्राणितम्बा ॥

प्रातिपदिकान्तनुम्बिभक्तिषु च ८ । ४ । ११ ॥

पूर्वपदस्थान्निमित्तात्परस्य एषु स्थितस्य नस्य णो वा । प्रातिप-
दिकान्ते-मापवापिणौ । नुमि-ग्रीहिवापाणि । विभक्तौ-मापवापे
ण । पक्षे मापवापिनावित्यादि । उत्तरपद यत्प्रातिपदिकं तदन्तस्यैव
णत्वं नेह । गर्गाणां भगिनी गर्गभगिनी । अत एव नुम्ग्रहणं
कृतम् । अङ्गस्य नुम्बिधानात्तद्भक्तो हि नुम् न उत्तरपदस्य । किं
च ग्रहिष्वन् इत्यादौ हिवेर्नुमो णत्वार्थमपि नुम्ग्रहणम् । मेन्वनम्
इत्यादौ तु क्षुभ्रादित्वान्न ॥

युवादेर्न ॐ ॥

रम्ययूना । परिपक्वानि । एकाजुत्तरपदे णः । नित्यम् इत्यु-
क्तम् । वृत्रहणौ । हरिं मानयतीति हरिमाणी । नुमि-क्षीरपाणि ।
विभक्तौ-क्षीरपेण रम्यविणा ॥

कुमति च ८ । ४ । १३ ॥

कवर्गवत्पुरपदे प्राग्वत् । हरिकामिणौ । हरिकामाणि । हरि-
कामेण ॥

पदव्यवायेऽपि ८ । ४ । ३८ ॥

पदेन व्यवधानेऽपि णत्वं न । मापकुम्भवापेन । चतुरङ्गयोगेन ॥

अतद्धित इति वाच्यम् ॐ ॥

आर्द्रगोमयेण । शुष्कगोमयेण ॥

कुस्तुम्बुरुणि जातिः ६ । १ । १४३ ॥

अत्र सुण् निपात्यते । कुस्तुम्बुरुर्धान्याकम् । क्लीबत्वमतन्त्रम् ।
जाति किम् । कुस्तुम्बुरुणि । कुत्सितानि तिन्दुकीफलानित्यर्थः ॥

अपरस्पराः क्रियासातत्ये ६ । १ । १४४ ॥

सुण् निपात्यते । अपरस्पराः सार्थाः गच्छन्ति । सततमावेच्छे-

देन गच्छन्तीत्यर्थः । क्रिया इति किम् । अपरपरा गच्छन्ति ।
अपरे च परे च सृष्टेव गच्छन्तीत्यर्थः ॥

गोष्पदं सेवितासेवितप्रमाणेषु ६ । १ । १४५ ॥

मुद् सस्य पत्वं च निपात्यते गाः पद्यन्तेऽस्मिन्देसे स गोभिः
सेवितो गोष्पदः । असेविते अगोष्पदान्यरण्यानि । प्रमाणे । गो-
ष्पदमात्रं क्षेत्रम् । सेवित इत्यादि किम् । गोः पदं गोपदम् ॥

आस्पदं प्रतिष्ठापाम् ६ । १ । १४६ ॥

आत्मयापनायस्थाने मुद् निपात्यते । आस्पदम् । प्र इति
किम् । आपदापदम् ॥

आश्चर्यमनित्ये ६ । १ । १४७ ॥

अहते मुद् । आश्चर्य यदि स भुञ्जीत । अनित्ये किम् । आचर्य
कर्म शोभनम् ॥

वर्चस्केऽवस्करः ६ । १ । १४८ ॥

कुत्सितं वर्चो वर्चस्कमश्रमलम् । तस्मिन् मुद् । अवकीर्यत
इत्यवस्करः । वर्चस्के किम् । अवकरः ॥

अपस्करो रथाङ्गम् ६ । १ । १४९ ॥

अपकरोऽन्यः ॥

विष्किरः शकुनिर्विकिरो वा ६ । १ । १५० ॥

पक्षे विकिरः । वाचनेनैव सुद्धिकल्पे सिद्धे विकिरग्रहणं त-
स्यापि शकुनेरन्यत्र प्रयोगो मा भूदिति वृत्तिस्तत्र भाष्यविरोधात् ॥

प्रतिष्कशश्च कशः ६ । १ । १५२ ॥

कश गतिशासनयोः इत्यस्य प्रतिपूर्वस्य पचाद्यचि मुद् निपा-
त्यते पत्वं च । सहायः पुरोयायी वा । प्रतिष्कश इत्युच्यते ।
कशः किम् । प्रतिगतः कशां प्रतिकशोऽश्वः । यद्यापि कशेरेव
कशा तथापि कशेरिति धातोर्ग्रहणमुपसर्गस्य प्रतेर्ग्रहणार्थम् । तेन
धात्वन्तरोपसर्गाच्च ॥

प्रस्कण्वहरिश्चन्द्रावृषी ६ । १ । १५३ ॥

हरिश्चन्द्रग्रहणममन्त्रार्थम् । ऋषी इति किम् । प्रस्कण्वो दंशः ।
हरिचन्द्रो माणवकः ॥

मस्करमस्कारिणो वेणुपरित्राजकयोः ६ । १ । १५४ ॥

मकरगब्दोऽव्युत्पन्नस्तस्य मुडिनिश्च निपात्यते । वेणु इति
किम् । मकरो ग्राहः । मकरी समुद्रः ॥

कारस्करो वृक्षः ६ । १ । १५५ ॥

कारं करोतीति कारस्करो वृक्षः । अन्यत्र कारकरः । केचित्तु
कस्कादिष्विदं पठन्ति न सूत्रेषु ॥

पारस्करप्रभृतीनि च संज्ञायाम् ६ । १ । १५७ ॥

एतानि समुद्रकानि निपात्यन्ते नाम्नि । पारस्करः किष्किन्वा ॥

तद्ग्रहतोः करपत्योश्चौरदेवतयोः सुद् तलोपश्च ॥

तात्पूर्वं चर्त्वेन दकारो बोध्यः । तद्ग्रहतोर्दकारतकारा लुप्येते ।
करपत्योस्तु सुद् चौरदेवतयोः इति समुदायोपाधिः । तस्करः ।
बृहस्पतिः ॥

प्रायस्य चित्तिचित्तयोः ॥

प्रायश्चित्तिः । प्रायश्चित्तम् । वनस्पतिरित्यादि । आकृति-
गणोऽयम् ॥ इति समासाश्रया विधयः ॥

इति ११९ अंगाः ।

सर्वस्य द्वे ८ । १ । १ ॥

इत्याधिकृत्य ॥

नित्यवीप्सयोः ८ । १ । ४ ॥

आभीक्ष्ण्ये वीप्सायां च द्योत्ये पदस्य द्विर्वचनम् । आभीक्ष्ण्यं
तिङन्तेष्वव्ययसंज्ञककृदन्तेषु च । पचति पचति । भुक्त्वा भु-
क्त्वा । वीप्सायाम् । वृक्षं वृक्षं सिञ्चति । ग्रामो ग्रामो रमणीयः ॥

परेर्वर्जने ८।१।५ ॥

परि परि वङ्गेभ्यो वृष्टो देवः । वङ्गान्परिहृत्येत्यर्थः ॥

परेर्वर्जने वावचनम् ॐ ॥

परि वङ्गेभ्यः ॥

उपर्यध्यधसः सामीप्ये ८।१।७ ॥

उपर्युपरि ग्रामम् । ग्रामस्योपरिष्ठात्समीपे देश इत्यर्थः । अर्ध-
वि सुखम् । सुखस्योपरिष्ठात् समीपकाले दुःखमित्यर्थः । अधोऽयो
लोकम् लोकस्याधस्तात्समीपे देश इत्यर्थः ॥

वाक्यादेरामन्त्रितस्यासूयासंमतिकोपकुत्सनभर्त्स-
नेषु ८।१।८ ॥

असूयायाम्-सुन्दर सुन्दर वृथा नै सौन्दर्यम् । संमतौ-देव
देव वन्द्योऽसि । कोपे-दुर्विनीत दुर्विनीत इदानीं ज्ञास्यसि । कुत्सने-
धानुष्क धानुष्क वृथा ते धनुः । भर्त्सने-चोर चोर घातयिष्यामि
त्वाम् ॥

एकं बहुव्रीहिवत् ८।१।९ ॥

द्विरुक्त एकशब्दो बहुव्रीहिवत् । तेन सुब्लोपपुंवद्भावौ एकैक-
मक्षरम् । इह द्वयोरपि सुपोर्लुकि कृते बहुव्रीहिवद्भावादेव प्रातिप-
दिकत्वात् समुदायात्सुप् । एकैकयाहुत्या इह पूर्वभागे पुंवद्भावा-
द्विग्रहे विशेषः । न बहुव्रीहौ इत्यत्र पुनर्बहुव्रीहिवद्ग्रहणं मुख्यबहु-
व्रीहिलाभार्यम् । तेनातिदिष्टबहुव्रीहौ सर्वनामतास्त्येवेति प्राञ्चः ।
वस्तुतस्तु भाष्यमते प्रत्याख्यातमेतत् । सूत्रमतेऽपि बहुव्रीहिर्ये-
लौकिके विग्रहे निषेधकं नतु बहुव्रीहावितीहातिदेशशङ्कैव नास्ति ।
एकैकस्मै देहि ॥

आवाधे च ८।१।१० ॥

पीडाया घोत्यायां द्वे स्तो बहुव्रीहिवच्च । गतगतः विरहात्पी-
डयमानस्येयमुक्तिः । बहुव्रीहिवद्भावात्सुब्लक् । गतगता । इह
पुंवद्भावः ॥

कर्मधारयवदुत्तरेषु ८ । १ । ११ ॥

इत उत्तरेषु द्विवचनेषु कर्मधारयवत् कार्यम् । प्रयोजनं सुब्लो-
पपुंवद्भावान्तोदात्तत्वानि ॥

प्रकारे गुणवचनस्य ८ । १ । १२ ॥

सादृश्ये द्योत्ये गुणवचनस्य द्वे स्तस्तच्च कर्मधारयवत् । कर्म-
धारयवदुत्तरेषु इत्याधिकारात् तेन पूर्वभागस्य पुंवद्भावः । समासस्य
इत्यन्तोदात्तत्वं च । पटुपट्वा पटुपटुः । पटुसदृशः । ईपत्पटु-
रिति यावत् । गुणोपसर्जनद्रव्यवाचिनः केवलगुणवाचिनश्चेह गृह्य-
न्ते । शुक्लशुक्लं रूपम् । शुक्लशुक्लः पटः ॥

आनुपूर्व्ये द्वे वाच्ये ❀ ॥

मूले मूले स्थूलः । संभ्रमेण प्रवृत्तौ ययंष्टमनेकधाप्रयोगो न्याय-
सिद्धः । सर्प सर्प बुध्यस्व बुध्यस्व । सर्प सर्प सर्प बुध्यस्व बुध्यस्व
बुध्यस्व ॥

क्रियासमभिहारे च ❀ ॥

लुनीहि लुनीहीत्येवायं लुनाति । नित्यवीप्सयोः इति सिद्धे
भृशार्थे द्वित्वार्थमिदम् । पौनःपुन्येऽपि लोटा सह समुच्चित्य
द्योतकतां लब्धुं वा ॥

कर्मव्यतिहारे सर्वनामो द्वे वाच्ये । समासवच्च बहुलम् ❀ ॥

बहुलग्रहणादन्यपरयोर्न समासवत् । इतरशब्दस्य तु नित्यम् ॥

असमासवद्भावे पूर्वपदस्थस्य सुपः सुर्वक्तव्यः ❀ ॥

अन्योन्यं विप्रा नमन्ति । अन्योन्यौ । अन्योन्यान् । अन्योऽन्येन
कृतम् । अन्योन्यस्मै दत्तमित्यादि । अन्योन्येषां पुष्करैरामृशन्त
इति माघः । एवं परस्परम् । अत्र कस्कादित्वादिसर्गस्य सः ।
इतरेतरम् । इतरेतरेणेत्यादि ॥

**स्त्रीनपुंसकयोरुत्तरपदस्थाया विभक्तेराम्भावो वा व-
क्तव्यः ❀ ॥**

अन्योन्याम् । अन्योन्यम् । परस्परात् । परस्पग्म् । इतरेतराम् ।
 इतरेतरं वा । इमे ब्राह्मण्यौ कुले वा भोजयतः । अत्र केचित् ।
 आमादेशो द्वितीयाया एव भाष्यादौ तथैवोदाहृतत्वात् तेन स्त्री-
 नपुंसकयोरपि तृतीयादिषु पुंवदेव रूपमित्याहुः । अन्ये तूदाहरण-
 स्य दिङ्मात्रत्वात्सर्वविभक्तीनामादेशमाहुः । दलद्वये टावभावः ।
 ह्रीषे चाद्ङिहः स्वमोः समासे सोरलुक् चेति सिद्धं बाहुलका-
 त्रयम् । तथाहि । अन्योन्यं परस्परमित्यत्र दलद्वयेऽपि टाप् प्राप्तः
 नच सर्वनाम्नो वृत्तिमात्रे इति पुंवद्भावः । अन्यपरयोरसमासवद्भा-
 वात् । नच द्विवचनमेव वृत्तिः । यां यां प्रियः प्रैक्षत कातराक्षीं सा
 सा इत्यादाविति प्रसङ्गात् । अन्योन्यमितरेतरम् इत्यत्र च अदृङ्-
 तरादिभ्यः इत्यङ् प्राप्तः । अन्योन्यसंसक्तमहस्त्रियामम् । अन्यो-
 न्याश्रयः परस्पराक्षिसादृश्यम् । अदृष्टपरस्परैः इत्यादौ सोर्लुक्च
 प्राप्तः । सर्वं बाहुलकबलेन समाधेयम् । प्रकृतवार्तिकभाष्योदाहरणं
 स्त्रियाम् सूत्रे अन्योन्यसंश्रयम् त्वेतदिति भाष्यं चात्र प्रमाणमिति ॥

अकृच्छ्रे प्रियसुखयोरन्यतरस्याम् ८ । १ । १३ ॥

प्रियप्रियेण ददाति प्रियेण वा । सुखसुखेन ददाति सुखेन वा ।
 द्विवचने कर्मधारयवद्भावात्सुपि लुकि तदेव वचनम् । अतिप्रिय-
 मपि वस्त्वनायासेन ददातीत्यर्थः ॥

यथास्वे यथायथम् ८ । १ । १४ ॥

यथास्वम् इति वीप्तायामव्ययीभावः । योऽयमात्मा यच्चा-
 त्मीयं तद्यथास्वम् । तस्मिन् यथाशब्दस्य द्वे क्लीबत्वं च निपात्यते ।
 यथायथं ज्ञाता । यथास्वभावमित्यर्थः । यथात्मीयमिति वा ॥

द्वन्द्वं रहस्यमर्यादावचनव्युत्क्रमणयज्ञपात्रप्रयोगाभि-
 व्यक्तिषु ८ । १ । १५ ॥

द्विशब्दस्य द्विवचनं पूर्वपदस्याम्भावोऽप्येवं चोत्तरपदस्य नपुंसकत्वं
 च निपात्यते षष्ण्वर्थेषु । तत्र रहस्यं द्वन्द्वशब्दस्य वाच्यम् ।
 इतरे विषयभूताः द्वन्द्वं मन्त्रयते । रहस्यामित्यर्थः । मर्यादास्थित्य-

नतिक्रमः । आचतुरं हीमे पशवो द्वन्द्वं मिथुनायन्ते । माता पुत्रेण मिथुनं गच्छति । पौत्रेण प्रपौत्रेणापीति मर्यादार्यः । व्युत्क्रमणं पृथगवस्थानं द्वन्द्वं व्युत्क्रान्ताद्विर्गसंवन्धेन पृथगवस्थिताः । द्वन्द्वं यज्ञपात्राणि प्रयुनक्ति । द्वन्द्वं संकर्षणवासुदेवौ अभिव्यक्तौ । साहचर्येणेत्यर्थः । योगविभागादन्यत्रापि द्वन्द्व इष्यते । इति द्विरुक्ति-प्रक्रिया ॥

इति १२० अंशः ।

इति तृतीयाध्यायस्य चतुर्थः पादः तृतीयोऽध्यायः समाप्तः ।

इति द्वितीयखण्डस्य प्रथमो भागः ।

अथ द्वितीयो भागः । तत्रादौ बहूपकारकत्वात्पाणिन्यष्टकपाठिताः परिभाषा लिख्यन्ते । काश्चित्तु परैः परिभाषात्वेनानुलिखिता अपि तत्साम्यं मत्वाभेदबुद्धिना मया तासु न्यस्यन्ते । तत्र, उरण् स्परः । एच् इग्रस्वादेशे । अलोन्त्यस्य । आदेः परस्य । डिश्च । अनेकालं शित्सर्वस्य । प्रत्ययलोपे प्रत्ययलक्षणम् । न लुमताङ्गस्य । पूर्वत्रासिद्धम् । मिदचोऽन्त्यात्परः । एताः स्वस्वस्यलेषु व्याख्याताः । अथ पूर्वत्र व्याख्याता अपि विशेषप्रदर्शनार्थं लिख्यन्ते । स्थानेऽन्तरतमः । तेन सुध्युपास्य इत्यत्र इकारस्य यकार एव सौऽपि प्राप्यमाणानां मध्य एव । तेन तत्रानुनासिको न । तथा जलौघ इत्यत्र त्रिमात्र औकारो न । स्थानार्थगुणप्रमाणैरान्तर्यं चतुर्द्धा । स्थानतः सुध्युपास्यः इत्यादौ । अर्थतः तृज्वत् क्रोष्टुः इत्यत्र । क्रोष्टुशब्दस्य क्रोष्टृ एव नतु तृज्वन्तोऽपि वक्रादिः । गुणतः प्रयत्नादेः । श्रयो ह इत्यत्र प्रयत्नसाम्यात् हस्य वर्गचतुर्थः । विद्वान् लिखतीत्यत्रानुनासिकनस्य 'तादृशो लः । प्रमाणतः अदसो मेरित्यत्र ह्रस्वव्यञ्जनयोर्ह्रस्वः दीर्घस्य दीर्घः । स्थानत आन्तर्यं बलीयः । तेन चेता इत्यत्र गुणे कार्ये स्थानसाम्यात् इकारस्यैकार एव नतु प्रमाणतोऽकारः । तमब्रह्म किम् । वाग्धरिरित्यत्र महाप्राणमात्रसाम्येन द्वितीयो न नादमात्रसाम्येन तृतीयश्च न किन्तुभयसा-

म्येन चतुर्थ एव । यथासंख्यमनुदेशः समानाम् । तेन एचोऽयवा-
याव इति चतुर्णामेचां क्रमेणायादयः । अन्यथा एचां प्रत्येकं
पर्यायेण ते स्युः । अणुदित्सवर्णस्य चाप्रत्ययः । तेन इको
यणचीत्यादाः इग्मिरजिमश्च स्वस्वसवर्णा दीर्घा अपि संगृह्यन्तेऽतः
सुध्युपास्यः सुध्याशय इत्यादावपि यण् । अविधीयमानः किम् ।
अस्मै इत्यादौ त्यदादीनाम् इत्यनेन अनुनासिकीष्कारो यथा न
स्यात् । तपरस्तत्कालस्य । तेन रमायै इत्यत्र अतो गुण इत्यनेन
याडाकारस्य पररूपं न । गङ्गोदकमित्यत्र अदेङ्गुण इत्यत्राताग्रह-
णादाङ्गुण इति त्रिमात्र ओकारो न । द्विर्वचनेऽचि । ईर्ष्यधातौ
व्याख्यातम् । परे तु द्वित्वनिमित्तेऽचि अजादेशः स्थानिरूपमाप-
द्यते द्वित्व एव कर्त्तव्ये इति व्याचक्षते । तत्र यणादेशे कृतेऽपि पुनः
कृभावो भवति ततो द्वित्वे कृते तु पुनर्यणादेशरूपमवतिष्ठते इति
तुल्यं फलम् ॥

असिद्धवदत्राभात् ॥

तेन एधि शाधीत्यादा एत्वशाभावयोः कृतयोरपि तयोरसिद्ध-
त्वेन शलन्तत्वात् ह्रस्वत्वम्य इति हेर्द्धिः । समानाश्रये किम् । वपुषः ।
अत्र पाधातोः वसोर्यत्संप्रसारणं तदातो लोप इटि च इत्यालोपे
कर्त्तव्यं नासिद्धम् । आलोपो हि वसौ सम्प्रसारणं तु विभक्ताविति
व्याश्रयत्वात् ॥

आद्यन्तौ टकितौ ॥

डमो ह्रस्वादित्यत्र व्याख्यातम् । अवयवत्वं चात्र समीपे सदृशे
वा उपचारात् ॥

स्थानिवदादेशोऽनलविधौ ॥

डेर्य इत्यत्र व्याख्यातम् । तथा सुध्युपास्य इत्यत्र यकारस्य
स्थानिवद्भावेनाऽच्चवमाश्रित्याऽनचि चेति द्वित्वनिषेधो न शङ्क्यो-
ऽलविधित्वात् । अलविधिश्चतुर्धा । तत्राला विधौ यथा । व्यूढोर-
स्केन । अत्र सकारस्य स्थानिवत्त्वेन विसर्गवद्वत्त्वमाश्रित्याङ्गव्य-

वाय इति णत्वं न । अलः परस्य यथाद्यौः पन्थाः इह हलङ्घ्या-
दिलोपो न । अलो विधौ यथा । शुक्रामः । इह लोपो व्योर्वलीति
लोपो न । न चोत्त्वविधिसामर्थ्यम् । द्रुयानमित्यादी तस्य साव-
काशत्वात् । अलि विधौ यथा । यजेः क्तः । क इष्टः । इह दशि
चेत्युत्त्वं न ॥

आकडारादेका संज्ञा ॥

हलन्तेषु राजन्शब्दे व्याख्यातम् । आकडारीयप्रकरणादन्यत्र
तु यथोचितमनेकसंज्ञानां समावेशोऽपि भवति । यथा सर्वशब्दे
सर्वनामप्रातिपदिकसंज्ञयोः तथा तव्यटादौ कृतकृत्यप्रत्ययसंज्ञानां
समावेशः ॥

अचः परस्मिन् पूर्वविधौ ॥

तत्र पूर्वविधावित्यत्र द्विधा समासः । पूर्वस्य विधाविति समासं
कथयतीत्यत्र न वृद्धिरिति व्याख्यातम् । पूर्वस्माद्विधाविति समासे
तन्वन्ति तन्वते । इह यणादेशस्य स्यानिबद्धभावाच्चेद्वा । अथ हि
तनित्यङ्गं निमित्तं तच्च स्यानिभूतादुकारात्पूर्वमिति ॥

न लोपः सुप्स्वरसंज्ञातुग्विधिषु कृति ॥

तेन राजाश्च इत्यादौ सवर्णे दीर्घे कर्तव्ये नलोपो सिद्धो न
भवति । भुवाश्रितो विधिः सुब्विधिः । तेन राजभ्याम् राजभ्यः रा-
जभिरित्यात्रात्वमेत्वमेस्त्वं च न । स्वरविधौ पञ्चार्थम् । दिक्संख्ये
संज्ञायामिति समासे नलोपे कृते अवर्णान्तं पूर्वपदं जातमित्यर्थे
चावर्णं द्व्यच् त्र्यच् इति पूर्वपदाद्युदात्तत्वं प्राप्तं नलोपस्यासिद्धत्वाच्च
भवति । संज्ञाविधौ पञ्चनार्य इत्यादौ नलोपे कृतेऽपि षण्णान्ता प-
डिति षट्संज्ञा प्रति नलोपस्यासिद्धत्वाच्च षट् । सस्त्रादिभ्य इति
टाप् न भवति । कृति तुग्विधौ तु वृत्रहभ्याम् इत्यत्र ब्रह्मभूणेति
विहितं क्तिपमाश्रित्य ह्रस्वस्येति तुह नाकृतीति किम् । वृत्रहच्छ-
त्रमित्यादौ छे चेति तुक् स्यादेव ॥

इति १०१ अंशः ।

न मुने ॥

तेन अमुना इत्यत्र मुभावस्य सिद्धत्वेन धित्वात् आडो नामा-
वः सिद्धयति । कृते च नामावे मुभावः सिद्ध एव । तेन मुपि चेति
दीर्घोऽपि न भवति । परे तु कृते इति न व्याख्येयम् । तत्र हि स-
न्निपातपरिभाषया दीर्घत्ववारणसंभवादित्याहुः ॥

वासरूपोऽस्त्रियाम् ॥

तेन ऋहलोर्ण्यत् इत्यादयोऽपवादाः नव्यटादीनां विकल्पेन
बाधकाः । अतस्तव्यदादयोऽपि पक्षे स्युरेव । कार्यम् । कर्तव्यम् ।
करणीयम् । असरूपः किम् । पोरदुपधादित्यादयो ण्यदादीनां
नित्यबाधका एव । लभ्यम् । शप्यम् । अस्त्रिया किम् । मृजा
इत्यादौ पिङ्मिदादिभ्योऽडित्यादिभिः क्तिन्बाध्यत एव ॥

त्वरूपं शब्दस्याशब्दसंज्ञा १ । १ । ६८ ॥

शब्दस्य स्वं रूपं संज्ञि शब्दशास्त्रे या संज्ञा ता विना । तेन अ-
ग्रेईक् इत्यग्निशब्दादेव ढक् न बह्मद्यादिशब्दात् । अशब्दसंज्ञेति
किम् । उपसर्गे घोः किरिति दाधाभ्य एव किः यथा स्यात् ।
घुङ् शब्द इत्यतो मा भूत् ॥

पष्ठी स्थानेयोगा १ । १ । ४९ ॥

अनिर्द्धारितमवन्धविशेषा पष्ठी स्थानेयोगा बोध्या । स्थानं च
प्रसङ्गः । तथा च इको यणचोत्यादी पष्ठीप्रसङ्गार्थका । तथा च
अच्परकस्येक उच्चारणप्रसङ्गे यणुच्चार्य इत्यादिरर्थः ॥

येन विधिस्तदन्तस्य १ । १ । ७२ ॥

विशेषणं तदन्तस्य संज्ञा स्वस्य च रूपस्य । तेन एरच इत्य-
नेन इकारान्ताटिकाररूपाश्च धातोरच् । तेन, चयः । जयः । अयः ॥

समासप्रत्ययविधौ प्रतिषेधः ॥

तेन द्वितीयाश्रितेत्यनेन कृष्णाश्रित इत्यत्रैव समासो नतु कृष्ण-
मुपाश्रित इत्यत्र नडादिभ्यः फक् इति । नडस्यापत्यं नाडायन
इत्यत्रैव स्यान्नतु सूत्रनडस्यापत्यं सूत्रनाडिरित्यत्रेति ॥

उगिद्वर्णग्रहणवर्जम् ❀ ॥

महान्तमतिक्रान्ता अतिमहती । महच्छब्दस्य गौरादित्वेऽप्यु-
पसर्जने पिद्गौरेति ङीपोऽप्यवृत्ते रुगितश्चेत्युगिदन्तान् ङीप् ।
एवं वर्णग्रहणे । अत इञ् । दाक्षिः ॥

इको गुणवृद्धी १ । १ । ३ ॥

गुणवृद्धिशब्दाभ्या यत्र गुणवृद्धी विधीयेते तत्रैक इति पष्ठच-
न्त पदमुपतिष्ठते । यत्र साक्षात्स्थानी न निर्दिष्टः सार्वधातुकार्ध-
धातुकयोः सिचि वृद्धिरित्यादौ तत्रैवेयं परिभाषा प्रवर्तते न त्वचो-
ऽणितीत्यादौ स्थानिनिर्देशात् । गुणवृद्धिशब्दाभ्यामिति किम् ।
त्यदादीनामः । इमे । दिव औत् । घौः । विधीयत इति किम् ।
यत्र त्वनुवादो वृद्धिर्यस्याचामादिरित्यादौ तत्रैक इति नोपतिष्ठते ।
अनुवादे परिभाषाणामनुपस्थितेरिति भावः ॥

अचश्च १ । २ । २८ ॥

ह्रस्वदीर्घप्लुतशब्दैर्यत्राज्जिधीयते तत्राच इति पष्ठचन्तं पदमुप-
तिष्ठते । तेन ह्रस्वो नपुंसके इत्यादौ प्रातिपदिकान्तस्य अचो
ह्रस्वः । श्रीप कुञ्म् । नतु सुवाग् ब्राह्मणकुलम् इत्यादौ । ह्रस्वे-
स्यादि किम् । दिव उत् । युभ्याम् ॥

तस्मिन्निति निर्दिष्टे पूर्वस्य १ । १ । ६६ ॥

सप्तमीनिर्देशेन विधीयमानं कार्यं वर्णान्तरेणाव्यवहितस्य पूर्वस्य
बोध्यम् । यथा दध्युदकम् । अत्रोकारस्य मा भृत् । अव्यवहित-
स्यैवेति किम् । अग्निचिदत्र । सोमसुदत्र ॥

तस्मादित्युत्तरस्य १ । १ । ६७ ॥

पञ्चमीनिर्देशेन क्रियमाणं कार्यं वर्णान्तरेणाव्यवहितस्य परस्य
बोध्यम् । तेन तिङ्गतिङ् इति निघात उत्तरस्येव । अग्निमीडे । नेह ।
ईडे अग्निम् । अव्यवहितस्येति किम् । उत्संस्थान उत्संस्तम्भनामि-
त्यादा उदस्येति पूर्वसवर्णो न प्रवर्तते ॥

स्वरितेनाधिकारः १ । ३ । ११ ॥

स्वरितत्वयुक्तं शब्दस्वरूपमाधिकृतं बोध्यम् । प्रतिज्ञास्वरिताः पाणिनीयाः । कियदूरमाधिकार इत्यत्र तु व्याख्यानमेव शरणम् । यद्वा स्वरिते दृष्टे सति नाधिकारः अधिकारी निवर्तते इत्यर्थः । कः स्वरितोऽधिकारार्थः कश्च तन्निवृत्त्यर्थ इत्यत्रापि व्याख्यानमेव शरणम् । यद्वा अधिकः कस्रोऽधिकारः । अधिकं कार्यं गौणेऽपि शास्त्रप्रवृत्तिरित्यर्थः । तथा च गौणमुख्यन्यायो यत्र नैष्यते अपादानाधिकारणादौ तत्र स्वरितः पाठ्यः किञ्च अधिकः कारः कृतिरियं यत्पूर्वः सन् परं बाधते । तथा च नुमचिरवृज्वद्भावेभ्यो नुडित्यादि वक्ष्यमाणपूर्वविप्रतिषेधाः सर्वे संगृहीता भवन्ति । तत्र स्वरितपाठेनैव गतार्थत्वादित्यादि ॥

न पदान्तद्विर्वचनवरेयलोपस्वरसवर्णानुस्वारदीर्घज- श्रीर्वधिषु १ । १ । ५८ ॥

पदस्य धरमावयवे द्विर्वचनादौ च कर्तव्ये परनिमित्तोऽजादेशो न स्थानिवत् । अचः परस्मिन्नित्यस्यायं निषेधः । पदान्ते-कानि संतीत्यत्र अस्तेरलोपस्याष्ट्वमाश्रित्य यण् न । द्विर्वचने-सुद्धयुपा-
स्यः । यस्य इत्वमाश्रित्यानिचि चेति द्वित्वनिषेधो न । वरे-याया-
वरः । यातेर्यङन्ताद् यश्च यङ इति वरच । अतो लोपः तस्य अचः परस्मिन्निति स्थानिवद्भावे प्राप्ते यलोपं प्रति स्थानि-
वद्भावनियेधात् लोपो व्यौरिति यलोपः । स च आतो लोप इति चेत्यालोपे कर्तव्ये वरे लुप्तत्वात् न स्थानिवत् । यलोपे-यातिः । याते-
र्यङन्तात् क्तिच् जतो लोपः । यलोपः अलोपस्य स्थानिवत्त्वादातो लोपः स चालोपः यलोपे कार्ये न स्थानिवत् । तेन पुनर्यलोपः ।
स्वरे-चिकीर्षकः । सनोऽतो लोपः लितीति ककारेकारस्योदात्तत्वे कर्तव्ये न स्थानिवत् । सवर्णानुस्वारयोः-शिण्डि । श्रसोरलोपो न स्थानिवत् । दीर्घे-प्रतिदीप्ता जशि-सगिधश्च मे अदनं गिधः । जदेः क्तिनि यङुलं उन्दसीति घस्त्व घसिमसोर्हलित्युपधातोः श्लो

झलीति सलोपः । तकारस्य धत्वं घस्य झलां जशिति जश्त्वं तत्र कर्तव्ये उपधालोपो न स्थानिवत् । समानस्य छन्दसीति समानस्य सः । समाना ग्धिः सग्धिः । चरि-जक्षतुः । जक्षुः । घसेर्लिटि अतुस् उस् च गमहनेत्युपधालोपः । खरि चेति चत्वं प्रति न स्थानिवत् । भाष्ये तु पूर्वत्रासिद्धे न स्थानिवदित्यवष्टभ्य द्विर्वचनसवर्णानुस्वारदीर्घजश्चरः प्रत्याख्याताः । तद्वीत्या तु सलोपे धत्वे च कर्तव्ये स्थानिवद्भावशङ्कैव नास्तीति ॥

इति १२२ अंशः ।

विप्रतिपेधे परं कार्यम् १ । ४ । २ ॥

कचित्परस्परलब्धावकाशयोरेकेष्वसमावेशो विप्रतिपेधः स एव तुल्यबलविरोधस्तत्र परं कार्यं स्यात् । तेन वृक्षेभ्य इत्यत्र सुपि चेत्यतः परत्वाद्वहुवचने झल्येत् इत्येव भवति ॥

अन्तादिवच्च ६ । १ । ८५ ॥

योऽपमेकादेशः स पूर्वस्थान्तवत्परस्यादिवत् स्यात् । यथा ब्रह्मबन्धुरित्यत्र ब्रह्मबन्धुरिति प्रातिपदिकम् । ऊङ् प्रतिपादिकं तयोर्थे एकादेशः स प्रातिपदिकस्यान्तवद् भवति । तेन ङात्प्रातिपदिकादिति स्वादिविधिर्भवति । वृक्षावित्यत्र सुवौकारः अमुवकारः तयोरेकादेशः सुप आदिवद् भवति । तेन सुवन्तत्वात्पदसंज्ञा वर्णाश्रयविधावन्तवद्भावो नेष्यते । तेन खट्वाभिरित्यत्रान्तवद्भावो दतो भिस ऐस् न भवति । एवं प्राच्छति उपाच्छतीत्यादौ पदान्तवद्भावेन रेफस्य न विसर्गः । उभयथर्तु इत्यादिनिर्देशाच्च ॥

समर्थः पदविधिः २ । १ । १ ॥

पदसम्बन्धी यो विधिः स समर्थाश्रितो बोध्यः । सामर्थ्यं द्विधा । व्यपेक्षा एकार्थीभावश्च । तत्राकाशादिवशात्परस्परसम्बन्धो व्यपेक्षा सैव वाक्ये । यथा गङ्गाः पुरुषोऽश्वश्चेति । तत्र व्यपेक्षायां सत्यां सन्निहितेन योग्येन च संबंधोऽभ्युपेयते । एकार्थीभावश्च गजपुरुषइत्यादि वृत्तावेवाम च प्रक्रियादशायां पृथगर्थत्वेन प्रथम-

गृहीतार्थस्य विशिष्टैकार्थत्वरूपः स एवेह गृह्यते । पदग्रहणं किम् ।
वर्णविधौ समर्थपरिभाषा मा भूत् । तेन तिष्ठतु दध्यानय तक्र-
मित्यत्र सामर्थ्यार्भवेऽपि यण् भवत्येव । समर्थ इति किम् ।
पश्यति कृष्णं श्रितो देवदत्तमित्यादौ कृष्णश्रित इति समासो न
भवति । कचिच्च सापेक्षत्वेऽपि भाष्यादिप्रामाण्यादतिरङ्गीक्रियते ।
किमोदनः शालीनाम् । केषां शालीनामोदन इत्यर्थः । सक्तत्वाढक-
मापणीयानाम् । आपणीयानां सक्तूनामाढकमित्यर्थः ॥

न वेति विभाषा १ । १ । ४४ ॥

निषेधविकल्पयोर्विभाषासंज्ञा । विभाषा श्वेतित्यादिषु प्रतिषेध-
विकल्पावुपतिष्ठेते । तत्र प्रतिषेधेन समीकृते विषये पश्चाद्विकल्पः
प्रवर्तते । शुश्राव शिश्वायेत्यत्राप्राप्तौ विकल्पः । शिशुवतुः शिश्वि-
यतुरित्यादौ तु वचि स्वपीति नित्यप्राप्ताविति विवेकः । अत्रेदं
बोध्यम् । इतिशब्दः काकाक्षिन्यायेनोभाभ्या सम्बध्यते । स च पदा-
र्थविपर्यासकृत् । तेन निषेधो विकल्पश्च न वाशब्दार्थः संज्ञी वि-
भाषाशब्दार्थो विकल्पः संज्ञा उभयत्र विभाषार्थं चेदं सूत्रम् ।
प्राप्तविभाषायामप्राप्तविभाषाया च नास्योपयोगः । प्राप्तविभाषायां
भावाशस्य सिद्धत्वेन विभाषाश्रुत्या पक्षे भवतीति भावाशमनूद्य
पक्षे न भवतीत्यभावाशमात्रकरणात् । अप्राप्तविभाषायां तु अभा-
वाशस्य सिद्धत्वेन पक्षे न भवतीत्यभावाशमनूद्य पक्षे भवतीति
भावाशमात्रकरणात् । विभाषा श्वेतित्युभयत्र विभाषाया तु यदि
विधिमुखेन प्रवृत्तिस्तर्हि पित्स्वेव संप्रसारणविकल्पः स्यात् । कित्सु
यजादित्वाद्वचिस्वपीति नित्यमेव स्यात् । अथ प्रतिषेधमुखेन प्रवृ-
त्तिस्तर्हि कित्स्वेव प्रवृत्तिः स्यान्नतु पित्सु । परनित्यान्तरङ्गापवा-
दानामुत्तरोत्तरं बलीयः । पराद् नित्यं यथा, तुदादिभ्यः शः ।
तुदाति । रुदादिभ्यः श्रम् । रुणद्धि । परमपि लघूपधगुणं बाधित्वा
नित्यत्वात् शश्रमौ । तथा धिनवाव । धिनवाम । परमपि लोप-
श्चास्यान्यतरस्या श्वोरित्युकारलोपं बाधित्वा नित्यत्वादाहुत्तम-
स्येत्याद् । परादन्तरङ्गं यथा । उभये देवमनुष्याः । इह प्रथमचरमेति

परमपि विकल्पं बाधित्वा सर्वादीनीति सर्वनामसंज्ञाविभक्तिनिरपेक्षत्वेनान्तरङ्गत्वात् । तथा स्रवतेर्णिश्रीति चडि द्वित्वे उपधागुणादन्तरङ्गत्वादुवङ् । असुस्रवत् । परादपवादो यथा । परमप्यनेकालिति सर्वादेशं बाधित्वा डिधेत्यन्तादेशः । दध्ना । दध्ने । अस्थिदधीत्यनङ् । नित्यादन्तरङ्गं यथा । ग्रामणिनी कुले । नित्यमपीकोचीति नुमं बाधित्वा ह्रस्वो नपुंसक इति ह्रस्वः कृने तु नुमि अनजन्तत्वात् ह्रस्वो न स्यात् । अन्तरङ्गादपवादो यथा । दैत्यारिः । श्रीशः । परमपि सवर्णदीर्घं बाधित्वा अन्तरङ्गत्वादावृणे यणि च प्राप्तेऽपवादत्वात्सवर्णदीर्घः । तथा उरुयौ । उरुयः । सुल्वौ । सुल्वः । इत्यत्रान्तरङ्गत्वादियडि उवडि च प्राप्तेऽपवादत्वादेरनेकाच इत्योः सुपीति च यण् । यद्यपवादोऽन्यत्र चरितार्थः तर्हि परान्तरङ्गाभ्यां बाध्यत एव । तथाहि डिधेत्येतदनन्यार्थङकारयुक्तेष्वनडादिषु चरितार्थत्वात्तावाडे न प्रवर्तते । किन्तु परेणानेकालशित्यनेन बाध्यते । जीवतात् । मवतात् । अयजे इन्द्रम् । ग्रामे इह । सर्वे इत्यम् । अत्र अयज इ इन्द्रम्, ग्राम इ इह, सर्व इ इत्यमिति स्थिते अन्तरङ्गेण गुणेन सवर्णदीर्घो बाध्यते । तस्य समानाश्रये दैत्यारिः श्रीश इत्यादौ चरितार्थत्वात् ॥

कृताकृतप्रसंगि नित्यं तद्विपरीतमनित्यम् ॥

यथा ऋच्छति इत्यादौ सावकाशस्य शस्य तुतोदेत्यादौ सावकाशस्य गुणस्य च तुदतीत्यादौ परादपि गुणान्नित्यत्वाच्छ एव । शो हि गुणे कृतेऽकृते च प्रसङ्गी गुणस्तु अकृत एव । शे कृते तु शे तस्य डित्वाद् गुणो न भवति ॥

असिद्धं बहिरंगमन्तरङ्गे ॥

बहिरङ्गापेक्षयान्तर्गतानि अन्तर्भूतानि अङ्गानि निमित्तानि यस्य तदन्तरङ्गम् एवमन्तरङ्गापेक्षया बहिर्भूतान्यङ्गानि यस्य तद्बहिरङ्गम् । तत्रान्तरङ्गे कार्ये कर्तव्ये बहिरङ्गमासिद्धम् । यथा पचावेदमित्यत्र आद्गुणे कृते एत ए इति ऐकारो न भवति बहिरङ्गतया

गुणस्यासिद्धत्वात् । शेषाः परिभाषास्तृतीये खण्डे व्याख्यास्यन्ते ॥
इति १२३ अंशाः ।

अथ णिजन्ताः ॥ ओः पुयण्यपरे । अपीपवत् । अवीमवत् ।
अमीमवत् । अयीयवत् । अरीरवत् । अलीलवत् । अजीजवत् ॥

स्रवतिशृणोतिद्रवतिप्रवतिप्लवतिच्यवतीनां वा ७ ।
४ । ८१ ॥

एषामभ्यासोकारस्य इत्वं वा सनि अवर्णपरे धात्वक्षरे परे । अस्ति-
स्रवत् । असुस्रवत् । नाग्लोपि इति ह्रस्वनिषेधः । अशशासत् । अडुडौ-
कत् । अचीचकासत् । मतान्तरे अचचकासदिति वक्ष्यते । अग्लोपि
इति सुब्धातुप्रकरण उदाहरिष्यते । ण्यन्ताणिञ्चि पूर्वविप्रतिषेधा-
दपवादत्वाद्वा वृद्धिं बाधित्वा णिलोपः । चोरयति । णौ चङीति
ह्रस्वः । दीर्घो लघोः । न चाग्लोपित्वाद्योरप्यसम्भवः । ण्याकृति-
निर्देशात् । अचूचुस्त ॥

णौ च संश्वङोः ६ । १ । ३१ ॥

सन्परे चङपरे च णौ श्वयतेः संप्रसारणं वा । संप्रसारणं तदा-
श्रयं कार्यं च बलवत् । अतः संप्रसारणं । पूर्वरूपम् । अशूशवत् ।
अलघुत्वान्न दीर्घः । आशिश्वयत् ॥

स्तम्भुसिबुसहां चङि ८ । ३ । ११६ ॥

उपसर्गनिमित्त एषां सस्य पो न स्याच्चङि । अवातस्तम्मत् ।
पर्यसीपिवत् । न्यसीपदत् । आटिटत् । आशिशत् । बाहिरङ्गोऽप्यु-
पधाह्रस्वो द्वित्वात्प्रागेव । ओणेर्द्वादित्करणाद्धिक्त्वात् मा भवानिदि-
धत् । एजादविधतो विधानान्न वृद्धिः । मा भवान्प्रोदिधत् । नन्द्राः
इति नदराणां न द्वित्वम् । आन्दिदत् । आट्टिडत् । आर्चिचत् ।
उज्ज आर्जवे । उपदेशे दकारोपधः । भुजन्त्युर्जा पाण्डुपतापयोः
इति सूत्रे निपातनाहस्य वः । स चान्तरङ्गोऽपि द्वित्वविषये नन्द्राः
इति निषेधाज्जिह्वान्दस्य द्वित्वे कृते प्रवर्तते न तु ततः प्राक् । दकारो-
च्चारणमामर्थात् । आग्निजत् । अजादेस्तियेन नैह । अदिद्रपत् ॥

रभेरशब्दिलोः ७ । १ । ६३ ॥

रभेर्नुमाचि नतु शब्दिलोः । अररम्भत् ॥

लभेश्च ७ । १ । ६४ ॥

अललम्भत् । हेरचाडि इति सूत्रे अचडि इत्युक्तेः कुत्वं न ।
अजीहयत् ॥

अत्स्मृद्वत्वरप्रथमृदस्त्वृस्पशाम् ॥

असस्मरत् । अददरत् । तपरत्वसामर्थ्यादत्र लघोर्न दीर्घः ॥

विभाषा वेष्टिचेष्टयोः ७ । ४ । ९६ ॥

अभ्यासस्यात्वं वा स्याच्चङ्परे णौ । अववेष्टत् अविवेष्टत् । अच-
चेष्टत् अचिचेष्टत् । आजभास इत्यादिना वीषधाहस्वः । अविभ्रजत्
अबभ्राजत् । काण्पादयः प्रागुक्ताः तेषामुपधाहस्वो वा । अची-
कणत् अचकाणत् ॥

स्वापेश्चङिः ६ । १ । १८ ॥

प्यन्तस्य स्वपेश्चङिः संप्रसारणम् । असूपुपत् ॥

शाच्छासाह्वाव्यावेपां युक् ७ । ३ । ३७ ॥

णौ पुकोष्पवादः । शाययति । हाययति ॥

ह्रः संप्रसारणम् ६ । १ । ३२ ॥

सन्परे चङ्परे च णौ ह्रः संप्रसारणम् । अजुहवत् अजुहावत् ॥

लोपः पिवतेरीच्चाभ्यासस्य ७ । ४ । ४ ॥

पिवतेरुपधाया लोपः स्यादभ्यासस्य ईदन्तादेशश्च चङ्परे णौ ।
अपीप्यत् । अर्तिही इति पुक् । अर्पयति ह्रेपयति । ब्लेपयति ।
रेपयति । यलोपः । क्नोपयति । क्ष्मापयति । स्थापयति ॥

तिष्ठतेरित् ७ । ४ । ५ ॥

उपधाया इदादेशश्चङ्परे णौ । अतिष्ठिपत् ॥

जिघ्रतेर्वा ७ । ४ । ६ ॥

अजिघ्रिपत् अजिघ्रपत् । उर्कृत् । अर्चीकृतत् अर्चिकीर्तत् ।
अवीवृतत् अववर्तत् । अमीमृजत् अममार्जत् ॥

पातेर्णौ लुग्वक्तव्यः ॐ ॥

पुकोऽपवादः । पालयति ॥

वो विधूनने जुक् ७ । ३ । ३८ ॥

वातेर्जुक्स्याणौ कम्पेऽर्थे । वाजयति । कम्पे किम् । केशान्वा-
पयति ॥

विभाषा लीयतेः ॥

लीलोर्नुग्लुकावन्यतरस्यां स्नेहविपातने ७ । ३ । ३९ ॥

लीयतेर्लातिश्च क्रमाद्ग्लुकावागमौ वा णौ स्नेहद्रवे । विलीन-
यति । विलापयति विलालयति वा घृतम् । ली इति ईकारप्रक्षेपा-
दात्वपक्षे जुग्न । स्नेहद्रवे किम् । लोहं विलापयति ॥

प्रलम्भनाभिभवपूजासु लियो नित्यमात्वमाशिति
वाच्यम् ॐ ॥

लियः संमाननशालीनीकरणयोश्च १ । ३ । ७० ॥

लीङ्लियोर्ण्यन्तयोरात्मनेपदं स्यादकर्तृगेऽपि फले पूजाभिभवे
योः प्रलम्भने चार्थे । जटाभिर्लापयते । पूजामधिगच्छतीत्यर्थः ।
श्येनो वर्तिकाशुलापयते । अभिभवतीत्यर्थः । बालशुलापयते ।
वञ्चयतीत्यर्थः ॥

विभेतेर्हेतुभये ६ । १ । ५६ ॥

विभेतेरेव आत्वं वा प्रयोजकाद् । भयं चेत् ॥

भीस्म्योर्हेतुभये १ । ३ । ६८ ॥

प्यन्ताभ्यामाभ्यामात्मनेपदं स्यादेतौश्चेद् भयस्मर्यौ । सूने
भयग्रहणं धात्वर्थोपलक्षणम् मुण्डो भापयते ॥

भियो हेतुभये पुक् ७ । ३ । ४० ॥

भी ई इति ईकारः प्रक्षिप्यते ईकारान्तस्य भियः पुक् स्याण्णौ हेतुभये । भीषयते ॥

नित्यं स्मयतेः ६ । १ । ५७ ॥

स्मयतेरेचो नित्यमात्वं णौ हेतोः स्मये । जटिलो विस्मापयते । हेतोश्चेद् भयस्मयावित्युक्तेर्नेह । कुञ्चिकयैनं माययति । विस्माययति । कथं तर्हि विस्मापयन्विस्मितमात्मवृत्तौ इति । मनुष्यवाचा इति करणादेव हि तत्र स्मयः । अन्यथा शानजपि स्यात् । सत्यम् । विस्माययन् इत्येव पाठ इति साम्प्रदायिकाः । यद्वा मनुष्यवाक् प्रयोज्यकर्त्री विस्मापयते । तथा सिंहो विस्मापयन्निति प्यन्ताण्णौ शता इति व्याख्येयम् ॥

स्फायो वः ७ । ३ । ४१ ॥

णौ । स्फावयति ॥

इति १२४ अशाः ।

शदेरगतौ तः ७ । ३ । ४२ ॥

शदेर्णो तोऽन्तादेशः न तु गतौ । शातयति । गतौ तु गाः शादयति गोविन्दः । गमयतीत्यर्थः ॥

रुढः पोऽन्यतरस्याम् ७ । ३ । ४३ ॥

णौ । रोपयति । रोहयति ॥

क्रीड्जीनां णौ ६ । १ । ४८ ॥

एपामेच आत्वं णौ । क्रापयति । अध्यापयति । जापयति ॥

णौ च संश्रुडोः २ । ४ । ५१ ॥

सन्परे चङ्परे च णौ इडो गाढा । अध्यजीगपत् । अध्यापिपत् ॥

सिध्यतेरपारलौकिके ६ । १ । ४९ ॥

ऐहलौकिकेऽयं विद्यमानस्य सिध्यतेरेच आत्वं णौ । अन्नं साधयति निष्पादयतीत्यर्थः । अपारलौकिके किम् । तापसः सि-

ध्यति । तत्त्वं निश्चिनोति तं प्रेरयति सेधयति तापसं तपः ॥

प्रजने वीयतेः ६ । १ । ५५ ॥

अस्यैच आत्वं वा णौ प्रजनेऽर्थे । वापयति वांययति वा गाः ।
पुरोवातः गर्भं ग्राहयतीत्यर्थः ॥

ऊदुपधाया गोहः ॥

गूहयति ॥

दोषो णौ ६ । ४ । ९० ॥

दुपः इति सुबचम् । दुष्यतेरुपधाया ऊणौ । दूषयति ॥

वा चित्तविरागे ६ । ४ । ९१ ॥

विरागोऽप्रीतता । चित्तं दूषयति दोषयति वा कामः । मितां
ह्रस्वः । तत्र केचिन्मितः प्रागुक्ताः । इदानीं सर्वं उच्यन्ते । तत्रादौ
त्वरत्यन्तास्त्रयोदशानुदात्तेतः पित्तश्च । घट चेष्टायाम् । घटते ।
इत्यादिरूपाणि । ज्ञेयानि अनुवादरूपाणां तु स्वस्वगणे रूपाणि
भवन्ति । घटादयो मितः इति मित्संज्ञा । तत्फलं ॥ णौ मितां ह्रस्वः
इति चिण्णमुलोर्दीर्घाऽन्यतरस्याम् इति चोक्तम् । घटयति । वि-
घटयति । कथं तर्हि कमलवनोद्घाटनं कुर्वते ये प्रविघाटयिता ।
समुत्पतन्हरिदश्वः । कमलाकरानिव इत्यादि शृणु । घट संघाते
इति चौरादिकस्येदम् । नच तस्यैवार्थविशेषे मित्वार्थमनुवादोऽप्यमि-
ति वाच्यम् । नान्ये मितोऽहेतौ इति निषेधात् । अहेतौ स्वार्थे णिचि
ज्ञपादिव्यतिरिक्ताश्चुरादयो मितो नेत्यर्थः । व्यथ भयसंच-
लनयोः । प्रथ प्रख्याने । प्रस विस्तारे । म्रद मर्दने । स्वद स्वदने ।
स्वदनं विद्रावणम् । क्षजिगतिदानयोः । मित्वसामर्थ्यादनुपधा-
त्वेऽपि चिण्णमुलोः इति दीर्घविकल्पः । अक्षञ्जि अक्षाञ्जि । क्षञ्ज
क्षञ्जम् । क्षाञ्जं क्षाञ्जम् । क्षजेति अनिदितमपि बोपदेवः पठति । दक्ष
गतिर्हिसनयोः । योऽयं वृद्धिशैष्ययोरनुदात्तेत्सु पठितस्तस्येहार्थ-
विशेषे मित्वार्थोऽनुवादः । ऋष कृपायां गतौ च । कदि-ऋदि-ऌदि
वैकल्ये । वैकल्ये इत्येके । त्रयोऽप्यनिदित इति नन्दी । इदित इति

स्वामी । कदि ऋदी-इदितौ । ऋद-ऋद् इति चानिदिताविति
 मैत्रेयः । कदि-ऋदि-ऋदीनामाह्वानरोदनयोः परस्मै पादिपूक्तानां
 पुनरिह पाठो मित्वार्थ आत्मनेपदार्थश्च । अत्वरसंभ्रमे । घटा-
 दयः पितः । पित्वात् कृत्सु अङ् वक्ष्यते । घटा व्यथा इत्यादि ।
 अथ फणान्ताः परस्मैपदिनः ॥ ज्वर रोगे । गड सेचने । गडति ।
 जगाड । हेड वेष्टने । हेड् अनादरे इत्यात्मनेपदिषु गतः । स एवो
 त्पृष्टानुबन्धोऽनूद्यतेऽर्थविशेषे मित्वार्थम् । परस्मैपदिभ्यो ज्वरादि-
 भ्यः प्रागेवानुवादे कर्त्तव्ये तन्मध्येऽनुवादसामर्थ्यात् परस्मैपदम् ।
 हेडति । जिहेड । गतौ, हिडयति । अहिडि अहीडि । अनादरे
 तु हेडयति । परे तु असांमदायिकोऽस्य पाठः । सति साम्प्रदा-
 यिकत्वे तु अपूर्वे एवायं नत्वनुवाद इत्याहुः । वट-भट परिभा-
 पणे । वट वेष्टने, भट भृतौ इति पठितयोः परिभापणे मित्वार्योऽ-
 नुवादः । नट नृतौ इत्यमेव पूर्वमपि पठितं तत्रायं विवेकः । पूर्वप-
 ठितस्य नाट्यमर्थः । यत्कारिषु नटव्यपदेशः । वाक्यार्थाभिनयो
 नाट्यम् । घटादौ तु नृत्तं नृत्यं चार्थः । यत्कारिषु नर्तकव्यप-
 देशः । पदार्थाभिनयो नृत्यम् । गात्रविक्षेपमात्रं नृत्तम् । केचित्तु
 घटादौ नट नतौ इति पठन्ति गतौ इत्यन्ये । णोपदेशपर्युदासवाक्ये
 भाष्यकृता नाटि इति दीर्घपाठात् घटादिर्णोपदेश एव । एक प्रती-
 घाते । स्तकति । चक वृत्तौ । वृत्तिप्रतीघातयोः पूर्वं पठितस्य वृत्ति-
 मात्रे मित्वार्योऽनुवादः । आत्मनेपदिषु पठितस्य परस्मैपदिष्वनु-
 वादात्परस्मैपदम् । कत्वे हसने । एदित्वान्न घृष्टिः । अकृषीत् ।
 रगे शङ्कायाम् । लगे संगे । हगे-हृगे-पगे-ष्टगे-संगे-स्थगे संवरणे ।
 कगे नोच्यते । अस्यायमर्थ इति विशिष्य नोच्यते क्रियासामा-
 न्यार्थत्वात् । अनेकार्थत्वादित्यन्ये । अक-अग कुटिलायां गतौ ।
 कण-रण गतौ चकाण । रराण । चण-शण-श्रण दाने च । शण गतौ
 इत्यन्ये । श्रथ-श्रथ-ऋथ क्लृथ हिंसार्याः । जासिनिग्रहण इति सूत्रे
 क्रायेति मित्वेऽपि वृद्धिर्निपात्यते । क्राययति । मित्वं तु निपातना-
 त्परत्वात् चिण्णमुलोः इतिदीर्घे चरितार्थम् अक्रायि । अक्रायि ।

कथं ऋयम् । क्राथं प्रायम् । वन च हिंसायामिति शेषः । वनु च
 नोच्यते । वनु इत्यपूर्वं एवायं धातुर्ननु तानादिकस्यानुवादः ।
 उदित्स्वरणसामर्थ्यात् । तेन क्रियासामान्ये वनतीत्यादि । प्रवन-
 यति । अनुपमृष्टस्य तु मित्रविकल्पो वक्ष्यते । ज्वल दीप्ति ।
 णप्रत्ययार्थं पठित एवायं मित्रार्थमनूयते । प्रज्वलयति । हल-
 लल चलने । प्रहलयति । प्रललयति । स्मृ आध्याने । चिन्तायां
 पठितस्य आध्याने मित्रार्थोऽनुवादः । आध्यानमुत्कण्ठापूर्वकं
 स्मरणम् । हृ भये हृ विदारणे इति श्रयादेरयं मित्रार्थोऽनुवादः ।
 दृणन्तं प्रेरयति दारयति । भयादन्यत्र दारयति । धात्वन्तरमेवेदमिति
 मते तु दरतीत्यादि केचित् घटादी अत्स्मृदृत्वर इति सूत्रे ह
 इति दीर्घस्थाने ह्रस्वं पठन्ति । तत्रेति माधवः । नृ नये । श्रयादिषु
 पठितस्यानुवादः । नयादन्यत्र, नारयति । आ पाके । श्रं इति
 कृतात्वस्य आ इत्यदादिकस्य च सामान्येनानुकरणम् । लुग्वि-
 करणालुग्विकरणयोरलुग्विकरणस्य लक्षणप्रदिपदोक्तयोः प्रतिपदो-
 क्तस्यैव ग्रहणम् इति परिभाषाभ्याम् । श्रपयति । विस्त्रेदयतीत्यर्थः ।
 पाकादन्यत्र श्रापयति । स्वेदयतीत्यर्थः ॥

इति १२५ अंशः ।

मारणतोपनिशामनेषु ज्ञा ॥

निशामनं चाक्षुषज्ञानम् इति माधवः । ज्ञापनमात्रम् इत्यन्ये ।
 निशानेषु इति पाठान्तरम् । निशानं तीक्ष्णीकरणम् । एष्वेवार्थेषु
 जानातिर्मित् । ज्ञपमिच इति चुरादौ । ज्ञापनं मारणादिकं च
 तस्यार्थः । कथं, विज्ञापना मर्तुषु सिद्धिमेति इति तज्ज्ञापयत्याचार्यः
 इति च । शृणु माधवमतेऽचाक्षुषज्ञाने मित्रामावात् । ज्ञापनमात्रे
 मित्वमिति मते तु ज्ञा नियोगे इति चौरादिकस्य । धातूनामने-
 कार्थत्वात् । निशानेष्विति पठतां हरदत्तादीनां मते तु न काप्य-
 नुपपत्तिः ॥

कम्पने चलिः ॥

चल कम्पने इति ज्वलादिः । चलयति शाखाम् । कम्पना-
दन्यत्र तु शीलं चालयति । अन्यथा करोतीत्यर्थः । हरतीत्यर्थः
इति स्वामी । सूत्रं चालयति । क्षिपतीत्यर्थः । छदिर् ऊर्जने । छद
अपवारणे । इति चौरादिकस्य स्वार्थे णिजभावे मित्त्वार्थोऽयमनु-
वादः । अनेकार्थत्वादूर्जेरर्थे वृत्तिः । छदन्तं प्रयुंक्ते छदयति । बल-
वन्तं प्राणवन्तं वा करोतीत्यर्थः । अन्यत्र छादयति । अपवारयन्तं
प्रयुंक्त इत्यर्थः । स्वार्थे णिचि तु छादयति । बलीभवति प्राणीभ-
वति अपवारयति वेत्यर्थः ॥

जिह्वोन्मथने लडिः ॥

लड विलासे इति पठितस्य मित्त्वार्थोऽनुवादः । उन्मथनं ज्ञाप-
नम् । जिह्वाशब्देन पष्ठीतत्पुरुषः । लडयति जिह्वाम् । वृतीयात-
त्पुरुषो वा । लडयति जिह्वया । अन्ये तु जिह्वाशब्देन तद्व्यापारो
लक्ष्यते । समाहारद्वन्द्वोऽयम् । लडयति शत्रुम् । लडयति दधि ।
अन्यत्र लाडयति पुत्रम् । मदी हर्षग्लेपनयोः । ग्लेपनं दैन्यम् ।
देवादिकस्य मित्त्वार्थोऽयमनुवादः । मदयति । हर्षयति ग्लेपयति
वेत्यर्थः । अन्यत्र मादयति । चित्तविकारमुत्पादयतीत्यर्थः । ध्वन
शब्दे । मित्त्वार्थमयमनूद्यते । ध्वनयति घण्टाम् । अन्यत्र ध्वान-
यति । अस्पष्टाक्षरमुच्चारयतीत्यर्थः । अत्र भोजः दलिवलिस्त्रालि-
रणिध्वनित्रापिक्षपयश्च इति पपाठ । तत्र ध्वनिरणी उदाहर्तौ ।
दल विशरणे । बल संवरणे । स्त्रल संचलने । त्रपूष् लज्जायाम्
इति गताः । तेषां णौ दलयति । बलयति । स्त्रलयति । त्रपयति ।
क्षे क्षये इत्यस्य कृतात्वस्य पुका निर्देशः । क्षपयति । स्वन अवतं-
सने । शब्द इति पठितस्यानुवादः । स्वनयति । अन्यत्र स्वानयति ।
घटादयो मितः । मित्संज्ञा इत्यर्थः ॥

जनीजृपूक्तसुरजोऽमन्ताश्च ॥

मितः इत्यनुवर्तते । जृप् इति पित्वनिर्देशाज्जीर्यतेर्ग्रहणम् । जृ-
णातेस्तु जारयति । केचित्तु जनीजृष्णसु इति पठित्वा ण्सु निर-
सन इति देवादिकमुदाहरन्ति ॥

ज्वलह्वलललनमामनुपसर्गाद्वा ॥

एषां मित्त्वं वा । प्राप्तविभाषेयम् । ज्वलपाति । ज्वालयति ।
उपसृष्टे तु नित्यं मित्त्वम् । प्रज्वलयति । कथं तर्हि प्रज्वालयति
उन्नामयतीति । घञन्तात् तत्करोति इति णौ । कथं संक्रामयतीति ।
मितां ह्रस्वः इति सूत्रे वा चित्तविरागे इत्यतो वा इत्यनुवर्त्य व्य-
वस्थितविभाषाश्रयणादिति वृत्तिकृत् । एतेन, रजो विश्रामयन्
राज्ञां धुर्यान्विश्रामयेति सः । इत्यादि व्याख्यातम् ॥

गलास्नावनुवर्मां च ॥

अनुपसर्गादेषां मित्त्वं वा । आद्ययोरप्राप्ते इतरयोः प्राप्ते विभाषा ॥
न कम्यमिचमाम् ॥

अमन्तत्वात्प्राप्तं मित्वमेषां न । कामयते । आमयति । चामयति ॥

शमोऽदर्शने ॥

शाम्यतिर्दर्शने मित्र । निशामयति रूपम् । अन्यत्र तु, प्रणयिनी
निशमय्य बधूः कथाः । कथं तर्हि, निशामय तदुत्पत्तिं विस्तरात्
गदतो मम इति । शम आलोचने इति चौरादिकस्य धातूनाम-
नेकार्थत्वाच्छ्रवणे वृत्तिः शाम्यतिवत् ॥

यमोऽपरिवेषणे ॥

यच्छतिर्भोजनातोऽन्यत्र मित्र । आयामयति । द्राघयति ।
व्यापारयति वेत्यर्थः । परिवेषणे तु यमयति । ब्राह्मणान् मोजय-
तीत्यर्थः । पर्यवसितं नियमयन् इत्यादि तु नियमवच्छब्दात्तत्करो-
तीति णौ बोध्यम् ॥

स्वदिर् अवपरिभ्यां च ॥

मित्रेत्येव । अवस्वादयति । परिस्वादयति । अपावपरिभ्यः
इति न्यासकारः । स्वामी तु न कामि इति नञमुत्तरात्रिसूत्र्यामनु-
वर्त्य शमः अदर्शने इति चिच्छेद । यमस्तु अपरिवेषणे मित्वमाह ।
तन्मते पर्यवसितं नियमयन् इत्यादि सम्यगेव । उपसृष्टस्य स्वदेशे-
दवादिपूर्वस्यैव इति नियमात्प्रस्वादयतीत्याह । तस्मात्सूत्रद्वय उदा-

हरणप्रत्युदाहरणयोर्व्यत्यासः फलितः । इदं च मतं वृत्तिन्यासादि-
विरोधादुपेक्ष्यम् । फण गतौ । न इति निवृत्तमसंभवात् । निषेधात्पू-
र्वमसौ न पठितः फणादिकार्यानुरोधात् । फणयति । इति घटादयः
समाप्ताः । फणेः प्रागेवेति केचित् । तेषां मते फाणयतीत्येव ॥

रञ्जेर्णौ मृगरमणे नलोपो वक्तव्यः ॐ ॥

मृगरमणमाखेटकम् । रञ्जयति मृगान् । मृग इति किम् । रञ्ज-
यति पक्षिणः । रमणादन्यत्र तु रञ्जयति मृगांस्तृणदानेन । चुरादिषु
ज्ञपादिश्चञ् । चिस्फुरोर्णौ । चपयति चययतीत्युक्तम् । चिनोतेस्तु
चापयति चाययति । स्फारयति स्फोरयति । अपुस्फरत् अपु-
स्फुरत् ॥

इति १२६ अंशाः ।

उभौ साभ्यासस्य ८ । ४ । २१ ॥

साभ्यासस्यानितेरुभौ नकारौ णीस्तो निमित्ते सति । प्राणिणत् ॥

ईर्ष्यतेस्तृतीयस्येति वक्तव्यम् ॐ ॥

तृतीयव्यञ्जनस्य तृतीयैकाच इति वार्थः । आद्ये पकारस्य
द्वित्वं वारयितुमिदम् । द्वितीये तु अजादेर्द्वितीयस्य इत्यस्यापवाद-
तया सन्नन्ते प्रवर्त्तते । ऐर्षियत् ऐर्षिष्यत् । द्वितीयव्याख्यायां
णिजन्ताच्चङि पकार एवाभ्यासे श्रूयते हलादिः शेषात् । द्वित्वं तु
द्वितीयस्यैव । तृतीयाभावेन प्रकृतवार्त्तिकप्रवृत्तेः ॥

बुधयुधनशजनेङ्प्रुद्रुसुभ्यो णेः १ । ३ । ८६ ॥

एभ्यो ण्यन्तेभ्यः परस्मैपदम् । णिचश्च इत्यस्यापवादः ।
बोधयति पद्मम् । बोधयति काष्ठानि । नाशयति दुःखम् । जनयति
मुखम् । प्रीतिं मत्तजनस्य यो जनयते इति त्वसाधु । अध्यापयति ।
प्रावयति । प्रापयतीत्यर्थः । द्रावयति । विलापयतीत्यर्थः । स्नाव-
यति । स्पन्दयतीत्यर्थः ॥

निगरणचलनार्थेभ्यश्च १ । ३ । ८७ ॥

निगारयति । आशयति । भोजयति । चलयति । कम्पयति ॥

अदेः प्रतिषेधः ॐ ॥

आदयते देवदत्तेन । गतिबुद्धि इति कर्मत्वम् आदिखाद्योर्न
इति प्रतिषिद्धम् । निगरणचलन इति सूत्रेण प्राप्तस्यैवायं निषेधः ।
शेषादित्यकर्त्रभिप्राये परस्मैपदं स्यादेव । आदयत्यन्नं बहुना ॥

अणावकर्मकाच्चित्तवत्कर्तृकात् १ । ३ । ८८ ॥

प्यन्तात्परस्मैपदम् । शेते कृष्णस्तं गोपी शाययति ॥

न पादम्याङ्यमाङ्यसपरिमुहुरुचिनृत्तियदयसः

१ । ३ । ८९ ॥

एभ्यो प्यन्तेभ्यः परस्मैपदं न । पिबतिर्निगरणार्थः । इतरे
चित्तवत्कर्तृकाकर्मकाः । नृत्तिश्चलनार्थोऽपि । तेन सूत्रद्वयेन प्राप्तिः ।
पाययते । दमयते । आयामयते । आयासयते । परिमोहयते ।
रोचयते । नर्तयते । वादयते । वासयते ॥

धेट उपसंख्यानम् ॐ ॥

धापयेते शिशुमेकं समीची । अकर्त्रभिप्राये शेषात् इति परस्मै-
पदं स्यादेव । वत्सान्पाययति पयः । दमयन्ती कमनीयतामदम् ।
भिक्षां वासयति ॥

णेरणौ यत्कर्म णौ चेत्स कर्तानाध्याने १ । ३ । ९० ॥

प्यन्तादात्मनेपदं स्यादणौ या क्रिया सैव चेण्यन्तेनोच्यते ।
अणौ यत्कर्मकारकं । स चेण्णौ कर्ता स्यान्न त्वाध्याने । णिचश्च
इति सिद्धेऽकर्त्रभिप्रायार्थमिदम् । कर्त्रभिप्राये तु विभापोपपदेन
प्रतिषेधेनेदमेवेष्ट्यते । कर्तृस्थमावकाः कर्तृस्यक्रियाश्चोदाहरणम् ।
तथा हि । पश्यन्ति भवं भक्ताः । चाक्षुपज्ञानविषयं कुर्वन्तीत्यर्थः ।
मेरणांशत्यागे पश्यति भवः । विषयो भवतीत्यर्थः । ततो हेतुम-
ण्णिच् । दर्शयन्ति भवं भक्ताः । पश्यन्तीत्यर्थः । पुनर्ण्यर्थस्यावि-
षयायां दर्शयते भवः । इह प्रथमतृतीययोर्द्वितीयचतुर्थयोश्चावस्थ-
योस्तुल्योऽर्थः । तत्र तृतीयायां न तद् । क्रियासाम्येऽप्यणौ

कर्मणो णौ कर्तृत्वाभावात् । चतुर्थ्यां तु तद् द्वितीयामादाय क्रियासाम्यात् । प्रथमायां कर्मणो भवस्य कर्तृत्वाच्च । एवम् आरोहन्ति हस्तिनं हस्तिपकाः । न्यग्भावयन्तीत्यर्थः । तत आरोहति हस्ती । न्यग्भवतीत्यर्थः । ततो णिच् । आरोहयन्ति । आरोहन्तीत्यर्थः । तत आरोहयते । न्यग्भवतीत्यर्थः । यद्वा । पश्यन्त्यारोहन्तीति प्रथमकक्षा प्राग्वत् । ततः कर्मण एव हेतुत्वारोपाणिञ्च । दर्शयति भवः । आरोहयति हस्ती । पश्यत आरोहतश्च प्रेरयतीत्यर्थः । ततो णिजभ्यां तत्प्रकृतिभ्यां च उपात्तयोर्द्वयोरपि प्रेपण्योस्त्यागे दर्शयते आरोहयते इत्युदाहरणम् । अर्थः प्राग्वत् । अत्र पक्षे द्वितीयकक्षायां न तद् । समानक्रियत्वाभावाणिजर्थस्याधिक्यात् । अनाध्याने किम् । स्मरति वनगुल्मं कोकिलः । स्मरयति वनगुल्मः । आगमेः क्षमायाम् । ण्यन्तात् आत्मनेपदम् । आगमयस्व तावत् । मा त्वरिष्ठा इत्यर्थः ॥

गृधिवञ्च्योः प्रलंभने १ । ३ । ६९ ॥

प्रतारणेऽर्थे ण्यन्ताभ्यामाभ्यामात्मनेपदम् । माणवकं गर्हयते । वञ्चयते । प्रलम्भने किम् । श्वानं गर्हयति । अभिकांक्षामस्योत्पादयतीत्यर्थः । अहिं वञ्चयति । वर्जयतीत्यर्थः ॥

मिथ्योपपदात्कृभोऽभ्यासे १ । ३ । ७१ ॥

णेः इत्येव । पदं मिथ्या कारयते । स्वरादिदुष्टमसकृदुच्चारयतीत्यर्थः । मिथ्येति किम् । पदं सुष्ठु कारयति । अभ्यासे किम् । पदं सकृन्मिथ्या कारयति ॥

णौ गमिरबोधने २ । ४ । ४६ ॥

इणो णौ गमिर्नहु बोधने । गमयति । बोधने तु प्रत्याययति । इण्वदिकः । अधिगमयति ॥

हनस्तोऽचिण्णलोः ७ । ३ । ३२ ॥

हन्तेस्तोऽन्तादेशश्चिण्णल्वर्जे ञिति णिति च । हो हन्तेरिति कुत्वम् । घातयति । निवृत्तप्रेपणाद्धातोर्हेतुमण्णौ शुद्धेन तुल्योऽर्थः ।

तेन, प्रार्थयन्ति शयनोत्थितं प्रिया इत्यादि सिद्धम् । एवं सर्व-
केषु सर्वेषूह्यम् ॥ इति णिजन्ताः ॥

इति १२७ अंशाः ।

अय सन्नन्ताः । अत्रुमिच्छति । घस्ल इडभावः सस्य तः ।
जिघत्सति ॥

रुद्विदमुपग्रहिस्वपिप्रच्छः संश्च १ । २ । १८ ॥

एभ्यः संश्च यत्वा च कितौ । रुद्विषति । विविदिषति । मुमु-
पिषति । सनिग्रहयुहोश्च । ग्रहिज्येति संप्रसारणम् । सनः पत्व-
स्यासिद्धत्वाद्भ्रमावः । जिघृक्षति । मुपुप्सति ॥

किरश्च पञ्चभ्यः ७ । २ । ७५ ॥

कृगृहृद्धृङ्प्रच्छ एभ्यः सन इद् । पिपृच्छिषति । चिकरिषति ।
जिगारिषति । जिगारिषति । अत्रेटो दीर्घो नेष्टः । दिदरिषते ।
दिधरिषते । उद्दिधीर्धुरिति तु भ्वादेर्धृङ्प्रजोर्ज्ञेयम् ॥

हलन्ताच्च १ । २ । १० ॥

इक्समीपाद्धलः परो हलादिः सन् कित् । गुह् । जुघुक्षति ।
विभित्सति । इकः किम् । यियक्षते । शल् किम् । विवर्द्धिषते ।
हल्ग्रहणं जातिपरम् । वृह्-तिवृक्षति तिवृंहिषति । संल्लिटोर्जेरिति
कुत्वम् । अज्ज्ञन्निति दीर्घः । जिगीषति । जिघांसति । विभाषा
चेः । चिकीषति । चिचीषति ॥

सनि च २ । ४ । ४७ ॥

इणो गमिः सनि नतु बोधने । जिगमिषति । बोधने-प्रतीषि-
पति । इण्वदिकः । अधिजिगमिषति । कर्मणि तद् । परस्मैपदे-
ष्वित्युक्तेर्नेद् । अज्ज्ञन्निति दीर्घः । जिगांसाते । अधिजिगांसाते ।
इडिणिकादेशगतेरित्युक्तेर्गच्छतेर्ने दीर्घः । जिगंसाते । संजिगंसाते ॥

इडश्च २ । ४ । ४८ ॥

गमिः सनि । अधिजिगांसाते ॥

रलोव्युपधाद्धलादेः संश्च १ । २ । २६ ॥

उकारेकारोपधाद्धलादेरलन्तात् परी क्त्वासनी सेटौ वा कितौ ।
द्युतिस्वाप्योरिति संपसारणम् । द्युतिपते द्योतिपते । रुचि-
पते रुचिपते । लिलिखिपति लिलेखिपति । रलः किम् दिदे-
पिपति । व्युपधात् किम् । विवर्तिपते । हलादेः किम् । एपिपिप-
ति । इह नित्यमपि द्वित्वं गुणेन वाध्यते । उपधाकार्यं हि द्वित्वा-
त्प्रबलम् । ओणेर्ऋदित्करणस्य सामान्यापेक्षज्ञापकत्वात् ॥

तनिपतिदरिद्रातिभ्यः सनो वा इङ्वाच्यः ❀ ॥

तनोतेर्विभाषा ६ । ४ । १७ ॥

अस्योपधायाः दीर्घा वा शलादौ सनि । तितांसति तितंसति
तितनिपति ॥

आशंकायां सन् वक्तव्यः ❀ ॥

श्वा मुमूर्षति । कूलं पिपतिपति ॥

सनिमीमाधुरभलभशकपतपदामच इस् ७ । ४ । ५४ ॥

एपामच इस् सादौ सनि ॥

अत्र लोपोऽभ्यासस्य ७ । ४ । ५८ ॥

सनिमीमेत्यारभ्य यदुक्तं तत्राभ्यासस्य लोपः । स्कोरितिस-
लोपः । पित्सति । दिदरिद्रिपति । दिदरिद्रासति । डुमिञ् मीञ्
आभ्यां सन् । कृतदीर्घस्य मिञोऽपि मीरूपत्वात् सः सीति तः ।
मित्सति मित्सते । मा मित्सति । माङ् मेङ् मित्सते । दौ द्राण्
दित्सति । देङ् दित्सते । दाञ् दित्सति दित्सते । धेद् धित्सति ।
धाञ् धित्सति धित्सते । रिप्सते । लिप्सते । शक्लृ शिक्षति ।
शिक्षेर्जिज्ञासायाम् आत्मनेपदमनुवर्तते । धनुषि शिक्षते । शक्तौ
भवितुमिच्छतीत्यर्थः । शकदिवादिः उभयपदी । शिक्षति शिक्षते ।
पित्सते ॥

राधोऽर्हिसायां सनीस् वाच्यः ❀ ॥

रित्सति । अहिंसायां तु आरिरात्सति ॥

इद् सनि वा ७ । २ । ४१ ॥

वृड्वृज्भ्यामृदन्ताश्च सन इडा । तितरिषति तितरीषति ।
तितीर्षति । विवरिषति विवरीषति बुवूर्षति । वृड् बुवूर्षते विवरिषते ।
दुध्वूर्षति ॥

स्मिपूङ्ग्रज्वां सनि ७ । २ । ७४ ॥

स्मिङ् पूङ् ऋ अञ् अश् एभ्यः सन इद् । सिस्मयिषते । पिप-
विषते अरिरिषति । इह रित्सशब्दस्य द्वित्वम् । इस् इति सनोऽवयवः
कार्यभागिति कार्पिणो निमित्तत्वायोगात् द्विर्वचनेर्चाति न प्रवर्तते ।
अञ्जिजिषति । अशिशिषते । उभौ साभ्यासस्य । प्राणिणिषति ।
ओः पुयण्ज्यपरे । पिपावयिषति । यियावयिषति । विमावयि-
षति । रिरावयिषति । लिलावयिषति । जिजावयिषति । पुयण्जी-
ति किम् । नुनावयिषति । अपरे किम् । बुभूषति । स्रवतीतीत्वं
वा । सिस्त्रावयिषति । मुस्त्रावयिषतीत्यादि । अपरे इत्येव । शुश्रू-
षते । पूर्ववत्सनः । निषिविषते । शदेः शितः म्रियतेर्लुङ्गलिङोश्चेति
सूत्रद्वये सनो न इत्यनुवर्त्य वाक्यभेदेन व्याख्येयम् । तेन शदमृ-
डोस्तङ् न । शिशत्सति । मुमूर्षति ॥

ज्ञाश्रुस्मृदृशां सनः १ । ३ । ५७ ॥

सन्नन्तानामेपामात्मनेपदम् । धर्मं जिज्ञासते । शुश्रूषते । सुस्मृषते
दिदृक्षते ॥

नानोर्ज्ञः १ । ३ । ५८ ॥

पुत्रमनुजिज्ञासति । पूर्वसूत्रस्यैवायं निषेधः । अनन्तरस्येति न्या-
यात् । तेनेह न । सर्पिपोऽनुजिज्ञासते । सर्पिषा प्रसर्पितुमिच्छति
इत्यर्थः । पूर्ववत्सन इति तद् । अकर्मकाच्चेति केवलादिधानात् ॥

प्रत्याङ्भ्यां श्रुवः १ । ३ । ५९ ॥

आभ्यां मन्नन्ताच्छ्रुव उक्तं न । प्रतिशुश्रूषति । आशुश्रूषति ।
कर्मप्ररचनीयात् स्यादेव । देवदत्तं प्रतिशुश्रूषते । शैपिकान्मतुबर्धो

याच्छैपिको मनुवार्थिकः । सरूपः प्रत्ययो नेष्टः सन्नन्तान्न सनि-
ष्यते ॥ तेन शालीये भव इति वाक्यमेव । ननु च्छान्ताच्छः ।
विरूपस्तु अहिच्छत्रे भव आहिच्छत्रीयः । धनवानस्यास्ति इत्येव
विरूपस्तु स्यात् । दण्डिमान् । इच्छासन्नन्तान्न सन् । स्वार्थसन्नन्तात्तु
स्यादेव । जुगुप्सिपते ॥ इति सन्नन्ताः ॥

इति १२८ अंशाः ।

अथ यङन्ताः । धातोरेकाच इत्यादिना यङविधाने धातोरित्यु-
क्तिरार्द्धधातुकत्वाय । तेन श्रुवो वचिरित्यादि । एकाचः किम् । पुनः
पुनर्जागर्ति । हलादेः किम् । भृशमीक्षते । भृशं शोभते रोचते इत्यत्र
यङ् नेति भाष्यम् । पौनःपुन्ये तु स्यादेव । शोशुभ्यते । रोरुच्यते ॥

सूचिसूत्रिमूयत्यत्यशूर्णोतिभ्यो यङ् ॥

सोसूच्यते । सोसूयते । मोमूयते । एकाच्त्वाभावेन पोपदेशत्वा-
भात्पस्त्वं नायस्य हलः । आदेः परस्य । अतो लोपः । सोसूचाश्चक्रे ।
सोसूचिता । दीर्घो कितः । अटाट्यते ॥

याङि च ७ । ४ । ३० ॥

अर्त्तः संयोगादेश्चक्रतो गुणो याङि । यकारपरस्य रेफस्य न
द्वित्वनिषेधः । अरार्यते इति भाष्योदाहरणात् । अरार्यते । अरा-
रिता । ऊर्णोनूयते । वेमिद्यते । अलोपस्य स्थानिवत्त्वान्नोप-
धागुणः । वेमिदिता ॥

नित्यं कौटिल्ये गतौ ३ । १ । २३ ॥

गत्यर्थात्कौटिल्येऽर्थे एव यङ् ननु क्रियासमभिहारे । कुटिलं
व्रजति वाव्रज्यते ॥

लुपसदचरजपजभदहदशगृभ्यो भावगर्हायाम् ३ । १ । २४ ॥
एभ्यो धात्वर्थगर्हायामेव यङ् । गर्हितं लुम्पति लोलुप्यते ।
सासद्यते ॥

जपजभदहदशभञ्जपशां च ७ । ४ । ८६ ॥

अभ्यासस्य नुक् यङ्लुकोः । नुकानुस्वारो लक्ष्यते स च
पदान्तवद्वाच्यः । जञ्जप्यते । जंजप्यते इत्यादि ॥

चरफलोश्च ७ । ४ । ८७ ॥

अभ्यासस्यातो नुक् यङ्लुकोः ॥

उत्परस्यातः ७ । ४ । ८८ ॥

चरफ्लोरभ्यासात्परस्यात उत् यङ्लुकोः । हलि चेति दीर्घः ॥
चञ्चूर्यते । चंचूर्यते । पम्फुल्यते पंफुल्यते ॥

ओ यङि ८ । २ । २० ॥

गिरते रेफस्य लृवं यङि । जेगिल्यते । घुमास्था इतीत्वम् ।
देदीयते । पेपीयते । सेपीयते । विभाषा इवेः । शोशूयते । शी-
श्रीयते । यङि च । सास्मर्यते । रीडृतः । चेक्रीयते । सुद । संचे-
स्कीयते ॥

नुगतोऽनुनासिकान्तस्य ७ । ४ । ८५ ॥

अनुनासिकान्तस्यांगस्य योऽभ्यासोऽदन्तस्तस्य नुक् । नुकाऽनु-
स्वारो लक्ष्यत इत्युक्तम् । यंयम्यते यंयम्यते । तपरत्वसामर्थ्यात्
भूतपूर्वदीर्घस्यापि न । वामाम्यते । ये विगाषा । जाजायते जञ्ज-
न्यते । हन्तेर्हिसायां यङि घ्री । जेघ्रीयते । अन्यत्र जंघन्यते ॥

रीगृदुपधस्य च ७ । ४ । ९० ॥

ऋदुपधस्य धातोरभ्यासस्य रीक् यङ्लुकोः । वरीवृत्यते । क्षु-
भ्रादी, नरीनृत्यते । जरीगृह्यते । चलीक्लृप्यते ॥

रीगृत्वत इति वक्तव्यम् ❀ ॥

वरीवृत्यते । परीगृच्छते ॥

ई घ्राघ्नोः ७ । ४ । ३१ ॥

जेघ्रीयते । देघ्मीयते ॥

अयङि च द्विति ७ । ४ । २२ ॥

गीरोऽभ्यङादेशो यादी द्विति परे । शाशम्यते । अभ्यासस्य

ह्रस्वः । ततो गुणः । डोढौक्यते । तोत्रौक्यते । इति यङन्ताः ।
अथ यङ्लुगन्ताः । गर्द । जागर्दीति । जागर्त्ति । जागर्त्तः ।-हौ
जागर्द्धि । सिपि दश्चेति रुर्वा । रोरि द्रुलोप इति दीर्घः । अजागाः ।
अजागर्त् । नानदीति । नानत्ति । सिपि अनानः । अनानत् ।
लुङ् अनानादीत् अनानदीत् । चिती । नाभ्यस्तस्येति गुणनिषेधः ।
चेचितीति चेचेत्ति । अचेचितीत् अचेचेत् अचेचेः । अचे-
चेत् । लुङि अचेचेतीत् ॥

रुगिकौ च लुकि ७ । ४ । ९१ ॥

ऋदुगधस्य धातोरभ्यासस्य रुक् रिक् रीक् एते आगमाः
यङ्लुकि ॥

ऋतश्च ७ । ४ । ९२ ॥

ऋदन्तधातोरपि तथा । वर्वृतीति वरिवृतीति वरीवृतीति । वर्व-
र्त्ति । वर्वर्त्तिता । गणनिर्दिष्टत्वान्न वृद्धश्च इति न । वर्वर्त्तिष्यति । अव-
वृतीत् । अववर्त्त । सिपि दश्चेति रुत्वपक्षे रोरि । अवर्वाः । गणनि-
र्दिष्टत्वादङ् न । अववर्त्तीत् ३ । चर्क्सीति ३ । चर्क्कर्त्ति चरिक्कर्त्ति
चरीक्कर्त्ति । चर्कृतः ३ । चर्कृति ३ । चर्कराश्चकार ३ । चर्करिता ३ ।
अचर्क्सीत् ३ । अचर्कः ३ । चर्क्यात् ३ । आशिपि रिङ् । च-
र्क्यात् ३ । अचर्करीत् ३ । ऋतश्चेति तपरन्वान्नेह । कृ विक्षेपे ।
चाकर्त्ति । तातर्त्ति । तातीर्त्तः । तातिरात् । तातीर्हि । तातराणि ।
अतातरीत् । अतातः । अतातीर्त्ताम् । अतातरुः । अतातारीत् ।
अतातारिष्टामित्यादि । जङ्गमीति । जङ्गन्ति । अनुदात्तोपदेशेत्य-
नुनासिकलोपः । जङ्गतः । जङ्गति । म्वोश्च । जङ्गन्मि । जङ्गन्वः ।
एकाज्ग्रहणान्नेष्णिपेधः । जङ्गमिता । अनुनासिकलोपस्याभीयत्वे-
नासिद्धत्वान्न हेर्लुक् । जङ्गहि । मो नः । अजङ्गन् । अनुबन्धनिर्देशान्न
च्लेरङ् । ह्यन्तेति न वृद्धिः । अजङ्गमीत् । अजङ्गमिष्टाम् । हनो
यङ्लुक् । यथापि अभ्यासाच्चेति कुत्वं हन्तेरिति इतिवन्तमनुवर्त्य
विहितं तथापि यङ्लुकि भवत्येवेति न्यासः ॥ इतिपा शेषेति त्वनित्यं

गुणो यङ्लुकोरिति सामान्यापेक्षज्ञापकात् । जंघनीति जंघन्ति ।
जंघतः । जंघति । जंघनिता । शितपा निर्देशाज्जादेशो न । जंघहि ।
अजंघनीत् । अजंघन् । जंघन्यात् । आशिषि तु । वध्यात् । अव-
धीत् । अवधिष्टामित्यादि । वधादेशस्य द्वित्वं न स्थानिवत्त्वेन अ-
नभ्यासस्येति निषेधात् । तद्धि समानाधिकरणं धातोर्विशेषणम् ।
बहुव्रीहिवलात् आङ्पूर्वात्तु आङो यमहन इत्यात्मनेपदम् । आजं-
घते।लुका लुप्ते प्रत्ययलक्षणत्वामावात् स्वपिस्वमीत्युत्वं न रुदादिभ्य
इति गणनिर्दिष्टत्वादिण् । सास्वपीति सास्वप्ति । सास्वप्तः । सा-
स्वपति । असास्वपीत् । असास्वप् । सास्वप्यात् । आशिपि वचि-
स्वपीत्युत्वम् । सासुप्यात् । असास्वपीत् । असास्वपीत् । गृह
ग्रहणे । जर्गहीति ३ । जर्गर्हि । जर्गृढः ३ । जर्गृहति ३ । अज-
घर्ह ३ । गृह्णातेस्तु जागृहीति । जाग्रहि । तसादौ ङिन्निमित्तं
सम्प्रसारणम् । तस्य बहिरङ्गत्वेनासिद्धत्वान्न रुगादयः । जागृढः ।
जागृहति । जाग्रहीपि । जाग्रक्षि । जाग्रहिता । ग्रहो लिटि इति
दीर्घस्तु न तत्रैकाच इत्यनुवृत्तेः । माधवस्तु दीर्घमाह । तद्भाष्य-
विरुद्धम् । जर्गृधीति ३ । जर्गर्हि ३ । जर्गृद्धः ३ । जर्गृधति ३ ।
जर्गृधीपि ३ । जर्घर्हि ३ । अजर्गृधीत् ३ । इडभावे गुणः ।
इलङ्वादिलोपः भष्मावः । जश्त्वत्त्वे।अजर्घर्त् ३ । अजर्गृद्धाम् ।
मिपि दध्नेति पक्षे कृत्वम् । अजर्घाः ३ । अजर्गृधीत् ३ । अजर्ग-
र्हिष्टाम् ३ ॥ इति यङ्लुगन्ताः ॥

इति १२९ अंशाः ।

नः कथे । मन्त्रिपानप्रीभाषया क्यचो यम्य लोपो न । गच्यां-
चकार । गच्यिना । नाच्यांचकार । नाच्यिता । नलोपः । राजीय-
नि । ग्रन्थयोत्तमपदयोश्च । त्वयनि । मयनि । एकार्थयोः इत्येव ।
पुष्मयनि । अम्मयति । इति च। गीर्यनि पृर्यनि। धातोः इत्येव ।
नेह । दिवमिच्छति दिव्यनि । इह पुगमिच्छति पुर्ग्यनीति माधवोक्तं

भृत्युदाहरणं चिन्त्यम् । पृग्गिरोः साम्यात् । दीव्यतीति दीर्घस्तु
गाचः प्रामादिक एव । अदस्यति ॥

रीढृतः ॥

कर्त्तव्यति ॥

क्यच्चयोश्च ६ । ४ । १५२ ॥

हलः परस्यापत्ययकारस्य लोपः क्ये च्चौ च । इति वक्ष्यमाणयज्ञो
रस्य लोपः । गार्गीयति । वाच्यति । अकृतसार्व इति दीर्घः ।
क्वीयति ॥ समिध्यति । क्यस्य विभाषा । आदेः परस्य अतो
ज्ञेयः । तस्य स्थानिवत्त्वाल्लघूपधगुणो न । समिधिता समिध्यता ॥

मान्तप्रकृतिकसुबन्तादव्ययाच्च क्यच्च न ❀ ॥

किमिच्छति । इदमिच्छति । स्वरिच्छति ॥

अशनायोदन्यधनायाबुभुक्षापिपासागर्धेषु ७ । ४ । ३४ ॥

क्यजन्ता निपात्यन्ते । अशनायति । उदन्यति । धनायति ।
बुभुक्षादौ किम् । अशनीयति । उदकीयति । धनीयति ॥

अश्वक्षीरवृषलवणानामात्मप्रीतौ क्यचि ७ । १ । ५१ ॥

एषां क्यचि असुगागमः । अश्ववृषयोर्मैथुनेच्छायाम् । अश्व-
स्यति वडवा । वृषस्यति गोः ॥

क्षीरलवणयोर्लालसायाम् ❀ ॥

क्षीरस्यति बालः । लवणस्यत्युष्ट्रः ॥

सर्वप्रातिपदिकानां क्यचि लालसायां सुगसुकौ ❀ ॥

दाधिस्यति दध्यस्यति । मधुस्यति मध्वस्यति । क्लाम्यच्च । पुत्र-
काम्यति । इह यस्य हलः इति लोपो न । अनर्थकत्वात् । यस्य इति
संघातग्रहणमित्युक्तम् । यशस्काम्यति । सर्पिष्काम्यति । मान्ता-
व्ययेभ्योऽप्ययम् । किकाम्यति । स्वःकाम्यति । आचारे क्यहु-
क्तः । तत्र मान्तस्य लोपस्तु क्यङ्संनियोगिशेषः । स च व्यवस्थितः ।
ओजसोऽप्सरसो नित्यमितरेषां विभाषया । ओजःशब्दो वृत्तिवि-

पये तद्वति । ओजायते । अप्सरायते । यशायते । यशस्यते ।
 सर्वप्रातिपदिकेभ्यः क्विबुक्तः । कविरिवाचरति कवयति । आशी-
 लिङि कवीयात् । सिचि वृद्धिः इत्यत्र धातोः इत्यनुवर्त्य धातुरेव
 यो धातुरिति व्याख्यानान्नामधातार्त्तं वृद्धिरिति कैयटादयः । अक-
 वयीत् । माधवस्तु नामधातोरापि वृद्धिमिच्छति । अकवायीत् ।
 विरिव वयति । विवाय । विव्यतुः । अवयीत् अवारीत् । श्रीरिव
 श्रयति । शिश्राय । शिश्रियतुः । पितेव पितरति । आशिपि रिद्ध ।
 पित्रियात् ॥

अनुनासिकस्य क्विञ्लोः कृत्ति ६ । ४ । १५ ॥

अनुनासिकान्तस्योपधाया दीर्घः कौ झलादौ च कृत्ति । इद-
 मिवाचरति इदामति । राजेव राजानति । पन्या इव पथीनति ।
 मथीनति । ऋभुक्षीणति ॥

भृशादिभ्यो भुव्यच्चेर्लोपश्च हलः ३ । १ । १२ ॥

अभूततद्भावविषयेभ्यो भृशादिभ्यो भवत्यर्थे क्यङ् । हलन्ता-
 नामेषां लोपश्च । अभृशो भृशो भवति भृशायते । अच्चेः इति
 पर्युदासबलात् अभूततद्भावे इति लब्धम् । तेनेह न । क दिवा
 भृशा भवन्ति । ये रात्रौ भृशा नक्षत्रादयस्ते दिवा क भवन्तीत्यर्थः ।
 सुमनस् अस्य सलोपः । सुमनायते । चुरादौ संग्राम युद्धे इति प-
 ठ्यते । तत्र संग्राम इति प्रातिपदिकम् । तस्मात् तत्करोति इति
 णिच् सिद्धः । तत्संनियोगेनानुबन्ध आसज्यते । युद्धे योज्यं
 ग्रामशब्द इत्युक्तेऽपि सामर्थ्यात्संग्रामशब्दे लब्धे विशिष्टपाठो
 ज्ञापयति । उपसर्गसमानाकारं पूर्वपदं धातुसंज्ञाप्रयोजके प्रत्यये
 चिकीर्षिते पृथक् क्रियते इति । तेन मनःशब्दात्प्रागद् । स्वमना-
 यत । उदमनायत ॥

लोहितादिडाज्भ्यः क्यप् ३ । १ । १३ ॥

लोहितादिभ्यो डाजन्ताच्च भवत्यर्थे क्यप् ॥

वा क्यपः १ । ३ । ९० ॥

क्यपन्तात्परस्मैपदं वा । लोहितायति लोहितायते । अत्र अ-
च्चेः इत्यनुवृत्त्याऽभूततद्भावविषयत्वं लब्धं तच्च लोहितशब्दस्यैव
विशेषणम् । नतु डाचोऽसंभवात् । नाप्यादिशब्दग्राह्याणां तस्य प्रत्या-
ख्यानात् । तथा च वार्तिकम् । लोहितडाजभ्यः क्यच्चचनं भृशा-
दिष्वितराणि इति । न चैवं काम्यच इव क्यपोऽपि ककारः श्रूयेत ।
उच्चारणसामर्थ्यादिति वाच्यम् । तस्यापि भाष्ये प्रत्याख्यानात् ।
पटपटायति पटपटायते । कृभ्वस्तियोगं विनापीह डाच् । डाज-
न्तात्क्यपो विधानसामर्थ्यात् ॥

कर्मणो रोमन्थतपोभ्यां वर्तिचरोः ३ । १ । १५ ॥

रोमन्थतपोभ्यां कर्मभ्यां क्रमेण वर्तनायां चरणे चाथे क्यङ् ।
रोमन्थं वर्तयति रोमन्थायते ॥

‘हनु चलन इति वक्तव्यम् ❀ ॥

चर्वितस्याकृष्य पुनश्चर्वणमित्यर्थः । नेह । कीदो रोमन्थं
वर्तयति । अपानप्रदेशाग्निःसृतं द्रव्यमिह रोमन्थः । तदध्वाती-
त्यर्थः इति कैयटः । वर्तुलं करोतीत्यर्थः इति न्यासकारहरदत्तो ।
तपसः परस्मैपदं च । तपश्चरति तपस्याति ॥

वाष्पोष्मभ्यामुद्गमने ३ । १ । १६ ॥

आभ्यां कर्मभ्यां क्यङ् । वाष्पमुद्गमति वाष्पायते । ऊष्मायते ॥

फेनाच्चेति वाच्यम् ❀ ॥

फेनायते ॥

शब्दवैरकलहाभ्रकण्वमेघेभ्यः करणे ३ । १ । १७ ॥

एभ्यः कर्मभ्यः करोत्यर्थे क्यङ् । शब्दं करोति शब्दायते ।
पक्षे तत्करोति इति णिजपीष्यत इति न्यासः । शब्दयति ॥

सुदिनदुर्दिननीहारेभ्यश्च ❀ ॥

सुदिनायते ॥

इति १३० अंशाः । इति तृतीयाध्यायस्य प्रथमः पादः ।

सुखादिभ्यः कर्तृवेदनायाम् ३ । १ । १८ ॥

सुखादिभ्यः कर्मभ्यो वेदनायामर्थे क्यङ् । वेदनाकर्तुरेव चेत् सुखादीनि । सुखं वेदयते सुखायते । कर्तृग्रहणं किम् । परस्य सुखं वेदयते ॥

नमोवरिवश्चित्रङः क्यच् ३ । १ । १९ ॥

‘करणे इत्यनुवृत्तेः क्रियाविशेषे पूजायां परिचर्यायामाश्चर्ये च । नमस्यति’ देवान् । पूजयतीत्यर्थः । वरिवस्यति गुरुन् । शुश्रूषत इत्यर्थः । चित्रीयते । विस्मयत इत्यर्थः । विस्मापयत इत्यन्ये ॥

पुच्छभाण्डचीवराणिङ् ३ । १ । २० ॥

‘पुच्छादुदसने व्यसने पर्यसने च । विविधं विरुद्धं वोत्क्षेपणं व्यसनम् । उत्पुच्छयते । विपुच्छयते । परिपुच्छयते ॥

भाण्डात्समाचयने ❀ ॥

संभाण्डयते । भाण्डानि समाचिनोति । राशीकरोतीत्यर्थः । समवभाण्डत ॥

चीवरादर्जने परिधाने च ❀ ॥

सञ्जीवरयते भिक्षुः । चीवराण्यर्जयति परिधत्ते वेत्यर्थः ॥

मुण्डमिश्रश्लक्ष्णलवणव्रतवस्त्रहलकलकृततूस्तेभ्यो

णिच् ३ । १ । २१ ॥

कृज्ये । मुण्डं करोति मुण्डयति । व्रताद्भोजनतन्निवृत्त्योः । पयः शूद्रान्नं वा व्रतयति । वस्त्रात्समाच्छादने संवस्त्रयति । हल्यादिभ्यो ग्रहणे । हलिकल्योरदन्तत्वं च निपात्यते । हलिं कलिं वा गृह्णाति हलयति । कलयति । महद्दलं हलिः । परत्वादृष्टौ सत्यामपीष्टवद्भावेऽप्येव लुप्यते । अतः सन्वद्भावदीर्घो न । अजहलत् । अचकलत् । कृतं गृह्णाति कृतयति । तूस्तानि विद्वन्ति वितूस्तयति । तूस्तं केशा इत्येके । जटीमृताः केशा इत्यन्ये । पापमित्यपरे । मुण्डादयः सत्यापपाश इत्यत्रैव पठितुं युक्ताः । मातिपदिकाद्वा

त्वर्थे इत्येव सिद्धे केषाचिद्ब्रह्मणं सापेक्षेभ्योऽपि णिजर्थम् । मुण्ड-
यति माणवकम् । मिश्रयत्यन्नम् । श्लक्ष्णयति वस्त्रम् । लवणयति
व्यञ्जनमिति । हलिकल्योरदन्तत्वार्थम् । सत्यस्यापुगर्थम् । केषाचित्तु
प्रपञ्चार्थम् । सत्यं करोत्याचष्टे वा सत्यापयति ॥

अर्थवेदयोरप्यापुग वक्तव्यः ॥

अर्थापयति । वेदापयति । पाशं विमुञ्चति विपाशयति । रूपं
पश्यति रूपयति । वीणयोपगायत्युपवीणयति । तूलेनानुकुष्णा-
त्यनुतूलयति । तृणाग्रं तूलेनानुघट्टयतीत्यर्थः । श्लोकैरुपस्तौति
उपश्लोकयति । सेनयाभियाति अभिपेणयति । उपसर्गात्सुनोति
इति पः । अभ्यपेणयत् । प्राक्सितात् इति पः । अभिपिपेणयि-
पति । स्थादिष्वभ्यासेन च इति पः । लोमान्यनुमार्ष्टि अनुलोम-
यति । त्वच सवरणे । घः । त्वच गृह्णाति त्वचयति । वर्मणा सनहति
संवर्मयति । वर्णं गृह्णाति वर्णयति । चूर्णेखच्चंसते अवचूर्णयति ॥

प्रातिपदिकाद्धात्वर्थे बहुलमिष्टवच्च ॥

प्रातिपदिकाद्धात्वर्थे णिच् । इष्टे यथा प्रातिपदिकस्य पुंवद्भावर-
मावटिलोपविन्मतुब्लोपयणादिलोपप्रस्थस्फाद्यदेशभसंज्ञास्तद्वण्णा-
वपि । पटुमाचष्टे पटयति । परत्वादृद्धौ सत्या टिलोपः । अपीप-
टत् । णौ चडि इत्यत्र भाष्ये तु वृद्धेलोपो बलीयान् इति स्थितम् ।
अपपटत् ॥

तत्करोति तदाचष्टे ॥

पूर्वस्य प्रपञ्चः । करोत्याचष्ट इति धात्वर्थमात्रं णिजर्थः । लङ्-
स्त्वविवक्षितः ॥

तेनातिक्रामति ॥

अश्वेनातिक्रामति अश्वयति । हस्तिनातिक्रामति हस्तयति ॥

धातुरूपं च ॥

णिच्प्रकृतिर्धातुरूपं प्रतिपद्यते । चशब्दोऽनुक्तसमुच्चयार्थः ।
तथा च वातिकम् ॥

आख्यानात्कृतस्तदाचष्टे कृल्लुक् प्रकृतिप्रत्यापत्तिः
प्रकृतिवच्च कारकम् इति ❀ ॥

कंसवधमाचष्टे कंसं घातयति इह कंसं हन इ इति स्थिते ॥

हनस्तोऽचिण्णलोः ७ । ३ । ३२ ॥

हन्तेस्तकारोऽन्तादेशः चिण्णत्वर्जे ञिति णिति । नन्वत्राङ्गसंज्ञा
धातुसंज्ञा च कंसविशिष्टस्य प्राप्ता ततश्चाहद्वित्वयोर्दोषः । किंच
कुत्वतत्वेन स्याताम् । धातोः स्वरूपग्रहणे तत्प्रत्यये कार्यविज्ञानात् ।
सत्यं प्रकृतिवच्च इति चकारो भिन्नक्रमः । कारकं च चात्कार्यम् ।
हेतुमण्णचः प्रकृतेर्हिन्यादेर्हेतुमण्णौ यादृशं कारकं धातावनन्तर्भूतं
द्वितीयान्तं यादृशं च कार्यं कुत्वतत्त्वादि तदिहापीत्यर्थः । कंसमजी-
घतत् ॥

कर्तृकरणाद्धात्वर्थे ॥

कर्तृव्यापारार्थं यत्करणं न तु चक्षुरादिमात्रमित्यर्थः । असिना
हन्ति असयति ॥

णिङ्ङान्निरसने ॥

अङ्गवाचिनः प्रातिपदिकान्निरसनेऽर्थे णिङ् । हस्तौ निरस्यति
हस्तयते । पादयते ॥

श्वेताश्वश्वतरगालोडिताह्वरकाणामश्वतरेतकलोपश्च ॥

श्वेताश्वदीनां चतुर्णामश्वदयो लुप्यन्ते णिङ् च धात्वर्थे । श्वे-
ताश्वमाचष्टे तेनातिक्रामति वा श्वेतयते । अश्वतरमाचष्टेऽश्वयते ।
गालोडितं वाचां विमर्शः तत्करोति गालोडयते । आह्वरयते । के-
चिच्च णिचमेवानुवर्तयन्ति तन्मते परस्मैपदमपि ॥

पुच्छादिषु धात्वर्थे इत्येव सिद्धम् ॥

णिजन्तादेव बहुलवचनादात्मनेपदमस्तु मास्तु पुच्छमाण्ड इति
णिङ्वाविधिः । शेषा नामधातवोऽग्रे वक्ष्यन्ते ॥ इति नामधातुप्रक्रिया ॥

इति १३१ अंशाः ।

अभिज्ञावचने लट् ३ । २ । ११२ ॥

स्मृतिबोधिन्पुपपदे भूतानयने धानो ईट् । लट्गोशवाद् ॥ स्म-
रति कृष्ण गोकुले वत्स्यामः । एवं बुध्यमं येनयम् इत्यादिभ्यो-
गि । तेषामपि प्रसङ्गाद्विशेन स्मृती वृत्तिर्भवति ॥

न यदि ३ । २ । ११३ ॥

ययोगे उक्तं न । अभिज्ञानाणि कृष्ण यदने अमुञ्जमदि ॥

विभाषा साकान्ते ३ । २ । ११४ ॥

उक्तविषये लट् । लक्ष्यलक्षणभावेन साकान्तेऽन्तावर्धः । स्म-
रति कृष्ण बने वत्स्यामस्तत्र गाश्वारिष्यामः । वागो लक्षणं चा-
रणं लक्ष्यम् । पक्षे लट् । यच्छन्दयोगेऽपि न यदि इति बाधित्वा
परत्वाद्विकल्पः । परोक्षे लिट् । चकार । उत्तमपुरुषे चित्तविशेषादिना
पातोक्ष्यम् । मुक्तोऽहं भिन्न विल्लाप । यद् जगद पुरुस्तात्तस्य मत्ता
निल्लाहम् ॥

अत्यन्तापह्वये लिङ्गुक्तव्यः ॥

कलिङ्गेष्ववात्सीः । नाहं कलिङ्गाजगाम ॥

इशश्वतोर्लिङ् च ३ । २ । ११५ ॥

अनयोरुपपदयोर्लिङ्गविषये लट् चालिट् । इति हाकगोपकार
वा । शश्वदकगोपकार वा ॥

प्रश्ने चासन्नकाले ३ । २ । ११६ ॥

प्रत्ययः प्रश्नः । आसन्नकाले पृच्छयमानेऽर्थे लिङ्गविषये लट्-
लिट् । अगच्छतिकम् । जगाम किम् । अनामन्ने तु कर्म जगान किम् ॥

लट् स्मे ३ । २ । ११७ ॥

लिट्गोशवाद् । यजति स्म पुषिद्विः ॥

अपरोक्षे च ३ । २ । ११८ ॥

भूतानयने लट् स्मयोगे । एवं स्म विना ब्रवीति ॥

ननौ पृष्टप्रतिवचने ३ । २ । १२० ॥

अनद्यतने परोक्ष इति निवृत्तम् । भृते लट् । अकार्षीः किम् ।
ननु करोमि भोः ॥

नन्वोर्विभाषा ३ । २ । १२१ ॥

अकार्षीः किम् । न करोमि । नाकार्षम् । अहं नु करोमि । अहं
न च कार्षम् ॥

पुरि लुङ् चास्मे ३ । २ । १२२ ॥

अनद्यतनग्रहणं मण्डुकप्लुत्यानुवर्तते । पुरागन्दयोगे भृतानद्य-
तने विभाषा लुङ् चालट् न तु स्मयोगे । पक्षे यथाप्राप्तम् । वस-
न्तीह पुरा छात्राः । अवात्सुः । अवसन् । ऊर्षुर्वा । अस्मे किम् ।
यजति स्म पुरा । भविष्यतीत्यनुवर्तमाने ॥

यावत्पुरानिपातयोर्लट् ३ । ३ । ४ ॥

यावदुक्ते । पुगभुङ्गे । निपातवैर्ता निश्चयं द्योतयतः । निपातयोः
किम् । यावदास्यते तावद्रोक्ष्यते । करणभृतया पुरा यास्यति ॥

विभाषा कदाकर्षीः ३ । ३ । ५ ॥

भविष्यति लट् वा । कदा कर्हि वा भुङ्गे भोक्ष्यते भोक्ता वा ॥

किंवृत्ते लिप्तायाम् ३ । ३ । ६ ॥

भविष्यति लट् । कं कनरे कतमं वा भोजयामि भोजयिष्यसि
भोजयिष्यामि वा । लिप्तायां किम् । कः पादलिपुत्रं गमिष्यति ॥

लिप्स्यमानसिद्धौ च ३ । ३ । ७ ॥

लिप्स्यमानेनात्रादिना भगादेः सिद्धौ गम्यमानाया भविष्यति
• लट् । योऽन्नं दद्याति दास्यानि दाता वा न स्वर्गं याति यास्यति
याता वा ॥

लोढयलक्षणे च ३ । ३ । ८ ॥

लोढयः प्रपादिल्लक्षणे येन लोप्स्यते वर्तमानादानोभविष्यति
गदा । लृप्स्यतेदृङ् स्वं गाथाय । पक्षे लृट् लट् ॥

लिङ् चौर्ध्वमौहूर्तिके ३ । ३ । ९ ॥

ऊर्ध्वं मुहूर्ताद्वय ऊर्ध्वमौहूर्तिकः । निपातनात्समास उत्तरपदवृ-
द्धिश्च । ऊर्ध्वमौहूर्तिके मविष्यति । लोट्यलक्षणे वर्तमानाद्यातोर्लि-
ङ्लटौ वा । मुहूर्तादुपरि उपाध्यायश्वेदागच्छेत् आगच्छति आग-
मिष्यति आगन्ता वा । अथ त्वं छन्दोऽधीष्व ॥

वर्तमानसामीप्ये वर्तमानवद्वा ३ । ३ । १३१ ॥

समीपमेव सामीप्यम् । स्वार्थे ण्यञ् । वर्तमाने लट् इत्यारभ्य
उणादयो बहुलम् इति यावद्येनोपाधिना प्रत्यया उक्तास्ते तथैव
वर्तमानसमीपे भूते मविष्यति च वा स्युः । कदा आगतोऽसि ।
अयमागच्छामि । अयमागमम् । कदा गमिष्यसि । एष गच्छामि ।
गमिष्यामि वा ॥

आशंसायां भूतवच्च ३ । ३ । १३२ ॥

वर्तमानसामीप्य इति नानुवर्तते । मविष्यति काले भूतवद्वर्तमान-
वच्च प्रत्यया वा आशंसायाम् । देवश्वेदवर्षाद्वर्षति वर्षिष्यति वा
धान्यमवाप्स्य वषामः वप्स्यामो वा । सामान्यातिदेशे विशेषानति-
देशः तेन लङ्लिटौ न ॥

क्षिप्रवचने लट् ३ । ३ । १३३ ॥

क्षिप्रपर्याय उपपदे पूर्वविषये लट् । वृष्टिश्चेत् क्षिप्रमाशु त्वग्निं
वा यास्यति शीघ्रं वप्स्यामः । नेति वक्तव्ये लङ्ग्रहणं लुटोऽपि
विषये यथा स्यात् । श्वः शीघ्रं वप्स्यामः ॥

आशंसावचने लिङ् ३ । ३ । १३४ ॥

आशंसावाचिन्युपपदे मविष्यति लिङ् स्यान् ननु मृतरत् ।
गुरुश्वेदुपेयादाशंसेऽधीयीत । आशंसे क्षिप्रमधीयीत ॥

नानद्यतनवत्क्रियाप्रबन्धसामीप्ययोः ३ । ३ । १३५ ॥

क्रियायाः सातत्ये सामीप्ये च लङ्लुटौ न । यावज्जीवमन्नमदा-
दास्यति वा । सामीप्यं तुल्यजातीयेनाव्यवधानम् । येषां परिणामान्य-

तिक्रान्ता तस्यामग्नीनाधीत । सोमेनायष्ट । येयममावास्यागामिनी
तस्यामग्नीनाधास्यते । सोमेन यक्ष्यते ॥

भविष्यति मर्यादावचनेऽवरस्मिन् ३ । ३ । १३६ ॥

भविष्यति काले मर्यादोक्तावरस्मिन् प्रविभागेऽनद्यतनवत् ।
योऽयमध्वा गन्तव्य आ पाटलिपुत्रात्तस्य यदवरं कौशाम्ब्यास्तत्र
रुक्मिरापास्यामः ॥

कालविभागे चानहोरात्राणाम् ३ । ३ । १३७ ॥

पूर्वसूत्रं सर्वमनुवर्तते । अहोरात्रसम्प्रन्धिनि विभागे प्रतिपेदार्थ-
मिदम् । योगविभाग उत्तरार्थः । योऽयं वत्सर आगामी तस्य
यदवरमाग्रहायण्यास्तत्र युक्ता अध्येष्यामहे । अनहोरात्राणां
किम् । योऽयं मास आगामी तस्य योऽवरः पञ्चदशरात्रस्तत्राध्ये-
तास्महे ॥

परस्मिन्विभागा ३ । ३ । १३८ ॥

अवरस्मिन् वर्ज्यं पूर्वसूत्रद्वयमनुवर्तते । अप्राप्तविभागेयम् । योऽयं
संवत्सर आगामी तस्य यत्परमाग्रहायण्यास्तत्राध्येष्यामहे ।
अध्येतास्महे ॥

इति १३२ अंशः ।

लिङ्निमित्ते लृङ् क्रियातिपत्तौ ॥

भविष्यतीत्येव । सुवृष्टिश्चेदमविष्यत्तदा सुभिक्षमभविष्यत् ॥

भूते च ३ । ३ । १४० ॥

पूर्वसूत्रं संपूर्णमनुवर्तते ॥

वोताप्योः ३ । ३ । १४१ ॥

वा आ उताप्योः उताप्योः इत्यतः प्राग्भूते लिङ्निमित्ते
लृङ् चेत्यधिक्रियते । पूर्वसूत्रं तु उताप्योः इत्यादौ प्रवर्तते इति
विवेकः ॥

गर्हायां लुडपि जात्वोः ३ । ३ । १४२ ॥

आभ्यां योगे लट् कालत्रये गर्हायाम् । लुडादीन्परत्वादयं
वाधते । अपि जायां त्यजसि जातु गणिकामादत्से गर्हितमेतत् ॥

विभाषा कथमि लिङ् च ३ । ३ । १४३ ॥

गर्हायामित्येव कालत्रये लिङ् चालट् । कथं धर्मं त्यजेस्त्य-
जसि वा । पक्षे कालत्रये लकाराः । अत्र भविष्यति नित्यं लुङ्
भूते वा । कथं नाम तत्र भवान्धर्ममत्यक्ष्यत् ॥

किंवृत्ते लिङ्लटौ ३ । ३ । १४४ ॥

गर्हायामित्येव । विभाषा तु नानुवर्तते । कः कतरः कतमो वा
हरिं निन्देत् निन्दिष्यति वा । लङ् प्राग्वत् ॥

अनवकृत्यमर्पयोरकिंवृत्तेऽपि ३ । ३ । १४५ ॥

गर्हायामिति निवृत्तम् । अनवकृत्तिरसंभावना । अमर्षोऽक्षमा ।
न संभावयामि न मर्षये वा । भवान्हरिं निन्देत् निन्दिष्यति वा ।
कः कतरः कतमो वा हरिं निन्देत् निन्दिष्यति वा । लङ् प्राग्वत् ॥

किंकिलास्त्यर्थेषु लट् ३ । ३ । १४६ ॥

अनवकृत्यमर्पयोरित्येतत् गर्हाया च इति यावदनुवर्तते ।
किंकिलेति समुदायः क्रोधघोतक उपपदम् । अस्त्यर्थाः अस्ति-
भवतिविद्यतयः । लिङोऽपवादः । न श्रद्धे न मर्षये वा किंकिल
त्वं शूद्रान्नं भोक्ष्यसे । भवति विद्यते वा । शूद्रो गमिष्यति । अत्र
लङ् न ॥

जातुयदोलिङ् ३ । ३ । १४७ ॥

यदायद्योरुपसंख्यानम् ॐ ॥

लटोऽपवादः । जातु यद्यदा यदि वा त्वादृशो हरिं निन्देन्नाव-
कल्पयामि न मर्षयामि । लङ् प्राग्वत् ॥

यच्चयत्रयोः ३ । ३ । १४८ ॥

यच्च यत्र वा त्वमेवं कुर्याः न श्रद्धे न मर्षयामि ॥

गर्हायां च ३ । ३ । १४९ ॥

अनवकृत्यमर्पयोरिति निवृत्तम् । यद्ययत्रयोयोगे गर्हायां लिङेव । यच्च यत्र वा त्वं शूद्रं याजयेः । अन्याद्यं तत् ॥

चित्रीकरणे च ३ । ३ । १५० ॥

यच्च यत्र वा त्वं शूद्रं याजयेः । आश्चर्यमेतत् ॥

शेषे लृट्यदौ ३ । ३ । १५१ ॥

यद्ययत्राभ्यामन्यस्मिन्नुपपदे चित्रीकरणे गम्ये धातोर्लृट् । आश्चर्यमन्यो नाम कृष्णं द्रक्ष्यति । अयदौ किम् । आश्चर्यं यदि सोऽधीयीत ॥

उताप्योः समर्थयोर्लिङ् ३ । ३ । १५२ ॥

वाढमित्यर्थेऽनयोस्तुल्यार्थता । उत अपि वा हन्यादधं हरिः । समर्थयोः किम् । उत दण्डः पतिष्यति । अपिधास्यति द्वारम् । प्रश्नः प्रच्छादनं च गम्यते । इतः प्रभृति लिङ्गिमित्ते क्रियातिपत्तौ भूतेऽपि नित्यो लिङ् ॥

कामप्रवेदनेऽकश्चिति ३ । ३ । १५३ ॥

स्वाभिप्रायाविष्करणे गम्यमाने लिङ् नतु कश्चिति । कामो मे भुङ्गीत भवान् । अकश्चिति इति किम् । कश्चिज्जीवति ॥

संभावनेऽलमिति चेत् सिद्धाप्रयोगे ३ । ३ । १५४ ॥

अलमर्थोऽत्र प्रौढिः संभावनमित्यलमिति च प्रथमया सप्तम्या च विपरिणम्यते । संभावने लिङ् । तच्चेत्संभावनमलमिति सिद्धाप्रयोगे सति । अपि गिरिं शिरसा भिन्धात् । सिद्धाप्रयोगे किम् । अलं कृष्णो हस्तिनं हनिष्यति ॥

विभाषा धातौ संभावनवचनेऽयदि ३ । ३ । १५५ ॥

पूर्वसूत्रमनुवर्तते । संभावनेऽर्थे धातावुपपदे उक्तेऽर्थे लिङ् वा नतु यच्छब्दे । पूर्वेण नित्ये प्राप्ते वचनम् । संभावयामि भुङ्गीत भोक्ष्यते वा भवान् । अयदि किम् । संभावयामि यभुङ्गीथास्त्वम् ॥

हेतुहेतुमतोर्लिङ् ३ । ३ । १५६ ॥

वा कृष्णं नमस्तेसुखं यायात् । कृष्णं नंस्यति चेत्सुखं यास्यति ।
भविष्यत्येवेष्यते नेह । हन्तीति पलायते ॥

इच्छार्थेषु लिङ्लोटौ ३ । ३ । १५७ ॥

इच्छामि भुञ्जीत भुङ्गां वा भवान् । एवं कामये प्रार्थय इत्या-
दियोगे बोध्यम् ॥

कामप्रवेदन इति वक्तव्यम् ❀ ॥

नेह । इच्छन्करोति ॥

लिङ् च ३ । ३ । १५९ ॥

समानकर्तृकेषु इच्छार्थेषु लिङ् । भुञ्जीयेतीच्छति ॥

इच्छार्थेभ्यो विभाषा वर्तमाने ३ । ३ । १६० ॥

लिङ् पक्षे लट् । इच्छेत् इच्छति । कामयेत् कामयते । विधि-
निमंत्रणे इति लिङ् । विधी-यजेत । निमन्त्रणे-इह भुञ्जीत भवान् ।
आमन्त्रणे-इहासीत । अधीष्टे-पुत्रमध्यापयेद्भवान् । संप्रश्ने-किं
भो वेदमधीयीय उत तर्कम् । प्रार्थने-भो भोजनं लभेय । एवं लोट् ॥

इति १३३ अंशाः ।

प्रेपातिसर्गप्राप्तकालेषु कृत्याश्च ३ । ३ । १६३ ॥

प्रेपो विधिः । अतिसर्गः कामचारातुज्ञा । भवता यष्टव्यम् ।
भवान्यजताम् । चकारेण लोटोऽनुकर्षणं प्राप्तकालार्थम् ॥

लिङ् चोर्ध्वमौहूर्तिके ३ । ३ । १६४ ॥

प्रेपादयोऽनुवर्तन्ते । मुहूर्तादूर्ध्वं यजेत यजताम् यष्टव्यम् ॥

स्मे लोट् ३ । ३ । १६५ ॥

पूर्वसूत्रस्य विषये । लिङ्ः कृत्यानां चापवादः । ऊर्ध्वं मुहूर्ता-
यजता स्म ॥

अधीष्टे च ३ । ३ । १६६ ॥

स्म उपपदेऽधीष्टे लोट् । त्वं स्माध्यापय ॥

लिङ्च्यदि ३ । ३ । १६८ ॥

यच्छन्द उपपदे कालसमयवेलासु च लिङ् । कालः समयो
वेला वा यद्गुञ्जीत भवान् ॥

अर्हे कृत्यतृचश्च ॥

चाहिङ् । त्वं कन्यां वहेः ॥

शकि लिङ् च ३ । ३ । १७२ ॥

शक्ती लिङ् चात्कृत्याः । भारं त्वं वहेः । माडि लुङ् । मा
कार्पीः । कथं मा भवतु मा भविष्यतीति । नायं माङ् । किंतु
माशब्दः ॥

धातुसंबन्धे प्रत्ययाः ३ । ४ । १ ॥

धात्वर्थानां संबन्धे यत्र काले प्रत्यया उक्तास्ततोऽन्यत्रापि
स्युः । तिङ्वाच्यक्रियायाः प्राधान्यात्तदनुरोधेन गुणभूतक्रिया-
वाचिभ्यः प्रत्ययाः । वसन्ददर्श । भूते लट् । अतीतवासकर्तृकं
दर्शनमर्थः । सोमयाज्यस्य पुत्रो भविता । सोमेन यक्ष्यमाणो यः
पुत्रस्तत्कर्तृकं भवन्म् ॥

क्रियासमभिहारे लोट्लोटौ हिस्वौ वा च तध्वमोः ३ । ४ । २ ॥

पौनःपुन्ये भृशार्थे च द्योत्ये धातोर्लोट् तस्य च हिस्वौ ।
तिङ्गामपवादः । तौ च हिस्वौ क्रमेण परस्मैपदात्मनेपदसंज्ञौ च ।
तध्वमोर्विषये तु हिस्वौ वा । पुरुषैकवचनसंज्ञे तु नानयोरति-
दिश्येते । हिस्वविधानसामर्थ्यात् । तेन सकलपुरुषवचनविषये
परस्मैपदिभ्यो हिः कर्तरि आत्मनेपदिभ्यः स्वि भावकर्मकर्तृषु ॥

समुच्चयेऽन्यतरस्याम् ३ । ४ । ३ ॥

अनेकक्रियासमुच्चये द्योत्ये प्रागुक्तं वा ॥

यथाविध्यनुप्रयोगः पूर्वास्मिन् ३ । ४ । ४ ॥

आद्ये लोटविधाने लोटप्रकृतिभूत एव धातुरनुप्रयोज्यः ॥

समुच्चये सामान्यवचनस्य ३ । ४ । ५ ॥

समुच्चये लोद्धिर्धा सामान्यार्थस्य धातोरनुप्रयोगः । अनुप्रयोगायथायथं लडादयस्तिबादयश्च । ततः संख्याकालयोः पुरुष-विशेषार्थस्य चाभिव्यक्तिः ॥

क्रियासमभिहारे द्वे वाच्ये ॐ ॥

याहि याहीति याति । पुनः पुनरतिशयेन वा यानं ह्यन्तस्यार्थः । एककर्तृकं वर्तमानं यानं यातीत्यस्य इतिशब्दस्त्वभेदान्वये तात्पर्यं ग्राहयति । एवं यातः । यान्ति । यासि । यायः । याथ । गात-यातेति । यूयं याथ याहि याहीत्ययासीत् यास्यति वा । अधी-ष्वाधीष्वेत्यधीते । ध्वंविपये पक्षेऽधीध्वमधीध्वमिति । यूयमधीधो । समुच्चये तु सक्तून् पिब । धानाः खादेत्यभ्यवहरति । अक्षं भुङ्क्षते । दाधिकमास्वादयस्वेत्यभ्यवहरते । तध्वमोस्तु पिबत खादतेत्यभ्य-वहरथ । भुङ्ध्वमास्वदध्वमित्यभ्यवहरध्वम् । पक्षे हिंस्यो । अथ समुच्चीयमानविशेषाणामनुप्रयोगार्थेन सामान्येनाभेदान्वयः । पक्षे सक्तून् पिबति धानाः खादति । अक्षं भुङ्क्ते दाधिकमारया-यते । एतेन पुरीमवस्कन्दं लुनीहि नन्दनं मुपाण रत्नानि दराग-राङ्गनाः । विगृह्य चक्रे नमुचिद्विषा वली य इत्यमस्यास्थ्यगद्विषं दिवः ॥ इति व्याख्यातम् । अवस्वन्दनलवनादिरूपा भूताना-तनपरोक्षा एककर्तृका अस्वास्थ्यक्रियेत्यर्थात् । इह पुनः पुनश्चा-न्देत्यादिरर्थे इति व्याख्यानं भ्रममूलकमव । द्वितीयमुपे क्रियास-मभिहार इत्यस्याननुवृत्तेः लोडन्तस्य द्विषापचेत् । पूर्णदन्त-त्यादि मध्यमपुरुषैकवचनमित्यपि केषां च भ्रम एव । इह न-संज्ञे इह नेत्युक्तत्वात् ॥

दनं भोक्ष्येथे । भोक्ष्यध्वे । भोक्ष्ये । भोक्ष्यावहे । भोक्ष्यामहे ।
मन्यसे । मन्येथे । मन्यध्वे । इत्यादिरर्थः ॥ इति लकारार्थप्रकरणम् ॥
इति १३४ अंशः ।

तद्धिताः ४ । १ । ७६ ॥

वक्ष्यमाणाः प्रत्ययास्तद्धितसंज्ञाः ॥

समर्थानां प्रथमाद्वा ४ । १ । ८२ ॥

इदं पदत्रयमधिक्रियते प्राग्दिशः इति यावत् । सामर्थ्यं परि-
निष्ठितत्वम् । कृतसंधिकार्यत्वमिति यावत् ॥

प्राग्दीव्यतोऽण् ४ । १ । ८३ ॥

तेन दीव्यति इत्यतः प्रागणधिक्रियते ॥

अश्वपत्यादिभ्यश्च ४ । १ । ८४ ॥

एभ्योऽण् स्यात्प्राग्दीव्यतीयेष्वर्थेषु । वक्ष्यमाणस्य ण्यस्याप-
वादः ॥

दित्यदित्यादित्यपत्युत्तरपदाण्यः ४ । १ । ८५ ॥

दित्यादिभ्यः पत्युत्तरपदाच्च प्राग्दीव्यतीयेष्वर्थेषु ण्यः स्याद-
णोऽपवादः । दैत्यः । अदितेरादित्यस्य वादित्यः प्राजापत्यः ।
यमाच्च इति काशिकायाम् । याम्यः । पृथिव्या जाऔ । पार्थिवा
पार्थिवी । देवाद्यजौ । दैव्यं दैवम् । वहिषष्टिलोपो यश्च । बाह्यः ।
ईकक्च । बाहीकः । स्थान्नोऽकारः । अश्वत्थामः । पृपोदरादि-
त्वात्सस्य तः ॥

भवार्थे तु लुगवाच्यः ❀ ॥

अश्वत्थामा । लोमोऽपत्येषु बहुष्वकारः । बाह्यादीनोऽपवादः ।
उडुलोमाः उडुलोमान् । बहुषु किम् । औडुलोमिः । गोरजादि-
प्रसङ्गे यत् । गव्यम् । अजादिप्रसङ्गे किम् । गोभ्यो हेतुभ्य आ-
गतं गोरूप्यम् । गोमयम् ॥

उत्सादिभ्योऽञ् ४ । १ । ८६ ॥

औत्सः ॥

अग्निकलिभ्यां ढग्वक्तव्यः ❀ ॥

अग्नेरपत्याद्याग्नेयम् । कालेयम् ॥ इत्यपत्यादिविकारान्तार्थसा-
धारणाः प्रत्ययाः ॥

स्त्रीपुंसाभ्यां नञ्सौ भवनात् ४ । १ । ८७ ॥

धान्यानां भवने इत्यतः प्रागर्थेषु स्त्रीपुंसाभ्यां क्रमानञ्सौ ।
स्त्रैणः । पौंसः । वत्यर्थे न । स्त्रीपुंवच्च इति ज्ञापकात् । स्त्रीवत् ।
पुंवत् ॥

तस्यापत्यम् ॥

उपगोरपत्यमौषगवः । तस्येदमित्यपत्येऽपि बाधनार्थं कृतं भ-
वेत् । उत्सर्गः शेष एवासौ वृद्धान्यस्य प्रयोजनम् ॥ योगविभागस्तु,
मानोरपत्यं मानवः । कृतसन्धेः किम् । सौत्थितिः । अकृतव्यूह-
परिभाषयासाद्युत्थितिर्माभूत् । समर्थपरिभाषया नेह । वस्त्रमुपगो-
रपत्यं चैत्रस्य । प्रथमात् किम् । अपत्यवाचकात्पष्ठार्थे मा भूत् ।
वाग्रहणाद्वाक्यमपि । देवयज्ञि इति सूत्रादन्यतरस्या ग्रहणानुवृत्तेः ।
समासोऽपि उपग्वपत्यम् । जातित्वान्डीप् । औषगवी । आश्व-
पतः । दैत्यः । औत्सः । स्त्रैणः । पौंसः । अत इन् । दाक्षिः । वा-
द्वादिभ्यश्च । बाह्विः । औदुलोमिः । आकृतिगणोऽयम् ॥

सुधातुरकश्च ४ । १ । ९७ ॥

चादिन् । सुधातुरपत्यं सौधातकिः ॥

व्यासवरुडनिपादचाण्डालविम्बानां चेति वक्तव्यम् ❀ ॥

वैयासकिः । वारुडकिरित्यादि ॥

शिवादिभ्योऽण् ४ । १ । ११२ ॥

गोत्रे इति निवृत्तम् । शिवस्यापत्यं शैवः । गाङ्गः । पक्षे ति-
कादित्वात्किन् । गाङ्गायनिः । शुभ्रादित्वाद्दक् । गाङ्गेयः ॥

अवृद्धाभ्यो नदीमानुपीभ्यस्तन्नामिकाभ्यः ४ । १ । ११३ ॥

अवृद्धाभ्यो नदीमानुषीनामभ्योऽण् । ढकोऽपवादः । यामुनः ।
नार्मदः । चिन्तिताया अपत्यं चैन्तितः । अवृद्धाभ्यः किम् ।
वासवदत्तेयः । नदी इत्यादि किम् । वैनतेयः । तन्नामिकाभ्यः किम् ।
शोमनाया अपत्यं शौमनेयः ॥

ऋष्यन्धकवृष्णिकुरुभ्यश्च ४ । १ । ११४ ॥

ऋषयो मन्त्रद्रष्टारः । वासिष्ठः । वैश्वामित्रः । अन्धकेभ्यः—श्वा-
फलकः । वृष्णिभ्यः—वासुदेवः । आनिरुद्धः । शौरिः । इति बाह्वादि-
त्वादित् । कुरुभ्यः—नाकुलः । साहदेवः । इव एवाय मपवादो
मध्येऽपवादन्यायात् । अत्रिशब्दात्तु परत्वाद् ढक् । आत्रेयः ॥

मातुरुत्संख्यासंभद्रपूर्वायाः ४ । १ । ११५ ॥

संख्यादिपूर्वस्य मातृशब्दस्योदादेशः । अणप्रत्ययश्च । रपरत्वम् ।
द्वैमातुरः । पाण्मातुरः । सांमातुरः । भाद्रमातुरः । आदेशार्थं
वचनम् । प्रत्ययस्तूत्सर्गेण सिद्धः स्त्रीलिङ्गनिर्देशोऽर्थापेक्षः । तेन
धान्यमातुर्न । संख्या इति किम् । सौमात्रः । शुभ्रादित्वाद्वैमात्रेयः ॥

कन्यायाः कनीन च ४ । १ । ११६ ॥

ढकोऽपवादोऽण् । तत्संनियोगेन कनीनादेशश्च । कानीनो
व्यासः । कर्णश्च अनूदाया एवापत्यमित्यर्थः ॥

स्त्रीभ्यो ढक् ४ । १ । १२० ॥

स्त्रीप्रत्ययान्तेभ्यो ढक् । वैनतेयः । बाह्वादित्वात्सौमित्रिः ।
शिवादित्वात् सापन्नः ॥

द्व्यचः ४ । १ । १२१ ॥

द्व्यचः स्त्रीप्रत्ययान्तादपत्ये ढक् । तन्नामिकाणोऽपवादः । दा-
त्तेयः । पार्थ इत्यत्र तु तस्येदम् इत्यण् । शिवादित्वादिति तु
तत्त्वम् ॥

इतश्चानिभः ४ । १ । १२२ ॥

इकारान्ताद्व्यचोऽपत्ये ढक् न त्विजन्तात् । दीलेयः । नैधेयः ।
आत्रेयः ॥

कल्याण्यादीनामिन् ४ । १ । १२६ ॥

एषामिन्डादेशः ढक्च । काल्याणिनेयः । बान्धाकिनेयः ॥

कुलटाया वा ४ । १ । १२७ ॥

इनङ्मात्रं विकल्प्यते । ढक् तु नित्यः । पूर्वणैव कालदिनेयः । कालटेयः । सती भिक्षुक्यत्र कुलटा या तु व्यभिचारार्थं कुलान्य-
दति तस्याः क्षुद्राभ्यो वा इति पक्षे ढक् । कालटेयः ॥

हृद्गसिन्ध्वन्ते पूर्वपदस्य च ७ । ३ । १९ ॥

हृदाद्यन्ते पूर्वोत्तरपदयोगचामादेरचो वृद्धिर्भिति णिति किति
च । सुहृदोऽपत्यं सौहार्दः । सुमगाया अपत्यं सौभागिनेयः ।
सक्तुप्रधानाः सिन्धवः सक्तुसिन्धवः तेषु भवः साक्तुसिन्धवः ॥

चटकाया ऐरक् ४ । १ । १२८ ॥

चटकस्येति वाच्यम् ॐ ॥

लिङ्गविशिष्टपरिभाषया स्त्रिया अपि । चटकस्य चटकाया वा-
पत्यं चाटकैरः ॥

स्त्रियामपत्ये लुग्वक्तव्यः ॐ ॥

तयोरेव रूपपत्यं चटका । अजादित्वाद्वा ॥

गोधाया ढक् ४ । १ । १२९ ॥

गौधेरः । शुभ्रादित्वात्पक्षे ढक् । गौधेयः ॥

आरगुदीचाम् ४ । १ । १३० ॥

गौधारः । रका सिद्ध आकारोधारणमन्यतो विधानार्थम् । ज-
डस्यापत्यं जाडारः । पण्डस्यापत्यं पाण्डारः ॥

इति १३५ अंशः ।

क्षुद्राभ्यो वा ४ । १ । १३१ ॥

अङ्गहीनाः शीलहीनाश्च क्षुद्रास्ताभ्यो वा ढक् । पक्षे ढक् ।
काणेरः काणेयः । दासेरः दासेयः ॥

पितृष्वसुश्छण् ४ । १ । १३२ ॥

अणोऽपवादः । पितृष्वस्त्रीयः ॥

ढकि लोपः ४ । १ । १३३ ॥

पितृष्वसुरन्तलोपो ढकि । अत एव ज्ञापकाद् ढक् । पितृष्वसेयः ॥

मातृष्वसुश्च ४ । १ । १३४ ॥

पितृष्वसुर्यदुक्तं तदस्यापि । मातृष्वस्त्रीयः । मातृष्वसेयः ॥

गृष्ट्यादिभ्यश्च ४ । १ । १३६ ॥

ढञ् । अण्ढकोरपवादः । गाँष्ठयः । मित्रयोरपत्यम् ऋष्यणि प्राप्ते ढञ् ॥

केकयमित्रयुप्रलयानां यादेरियः ७ । ३ । २ ॥

एपां यकारादेरियादेशः ञिति णिति किति च तद्धिते परे । इति इयादेशे प्राप्ते ॥

दाण्डिनायनहास्तिनायनाथर्वणिकजैह्लाशिनेयवाशि-
नायनिभ्रौणहत्यधैवत्यसारवैक्ष्वाकमैत्रेयहिरण्मयानि ६ ।
४ । १७४ ॥

एतानि निपात्यन्ते इति युलोपः । मैत्रेयः । मैत्रेयौ ॥

यत्कादिभ्यो गोत्रे २ । ४ । ६३ ॥

एभ्योऽपत्यप्रत्ययस्य लुक् तत्कृते बहुत्वे न तु स्त्रियाम् । मित्रयवः ॥

अत्रिभृगुकुत्सवसिष्ठगोतमाङ्गिरोभ्यश्च २ । ४ । ६५ ॥

एभ्यो गोत्रप्रत्ययस्य लुक् तत्कृते बहुत्वे न तु स्त्रियाम् । अ-
त्रयः । भृगवः । कुत्साः । वसिष्ठाः । गोतमाः । आङ्गिरसः ॥

राजश्वशुराद्यत् ४ । १ । १३७ ॥

राज्ञो जातावेवेति वाच्यम् ❀ ॥

ये चाभावकर्मणोः ६ । ४ । १६८ ॥

यादौ तद्धिते परेऽन्प्रकृत्या नतु भावकर्मणोः । राजन्यः । श्व-
शुर्यः । जातिग्रहणाच्छूद्रादाबुत्पन्नो राजनः ॥

अन् ६ । ४ । १६७ ॥

अणि अन्प्रकृत्या इति टिलोपो न । अभावकर्मणोः किम् ।
राज्ञः कर्म भावो वा राज्यम् ॥

ब्राह्मोऽजातौ ६ । ४ । १७१ ॥

योगविभागोऽत्र कर्त्तव्यः । ब्राह्मः इति निपात्यतेऽनपत्येऽणि
ब्राह्मं हविः । ततो जातौ अपत्ये जातावणि ब्रह्मणष्टिलोपो न ।
ब्रह्मणोऽपत्यं ब्राह्मणः । अपत्ये किम् । ब्राह्मी औपधिः ॥

क्षत्राद्वः ४ । १ । १३८ ॥

क्षत्रियः । जातौ इत्येव । क्षात्रिरन्यः ॥

कुलात्स्वः ४ । १ । १३९ ॥

कुलीनः । तदन्तादपि उत्तरसूत्रे अपूर्वपदात् इति लिङ्गात् ।
आढ्यकुलीनः ॥

अपूर्वपदादन्यतरस्यां यङ्कभौ ४ । १ । १४० ॥

कुलात् इत्येव पक्षे स्वः । कुल्यः कौलेयकः कुलीनः । पदग्रहणं
किम् । बहुकुल्यः बाहुकुलेयकः बहुकुलीनः ॥

महाकुलादञ्खभौ ४ । १ । १४१ ॥

अन्यतरस्याम् इत्यनुवर्तते पक्षे स्वः । माहाकुलः माहाकुलीनः
महाकुलीनः ॥

दुष्कुलाङ्क् ४ । १ । १४२ ॥

पूर्ववत्पक्षे स्वः । दीष्कुलेयः दुष्कुलीनः ॥

स्वसुष्ठः ४ । १ । १४३ ॥

स्वस्त्रीयः ॥

भ्रातुर्व्यञ्च ४ । १ । १४४ ॥

चाच्छः । अणोऽपवादः । भ्रातृध्यः भ्रात्रीयः ॥

व्यन्सपत्ने ४ । १ । १४५ ॥

भ्रातुर्व्यन् अपत्ये प्रकृतिप्रत्ययसमुदायेन शत्रौ वाच्ये । भ्रातृव्यः शत्रुः । पाप्मना भ्रातृव्येणेति तूपचारात् ॥

मनोर्जातावभ्यतौ पुक्च ४ । १ । १६१ ॥

समुदायार्थो जातिः । मानुषः मनुष्यः ॥

अपत्यं पौत्रप्रभृतिगोत्रम् ४ । १ । १६२ ॥

अपत्यत्वेन विवक्षितं पौत्रादिगोत्रसंज्ञम् ॥

जीवति तु वंश्ये युवा ४ । १ । १६३ ॥

वंश्ये पित्रादौ जीवति पौत्रादेर्यदपत्यं चतुर्थादि तद्युवसंज्ञमेव न तु गोत्रसंज्ञम् ॥

भ्रातरि च ज्यायसि ४ । १ । १६४ ॥

ज्येष्ठे भ्रातरि जीवति कनीयांश्चतुर्थादिर्युवसंज्ञो वा ॥

वान्यस्मिन्सपिण्डे स्थविरतरे जीवति ४ । १ । १६५ ॥

भ्रातुरन्यस्मिन्सपिण्डे स्थविरतरे जीवति पौत्रप्रभृतेरपत्यं जीव-
देव युवसंज्ञं वा । एकं जीवतिग्रहणमपत्यस्य विशेषणम् । द्वितीयं
सपिण्डस्य तरन्निर्देश उभयोरुत्कर्षार्थः । स्थानेन वयसा चोत्कृष्टे
पितृव्ये मातामहभ्रातरि वा जीवति । गार्ग्यस्यापत्यं गार्ग्यायणः
गार्ग्यो वा । स्थविर इति किम् । स्थानवयोन्यूने गार्ग्य एव ।
जीवति इति किम् । मृते मृतो ॥ गार्ग्य एव ॥

वृद्धस्य च पूजायामिति वाच्यम् * ॥

गोत्रस्यैव वृद्धसंज्ञा प्राचाम् । गोत्रस्य युवसंज्ञा पूजायां गम्यमा-
नायाम् । तत्रभवान् गार्ग्यायणः । पूजायाम् इति किम् । गार्ग्यः ॥

यूनश्च कुत्सायां गोत्रसंज्ञेति वाच्यम् * ॥

गार्ग्यो जाल्मः । कुत्सायामिति किम् । गार्ग्यायणः ॥

एको गोत्रे ४ । १ । १६३ ॥

गोत्र एक एवापत्यप्रत्ययः । उपगोर्गोत्रापत्यमौपगवः ।
गार्ग्यः । नाडायनः ॥

गोत्राद्यून्यस्त्रियाम् ४ । १ । ९४ ॥

यून्यपत्ये गोत्रप्रत्ययान्तादेवापत्यप्रत्ययः । स्त्रियां तु न युव-
संज्ञा । गर्गस्य युवापत्यं गार्ग्यायणः । स्त्रियां गोत्रत्वादेक एव
प्रत्ययः ॥

नडादिभ्यः फक् ४ । १ । ९९ ॥

गोत्रे इत्येव । नाडायनः । चारायणः । अनन्तरो नाडिः ॥

अनृष्यानन्तर्ये विदादिभ्योऽञ् ४ । १ । १०४ ॥

एभ्योऽङ्गोत्रे । ये त्वत्रानृषयः पुत्रादयस्तेभ्य आनन्तर्ये सूत्रे
स्वार्थे ष्यञ् । विदस्य गोत्रापत्यं वैदः । अनन्तरो वैदिः । बा-
ह्वादेराकृतिगणत्वादित् । पुत्रस्यापत्यं पौत्रः । दौहित्रः ॥

गर्गादिभ्यो यञ् ४ । १ । १०५ ॥

गोत्रे इत्येव । गार्ग्यः । वात्स्यः ॥

यभिभोश्च ४ । १ । १०९ ॥

गोत्रे यौ यभिभौ तदन्तात्फक् । अनाति इत्युक्तेः । आपत्यस्य
इति यलोपो न । गार्ग्यायणः । दाक्षायणः ॥

इति १३६ अंशाः ।

यभभोश्च २ । ४ । ६४ ॥

गोत्रे यद्यनन्तमनन्तं च तदवयवयोरेतयोर्लुक् तत्कृते बहुत्वे नतु
स्त्रियाम् । गर्गोः । वत्साः । विदाः । उर्वोः । तत्कृते इति किम् ।
प्रियगार्ग्यः । स्त्रियां तु गार्ग्यः स्त्रियः । गोत्रे किम् । द्वेप्याः ।
औत्साः । प्रवराध्यायप्रसिद्धमिह गोत्रम् । तेनह न । पौत्राः ।
दौहित्राः ॥

जनपदशब्दात् क्षत्रियादञ् ४ । १ । १६८ ॥

जनपदक्षत्रिययोर्वाचकादजपत्ये । दाण्डिनायन इति सूत्रे
निपातनाट्टिलोपः । ऐक्षाकः । ऐक्षाकौ ॥

क्षत्रियसमानशब्दाज्जनपदात्तस्य राजन्यमपत्यवत् ❀ ॥

तद्राजमाचक्षाणस्तद्राज इत्यन्वर्थसंज्ञासामर्थ्यात् । पञ्चालाना
राजा पाञ्चालः ॥

पूरोरण्वक्तव्यः ❀ ॥

पौरवः । पाण्डोडर्घण् । पाण्डयः ॥

साल्वेयगान्धारिभ्यां च ४ । १ । १६९ ॥

आभ्यामपत्येऽञ् । वृद्धेत् इति ज्यङोऽपवादः । साल्वेयः ।
गान्धारः । तस्य राजन्यप्येवम् ॥

द्व्यञ्मगधकलिङ्गसूरमसादण् ४ । १ । १७० ॥

अञ्चोऽपवादः । द्व्यच् । आङ्गः । वाङ्गः । सोहः । मागधः ।
कालिङ्गः । सौरमसः । तस्य राजन्यप्येवम् ॥

वृद्धेत्कोसलाजादाञ्ज्यङ् ४ । १ । १७१ ॥

वृद्धात् । आम्बष्ठयः । सौवीर्यः । इत् आवन्त्यः । कौसल्यः ।
अजादस्यापत्यमाजाद्यः ॥

कुरुनादिभ्यो ण्यः ४ । १ । १७२ ॥

कौरव्यः । नैपध्यः । स नैपधस्यार्थपतेः इत्यादौ तु शैपिकोऽण् ॥

साल्वावयवप्रत्यग्रथकलकूटाश्मकादिभ् ४ । १ । १७३ ॥

साल्वो जनपदस्तदवयवा उदुम्बरादयस्तेभ्यः प्रत्यग्रथादिभ्य-
स्त्रिभ्यश्च इञ् । अञ्चोऽपवादः । औदुम्बारिः । प्रात्यग्रथिः । कालकू-
टिः । आश्मकिः । राजन्यप्येवम् ॥

ते तद्राजाः ४ । १ । १७४ ॥

अजादय एतन्सज्ञा स्युः ॥

तद्राजस्य बहुषु तेनैवाऽस्त्रियाम् २ । ४ । ६२ ॥

बहुष्वर्थेषु तद्राजस्य लङ् तदर्थकृते बहुत्वे नतु स्त्रियाम् ।

इक्ष्वाकवः । पञ्चालाः । इत्यादि । कथं तर्हि कौरव्याः पशवः ।
तस्यामेव रघोः पाण्ड्याः इति च कौरव्ये पाण्ड्ये च साधव इति
समाधेयम् । रघूणामन्वयं वक्ष्ये । निरुध्यमाना यदुभिः कथंचित्
इति तु रघुयदुशब्दयोस्तदपत्ये लक्षणया ॥

कम्बोजाल्लुक १४ । १ । १७५ ॥

अस्मात्तद्राजस्य लुक । कम्बोजः । कम्बोजौ ॥

कम्बोजादिभ्य इति वक्तव्यम् ❀ ॥

चोलः । शकः । द्व्यजलक्षणस्याणो लुक । केरलः । यवनः । अणो-
लुक । कम्बोजाः । समरे इति पाठः सुगमः । दीर्घपाठे तु कम्बो-
जोऽभिजनो येषामित्यर्थः । सिन्धुतक्षशिलादिभ्योऽणौ इत्यण् ॥

स्त्रियामवन्तिकुन्तिकुरुभ्यश्च ४ । १ । १७६ ॥

तद्राजस्य लुक । अवन्ती । कुन्ती । कुरुः ॥

अतश्च ४ । १ । १७७ ॥

तद्राजस्याकारस्य स्त्रियां लुक । शूरसेनी । मट्टी । कथं माट्टी-
सुतौ इति द्वस्व एव पाठः इति हरदत्तः । भर्गादित्वं वा कल्प्यम् ॥

न प्राच्यभर्गादियौधेयादिभ्यः ४ । १ । १७८ ॥

एभ्यस्तद्राजस्य न लुक । पाञ्चाली वैदर्भी । आङ्गी । वाङ्गी ।
मागधी । ऐते प्राच्याः । भार्गी । कारूपी । केरूपी । केकयीत्यत्र तु
जन्यजनकभावलक्षणे पुंयोगे ङीप् । एवं देवकीत्यत्राप्याहुः । जप-
त्यप्रत्यये ङीप् संज्ञापूर्वकत्वाद्द्व्यभवाव इति परे । युधा । शुक्रा ।
आभ्यां द्व्यचः इति ढक् । ततः स्त्रियै । पश्चादियौधेयादिभ्योऽणौ
इत्यञ् । शार्ङ्गखाद्यनः इति ङीन् । अतश्च इति लुकि तु दगन्तत्वा-
न्ङीप्युदात्तनिवृत्तिस्वरः । यौधेयी । शौकेयी ॥ इत्यपत्याधिकारः ॥

तेन रक्तं रागात् ४ । २ । १ ॥

रज्यतेऽनेनेति रागः । कषायेण रक्तं वस्त्रं काषायम् । माञ्जिष्टम् ।
रागात् किम् । देवदत्तेन रक्तं वस्त्रम् ॥

नील्या अन् ❀ ॥

नील्या रक्तं नीलम् ॥

पीतात्कन् * ॥

पीतकम् ॥

हरिद्रामहारजनाभ्यामञ्ज * ॥

हारिद्रम् । माहारजनम् ॥

नक्षत्रेण युक्तः कालः ४ । २ । ३ ॥

* पुष्पेण युक्तं पौषमहः । पौषी रात्रिः ॥

लुब्धविशेषे ४ । २ । ४ ॥

पूर्वेण विहितस्य लुप् । पष्ठिदण्डात्मककालस्यावान्तरविशेषश्चेन्न गम्यते । अद्य पुष्पः । कथं तर्हि पुष्पयुक्ता पौर्णमासी पौषी इति । विभाषा फाल्गुनीश्रवणाकार्तिकीचैत्रीभ्य इति निर्देशेन पौर्णमास्यामयं लुप्तेति ज्ञापितत्वात् । श्रवणशब्दात्तु अत एव लुव्युक्तवद्भावाभावश्च । अबाधकान्यपि निपातनानि । श्रावणी ॥

परिवृतो रथः ४ । २ । १० ॥

वस्त्रैः परिवृतो वास्रो रथः । रथः किम् । वस्त्रेण परिवृतः कायः । समन्ताद्वेष्टितः परिवृत उच्यते । तेनेह न । छत्रैः परिवृतो रथः ॥

पाण्डुकम्बलादिनिः ४ । २ । ११ ॥

पाण्डुकम्बलेन परिवृतः पाण्डुकम्बली । पाण्डुकम्बलशब्दो राजास्तरणवर्णकम्बलस्य वाचकः । मत्वर्थीयेनैव सिद्धे वचनमणो निवृत्त्यर्थम् ॥

द्वैपयैयाघ्रादञ् ४ । २ । १२ ॥

दीपिनो विकारो द्वैपम् । तेन परिवृतो द्वैपो रथः । एवं वैयाघ्रः ॥

स्थण्डिलाच्छयितरि व्रते ४ । २ । १५ ॥

तत्र इत्येव । समुदायेन चेद्व्रतं गम्यते । स्थण्डिले शेते स्थाण्डिलो मिथुः ॥

इति १३७ अंशाः ।

संस्कृतं भक्षाः ४ । २ । १६ ॥

सप्तम्यन्तादण् संस्कृतेऽर्थे । यत्संस्कृतं भक्षाश्चेत्ते स्युः । भ्राष्ट्रे संस्कृता भ्राष्ट्रा यवाः ॥

द्विगोर्लुगनपत्ये ४ । १ । ८८ ॥

द्विगोर्निमित्तं यस्ताद्धितोऽजादिरनपत्यार्थः प्राग्दीव्यतीयस्तस्य लुक् । अष्टसु कपालेषु संस्कृतः अष्टाकपालः पुरोडाशः ॥

शूलोखाद्यत् ४ । २ । १७ ॥

अणोऽपवादः । शूले संस्कृतं शूल्यं मांसम् । उखा पात्रवि-
शेषः तस्यां संस्कृतमुख्यम् ॥

दध्नष्ठक् ४ । २ । १८ ॥

दधि संस्कृतम् दाधिकम् ॥

उदश्वितोऽन्यतरस्याम् ४ । २ । १९ ॥

ठक् पक्षेऽण् ॥

इसुसुक्तान्तात्कः ७ । ३ । ५१ ॥

इस् उस् उक् त एतदन्तात्परस्य ठस्य कः । उदकेन श्वयति वर्धत इत्युदश्वित् तत्र संस्कृत औदश्वित्कः । औदश्वितः इसुसोः प्रतिपदोक्तयोर्ग्रहणभेदः । आशिषा चरत्याशिपिकः । उपा चरत्यापिकः ॥

दोष उपसंख्यानम् ❀ ॥

दोभ्यां चरति दौष्कः ॥

क्षीरादृञ् ४ । २ । २० ॥

अत्र संस्कृतं इत्येव संबध्यते नतु भक्षा इति । तेन यवाग्वामपि भवति । क्षैरेयी ॥

सास्मिन्पौर्णमासीति ४ । २ । २१ ॥

इतिशब्दात् संज्ञायाम् इति लभ्यते । संज्ञायामिति काचित्कः पाठस्तु प्रामादिकः । पौषी पौर्णमास्यस्मिन्पौषी मासः ॥

आग्रहायण्यश्वत्याट्टक् ४ । २ । २२ ॥

अग्रे हायनमस्या इत्याग्रहायणी । प्रज्ञादेराकृतिगणत्वादण् ।
पूर्वपदात्संज्ञायाम् इति णत्वम् । आग्रहायणी पौर्णमास्यस्मिन्ना-
ग्रहायणिको मासः । अश्वत्येन युक्ता पौर्णमास्यश्वत्यः । निपात-
नात्पौर्णमास्यामपि लुक् । आश्वत्थिकः ॥

विभाषा फाल्गुनीश्रवणाकार्तिकीचैत्रीभ्यः ४ । २ । २३ ॥

एभ्यश्च पक्षेऽण् । फाल्गुनिकः फाल्गुनो मासः । श्रावणिकः
श्रावणः । कार्तिकिकः कार्तिकः । चैत्रिकः चैत्रः ॥

सास्य देवता ४ । २ । २४ ॥

इन्द्रो देवतास्येति ऐन्द्रं हविः । पाशुपतम् । बार्हस्पतम् ।
तप्तज्यमानद्रव्य उद्देश्यविशेषो देवतामन्त्रः । स्तुत्या च ऐन्द्रो
मन्त्रः । अभियो वै ब्राह्मणो देवतया इति तु शैपिकेऽर्थे । सर्वत्राग्नि
इति ढक् ॥

कस्येत् ४ । २ । २५ ॥

कशब्दस्येदादेशः प्रत्ययसंन्नियोगेन । यस्य इति लोपात्पर-
त्वादादिवृद्धिः । को ब्रह्मा देवतास्य कायं हविः । श्रीदेवतास्य
श्रायम् । शतरुद्रादश्च । चाच्छः । शतं रुद्रा देवता अस्य शत-
रुद्रियं शतरुद्रीयम् । घञ्योर्विधानसामर्थ्यात् द्विगोलुगनपत्ये
इति न लुक् ॥

महेन्द्रादाणौ च ४ । २ । २६ ॥

चाच्छः । महेन्द्रियं हविः माहेन्द्रं महेन्द्रीयम् ॥

सोमाट्ट्यण् ४ । २ । २७ ॥

सौम्यम् । टित्वान्डीप् । सोमी ऋक् ॥

वाय्वृत्तुपित्रपसो यत् ४ । २ । २८ ॥

वायव्यम् । ऋतव्यम् । रीदृतः यस्येति च । पित्र्यम् । उपस्यम् ॥

पूर्णमासादण् वक्तव्यः ॥

पूर्णा मासोऽस्यां वर्त्तते इति पौर्णमासी तिथिः ॥

पितृव्यमातुलमातामहपितामहाः ४ । २ । ३६ ॥

एते निपात्यन्ते । पितुर्भ्रातरि व्यत् । पितुर्भ्राता पितृव्यः । मा-
तुर्दुलच् । मातुर्भ्राता मातुलः । मातृपितृभ्यां पितरि डामहच् ।
मातुः पिता मातामहः । पितुः पिता पितामहः । मातरि पिथ ।
मातामही । पितामही ॥

अवेर्दुग्धे सोढूदूसमरीसचो वक्तव्याः ॐ ॥

सकारपाठसामर्थ्यान्न पः । अविसोढम् । अविदूसम् । अविमरी-
सम् तिलान्निष्फलात्पिञ्जपेजौ । तिलपिञ्जः । तिलपेजः । बन्ध्य-
स्तिल इत्यर्थः । पिञ्जश्छन्दसि ङिश्च । तिलपिञ्जः ॥

तस्य समूहः ४ । २ । ३७ ॥

अत्र अचित्तादनुदात्तादेर्गोत्रात् केदारादिप्रतिपदाच्च पृथक् प्र-
त्यया वक्ष्यन्ते तान्यसिंहत्योदाहरणीयम् । काकानां समूहः काकम् ।
वाकम् ॥

भिक्षादिभ्योऽण् ४ । २ । ३८ ॥

भिक्षाणां समूहो भैक्षम् । गर्भिणीनां समूहो गर्भिणम् । इह
भस्याडे इति पुंवद्भावे कृते इनण्यनपत्ये तेन नस्तद्धिते इति दिलोपो
न । युवतीनां समूहो यौवनम् । शत्रन्तादनुदात्तादेराजि, यौवतम् ॥

गोत्रोक्षोश्चोरभ्रराजराजन्यराजपुत्रवत्समनुष्याजाद्वुञ्च्

४ । २ । ३९ ॥

एभ्यः समूहे वुञ्च् । लौकिकमिह गोत्रं तच्चापत्यमात्रम् ।
युवोरनाकी । ग्लुञ्चुकायनीनां समूहो ग्लौञ्चुकायनकम् । औक्षक-
मित्यादि । आपत्यस्य च इति यलोपे प्राप्ते प्रकृत्या अके राज-
न्यमनुष्ययुवानः । राजन्यकम् । मानुष्यकम् ॥

वृद्धाच्चेति वक्तव्यम् ॐ ॥

वार्द्धकम् ॥

केदाराद्यञ्च ४ । २ । ४० ॥

चाद्वञ् । कैदार्यं कैदारकम् ॥

गणिकाया यभिति वक्तव्यम् ❀ ॥

गाणिक्यम् ॥

ठक्वचिनञ्च ४ । २ । ४१ ॥

चात्केदारादपि । कवचिनां समूहः कावचिकम् । कैदारिकम् ॥

ब्राह्मणमाणववाडवाद्यत् ४ । २ । ४२ ॥

ब्राह्मण्यम् । माणव्यम् । वाडव्यम् ॥

पृष्ठादुपसंख्यानम् ❀ ॥

पृष्ठथम् ॥

ग्रामजनबन्धुभ्यस्तल् ४ । २ । ४३ ॥

ग्रामता । जनता । बन्धुता ॥

गजसहायाभ्यां चेति वक्तव्यम् ❀ ॥

गजता । सहायता । अद्गः सः क्रतौ । अहीनः । अहर्गणसा-
ध्यमुत्पातः क्रतुगित्यर्थः । क्रतौ किम् । आद्गः । इह खण्डिकादि-
न्वाद्यम् । अद्गष्टोरेव इति नियमाद्विहोपो न ॥

पश्वा णस् वक्तव्यः ❀ ॥

सिति च १ । ४ । १६ ॥

गिति षे पूर्व पदगङ्गम् । अमत्वादोर्णो न । पर्शूनां समूहः
पार्श्वम् ॥

अनुदात्तादेरञ् ४ । २ । ४४ ॥

पापान्तम् । माय्यम् ॥

चरणेभ्यो धर्मवत् ४ । २ । ४६ ॥

वाचकम् । छान्द्रोग्यम् ॥

अचित्तदस्तिधेनोष्टक ४ । २ । ४७ ॥

साक्तुकम् । हास्तिकम् । धेनुकम् ॥

केशाश्वाभ्यां यञ्छावन्यतरस्याम् ४ । २ । ४८ ॥

पक्षे ठगणौ । कैश्यं केशिकम् । अश्वीयम् आश्वम् ॥

पाशादिभ्यो यः ४ । २ । ४९ ॥

पाश्या । तृण्या । धूम्या । वन्या । वात्या ॥

खलगोरथात् ४ । २ । ५० ॥

खल्या । गव्या । रथ्या ॥

इनित्रकटचचश्च ४ । २ । ५१ ॥

खलादिभ्यः क्रमात् । खलिनी । गोत्रा । रथकट्या ॥

खलादिभ्य इनिर्वक्तव्यः ❀ ॥

डाकिनी । कुटुम्बिनी । आकृतिगणोऽयम् ॥

इति १३८ अंशाः ।

तदस्यां प्रहरणमिति क्रीडायां णः ४ । २ । ५७ ॥

दण्डः प्रहरणमस्यां क्रीडायां दाण्डा । मौष्टा ॥

घञः सास्यां क्रियेति भः ४ । २ । ५८ ॥

घञन्तात्क्रियावाचिनः प्रथमान्तादस्यामिति सप्तम्यर्थे स्त्रीलिङ्गे
अप्रत्ययः । घञः इति कृद्गृहणाद्गतिकारकपूर्वस्यापि ग्रहणम् ॥

श्येनतिलस्य पाते भे ६ । ३ । ७१ ॥

श्येनतिल एतयोर्मुमागमः अप्रत्ययपरे पातशब्द उत्तरपदे ।
श्येनपातोऽस्यां वर्तते श्येनपाता भृगया । तिलपातोऽस्यां वर्तते
तैलपाता स्वधा । श्येनतिलस्य किम् । दण्डपातोऽस्यां तिथी
वर्तते दाण्डपाता तिथिः । तदधीते तद्देद ॥

ऋतूक्थादिसूत्रान्ताट्टक् ४ । २ । ६० ॥

ऋतुविशेषवाचिनामेवेह ग्रहणं तेभ्यो मुख्यायैभ्यो वेदितरि
तत्प्रतिपादकग्रन्थपरेभ्यस्त्वध्येतरि । आग्निष्टोमिकः । वाजपेयिकः ।

उक्तं सामविशेषः तल्लक्षणपरो ग्रन्थविशेषो लक्षणयोक्तृम् । तदधीते वेद वा आधिक्यः । मुख्यार्थात्तुल्यशब्दाद्वर्णा न्येते । न्यायम्-नैयायिकः । वृत्तिम्-वार्तिकः । लोकायतम्-लौकायतिक इत्यादि ॥

सूत्रान्तात्त्वकल्पादेरेवेप्यते ❀ ॥

सांग्रहसूत्रिकः । अकल्पादेः किम् । काल्पसूत्रः ॥

विद्यालक्षणकल्पान्ताच्चेति वक्तव्यम् ❀ ॥

वायसविधिकः । गौलक्षणिकः । आम्बलक्षणिकः । पाराशरकल्पिकः ॥

अङ्गक्षत्रधर्मत्रिपूर्वाद्विद्यान्ताच्चेति वक्तव्यम् ❀ ॥

आङ्गविद्यः । क्षात्रविद्यः । धर्मविद्यः । त्रिविधा विद्या त्रिविद्या तामधीते वेद वा त्रैविद्यः ॥

आख्यानाख्यायिकेतिहासपुराणेभ्यश्च ❀ ॥

यवक्रीतमाधिकृत्य कृतमाख्यानमुपचाराद्यवक्रीतम् । तदधीते वेति वा यावक्रीतिकः । वासवदत्तामाधिकृत्य कृता आख्यायिका वासवदत्ता । अधिकृत्य कृते ग्रन्थे इत्यर्थे वृद्धाच्छः । तस्य लुवाख्यायिकाभ्यो बहुलम् इति लुप् । ततोऽनेन ठक् । वासवदत्तिकः ऐतिहासिकः । पुराणिकः ॥

सर्वादः सादेश्च लुग्वक्तव्यः ❀ ॥

सर्ववेदानधीते सर्ववेदः । सर्वतन्त्रः । सर्वार्तिकः । द्विगोर्लुक् इति लुक् । द्वितन्त्रः ॥

इकन्पदोत्तरपदाच्छतपदेः पिकन्पथः ॥

पूर्वपदिकः । उत्तरपदिकः । शतपथिकः । शतपथिकी । पष्टिपथिकः । पष्टिपथिकी ॥

क्रमादिभ्यो वुन् ४ । २ । ६३ ॥

क्रमकः । क्रमपदसिखामीमांसाक्रमादिः ॥

प्रोक्ताल्लुक् ४ । २ । ६४ ॥

प्रोक्तार्थकप्रत्ययात्परस्याध्येतृवेदितृप्रत्ययस्य लुक् । पणनं
पणः । घञर्थं कविधानम् इति कः । सोऽस्यास्तीति पणी तस्य
गोत्रापत्यं पाणिनः ॥

गाथिविदधिकेशिगणिपणिनश्च ६ । ४ । १६५ ॥

एतेऽणि प्रकृत्या इति टिलोपो न । ततो यूनि इत् । पाणिनिः ।
पाणिनिना प्रोक्तं पाणिनीयम् । घृद्वाच्छः इयश्च इत्यण तु न ।
गोत्रे य इञ्जतदन्तादिति वक्ष्यमाणत्वात् । ततोऽध्येतृवेदिनणो लुक्
स्येरे स्त्रियां च विशेषः । पाणिनीयः पाणिनीया ॥

सूत्राच्च कोपधात् ४ । २ । ६५ ॥

सूत्रवाचिनः ककारोपधादध्येतृवेदितृप्रत्ययस्य लुक् । अप्रोक्तार्थं
आरम्भः अष्टावध्यायाः परिमाणमस्याष्टकं पाणिनेः सूत्रम् ।
तदधीयते विदन्ति वा अष्टकाः ॥

छन्दोब्राह्मणानि च तद्विषयाणि ४ । २ । ६६ ॥

छन्दांसि ब्राह्मणानि च प्रोक्तप्रत्ययान्तानि तद्विषयाणि अध्ये-
तृवेदितृप्रत्ययं विना न प्रयोज्यानीत्यर्थः । कठेन प्रोक्तमधीयते
कठाः । वैशम्पायनान्तेवासित्वाणिनिः । तस्य कठचरकात् इति
लुक् । ततोऽण् । तस्य प्रोक्ताल्लुक् ॥

तदस्मिन्नस्तीति देशे तन्नामि ४ । २ । ६७ ॥

उदुम्भराः सन्त्यस्मिन्देश औदुम्बरः ॥

तेन निर्वृत्तम् ४ । २ । ६८ ॥

कुशाम्बेन निर्वृत्ता कौशाम्बी नगरी ॥

तस्य निवासः ४ । २ । ६९ ॥

शिबीनां निवासो देशः शैबः ॥

अदूरभवश्च ४ । २ । ७० ॥

विदिशाया अदूरमवं नगरं वैदिशम् । चक्राण्येन प्रागुक्तास्त्रयोऽ-
र्थाः संनिधाप्यन्ते तेन वक्ष्यमाणप्रत्ययानां चातुर्विकृत्यं मिथ्यानि ॥

जनपदे लुप् ४ । २ । ८१ ॥

जनपदे वाच्ये चातुर्यिकस्य लुप् ॥

लुपि युक्तवद्व्यक्तिवचने १ । २ । ५१ ॥

लुपि सति प्रकृतिवद्विभक्तवचने । पञ्चालानां निवासो जनपदः
पञ्चालाः । कुरवः । अङ्गाः । वङ्गाः । कलिङ्गाः ॥

विशेषणानां चाजातेः १ । २ । ५२ ॥

लुप्त्यर्थस्य विशेषणानामपि तद्वद्विभक्तवचने स्तो जातिं वर्जयित्वा ।
पञ्चाला रमणीयाः । गोदौ रमणीयौ । अजातेः किम् । पञ्चाला
जनपदः । गोरी । ग्रामः । हरीतक्यादिषु व्यक्तिः । हरीतक्याः
फलानि हरीतक्यः ॥

खलतिकादिषु वचनम् ॐ ॥

खलतिकस्य पर्वतस्यादूरमवानि खलतिकं वनानि ॥

मनुष्यलुपि प्रतिषेधः ॐ ॥

मनुष्यलक्षणं लुप्त्यर्थे विशेषणानां न । लुबन्तस्य तु भवती-
त्यर्थः । चञ्चा अभिरूपः ॥

इति १३९ अंशाः ।

वरणादिभ्यश्च ४ । २ । ८२ ॥

अजनपदार्थे आरम्भः । वरणानामदूरमवं नगरं वरणा ॥

शकेराया वा ४ । २ । ८३ ॥

अस्माद्यातुरधिकस्य वा लुप् ॥

ठक्ठौ च ४ । २ । ८४ ॥

अर्शगाया ण्ठान्नः । बह्यमाणे कुमुदादौ वगहादौ च पाठसाम-
र्थ्यान्तरौ ठक्ठ्वौ । वाग्रहणमामर्थ्यत्पक्ष आत्सर्गिकोऽण् तस्य
लुप्तिवत्त्वः । पट् रूपाणि । अर्शगा आर्शं आर्शिकं अर्शगि-
नार्शिकं आर्शिकम् ॥

कुमुदनडवेतसेभ्यो द्रुतुप् ४ । २ । ८७ ॥

कुमुद्वान् । नड्वान् । वेतस्वान् । आद्ययोः शयः इत्यन्त्ये मादु-
पधायाः इति वक्ष्यमाणेन वः ॥

महिपाच्चेति वक्तव्यम् ❀ ॥

-महिष्मान्नाम देशः ॥

नडशादाड्डलच्च ४ । २ । ८८ ॥

नड्डलः । शादो जम्बालघासयोः इत्यमरः । शाद्वलः ॥

शिखाया वलच्च ४ । २ । ८९ ॥

शिखावलम् ॥ इति चातुरर्थिकाः ॥

शेषे ४ । २ । ९२ ॥

अपत्यादिचतुरर्थ्यन्तादन्योऽर्थः शेषस्तत्राणादयः । चक्षुषा
गृह्यते चाक्षुषं रूपम् । श्रावणः शब्दः । औपनिषदः पुरुषः ।
दृपदि पिष्टा दार्षदाः सक्तवः । उलूखले क्षुण्ण औलूखलो यावकः ।
अश्वेरुह्यत आश्वो रथः । चतुर्भिरुह्यते चातुरं शकटम् । चतुर्दश्यां
दृश्यते चातुर्दशं रक्षः । शेषे इति लक्षणं चाधिकारश्च । तस्य
विकार इत्यतः प्राक्छेपाधिकारः ॥

राष्ट्रावारपाराद्वखौ ४ । २ । ९३ ॥

आभ्यां क्रमाद्वखौ शेषे । राष्ट्रियः । अवारपारीणः ॥

अवारपाराद्विगृहीतादपि विपरीताच्चेति वक्तव्यम् ❀ ॥

अवारीणः । पारीणः । पारावारीणः । इह प्रकृतिविशेषाद्वादय-
ष्ट्युदच्युलन्ता । प्रत्यया उच्यन्ते । तेषां जातादयोऽर्थविशेषाः
समर्थविभक्तयश्च वक्ष्यन्ते ॥

ग्रामाद्यखभौ ४ । २ । ९४ ॥

ग्राम्यः ग्रामीणः ॥

कुलकुक्षिग्रीवाभ्यः श्वास्यलंकारेषु ४ । २ । ९६ ॥

कौलेयकः श्वा कौलोऽन्यः । कौक्षेयकोऽसिः कौक्षोऽन्यः । ग्रैवे-
यकोऽलंकारः ग्रैवोऽन्यः ॥

नद्यादिभ्यो ढक् ४ । २ । ९७ ॥

नादेयम् । माहेयम् । वाराणसेयम् ॥

दक्षिणापश्चात्पुरसस्त्यक् ४ । २ । ९८ ॥

दक्षिणा इत्याजन्तमव्ययम् । दाक्षिणात्यः । पाश्चात्यः । पौरस्त्यः ॥

कापिड्याः ष्फक् ४ । २ । ९९ ॥

कापिड्यां जातादि कापिशायनं मधु कापिशायनी द्राक्षा ॥

द्युप्रागपागुदक्प्रतीचो यत् ४ । २ । १०१ ॥

दिव्यम् । प्राच्यम् । अवाच्यम् । उदीच्यम् । प्रतीच्यम् ॥

अव्ययात्त्यप् ४ । २ । १०४ ॥

अमेहकतीतिभ्य एव । अमान्तकसहायार्थयोः । अमात्यः ।
इहत्यः । कत्यः । ततस्त्यः । तत्रत्यः । परिगणनं किम् । उपरि-
ष्ठाद्भव औपरिष्ठः । अव्ययानां ममात्रे टिलोपः । अनित्योऽयं
बहिषष्टिलोपविधानात् । तेनेह न । आरातीयः । शाश्वतीयः ॥

त्यन्नेर्ध्रुव इति वक्तव्यम् ❀ ॥

नित्यः ॥

निसो गते ❀

ह्रस्वात्तादौ तद्धिते ८ । ३ । १०१ ॥

ह्रस्वादिणः परस्य सस्य पः तादौ तद्धिते । निर्गतो वर्णाश्रमे-
भ्यो निष्ठश्चाण्डालादिः । अरण्याण्णः । आरण्याः मुमनसः ॥
दूरादेत्यः । दूरेत्यः । उत्तरादाह्र । आत्तराहः ॥

ऐपमोह्यः श्वसोऽन्यतरस्याम् ४ । २ । १०५ ॥

ऐपमोह्यश्च पक्षे वक्ष्यमार्णा ट्युट्युल्ला । ऐपमस्त्यम् ऐपम-
स्त्यम् । श्वस्त्यं श्वस्तनम् । श्वस्त्यं श्वस्तनम् । पक्षे शीपस्तिकं
वक्ष्यते । गृष्टिपस्याचामादिस्तद्वृद्धम् । त्यदादीनि च ॥

वृद्धाच्छः ४ । २ । ११४ ॥

शालीयः । मालीयः । तदीयः ॥

एङ् प्राचां देशे १ । १ । ७५ ॥

एङ् । यस्याचामादिस्तद्वसंज्ञं वा देशामिधाने । एणीपचनीयः । गौनर्दीपः । भोजकनीयः । पक्षेऽणि ऐणीपचनः । गौनर्दः । भोजकदः । एङ् किम् । आहिच्छत्रः । कान्यकुब्जः ॥

भवतष्टकसौ ४ । २ । ११५ ॥

वृद्धाद्भवत एतौ भावत्कः । जश्त्वम् । भवदीयः । वृद्धात् इत्यनुवृत्तेः । शत्रन्तादणेव । भावतः ॥

काश्यादिभ्यष्ट्भिठौ ४ । २ । ११६ ॥

इकार उच्चारणार्थः । काशिकी काशिका । वैदिकी वैदिका ॥ आपदादिपूर्वपदात्कालान्तात् । आपदादिराकृतिगणः । आपत्कालिकी आपत्कालिका ॥

नगरात्कुत्सनप्रावीण्ययोः ४ । २ । १२८ ॥

नगरशब्दाद्बुज् कुत्सने प्रावीण्ये च गम्ये । नागरकश्चरः शिल्पी वा । कुत्सन इति किम् । नागरा ब्राह्मणाः ॥

अरण्यान्मनुष्ये ४ । २ । १२९ ॥

बुज् । अरण्याणः इत्यस्यापवादः ॥

पथ्यध्यायन्यायविहारमनुष्यहस्तिष्विति वाच्यम् ❀ ॥

आरण्यकः पन्था । अध्यायो न्यायो विहारो मनुष्यो हस्ती वा ॥

वा गोमयेषु ❀ ॥

आरण्यका आरण्या वा गोमयाः ॥

गहादिभ्यश्च ४ । २ । १३८ ॥

छः । गहीयः । मुखपार्श्वतसौर्लोपश्च । मुखतीयम् । पार्श्वतीयम् । अव्ययानां भमात्रे टिलोपस्यानित्यता ज्ञापयितुमिदम् । कुग्ज-

नस्य परस्य च । जनकीयम् । परकीयम् । देवस्य च । देवकीयम् ।
स्वस्य च । स्वकीयम् ॥

राज्ञः क च ४ । २ । १४० ॥

वृद्धत्वाच्छे सिद्धे तत्संनियोगेन कादेशमात्रं विधीयते । राज-
कीयम् ॥

पर्वताच्च ४ । २ । १४३ ॥

पार्वतीयः ॥

विभाषा मनुष्ये ४ । २ । १४४ ॥

मनुष्यभिन्नेऽर्थे पर्वताच्छे वा पक्षेऽण् । पर्वतीयानि पार्वतानि
वा फलानि । अमनुष्ये किम् । पार्वतीयो मनुष्यः ॥

युष्मदस्मदोरन्यतरस्यां खञ्च ४ । ३ । १ ॥

चाच्छः पक्षेऽण् । युवयोः युष्माकं वा अयं युष्मदीयः ।
अस्मदीयः ॥

तस्मिन्नणि च युष्माकास्माकौ ४ । ३ । २ ॥

युष्मदस्मदोरेतावादेशौ खञ्यणि च । यौष्माकीणः । आस्मा-
कीनः । यौष्माकः । आस्माकः ॥

तवकममकावेकवचने ४ । ३ । ३ ॥

एकार्थवाचिनोर्युष्मदस्मदोस्तवकममकौ खञ्यणि च । ताव-
कीनः तावकः । मामकीनः । मामकः । छे तु प्रत्ययोत्तरपदयोश्च ।
त्वदीयः । मदीयः । उत्तरपदे त्वत्पुत्रः । मत्पुत्रः ॥

मध्यान्मः ४ । ३ । ८ ॥

मध्यमः ॥

असांप्रतिके ४ । ३ । ९ ॥

मध्यशब्दादस्मात्प्रत्ययः सांप्रतिकेऽर्थे । उत्कर्षोपकर्षहीनो मध्यो
वैयाकरणः । मध्यं दारु । नातिह्रस्वं नातिदीर्घमित्यर्थः ॥

इति १४० अंशाः । इति चतुर्थोऽध्यायस्य द्वितीयः पादः ।

कालाट्टञ् ४ । ३ । ११ ॥

कालवाचिभ्यष्टञ् । मासिकम् । सांवत्सरिकम् । सायंप्रातिकः ।
पौनःपुनिकः । कथं तर्हि शार्वरस्य तमसो निषिद्धये इति कालि-
दासः । अनुदितौ पसरग इति भारविः । समानकालीनम् ।
प्राक्कालीनमित्यादि च । अपभ्रंशा एवैते इति प्रामाणिकाः । तत्र
जातः इति यावत्कालाधिकारः ॥

श्वसस्तुद् च ४ । ३ । १५ ॥

श्वसशब्दादृज्वा तस्य तुडागमश्च ॥

द्वारादीनां च ७ । ३ । ४ ॥

द्वारस्वरस्वाध्यायव्यल्कशस्वास्तिस्वरस्फ्यकृतस्वादुमृदुश्वसश्वन्स्य
एषां न वृद्धिरैजागमश्च । शौवस्तिकम् ॥

संधिवेलाद्यृतुनक्षत्रेभ्योऽण् ४ । ३ । १६ ॥

संधिवेलादिभ्य ऋतुभ्यो नक्षत्रेभ्यश्च कालवृत्तिभ्योऽण् । संधि-
वेलायां भवं सांधिवेलम् । प्रैष्मम् । तैपम् । संधिवेला संध्या अ-
मावस्या त्रयोदशी चतुर्दशी पौर्णमासी प्रतिपत् । संवत्सरात्फल-
वर्णनोः । सांवत्सरं फलं पर्व वा सांवत्सरम् । सांवत्सरिकमन्यत् ॥

प्रावृष एण्यः ४ । ३ । १७ ॥

प्रावृषेण्यः ॥

वर्षाभ्यष्टक् ४ । ३ । १८ ॥

वर्षासु साधु वार्षिकं वासः । कालात्साधुपुण्यत्पच्यमानेषु
इति साध्वर्थे ॥

सर्वत्राण्व तलोपश्च ४ । ३ । २२ ॥

हेमन्तादण् तलोपश्च वेदलोकयोः । चकारात्पक्षे ऋत्वण् । हेम-
नम् । हेमन्तम् ॥

सायंचिरंप्राहेप्रगेऽन्ययेभ्यष्ट्युट्युलो तुद् च ४ । ३ । २३ ॥

सायमित्यादिभ्यश्चनुभ्योऽय्ययेभ्यश्च कालवाचिभ्यष्टुट्ठुलौ
तयोस्तुट् च । तुट्ः प्रागनादेशः । अनद्यतन इत्यादिनिर्देशात् ।
सायंतनम् । चिरंतनम् । प्राह्नप्रगयेरेदन्तत्वं निपात्यते । प्राह्नेतनम् ।
प्रगेतनम् । दोपातनम् । दिवातनम् ॥

चिरपरुत्परारिभ्यस्तो वक्तव्यः ❀ ॥

चिरत्नम् । परुत्नम् । परारित्नम् । अग्रादिपश्चाद्धिमच् ।
अग्रिमम् । आदिमम् । पश्चिमम् । अन्ताद्य । अन्तिमम् ॥

विभाषा पूर्वाह्नापराह्नाभ्याम् ४ । ३ । २४ ॥

आभ्या ट्युट्ठुलौ वा स्तस्तयोस्तुट् च पक्षे ठञ् । पूर्वाह्नेतनम् ।
अपराह्नेतनम् । घकालतेनेषु इत्यलुक् । पूर्वाह्नः । सोढोऽस्येति वि-
ग्रहे तु पूर्वाह्नतनम् । अपराह्नतनम् । पौर्वाह्निकम् । आपराह्निकम् ॥

तत्र जातः ४ । ३ । २५ ॥

सप्तमीसमर्थाजात इत्यर्थेऽणादयो घादयश्च । सुप्ते जातः
सौमनः । औत्सः । राप्त्रियः । अवारपारीण इत्यादि ॥

प्रावृषष्टक् ४ । ३ । २६ ॥

एण्यस्यापवादः । प्रावृषि जातः प्रावृषिकः ॥

संभूते ४ । ३ । ४१ ॥

सुप्ते संभवति सौमनः ॥

कोशाङ्ग ४ । ३ । ४२ ॥

कौशेयं वस्त्रम् ॥

कालात्साधुपुष्प्यत्पच्यमानेषु ४ । ३ । ४३ ॥

हेमन्ते साधुर्हेमन्तः प्राकारः । वसन्ते पुष्प्यन्ति वासन्त्यः
कुन्दलताः । शरादि पच्यन्ते शारदाः शालयः ॥

उप्ते च ४ । ३ । ४४ ॥

हेमन्त उप्यन्ते हेमन्ता यवाः ॥

आश्वयुज्या वुञ् ४ । ३ । ४५ ॥

ठञोऽपवादः । आश्वयुज्यामुक्ता आश्वयुजका मापाः ॥

ग्रीष्मवसन्तादन्यतरस्याम् ४ । ३ । ४६ ॥

पक्षे ऋत्वण् । ग्रीष्मकं ग्रीष्मम् । वासन्तकं वासन्तम् ॥

तत्र भवः ४ । ६ । ५३ ॥

सुध्रे भवः सौध्रः । राप्रियः ॥

दिगादिभ्यो यत् ४ । ३ । ५४ ॥

दिश्यम् । वर्ग्यम् ॥

शरीरावयवाच्च ४ । ३ । ५५ ॥

दन्त्यम् । कर्ण्यम् ॥

दृतिकुक्षिकलशिवस्त्यस्त्यहेर्दृञ् ४ । ३ । ५६ ॥

दातैयम् । कौक्षेयम् । कलशिर्घटस्तत्र भवं कालशेयम् ॥

ग्रीवाभ्योऽण्व ४ । ३ । ५७ ॥

चाङ्गञ् । ग्रीवेयं ग्रीवम् ॥

गम्भीराभ्यः ४ । ३ । ५८ ॥

गम्भीरे भवं गाम्भीर्यम् ॥

पञ्चजनादुपसंख्यानम् ❀ ॥

पाञ्चजन्यः ॥

अव्ययीभावाच्च ४ । ३ । ५९ ॥

परिमुखं भवं परिमुख्यम् । परिमुख्यादिभ्य एवेप्यते नेह ।
औपकूलः ॥

अन्तःपूर्वपदादृञ् ४ । ३ । ६० ॥

अव्ययीभावात् इत्येव । वेश्मन्यन्तरन्तर्वेश्मम् । तत्र भवमा-
न्तर्वेश्मिकम् । आन्तर्गणिकम् ॥

अध्यात्मादेष्टुभिष्यते ❀ ॥

अध्यात्मं भवमाध्यात्मिकम् ॥

अनुशतिकादीनां च ७ । ३ । २० ॥

एषांमुभयपदवृद्धिः जिति णिति किति च । आधिर्दविकम् ।
आधिर्भौतिकम् । ऐहलौकिकम् । पारलौकिकम् । अध्यात्मादिर-
नुशतिकादिश्चाकृतिगणः ॥

जिह्वामूलाङ्गुलेऽङ्गुः ४ । ३ । ६२ ॥

जिह्वामूलीयम् । अङ्गुलीयम् ॥

कर्णललाटात्कनलंकारे ४ । ३ । ६५ ॥

कर्णिका । ललाटिका ॥

तत आगतः ४ । ३ । ७४ ॥

सुप्तादागतः स्त्रीघ्नः ॥

विद्यायोनिस्वन्धेभ्यो बुञ् ४ । ३ । ७७ ॥

औपाध्यायकः । पैतामहकः ॥

ऋतपुञ् ४ । ३ । ७८ ॥

बुवोऽपवादः । होतृकम् । मातृकम् ॥

पितुर्यञ्च ४ । ३ । ७९ ॥

चाट्ठञ् । रीढतः यस्य इति लोपः । पित्र्यं पैतृकम् ॥

नञः शुचीश्वरक्षेत्रज्ञकुशलनिपुणानाम् ७ । ३ । ३० ॥

नञः परेषां शुच्यादिपञ्चानामादेरचो वृद्धिः पूर्वपदस्य तु वा
विदादौ परे आशीचं अशीचम् । अनैश्वर्यं अनैश्वर्यम् । आक्षेत्रज्ञं
अक्षेत्रज्ञम् । आकौशलं अकौशलम् । अनैपुणं अनैपुणम् ॥

प्रभवति ४ । ३ । ८३ ॥

ततः इत्येव । हिमवतः प्रभवति हैमवती गङ्गा ॥

विदूराञ्च्यः ४ । ३ । ८४ ॥

विदूरात्प्रभवति वैदूर्यो मणिः ॥

अधिकृत्य कृते ग्रन्थे ४ । ३ । ८७ ॥

तत इत्येव । शारीरकमाधिकृत्य कृतो ग्रन्थः शारीरकीयः ।
शारीरकं भाष्यमिति त्वभेदोपचारात् ॥

शिशुकन्दयमसभद्वन्द्वेन्द्रजननादिभ्यश्छः ४।३।८८॥
शिशूनां कन्दनं शिशुकन्दः । तमधिकृत्य कृतो ग्रन्थः शिशु-
कन्दीयः । यमस्य सभा यमसभम् । ह्रीवत्वं निपातनात् । यमस-
भीयः । किरातार्जुनीयम् । इन्द्रजननादिराकृतिगणः ॥

इति १४१ अंशाः ।

सोऽस्य निवासः ४ । ३ । ८९ ॥

सुघ्नो निवासोऽस्य सौघ्नः ॥

अभिजनश्च ४ । ३ । ९० ॥

सुघ्नोऽभिजनोऽस्य सौघ्नः । यत्र स्वयं वसति स निवासः । यत्र
पूर्वरूपितं सोऽभिजनः इति विवेकः ॥

तेन प्रोक्तम् ४ । ३ । ९०१ ॥

पाणिनिना प्रोक्तं पाणिनीयम् ॥

तित्तिरिवरतन्तुखण्डिकोखाच्छण् ४ । ३ । ९०२ ॥

छन्दो ब्राह्मणानि इति तद्विषयता । तित्तिरिणा प्रोक्तमधीयते
तैत्तिरीयाः ॥

काश्यपकौशिकाभ्यामृषिभ्यां णिनिः ४ । ३।९०३॥

काश्यपेन प्रोक्तमधीयते काश्यपिनः ॥

कलापिवैशम्पायनान्तेवासिभ्यश्च ४ । ३ । ९०४ ॥

कलाप्यन्तेवासिभ्यः । हरिद्वणा प्रोक्तमधीयते हारिद्रिणिः ।

वैशम्पायनान्तेवासिभ्य आलम्बिनः ॥

शौनकादिभ्यश्छन्दसि ४ । ३।९०६ ॥

छन्दस्यभिधेय एभ्यो णिनिः । शौनकेन प्रोक्तमधीयते शौन-
किनः ॥

कठचरकाल्लुक् ४ । ३ । १०७ ॥

आभ्यां प्रोक्तप्रत्ययस्य लुक् । कठेन प्रोक्तमधीयते कठाः ।
चरकाः ॥

पाराशर्यशिलालिभ्यां भिक्षुनटसूत्रयोः ४ । ३ । ११० ॥

पाराशर्येण प्रोक्तं भिक्षुसूत्रमधीयते पाराशरिणो भिक्षवः ।
शैलालिनो नटाः ॥

कर्मन्दकृशाश्वादिनिः ४ । ३ । १११ ॥

भिक्षुनटसूत्रयोः इत्येव । कर्मन्देन प्रोक्तमधीयते कर्मन्दिनो भि-
क्षवः । कृशाश्विनो नटाः ॥

तेनैकदिक् ४ । ३ । ११२ ॥

सुदाम्ना अद्रिणा एकदिवसौदामनी ॥

तसिश्च ४ । ३ । ११३ ॥

स्वरादिपाठादव्ययत्वम् । पीलुमूलेन एकदिक् पीलुमूलतः ॥

उरसो यच्च ४ । ३ । ११४ ॥

चात्तसिः । अणोऽपवादः । उरसैकदिगुरस्यः । उरस्तः ॥

उपज्ञाते ४ । ३ । ११५ ॥

तेन इत्येव । पाणिनिनोपज्ञातं पाणिनीयम् ॥

कृते ग्रन्थे ४ । ३ । ११६ ॥

वाररुचिना कृतो वाररुचो ग्रन्थः ॥

संज्ञायाम् ४ । ३ । ११७ ॥

तेन इत्येव । अग्रन्थार्थमिदम् । माक्षिकाभिः कृतं माक्षिकं मधु ॥

क्षुद्राभ्रमरवटरपादपादञ् ४ । ३ । ११९ ॥

तेन कृते संज्ञायाम् । क्षुद्राभिः कृतं क्षौद्रम् । भ्रामरम् । वाट-
रम् । पादपम् ॥

तस्येदम् ॥

उपगोरिदमौपगवम् ॥

द्वन्द्वानुन्वैरमैथुनिकयोः ४ । ३ । १२५ ॥

काकोल्लिका । कुत्सकुशिकिका ॥

वैरे देवासुरादिभ्यः प्रतिषेधः ❀ ॥

देवासुरम् ॥

गेत्रचरणादुञ् ४ । ३ । १२६ ॥

औपगवकम् ॥

चरणाद्धर्मात्राययोरिति वक्तव्यम् ❀ ॥

काठकम् । समाप्ताः शैपिकाः ॥

तस्य विकारः ४ । ३ । १३४ ॥

अश्मनो विकारे टिलोपो वक्तव्यः ❀ ॥

अश्मनो विकार आश्मः । भास्मनः । मार्तिकः ॥

अवयवे च प्राण्यौपधिवृक्षेभ्यः ४ । ३ । १३५ ॥

चादिकारे । मयूरस्यावयवो विकारो वा मायूरः । मौर्व काण्डं
भस्म वा । पैप्पलम् ॥

विल्वादिभ्योऽण् ४ । ३ । १३६ ॥

धैल्वम् ॥

कोपधाच्च ४ । ३ । १३७ ॥

अण् अजोऽण्वादः । तर्कु तार्कवम् । तैत्तिडीम् ॥

त्रपुजतुनोः पुक् ४ । ३ । १३८ ॥

आभ्यामण् विकारे एतयोः पुगागमश्च । त्रापुपम् । जातुपम् ॥

ओरञ् ४ । ३ । १३९ ॥

दैवदारवम् । भाद्रदारवम् ॥

मयङ्गैतयोर्भापायामभक्ष्याच्छादनयोः ४ । ३ । १४३ ॥

प्रकृतिमात्रान्मयद्वा विकारावयवयोः । अश्ममयम् । आश्म-
नम् । अमक्ष्य इत्यादि किम् । मौद्गः सूपः । कार्पासमाच्छादनम् ॥

नित्यं वृद्धशरादिभ्यः ४ । ३ । १४४ ॥

आभ्रमयम् । शरमयम् ॥

एकाचो नित्यम् ॐ ॥

त्वद्मयम् । वाद्मयम् । कथं तर्हि आप्थं अम्मयम् इति
तस्येदम् इत्यण्णंतात्स्वार्थे ण्यञ् ॥

गोश्च पुरीषे ४ । ३ । १४५ ॥

गोः पुरीषं गोमयम् ॥

पिष्टाच्च ४ । ३ । १४६ ॥

मयद् विकारे । पिष्टमयं यस्म । कथं पैष्टी सुरेति सामान्यवि-
वक्षाया तस्येदम् इत्यण् ॥

संज्ञायां कन् ४ । ३ । १४७ ॥

पिष्टात् इत्येव । पिष्टस्य विकारविशेषः पिष्टकः । पूषोऽपूपः
पिष्टकः इत्यमरः ॥

क्रीतवत्परिमाणात् ४ । ३ । १५६ ॥

प्राग्वहतेष्टक् इत्यारभ्य क्रीतार्थे ये प्रत्यया येनोपाधिना परि-
माणाद्विहितास्ते तथैव विकारेऽतिदिश्यन्ते । अणादीनामपवादः ।
निष्केण क्रीतं नैष्किकम् । एवं निष्कस्य विकारोऽपि नैष्किकः ।
शतस्य विकारः शत्यः शतिकः ॥

एण्या ठञ् ४ । ३ । १५९ ॥

ऐणेयम् । एणस्य तु ऐणम् ॥

गोपयसौर्यञ् ४ । ३ । १६० ॥

गव्यम् । पयस्यम् ॥

द्रोश्च ४ । ३ । १६१ ॥

दुर्वृक्षस्तस्य विकारोऽभ्यवो वा द्रव्यम् ॥

माने वयः ४ । ३ । १६२ ॥

द्रोः इत्येव । द्रव्यम् । यौतवं द्रव्यं पाय्यमिति मानार्थकं त्रयम् ।
इत्यमरः ॥

फले लुक् ४ । ३ । १६३ ॥

विकारावयवप्रत्ययस्य लुक् फले ॥

लुक् तद्धितलुकि १ । २ । ४९ ॥

तद्धितलुकि सत्युपसर्जनस्त्रीप्रत्ययस्य लुक् इति ङीपो लुक् ।
आमलक्याः फलमामलकम् ॥

पुक्षादिभ्योऽण् ४ । ३ । १६४ ॥

विधानसामर्थ्यान्न लुक् । छाक्षम् ॥

न्यग्रोधस्य च केवलस्य ७ । ३ । १०५ ॥

अस्य न वृद्धिरेजागमश्च । नेयग्रोधम् ॥

जम्बू वा ४ । ३ । १६५ ॥

जम्बूशब्दात्फलेऽण्वा । जाम्बवम् । पक्षे ओरङ् तस्य लुक् ।
जम्बूः ॥

लुप् च ४ । ३ । १६६ ॥

जम्बूः फलप्रत्ययस्य लुब्बा लुपि युक्तरत् । जम्बूः फलं
जम्बूः ॥

फलपाकशुपामुपसंख्यानम् ❀ ॥

ब्रीहयः । मुद्गाः ॥

पुष्पमूलेषु बहुलम् ॥

मल्लिकायाः पुष्पं मल्लिका । जात्याः पुष्पं जाती । विदार्या मूलं
विदारी । बहुलग्रहणान्नेह । पाटलानि पुष्पाणि । साल्वानि मूला-
नि । बाहुलकात्कचिल्लुक् । अशोकम् । कर्वीत्म् ॥

हरीतक्यादिभ्यश्च ४ । ३ । १६७ ॥

एभ्यः फलप्रत्ययस्य लुप् ॥

हरीतक्यादीनां लिङ्गमेव प्रकृतिवत् ॥

हरीतक्याः फलानि हरीतक्यः ॥

कंसीयपरशव्ययोर्यभौ लुक्च ४ । ३ । १६८ ॥

कंसीयपरशव्यशब्दाभ्यां यञञौ छयतोश्च लुक् । कंसाय हितं कंसीयम् । तस्य विकारः कांस्यम् । परशवे हितं परशव्यम् । नस्य विकारः पारशवः ॥ इति प्राग्दीव्यतीयाः समाप्ताः ॥

इति १४२ अंशाः ।

प्राग्ग्रहतेष्टक् ४ । ४ । १ ॥

तद्ग्रहतीत्यतः प्राक् ठगधिक्रियते ॥

तदाहेति माशब्दादिभ्य उपसंख्यानम् * ॥

माशब्दः कारि इति य आह स माशब्दिकः ॥

स्वागतादीनां च ७ । ३ । ७ ॥

ऐङ् । स्वागतमित्याह । स्वागतिकः । स्वाध्वरिकः स्वाङ्गस्यापत्यं स्वाङ्गिः । व्यङ्गस्यापत्यं व्याङ्गिः । व्यङ्गस्यापत्यं व्याङ्गिः । व्यवहारेण चरति व्यावहारिकः । स्वपती साधु स्वापतेयम् ॥

आहौ प्रभूतादिभ्यः ॥

प्रभूतमाह प्राभूतिकः । पार्याप्तिकः ॥

पृच्छतौ सुस्नातादिभ्यः ॥

सुस्नातं पृच्छति सौस्नातिकः । सौख्यशायनिकः । अनुगतिकादिः ॥

गच्छतौ परदारादिभ्यः ॥

पारदारिकः । गौरुतल्पिकः ॥

तेन दीव्यति खनति जयति जितम् ४ । ४ । २ ॥

अक्षैर्दीव्यति आक्षिकः । अभ्या खनति आभ्रिकः । अक्षैर्जयति
आक्षिकः । अक्षैर्जितमाक्षिकम् ॥

संस्कृतम् ४ । ४ । ३ ॥

दध्ना संस्कृतं दाधिकम् । मारिचिकम् ॥

तरति ४ । ४ । ५ ॥

उडुपेन तरति औडुपिकः ॥

नौ व्यचष्टन् ४ । ४ । ७ ॥

नाविकः । घटिकः । बाहुभ्यां तरति बाहुका स्त्री ॥

चरति ४ । ४ । ८ ॥

तृतीयान्ताद्गच्छतिभक्षयतीत्यर्थयोषक् । हस्तिना चरति हा-
स्तिकः । शाकटिकः । दध्ना भक्षयति दाधिकः ॥

वेतनादिभ्यो जीवति ४ । ४ । १२ ॥

वेतनेन जीवति वैतनिकः । धानुष्कः ॥

वस्त्रक्रयविक्रयाट्टन् ४ । ४ । १३ ॥

वस्त्रेण मूल्येन जीवति वास्त्रिकः । क्रयविक्रयग्रहणं संघातीविगृ-
हीतार्थम् । क्रयविक्रयिकः । क्रयिकः । विक्रयिकः ॥

आयुधाच्छ च ४ । ४ । १४ ॥

चाट्टन् । आयुधेन जीवति आयुधीयः आयुधिकः ॥

निर्वृत्तेऽक्षद्यूतादिभ्यः ४ । ४ । १९ ॥

अक्षद्यूतेन निर्वृत्तमाक्षद्यूतिकं वैरम् । कत्रेर्मम् नित्यम् । कृत्रिमम् ।
पक्त्रिमम् । भावप्रत्ययान्तादिमप् । पाक्त्रिमम् । त्यागिमम् ॥

अपमित्ययाचिताभ्यां कक्कनौ ४ । ४ । २१ ॥

अपमित्येति त्यवन्तम् । अपमित्य निर्वृत्तमापमित्यकम् ।
याचितेन निर्वृत्तं याचितकम् ॥

लवणाल्लुक् ४ । ४ । २४ ॥

लवणेन संसृष्टो लवणः स्रपः । लवणं शकम् ॥

मुद्गादण् ४ । ४ । २५ ॥

मौद्ग ओदनः ॥

व्यञ्जनैरुपसिक्ते ४ । ४ । २६ ॥

ठक् । दध्ना उपसिक्तं दाधिकम् ॥

ओजःसहोऽम्भसा वर्तते ४ । ४ । २७ ॥

ओजसा वर्तते ओजसिकः शूरः । सादसिकश्चौरः । आम्भसि-
को मत्स्यः ॥

तत्प्रत्यनुपूर्वमीपलोमकूलम् ४ । ४ । २८ ॥

द्वितीयान्नादस्माद्वर्त्तत इत्यस्मिन्नर्थे ठक् । क्रियाविशेषणत्वा-
द्वितीया । प्रतीपं वर्तते प्रातीपिकः । आन्वीपिकः । प्रातिलोमिकः
आनुलोमिकः । प्रातिकूलिकः । आनुकूलिकः ॥

परिमुखं च ४ । ४ । २९ ॥

परिमुखं वर्तते पारिमुखिकः । चात्पारिपार्थिकः ॥

प्रयच्छति गर्ह्यम् ४ । ४ । ३० ॥

द्विगुणार्थं द्विगुणं तत्प्रयच्छति द्वैगुणिकः । त्रैगुणिकः ॥

वृद्धेर्वृधुपिभावो वक्तव्यः ॥

वार्धुपिकः ॥

कुसीददशैकादशात्पृष्ठचौ ४ । ४ । ३१ ॥

गर्ह्यार्थाम्यामाभ्यामेतौ स्तः प्रयच्छतीत्यर्थे । कुसीदं वृद्धिस्त-
दर्थं द्रव्यं कुसीदं तत्प्रयच्छतीति कुसीदिकः कुसीदिकी । एकाद-
शार्थत्वादेकादश ते च ते वस्तुतो दश चेति विग्रहेऽकारः समा-
सान्त इहैव सूत्रे निपात्यते । दशैकादशिकः । दशैकादशिकी
दशैकादशान्प्रयच्छतीत्युत्तमर्ण एवेहापि तद्वितार्थः ॥

शब्ददुर्दुरं करोति ४ । ४ । ३४ ॥

शब्दं करोति शाब्दिकः । दार्ढुरिकः ॥

पक्षिमत्स्यमृगान्दन्ति ४ । ४ । ३५ ॥

स्वरूपस्य पर्यायाणां विशेषाणां च ग्रहणम् । मत्स्यपर्यायेषु
मीनस्यैव । पक्षिणो दन्ति पाक्षिकः । शाकुनिकः । मायूरिकः ।
मात्स्यिकः । मेनिकः । शाकुलिकः । मार्गिकः । दारिणिकः ।
सारङ्गिकः ॥

धर्मं चरति ४ । ४ । ४१ ॥

धार्मिकः ॥

अधर्माच्चेति वक्तव्यम् ❀ ॥

आधार्मिकः ॥

समवायान्समवैति ४ । ४ । ४३ ॥

सामवायिकः । सामूहिकः ॥

परिपदो ण्यः ४ । ४ । ४४ ॥

परिपदं समवैति पारिपद्यः ॥

सेनाया वा ४ । ४ । ४५ ॥

ण्यः पक्षे ठक् । सेन्याः सेनिकाः ॥

शिल्पम् ४ । ४ । ५५ ॥

मृदङ्गवादनं शिल्पमस्य मार्दङ्गिकः ॥

मण्डुकझर्झरादन्यतरस्याम् ४ । ४ । ५६ ॥

मण्डुकवादनं शिल्पमस्य माण्डुकः माण्डुकिः । शार्शरः

शार्शरिकः ॥

प्रहरणम् ४ । ४ । ५७ ॥

तदस्य इत्येव । असिः प्रहरणमस्य आसिकः । धानुष्कः ॥

परश्वधाट्टञ्च ४ । ४ । ५८ ॥

पारश्वधिकः ॥

शक्तियष्टचोरीकः ४ । ४ । ५९ ॥

शक्तीकः । याष्टीकः ॥

इति १४३ अंशाः ।

अस्तिनास्तिदिष्टं मतिः ४ । ४ । ६० ॥

तदस्य इत्येव । अस्ति परलोक इत्येवं मतिर्यस्य स आस्तिकः ।
नास्तीतिमतिर्यस्य स नास्तिकः । दिष्टमिति मतिर्यस्य स दैष्टिकः ॥

शीलम् ४ । ४ । ६१ ॥

अपूपमक्षणं शीलमस्य आपूपिकः ॥

छत्रादिभ्यो णः ४ । ४ । ६२ ॥

गुरोर्दोषाणामावर्णं छत्रं तच्छीलमस्य छात्रः ॥

कर्मस्ताच्छील्ये ६ । ४ । १७२ ॥

कर्म इति ताच्छील्ये णे टिलोपो निपात्यते । कर्मशीलः
कर्मः । नस्ताद्धिते इत्येव सिद्धे अण्कार्यं ताच्छीलिके णेऽपि । तेन
चौरी तापसीत्यादि सिद्धम् । ताच्छील्ये किम् । कर्मणः ॥

तत्र नियुक्तः ४ । ४ । ६९ ॥

आकरो नियुक्त आकारिकः ॥

अगारान्ताट्टन् ४ । ४ । ७० ॥

देवागारे नियुक्तो देवागारिकः ॥

प्राग्विताद्यत् ४ । ४ । ७५ ॥

तस्मै हितम् इत्यतः प्राग्यदधिक्रियते ॥

तद्वहति रथयुगप्रासङ्गम् ४ । ४ । ७६ ॥

रथं वहति रथ्यः । युग्यः । वत्सानां दमनकाले स्कन्धे यत्काष्ठमा-
सज्यते स प्रासङ्गः तं वहति प्रासङ्ग्यः ॥

धुरो यद्कौ ४ । ४ । ७७ ॥

हाले च इति दीर्घे प्राप्ते न भर्कुर्धुराम् । धुर्यः धौरेयः ॥

खः सर्वधुरात् ४ । ४ । ७८ ॥

सर्वधुरं वहतीति सर्वधुरीणः ॥

एकधुराहुक् च ४ । ४ । ७९ ॥

एकधुरं वहति एकधुरीणः एकधुरः ॥

शकटादण् ४ । ४ । ८० ॥

शकटं वहति शकटो गोः ॥

हलसीराहुक् ४ । ४ । ८१ ॥

हलं वहति हालिकः । सैरिकः ॥

संज्ञायां जन्या ४ । ४ । ८२ ॥

जनी बधूः तां वहति प्रापयति जन्या ॥

धनगणं लब्धा ४ । ४ । ८४ ॥

तृन्नन्तमेतत् । धनं लब्धा धन्यः । गणं लब्धा गण्यः ॥

वशंगतः ४ । ४ । ८६ ॥

वश्यः परेच्छानुचारी ॥

संज्ञायां धेनुप्या ४ । ४ । ८९ ॥

धेनुशब्दस्य पुगागमो यप्रत्ययश्च स्वार्थे निपात्यते संज्ञायाम् ।

धेनुप्या बन्धके स्थिता इत्यमरः ॥

गृहपतिना संयुक्ते ऋयः ४ । ४ । ९० ॥

गृहपतिर्यजमानस्तेन संयुक्तो गार्हपत्योऽग्निः ॥

नौवयोधर्मविपमूलमूलसीतातुलाभ्यस्तार्यतुल्यप्राप्य-

बध्यानाम्यसमसमितसंमितेषु ४ । ४ । ९१ ॥

नावा तार्यं नाव्यम् । वयसा तुल्यो वयस्यः । धर्मेण प्राप्यं धर्म्यम् । विपेण वध्यो विध्यः । मूलेनानाम्यं मूल्यम् । मूलेन समो मूल्यः । सीतया समितं सीत्यं क्षेत्रम् । तुलया संमितं तुल्यम् ॥

धर्मपथ्यर्थन्यायादनपेते ४ । ४ । ९२ ॥

धर्मादनपेतं धर्म्यम् । पथ्यम् । अर्थ्यम् । न्याय्यम् ॥

छन्दसो निर्मिते ४ । ४ । ९३ ॥

छन्दसा निर्मितं छन्दस्यम् । इच्छया कृतमित्यर्थः ॥

उरसोऽण् च ४ । ४ । ९४ ॥

चाद्यत् । उरसा निर्मितः पुत्र औरसः उरस्यः ॥

हृदयस्य प्रियः ४ । ४ । ९५ ॥

हृद्यो देशः । हृदयस्य हृद्रेख इति हृदादेशः ॥

तत्र साधुः ४ । ४ । ९८ ॥

अग्रे साधुः अग्र्यः । सामसु साधुः सामन्यः । ये चाभावकर्म-
णोः इति प्रकृतिभावः । कर्मण्यः । शरण्यः ॥

प्रतिजनादिभ्यः खञ् ४ । ४ । ९९ ॥

प्रतिजनं साधुः प्रातिजनीनः । सायुगीनः । सार्वजनीनः ।
वैश्वजनीनः ॥

भक्ताणः ४ । ४ । १०० ॥

भक्ते साधवो भक्ताः शालयः ॥

परिपदो ण्यः ४ । ४ । १०१ ॥

पारिपद्यः । परिपद इति योगविभागाण्णोऽपि । पारिपदः ॥

पथ्यतिथिवसतिस्वपतेर्दञ् ४ । ४ । १०४ ॥

पथि साधु पाथेयम् । आतिथेयम् । वसनं वसतिस्तत्र साधुर्वा-
सतेयी रात्रिः । स्वापतेयं धनम् ॥

सभाया यः ४ । ४ । १०५ ॥

सम्यः ॥

समानतीर्थेवासी ४ । ४ । १०७ ॥

साधुः इति निवृत्तम् । वसतीति वासी । समाने तीर्थे गुरौ वस-
तीति सतीर्थ्यः ॥

समानोदरे शयित ओ चोदात्तः ४ । ४ । १०८ ॥

समाने उदरे शयितः स्थितः समानोदर्यो भ्राता ॥

सोदराद्यः ४ । ४ । १०९ ॥

सोदर्यः । अर्थः प्राग्वत् ॥ इति प्राग्घृतीयाः ॥

प्राक् क्रीताच्छः ५ । १ । १ ॥

तेन क्रीतम् इत्यतः प्राक्छोऽधिक्रियते ॥

उगवादिभ्यो यत् ५ । १ । २ ॥

प्राक् क्रीतादित्येव । उवर्णान्ताद्गवादिभ्यश्च यत् । छस्यापवादः ॥

तस्मै हितम् ५ । १ । ५ ॥

वत्सेभ्यो हितो वत्सीयो गोधुक् । शङ्खे हितं शङ्खव्यं दारु ।

गव्यम् । हविष्यम् ॥

शरीरावयवाद्यत् ५ । १ । ६ ॥

दन्त्यम् । कण्ठ्यम् ॥

नस्त्रासिकायाः ❀ ॥

नस्यम् । नाभ्यम् ॥

ये च तद्धिते ६ । १ । ६१ ॥

यादौ तद्धिते परे शिरःशब्दस्य शीर्षनादेशः । शीर्षण्यः ।

तद्धिते किम् । शिर इच्छति शिरस्यति ॥

वा केशेषु ❀ ॥

शीर्षण्याः शिरस्या वा केशाः ॥

अतिशीर्ष इति वाच्यम् ❀ ॥

अजादौ तद्धिते शिरसः शीर्षादेशः । स्थूलशिरस इदं स्थूल-

शीर्षम् ॥

खलयवमापतिलवृषपन्नणश्च ५ । १ । ७ ॥

खलाय हितं खल्यम् । यव्यम् । माष्यम् । तिल्यम् । वृष्यम् ।
ब्रह्मण्यम् । चाद्रथ्या ॥

अजाविभ्यां थ्यन् ५ । १ । ८ ॥

अजथ्या । यूथिः । अविथ्या ॥

आत्मन्विश्वजनभोगोत्तरपदात्वः ५ । १ । ९ ॥

आत्माध्वानौ खे ६ । ४ । १६९ ॥

एतौ खे प्रकृत्या । आत्मने हितमात्मनीनम् । विश्वजनीनम् ॥

कर्मधारयादेवेप्यते ॥

पष्ठीतत्पुरुषाद्बहुव्रीहेश्च छ एव । विश्वजनीयम् ॥

पञ्चजनादुपसंख्यानम् ❀ ॥

पञ्चजनीनम् ॥

सर्वजनादृञ् खश्च ❀ ॥

सार्वजनिकः सर्वजनीनः ॥

महाजनादृञ् ❀ ॥

माहाजनिकः । मातृभोगीणः । पितृभोगीणः । राजभोगीणः ॥

आचार्यादणत्वं च ❀ ॥

आचार्यभोगीणः ॥

सर्वपुरुषाभ्यां णठञो ५ । १ । १० ॥

सर्वाण्णो वेति वक्तव्यम् ❀ ॥

गर्वम्भे हितं मार्वं सर्वायम् ॥

पुरुषाद्बधविकारसमूहतेनकृतेषु ॥

माष्यनारप्रयोगात्तन्तयस्य दृढमध्ये निवेशः । पुरुषस्य बधः
पौरुषेयः । तस्येदम् इत्याणि प्राप्ते पुरुषस्य विकारः पौरुषेयः । प्राणि-
रजनादिभ्योऽत्र इत्यत्रि प्राप्ते सगृहेऽप्याणि प्राप्ते एकाग्निनोऽपि

परितः पौरुषेयवृता इव इति माघः । तेन कृते ग्रन्थेऽणि प्राप्ते अग्रन्थे
तु प्रासादादावप्राप्त एवेति विवेकः ॥ छयतोः पूर्णोऽवधिः ॥
इति १४४ अंशाः ।

प्राग्वतेष्टञ् ५ । १ । १८ ॥

तेन तुल्यम् इति वृत्तिं वक्ष्यति ततः प्राक् ठजधिक्रियते ॥

आर्हादगोपुच्छसंख्यापरिमाणाट्टक् ५ । १ । १९ ॥

तदर्हति इत्येतदभिव्याप्य ठजधिकारमध्ये ठजोऽपवादपृगाधिक्रि-
यते गोपुच्छादीन् वर्जयित्वा ॥

असमासे निष्कादिभ्यः ५ । १ । २० ॥

आर्हात् इत्येतत् तेन क्रीतम् इति यावत्सप्तदशसंख्यामनुवर्तते ।
निष्कादिभ्योऽसमासे ठक् आर्हायेष्वर्थेषु । नैष्किकम् । समासे
तु ठञ् ॥

परिमाणान्तस्याऽसंज्ञाशाणयोः ७ । ३ । १७ ॥

उत्तरपदवृद्धिः जिदादौ । परमनैष्किकः । असंज्ञा इति किम् ।
पञ्च कलापाः परिमाणमस्य पाञ्चकलापिकम् । तदस्य परिमाणम् ।
इति ठञ् । असमासग्रहणं ज्ञापकं भवति इत्यतः प्राक्तदन्तविधिः
इति । तेन सुगव्यम् यवापूप्यमित्यादि ॥

इत ऊर्ध्वं तु संख्यापूर्वपदानां तदन्तग्रहणं प्राग्वते-
रिप्यते तच्चालुकि ॥

पारायणिकः । द्वैपारायणिकः । अलुकि इति किम् । द्वाभ्यां
शूर्पाभ्यां क्रीतं द्विशूर्पम् । द्विशूर्पेण क्रीते शूर्पादञ् मा भूत् किंतु
ठञ् । द्विशौर्पिकम् ॥

शताच्च ठन्यतावशते ५ । १ । २१ ॥

शतेन क्रीतं शतिकं शत्यम् । अशते किम् । शतं परिमाणमस्य
शतकः संघः । इह प्रत्ययार्थो वस्तुतः प्रकृत्यर्थान्न भिद्यते । तेन
ठन्यतो न किंतु कनेव । असमासे इत्येव । द्विशतेन क्रीतं द्विशतकम् ॥

संख्याया अतिशदन्तायाः कन् ५ । १ । २२ ॥

संख्यायाः कन् आर्हयेज्ये न तु त्यन्तशदन्तायाः । पञ्चमिः
क्रीतः पञ्चकः बहुकः । त्यन्तायास्तु साप्ततिकः । अदन्तायाः चा-
त्वारिंशत्कः ॥

वतोरिडा ५ । १ । २३ ॥

वत्त्वन्तात्कन् इडा । तावतिकः तावत्कः ॥

विंशतित्रिंशद्भ्यां पुन्रसंज्ञायाम् ५ । १ । २४ ॥

योगविभागः कर्तव्यः । आभ्या कन् । असंज्ञायां तु पुन्रकनोऽ-
पवादः । विंशकः । त्रिंशकः । संज्ञायां तु विंशतिकः । त्रिंशतिकः ॥

शतमानविंशतिकसहस्रवसनादण् ५ । १ । २७ ॥

एभ्योऽण् । ठञ्ठक्कनामपवादः । शतमानेन क्रीतं शतमानम् ।
विंशतिकम् । साहस्रम् । वासनम् ॥

अध्यर्धपूर्वाद्विगोर्लुगसंज्ञायाम् ५ । १ । २८ ॥

अध्यर्धपूर्वाद्विगोश्च परस्परार्हयस्य लृक् । अध्यर्धकंसम् । द्विकं-
सम् । संज्ञायां तु पाञ्चकलापिकम् ॥

विभाषा कार्पापणसहस्राभ्याम् ५ । १ । २९ ॥

लुग्वा । अध्यर्धकार्पापणम् । अध्यर्धकार्पापणिकम् । द्विकार्पा-
पणम् । द्विकार्पापणिकम् । औपसंख्यानिकस्य टिटनो लृक् । प-
क्षेऽध्यर्धप्रणिकम् । द्विप्रतिकम् । अध्यर्धसहस्रम् । अध्यर्धसाहस्रम् ।
द्विसहस्रं । द्विसाहस्रम् । इह ठञ्वादयस्त्रयोदश प्रत्ययाः प्रकृता-
स्तेषां समर्थविभक्तयोऽर्थाश्चाकाङ्क्षितास्त इदानीमुच्यन्ते ॥

तेन क्रीतम् ५ । १ । ३७ ॥

ठञ् । गोपुच्छेन क्रीतं गौपुच्छिकम् । साप्ततिकम् । प्रास्थि-
कम् । ठक् । नैष्ठिकम् ॥

तस्य निमित्तं संयोगोत्पातौ ५ । १ । ३८ ॥

संयोगः संबन्धः उत्पातः । शुमाशुमसचकः । शतिकः शत्यो

वा । धनपतिसंयोगः शतं शतिकम् । दक्षिणाक्षिस्पन्दनं शतरय
निमित्तमित्यर्थः ॥

वातपित्तश्लेष्मभ्यः शमनकोपनयोरुपसंख्यानम् ॥

वातस्य शमनं कोपनं वा वातिकम् । पित्तिकम् । श्लेष्मिणम् ॥

संनिपाताच्चेति वक्तव्यम् ॥

संनिपातिकम् ॥

गोद्वयोऽसंख्यापरिमाणाश्चादेर्यत् ५ । १ । ३९ ॥

गोर्निमित्तं संयोग उत्पातो वा गव्यः । द्यवः । ध यः ।
यशस्यः । स्वर्ग्यः । गोद्वयः किम् । विजयस्य वैजयिकः । असं-
ख्या इत्यादि किम् । पञ्चानाम् । पञ्चकम् । सप्तकम् । प्रास्थिकम् ।
खारीकम् । अश्वादि । आश्विकम् । आशिमकम् ॥

ब्रह्मवर्चसादुपसंख्यानम् ॥

ब्रह्मवर्चस्यम् ॥

पुत्राच्छ च ५ । १ । ४० ॥

चायत् । पुत्रीयः पुत्र्यः ॥

सर्वभूमिपृथिवीभ्यामणभौ ५ । १ । ४१ ॥

सर्वभूमेर्निमित्तं संयोग उत्पातो वा सार्वभौमः पार्थिवः । सर्व-
भूमिशब्दोऽनुशक्तिकादिषु पठ्यते ॥

तस्येश्वरः ५ । १ । ४२ ॥

तत्र विदित इति च ५ । १ । ४३ ॥

सर्वभूमेरीश्वरः सर्वभूमौ विदितो वा सार्वभौमः पार्थिवः ॥

लोकसर्वलोकाद्वज्र ५ । १ । ४४ ॥

तत्र विदितः इत्यर्थः । लौकिकः । अनुशक्तिकादित्वादुभयपद-
वृद्धिः । सार्वलौकिकः ॥

तस्य वापः ५ । १ । ४५ ॥

उप्यतेऽस्मिन्निति वापः क्षेत्रम् । प्रस्थस्य वापः प्रास्थिकम् ।
द्वौणिकं । खारीकम् ॥

तदस्मिन्वृद्ध्यायलाभशुल्कोपदा दीयते ५।१।४७ ॥

वृद्धिर्दीयत इत्यादि क्रमेण प्रत्येकं संबंधादेकवचनम् । पञ्चा-
स्मिन् वृद्धिः । आयः । लाभः । शुल्कम् । उपदा वा । दीयते ।
पञ्चकः । शतिकः । शत्यः । साहस्रः । उत्तमर्णेन मूलातिरिक्तं
ग्राह्यं वृद्धिः । ग्रामादिषु स्वाभिग्राह्यो भाग आयः । विक्रेत्रा मूल्याद-
धिकं ग्राह्यं लाभः । रक्षानिवेशो राजभागः शुल्कः । उत्कोच उपदा ॥

चतुर्थ्यर्थ उपसंख्यानम् ❀ ॥

पञ्चास्मै वृद्ध्यादिर्दीयते पञ्चको देवदत्तः । सममब्राह्मणे
दानम् इतिवदधिकरणत्वविवक्षा वा ॥

तदस्य परिमाणम् ५।१।५७ ॥

प्रस्थं परिमाणमस्य प्रास्थिको राशिः ॥

संख्यायाः संज्ञासंघसूत्राध्ययनेषु ५।१।५८ ॥

पूर्वसूत्रमनुवर्तते ॥

तत्र संज्ञायां स्वार्थे प्रत्ययो वाच्यः ❀ ॥

यद्वा द्वेकयोरिति वत्संख्यामात्रवृत्तेः परिमाणानि प्रत्ययः ।
पञ्चैव पञ्चकाः शकुनयः । पञ्च परिमाणमेषामिति वा संघे पञ्चकः ।
सूत्रेऽष्टकं पाणिनीयम् । संघशब्दस्य प्राणिसमूहे रुढत्वात्सूत्रं
पृथगुपात्तम् । पञ्चकमध्ययनम् ॥

इति १४५ अंशाः ।

स्तोमे ङविधिः ❀ ॥

पञ्चदश मन्त्राः परिमाणमस्य पञ्चदशः । सप्तदशः । एक-
विंशः । सोमयागेषु छन्दोगैः क्रियमाणा पृष्ट्यादिसंज्ञिका । स्तुतिः
स्तोमः ॥

पङ्क्तिर्विंशतित्रिंशच्चत्वारिंशत्पञ्चाशत्पष्टिसप्तत्यशी-
तिनवतिशतम् ५ । १ । ५९ ॥

एते रूढिशब्दा निपात्यन्ते ॥

तदर्हति ५ । १ । ६३ ॥

लब्धुं योग्यो भवतीत्यर्थे द्वितीयान्ताढ्यादयः । श्वेतच्छत्रम-
र्हति श्वेतच्छत्रिकः ॥

शीर्षच्छेदाद्यच्च ५ । १ । ६५ ॥

शिरश्छेदं नित्यमर्हति शीर्षच्छेद्यः शीर्षच्छेदिकः । यट्कोः
सन्नियोगेन शिरसः शीर्षभावो निपात्यते ॥

दण्डादिभ्यो यत् ५ । १ । ६६ ॥

एभ्यो यत् । दण्डमर्हति दण्डचः । अर्घ्यः । बध्यः ॥

कडङ्करदक्षिणाच्छ च ५ । १ । ६९ ॥

चाद्यत् । कडं करोतीति विग्रहेऽत एव निपातनात्त्वच् । कडंकरं
मापमुद्रादिकाष्टमर्हतीति कडंकारीयो गौः कडंकर्यः । दक्षिणाम-
र्हतीति दक्षिणीयः दक्षिण्यः ॥

यज्ञर्त्विग्भ्यां घस्रभौ ५ । १ । ७१ ॥

यथासंख्यम् । यज्ञमृत्विजं वार्हति यज्ञियः । आर्त्विजीनो यजमानः ॥

यज्ञर्त्विग्भ्यां तत्कर्मार्हतीत्युपसंख्यानम् ❀ ॥

यज्ञियो देशः । आर्त्विजीन ऋत्विक् ॥ इत्यार्होपाः ॥ अतः
परं ठञेव ॥

पारायणतुरायणचान्द्रायणं वर्तयति ५ । १ । ७२ ॥

पारायणं वर्तयति पारायणिकश्छात्रः । तुरायणं यज्ञविशेषः ।
तं वर्तयति तोरायणिको यजमानः । चान्द्रायणिकः ॥

संशयमापन्नः ५ । १ । ७३ ॥

संशयविषयीभूतोऽर्थः साशयिकः ॥

पथः पञ्च ५ । १ । ७५ ॥

पो हीपर्यः । पन्थानं गच्छति पथिकः पथिकी ॥

पन्थोण नित्यम् ५ । १ । ७६ ॥

पन्थानं नित्यं गच्छति पान्यः पान्या ॥

कालात् ५ । १ । ७८ ॥

व्युष्टादिभ्योऽण् इत्यतः प्रागाधिकारोऽयम् ॥

तेन निर्वृत्तम् ५ । १ । ७९ ॥

अत्रा निर्वृत्तमादिकम् ॥

तमधीष्टो भूतो भूतो भावी ५ । १ । ८० ॥

अधीष्टः सत्कृत्य व्यापारितः । भूतो वे

स्वसत्तया व्याप्तकालः । भावी तादृश ए

मधीष्टो मासिकोऽध्यापकः । मासं

मासं भूतो मासिको व्याधिः । प

पट्टिकाः पट्टिरात्रेण निषु ५ । १ । ८१ ॥

बहुवचनमतन्त्रम् । प

राप्रगन्दलोपश्च निपात्येवो वाच्यन्ते ५ । १ । ८२ ॥

तत्र च दीयते कालात्रष्टोको धान्यविशेषः । द

प्रावृषि दीयते कार्ये पति ॥

धिकारः ॥

तस्मै प्रभवति सा ५ । १ । ८३ ॥

संतापाय प्रभवति सां

योगाद्यच्च ५ । १ । तापादिभ्यः ५ । १ । ८४ ॥

चादृश् । योगाय प्रमवांापिकः । सांग्रामिकः ॥

कर्मण उकञ् ५ । १ । ८५ ॥

कर्मणे प्रभवति कार्मुकम् ॥

समयस्तदस्य प्राप्तम् ५ । १ । १०४ ॥

समयः प्राप्तोऽस्य सामयिकम् ॥

ऋतोरण् ५ । १ । १०५ ॥

ऋतुः प्राप्तोऽस्य आर्तवम् ॥

उपवस्त्रादिभ्य उपसंख्यानम् ❀ ॥

उपवस्ता प्राप्तोऽस्य औपवस्त्रम् । प्राशिता प्राप्तोऽस्य प्राशित्रम् ॥

कालाद्यत् ५ । १ । १०७ ॥

कालः प्राप्तोऽस्य काल्यं शीतम् ॥

प्रयोजनम् ५ । १ । १०९ ॥

तदस्य इत्येव । इन्द्रमहः प्रयोजनमस्य ऐन्द्रमहिकम् । प्रयोजनं
फलं कारणं च ॥

ऐकागारिकद् चोरे ५ । १ । ११३ ॥

एकमसहायमगारं प्रयोजनमस्य मुमुषिपोः स ऐकागारिकश्चौरः ॥

आकालिकडाद्यन्तवचने ५ । १ । १११ ॥

समानकालावाद्यन्तौ यस्येत्याकालिकः । समानकालस्याकाल
आदेशः । आशु विनाशीत्यर्थः । पूर्वदिने मध्याह्नादादुत्पद्य दि-
नान्तरे तत्रैव नश्वर इति वा ॥

आकालाद्वंश्च ❀ ॥

आकालिका विद्युत् ॥ इति ठञधिकारः ॥

तेन तुल्यं क्रिया चेद्वतिः ५ । १ । ११५ ॥

ब्राह्मणेन तुल्यं ब्राह्मणवदधीते । क्रिया चेत् इति किम् । गुण-
तुल्ये मा भूत् । पुत्रेण तुल्यः स्थूलः ॥

तत्र तस्येव ५ । १ । ११६ ॥

मथुरायामिव मथुरावत्सुधे प्राकारः । चैत्रस्येव चैत्रवन्मैत्रस्य
गावः ॥

तदर्हम् ५ । १ । ११७ ॥

विधिमर्हति विधिवत्पूज्यते । क्रियाग्रहणं मण्डूकप्लुत्यानुवर्तते
तेनेह न । राजानमर्हति छत्रम् ॥

तस्यभावस्त्वतलौ ५ । १ । ११९ ॥

प्रकृतिजन्यबोधे प्रकारो भावः । गोर्भावो गोत्वं गोता । त्वान्तं
ह्रीवम् । तलन्तं स्त्रियाम् ॥

आ च त्वात् ५ । १ । १२० ॥

ब्रह्मणस्त्व इत्यतः प्राक्त्वतलावधिक्रियेते । अपवादैः सह समा-
वेशार्थं गुणवचनादिभ्यः कर्मणि विधानार्थं चेदम् । चकारो नञ्स्न-
ञ्भ्यामपि समावेशार्थः । स्त्रिया भावः स्त्रीणं स्त्रीत्वं स्त्रीता ।
पौंसं पुंस्त्वं पुंस्ता ॥

न नञ्पूर्वात्तत्पुरुषादचतुरसंगतलवणवट्युधकतरसल-
सेभ्यः ५ । १ । १२१ ॥

इतः परं ये भावप्रत्ययास्ते नञ्त्तत्पुरुषान्न चतुरादीन् वर्जयि-
त्वा । अपतित्वम् । अपटुत्वम् । नञ्पूर्वात् किम् । बार्हस्पत्यम् । त-
त्पुरुषात् किम् । नास्य पटवः सन्वीत्यपटुस्तस्य भाव आपटवम् ।
अत्रतुर इति किम् । आचतुर्यम् । आसंगत्यम् । आलवण्यम् ।
आवट्यम् । आयुध्यम् । आकत्यम् । आरस्यम् । आलस्यम् ॥

पृथ्वादिभ्य इमनिज्वा ५ । १ । १२२ ॥

वावचनमणादिसमावेशार्थम् ॥

र ऋतो हलादेर्लघोः ६ । ४ । १६१ ॥

हलादेर्लघोर्ऋकास्त्रय रः इष्टमेयस्सु ॥

टेः ६ । ४ । १६५ ॥

भस्य टेलोपः इष्टमेयस्सु । पृथोर्भावः प्रथिमा पार्थवम् । अदि-
मा भार्दवम् ॥

वृर्णट्टादिभ्यः ण्यञ्च ५ । १ । १२३ ॥

चादिमनिच । शौक्ल्यं शुद्धिमा । दाढ्यम् । पृथुमृदुभृगुकृश-
दृढपरिवृढानमेव रत्वम् । दृढिमा । पो ङीपर्यः । औचिती ।
याथाकामी ॥

इति १४६ अंशः ।

गुणवचनब्राह्मणादिभ्यः कर्मणि च ॥

चाद्भावे । जडस्य कर्म भावो वा जाड्यम् । मूढस्य भारः
कर्म वा मौढ्यम् । ब्राह्मण्यम् ॥

अर्हतो जुम् च ❀ ॥

अर्हतो भावः कर्म वा आर्हन्त्यम् आर्हन्ती । ब्राह्मणादिराकृ-
तिगणः ॥

यथातथयापुरयोः पर्यायेण ७ । ३ । ३१ ॥

नञः परयोरेतयोः पूर्वोत्तरपदयोः पर्यायेणादेरचो वृद्धिर्निदा-
दौ । अयथातथाभाव आयथातथ्यं अयथातथ्यम् । आयथापुर्य
अयथापुर्यम् । आपादसमाप्तेर्भाविककर्माधिकारः ॥

चतुर्वर्णादीनां स्वार्थ उपसंख्यानम् ❀ ॥

चत्वारो वर्णाश्चातुर्वर्ण्यम् । चातुराश्रम्यम् । त्रैस्वर्यम् । पाद्गु-
ण्यम् । सैन्यम् । सान्निध्यम् । सामीप्यम् । आप्म्यम् । त्रिलोक्य-
मित्यादि । सर्वे वेदाः सर्ववेदास्तानधीते सर्ववेदः । सर्वादेः इति
लुक् । स एव सर्ववेद्यः ॥

चतुर्वेदस्योभयपदवृद्धिश्च ❀ ॥

चतुरो वेदानधीते चतुर्वेदः स एव चातुर्वेद्यः । चतुर्विद्यस्य इ-
ति पाठान्तरम् । चतुर्विद्य एव चातुर्वेद्यः ॥

स्तेनाद्यन्न लोपश्च ५ । १ । १२५ ॥

न इति संघातग्रहणम् । स्तेनचौर्ये पचाद्यच् । स्तेनस्य भावः
कर्म वा स्तेयम् । स्तेनात् इति योगं विभज्य स्तैन्यमिति ध्वज-
न्तमपि केनिदिच्छन्ति ॥

सख्युर्थः ५ । १ । १२६ ॥

सख्युर्भावः कर्म वा सख्यम् ॥

दूतवणिग्भ्यां च ❀ ॥

दूतस्य भावः कर्म वा दूत्यम् । वणिज्यम् इति काशिका ।
माधवस्तु वणिज्याशब्दः स्वभावात्स्त्रीलिङ्गः भाव एव चात्र प्रत्ययो
नतु कर्मणि इत्याह । भाष्ये तु दूतवणिग्भ्या च इति नास्त्येव ।
ब्राह्मणादित्वाद्वाणिज्यमपि ॥

कपिज्ञात्योर्ढक् ५ । १ । १२७ ॥

कापेयम् । ज्ञातेयम् ॥

पत्यन्तपुरोहितादिभ्यो यक् ५ । १ । १२८ ॥

सेनापत्यम् । पौरोहित्यम् ॥

राजाऽसे ❀ ॥

राजशब्दोऽसमासे यकं लभत इत्यर्थः । राज्ञो भावः कर्म वा
राज्यम् । समासे तु ब्राह्मणादित्वात्प्यञ् । आधिराज्यम् ॥

प्राणभृजातिवयोवचनोद्गात्रादिभ्योऽञ् ५ । १ । १२९ ॥

प्राणभृजातिः । आश्वम् । औष्ट्रम् । वयोवचनम् । कौमारम् ।
केशोरम् । औद्गात्रम् । औन्नेत्रम् । सौष्ट्रम् । दौष्ट्रम् ॥

हायनान्तयुवादिभ्योऽण् ५ । १ । १३० ॥

वैहायनम् । प्रेहायनम् । यौवनम् । स्थाविरम् ॥

श्रोत्रियस्य यलोपश्च ❀ ॥

श्रीत्रम् । कुशलचपलनिपुणपिशुनकुतूहलक्षेत्रज्ञा युवादिषु ब्रा-
ह्मणादिषु च पठ्यन्ते । कौशल्यं कौशलमित्यादि ॥

इगन्ताच्च लघुपूर्वात् ५ । १ । १३१ ॥

श्वेर्भावः कर्म वा शौर्वम् । मौनम् । कथं काव्यम् । कविशब्दस्य

१ १ २ ॥

मोपधाद्गुरुपोत्तमादुञ् ५ । १ । १३२ ॥

रामणीयकम् । आभिधानीयकम् ॥

सहायाद्वा ❀ ॥

साहाय्यं साहायकम् ॥

द्वन्द्वमनोज्ञादिभ्यश्च ५ । १ । १३३ ॥

शैष्योपाध्यायिका । मानोज्ञकम् ॥

गोत्रचरणाच्छ्लाघात्याकारतद्वेतेषु ५ । १ । १३४ ॥

अत्याकारोऽधिक्षेपः । तद्वेतस्ते गोत्रचरणयोर्भावकर्मणी
प्राप्तः अवगतवान्वा । गार्गिकया श्लाघते । गार्ग्यत्वेन विकृत्यत
इत्यर्थः । गार्गिकयात्याकुरुते । गार्गिकामवेतः॥

होत्राभ्यश्छः ५ । १ । १३५ ॥

होत्राशब्दोऽत्र ऋत्विग्वाची स्त्रीलिङ्गः । बहुवचनादिशेषग्रहणम् ।
अच्छावाकस्य भावः कर्म वा अच्छावाकीयम् । मैत्रावरुणीयम् ॥

ब्रह्मणस्त्वः ५ । १ । १३६ ॥

होत्रावाचिनो ब्रह्मशब्दात्त्वः । छस्यापवादः । ब्रह्मत्वं नेति वाच्ये
त्ववचनं तलो वाधनार्थम् । ब्राह्मणपर्यायाद्ब्रह्मञ्छब्दात्तु त्वतलो ।
ब्रह्मत्वं ब्रह्मता ॥ इति नञ्सन्धधिकारः ॥

धान्यानां भवने क्षेत्रे खञ् ५ । २ । १ ॥

भवन्त्यस्मिन्निति भवनम् । मुद्गानां भवनं क्षेत्रं मौद्गीनम् ॥

वीहिशाल्योर्ढक् ५ । २ । २ ॥

वैहेयम् । शालेयम् ॥

यवयवकपष्टिकाद्यत् ५ । २ । ३ ॥

यवानां भवनं क्षेत्रं यव्यं यवक्यम् । पष्टिक्यम् ॥

विभाषा तिलमापोमामङ्गाणुभ्यः ५ । २ । ४ ॥

यद्वा पक्षे खञ् । तिल्यं तैलीनम् । माप्यं मापीणम् । उम्यं
ओमीनम् । मङ्ग्यं माङ्गीनम् । अणव्यं आणवीनम् ॥

यथामुखसंमुखस्य दर्शनः खः ५ । २ । ६ ॥

मुखस्य सदृशं यथामुखं प्रतिविम्बम् । निपातनात्सादृश्येऽव्य-
यीभावः । समं सर्वं मुखं संमुखम् । समशब्दस्यान्तलोपो निपा-
त्यते । यथामुखं दर्शनो यथामुखीनः । सर्वस्य मुखस्य दर्शनः
संमुखीनः ॥

तत्सर्वादेः पथ्यङ्गकर्मपत्रपात्रं व्याप्नोति ५ । २ । ७ ॥

सर्वादेः पथ्याद्यन्ताद्वितीयान्तात्खः । सर्वपथान् व्याप्नोति
सर्वपथीनः । सर्वाङ्गीणः । सर्वकर्माणः । सर्वपत्रीणः । सर्वपात्रीणः ॥

आप्रपदं प्राप्नोति ५ । २ । ८ ॥

पादस्याग्रं प्रपदं तन्मर्यादीकृत्य आप्रपदम् । आप्रपदीनः पटः ॥

अनुपदसर्वाङ्गायानयं वद्धाभक्षयतिनेयेषु ५ । २ । ९ ॥

अनुरायामे सादृश्ये वा । अनुपदं वद्धा अनुपदीना उपानत् ।
सर्वाङ्गानि भक्षयति सर्वाङ्गीनो भिक्षुः । अयानयः स्थलविशेषः ।
तं नेयोऽयानयानः शारः ॥

परोवरपरंपरपुत्रपौत्रमनुभवति ५ । २ । १० ॥

पराश्चावराश्चानुभवतीति परोवरीणः । अवरस्योत्वं निपात्यते ।
पराश्च परतराश्चानुभवति परंपरीणः । प्रकृतेः परंपरभावो नि-
पात्यते । पुत्रपौत्राननुभवति पुत्रपौत्रीणः । परम्पराशब्दस्तु
अव्युत्पन्नं शब्दान्तरं स्त्रीलिङ्गं तस्मादेव स्वार्थे ष्यञि पारम्प-
र्यम् । क्वं पारो बर्यवादिति असाधुरेव । सप्रत्ययसंनियोगेनैव परो-
वंगति निपातनात् ॥

अवारपारात्यन्तानुकामंगामी ५ । २ । ११ ॥

अवारपारं गामी अवारपारीणः । अवारीणः । पारीणः । पारा-
वारीणः । अत्यन्तं गामी अत्यन्तीनः । भृशं गन्तेत्यर्थः । अनुकामं
गामी अनुकामीनः यथेष्टं गन्ता ॥

इति १४७ अंशाः ।

समांसमां विजायते ५ । २ । १२ ॥

यलोपोऽवशिष्टविभक्तलुरु च पूर्वपदे निपात्यते । समासमीना
गौ । समासमीना सार्यव प्रतिवर्ष प्रसूयते इत्यमरः ॥

खप्रत्ययानुन्पत्तौ यलोपो वा वक्तव्यः ॐ ॥

समासमा विजायते समाया समायां वा ॥

अद्यश्चीनावष्टब्धे ५ । २ । १३ ॥

अद्य श्चो वा विजायते अद्यश्चीना वडवा । आसन्नप्रमरेत्यर्थः ।
केचित्तु विजायत इति नानुवर्तयन्ति । अद्यश्चीनं मरणम् । आसन्न-
मित्यर्थः ॥

आगवीनः ५ । २ । १४ ॥

आङ्पूर्वाद्गोः कर्मकरे सप्रत्ययो निपात्यते । गोर्मत्यर्थणपर्यन्तं
यः कर्म करोति स आगवीनः ॥

अनुग्वलंगामी ५ । २ । १५ ॥

अनुगु गोः पश्चात्पर्याप्तं गच्छति अनुगवीनो गोपालः ॥

अध्वनोः यत्खौ ५ । २ । १६ ॥

अध्वानमलं गच्छति अध्वन्यः अध्वनीनः ॥

ये चाभावकर्मणोः ॥

आत्माध्वानौ खे इति सूत्राभ्या प्रकृतिभावः ॥

अभ्यमित्राच्छ च ५ । २ । १७ ॥

चाद्यत्खौ । अभ्यमित्रीयः अभ्यमिन्यः अभ्यमित्रीणः । अभि-
प्राभिमुखं सुप्तु गच्छतीत्यर्थः ॥

गोष्ठात्खभूतपूर्वे ५ । २ । १८ ॥

गोष्ठो भूतपूर्वः । गोष्ठीनो देगः ॥

अश्वस्यैकाहगमः ५ । २ । १९ ॥

एकाहेन गम्यत इत्येकाहगम आश्वीनोऽभ्या ॥

शालीनकौपीने अधृष्टाकार्ययोः ५ । २ । २० ॥

शालाश्वेषमर्हति शालीनोऽधृष्टः । कूपपतनमर्हति कौपीनं
पापम् । तत्साधनत्वाच्चद्रोष्यत्वात्पुरुषलिङ्गमपि तत्संबन्धात्तदा-
च्छादनमपि ॥

व्रातेन जीवति ५ । २ । २१ ॥

व्रातेन शरीरायासेन जीवति ननु बुद्धिर्वैभवेन स व्रातीनः ॥

साप्तपदीनं सख्यम् ५ । २ । २२ ॥

सप्तभिः पदैरवाप्यते साप्तपदीनम् ॥

हैयंगवीनं संज्ञायाम् ५ । २ । २३ ॥

ह्योगोदोहस्य ह्रियङ्गुनादेशो विकारार्थे स्वश्च निपात्यते । दुह्यत
इति दोहः क्षीरम् । ह्योगोदोहस्य विकारो हैयङ्गवीनं नवनीतम् ॥

तस्य पाकमूले पीलवादिकर्णादिभ्यः कुणब्जाहचौ
५ । २ । २४ ॥

पीलनां पाकः पीलुकुणः । कर्णस्य मूलं कर्णजाइम् ॥

पक्षत्तिः ५ । २ । २५ ॥

मूलग्रहणमात्रमनुवर्तते । पक्षस्य मूलं पक्षत्तिः ॥

तेन वित्तश्चुष्युप्रचणपौ ५ । २ । २६ ॥

यकारः प्रत्यययोरौ लुप्तनिर्दिष्टेन चस्य नेत्संज्ञा । विद्यया
वित्तो विद्यश्चुषुः विद्याचणः ॥

विनभ्यां नानाभौ न सह ५ । २ । २७ ॥

असदार्थे पृथग्भावे वर्तमानाभ्यां स्वार्थे प्रत्ययौ । विना । नाना ॥

वेः शालच्छङ्कटचौ ५ । २ । २८ ॥

क्रियाविशिष्टसाधनवार्धकात् स्वार्थे । विस्मृतम् । विशालम् ।
विशङ्कटम् ॥

संप्रोदश्च कटच् ५ । २ । २९ ॥

संकटम् । प्रकटम् । उत्कटम् ॥

अलावूतिलोमाभङ्गाभ्यो रजस्युपसंख्यानम् ❀ ॥

अलावूनां रजः अलावूकटम् ॥

गोष्ठजादयः स्थानादिषु पशुनामभ्यः ❀ ॥

गवां स्थानं गोगोष्ठम् ॥

संपाते कटञ्च ॥

अवीनां संधातोऽविकटः ॥

विस्तारे पटञ्च ❀ ॥

अविपटः ॥

द्वित्वे गोयुगञ्च ❀ ॥

द्वाष्टुष्टौ ऽग्रगोयुगम् ॥

पट्वे पङ्गवञ्च ❀ ॥

अश्वपङ्गवम् ॥

स्नेहे तैलञ्च ❀ ॥

तिलतैलम् । सर्पतैलम् ॥

भवने क्षेत्रे शाकटशाकिनौ ❀ ॥

इक्षुशाकटम् । इक्षुशाकिनम् ॥

अवात्कुटारञ्च ५ । २ । ३० ॥

चात्कटञ्च । अवाचीनोऽवकुटारः । अवकटः ॥

नते नासिकायाः संज्ञायां टीट्प्नाटज्ज्रटञ्चः ५ । २ । ३१ ॥

अवात् इत्येव । नतं नमनम् । नासिकाया नतं अवटीटम्

अवनाटम् अवभ्रटम् । तद्योगान्नासिकावटीटा । पुरुषोऽप्यवटीटः ॥

नेर्विडज्विरीसचौ ५ । २ । ३२ ॥

निविडम् । निविरीसम् ॥

इनच्छिपटञ्चिकचि च ५ । २ । ३३ ॥

नेः इत्येव । नासिकाया नतेऽभिधेये इनच्छिपटचौ प्रत्ययौ प्रकृ-
तेश्चिकचीत्यादेशौ च ॥

कप्रत्ययचिकादेशौ च वक्तव्यौ ❀ ॥

चिकितम् । चिपिटम् । चिकम् ॥

क्लिन्नस्य चिल्पिलश्चास्य चक्षुषी ❀ ॥

क्लिन्ने चक्षुषी अस्य चिलः । पिलः ॥

चुल् च ❀ ॥

चुलः ॥

उपाधिभ्यां त्यक्त्रासन्नाख्ययोः ५ । २ । ३४ ॥

संज्ञायाम् इत्यनुवर्तते । पर्वतस्यासन्नं स्थलमुपत्यका । आख्यं
स्थलमधित्यका ॥

कर्मणि घटोऽठत्र ५ । २ । ३५ ॥

घटत इति घटः । पचायच् । कर्मणि घटते कर्मठः पुरुषः ॥

तदस्य संजातं तारकादिभ्य इतच् ५ । २ । ३६ ॥

तारकाः संजाता अस्य तारकितं नमः । आकृतिगणोऽयम् ॥

प्रमाणे द्वयसद्द्वन्मात्रचः ५ । २ । ३७ ॥

तदस्य इत्यनुवर्तते । ऊरु प्रमाणमस्य ऊरुद्वयसम् ऊरुद्वन्मात्रम् ॥

प्रमाणे लः ❀ ॥

शमः । द्विष्टिः । त्रितस्त्रिः ॥

द्विगोर्नित्यम् ❀ ॥

इति शर्मा प्रमाणमस्य द्विशमम् ॥

प्रमाणपरिमाणाभ्यां संख्यायाश्चापि संज्ञाये मात्रज्व

२५ ❀ ॥

शममात्रम् । प्रम्यमात्रम् । पञ्चमात्रम् ॥

वत्त्वन्तात्स्वार्थे द्वयसज्मात्रचौ बहुलम् ॥

तावदेव तावद्द्वयसम् । तावन्मात्रम् ॥

पुरुषहस्तिभ्यामण्च ५ । २ । ३८ ॥

पुरुषः प्रमाणमस्य पौरुषं पुरुषद्वयसम् । हास्तिनं हस्तिद्वयसम् ॥

यत्तदेतेभ्यः परिमाणे वतुप् ५ । २ । ३९ ॥

यत्परिमाणमस्य यावान् । तावान् । एतावान् ॥

किमिदंभ्यां वोघः ५ । २ । ४० ॥

आभ्यां वतुप्स्यादस्य च घः । कियान् । इयान् ॥

किमः संख्यापरिमाणे डति च ५ । २ । ४१ ॥

चाद्वतुप् तस्य च वस्य घः । काः संख्या येषान्ते कति कियन्तः ॥

संख्याया अवयवे तयप् ॥

पञ्चतयम् ॥

द्वित्रिभ्यां तयस्यायज्वा ॥

द्वयं द्वियतम् । त्रयं त्रियतम् ॥

उभादुदात्तो नित्यम् ५ । २ । ४४ ॥

उभशब्दात्तयपोऽयच् स चाद्युदात्तः । उभयम् । वृत्तिविषये सर्वत्र नित्यम् । उभयसुखम् ॥

इति १४८ अंशाः ।

तदस्मिन्नधिकमिति दशान्ताडुः ५ । २ । ४५ ॥

एकादशाधिका अस्मिन्नेकादशं शतम् ॥

शतसहस्रयोरेवेप्यते ॥

नेह । एकादशाधिका अस्यां विंशतौ ॥

प्रकृतिप्रत्ययार्थयोः समानजातीयत्व एवेप्यते ॥

नेह । एकादश भाषा अधिका अस्मिन्सुवर्णशते ॥

अथ पूर्वखण्डोक्तसंख्यापूरणप्रकरणशेषः ॥

बहुपूगगणसंघस्य तिथ्युक् ५ । २ । ५२ ॥

इति पूगसंघयोरसंख्यात्वेऽप्यत एव इदं । बहुतिथ्य इत्यादि ॥

वथोरिथ्युक् ५ । २ । ५३ ॥

इति । यावत्तिथ्यः ॥

नित्यं शतादिमासार्धमाससंवत्सराच्च ५ । २ । ५७ ॥

शतस्य पूरणः शततमः । एकशततमः । मासादेरत एव इदं ।
मासतमः ॥

पष्ट्यादेश्वासंख्यादेः ५ । २ । ५८ ॥

पष्टितमः । संख्यादेस्तु विंशत्यादिभ्यः इति विकल्प एव ।
एकपष्टः एकपष्टितमः इति ॥

तत्र कुशलः पथः ५ । २ । ६३ ॥

बुन् । पथि कुशलः पथिकः ॥

स्वाङ्गेभ्यः प्रसिते ५ । २ । ६६ ॥

कन् केशेषु प्रसितः केशकः केशरचनातत्परः ॥

उदराट्टगाद्यूने ५ । २ । ६७ ॥

अविजिगीषौ ठक् । कनोऽपवादः । बुभुक्षयात्यन्तपीडित उदरे
प्रसित औदरिकः । आद्यूने किम् । उदरकः । उदरपरिमार्जनादौ
प्रसक्त इत्यर्थः ॥

तन्त्रादचिरापहते ५ । २ । ७० ॥

तन्त्रकः पटः । प्रत्यग्र इत्यर्थः ॥

ब्राह्मणकोष्णिके संज्ञायाम् ५ । २ । ७१ ॥

आयुधजीविनो ब्राह्मणा यस्मिन्देशे स ब्राह्मणकः । अल्पमन्त्रं
यस्यां सा उष्णिका यवागृः । अन्नशब्दस्योष्णादेशो निपात्यते ॥

शीतोष्णाभ्यां कारिणि ५ । २ । ७२ ॥

शीतं करोतीति शीतकोऽलसः । उष्णं करोतीत्युष्णकः शी-
घ्रकारी ॥

अधिकम् ५ । २ । ७३ ॥

अध्यालुशब्दात्कुत्तरपदलोपश्च ॥

अनुकाभिकाभीकः कमिता ५ । २ । ७४ ॥

अन्वभिभ्या कन्भेः पाक्षिको दीर्घश्च । अनुकामयते अनुकः ।
अभिकामयतेऽभिकः अमीकः ॥

पार्श्वेनान्विच्छति ५ । २ । ७५ ॥

अनृजुरुपायः पार्श्वं तेनान्विच्छति पार्श्वकः ॥

अयःशूलदण्डाजिनाभ्यां ठक्ठौ ५ । २ । ७६ ॥

तीक्ष्ण उपायोऽयःशूलं तेनान्विच्छति आयःशूलिकः साह-
सिकः । दण्डाजिनं दम्भः तेनान्विच्छति दाण्डाजिनिकः ॥

शृङ्खलमस्य बन्धनं करभे ५ । २ । ७७ ॥

शृङ्खलकः करभः ॥

उत्क उन्मनाः ५ । २ । ८० ॥

उद्वतमनस्कवृत्तेरुच्छब्दात्स्वार्थे कन् उत्कः उत्कण्ठितः ॥

कालप्रयोजनाद्रोगे ५ । २ । ८१ ॥

कालवचनात्प्रयोजनवचनाच्च कन् रोगे । द्वितीयेऽहनि भवो
द्वितीयको ज्वरः । प्रयोजनं कारणं रोगस्य फलं वा । विषपुष्पैर्ज-
नितो विषपुष्पकः । उष्णं कार्यमस्य उष्णकः । रोगे किम् ।
द्वितीयो दिवसोऽस्य ॥

श्रोत्रियंश्छन्दोऽधीते ५ । २ । ८४ ॥

श्रोत्रियः । वा इत्यनुवृत्तेश्छन्दसः ॥

थाद्धमनेन भुक्तमिनिठनौ ५ । २ । ८५ ॥

श्राद्धी श्राद्धिकः ॥

पूर्वादिनिः ५ । २ । ८६ ॥

पूर्व कृतमनेन पूर्वी ॥

सपूर्वाच्च ५।२।८७॥

कृतपूर्वी ॥

इष्टादिभ्यश्च ५।२।८८ ॥

इष्टमनेन इष्टी । अधीती ॥

छन्दसि परिपन्थिपरिपरिणौ पर्यवस्थातरि५।२।८९॥

लोके तु परिपन्थिगन्दो न न्याय्यः ॥

अनुपद्यन्वेष्टा ५ । २ । ९० ॥

अनुपदमन्वेष्टा गवामनुपदी ॥

साक्षाद्वरि संज्ञायाम् ५।२।९१॥

साक्षाद्रष्टा साक्षी ॥

क्षेत्रियत्र परक्षेत्रे चिकित्स्यः ५।२।९२॥

क्षेत्रियो व्याधिः । शरीरान्तरे चिकित्स्यः अप्रतिकार्य इत्यर्थः॥

इन्द्रियमिन्द्रलिङ्गमिन्द्रहृष्टमिन्द्रसृष्टमिन्द्रजुष्टमिन्द्र-
दत्तमिति वा ५।२।९३ ॥

इन्द्र आत्मा तस्य लिङ्गं करणेन कर्तुः अनुमानात् । इति शब्दः प्रकारार्थः । इन्द्रेण दुर्जयामिन्द्रियम् ॥

अथ मत्वर्थीयप्रकरणशेषः । भूमनिन्दाप्रशंसासु नित्ययोगेऽ-
तिशयने सम्बन्धेऽस्ति विवक्षायां भवन्ति मतुवादयः ॥ अस्ति वि-
वक्षायां ये मतुवादयो विधीयन्ते ते भूमादिषु विषयेषु भवन्तीति
वार्तिकार्थः । भृन्नि-गोमात्र । यवमान् । निन्दायाम्-ककुदावर्तिनी
कन्या । प्रशंसा-रूपवान् । नित्ययोगे क्षीरिणो वृक्षाः । अति-
॥ ५५ ॥ उदरणी कन्या । संसर्गे । दण्डी-संसर्गः संयोगः तेन

दण्डीति संयुक्त दण्ड एवोच्यते नतु गृहावस्थितदंडोऽपि । वसोः
सम्प्रसारणम् । विदुष्पान् । तसौ मत्वर्थे इति मत्वम् ॥

गुणवचनेभ्यो मतुपो लुगिष्टः ❀ ॥

शुक्रो गुणोऽस्यास्तीति शुक्रः पटः । कृष्णः ॥

संज्ञायाम् ८ । २ । ११ ॥

मतोर्मस्य वः । अहीवती । मुनीवती । शरादीनां च इति दीर्घः ॥

आसन्दीवदष्टीवच्चक्रीवत्कक्षीवद्रुमण्वच्चर्मण्वती ८ । २ । १२

एते पद संज्ञायां निपात्यन्ते । आसनशब्दस्यासन्दीभावः ।
आसन्दीवान् ग्रामः । अन्यत्रासनवान् । अस्थिशब्दस्याष्टीभावः ।
अष्टीवान् । अस्थिमानन्यत्र । चक्रशब्दस्य चक्रीभावः । चक्री-
वान्नाम राजा । चक्रवानन्यत्र । कक्ष्यायाः संप्रसारणम् । कक्षीवा-
न्नामर्षिः । कक्ष्यावानन्यत्र । लवणशब्दस्य रुमणभावः । रुमण्वान्नाम
पर्वतः । लवणवानन्यत्र । चर्मणो नलोपाभावोणत्वं च । चर्मण्वती
नाम नदी । चर्मवत्यन्यत्र ॥

उदन्वानुदधौ च ८ । २ । १३ ॥

उदकस्योदन्भावो मतानुदधौ संज्ञायां च । उदन्वान्तमुद्र
ऋषिश्च ॥

राजन्वान्सौराज्ये ८ । २ । १४ ॥

राजन्वती भृः । राजवानन्यत्र ॥

इति १४९ अंशः ।

सिध्मादिभ्यश्च ५ । २ । १७ ॥

लज्वा । सिध्मलः सिध्मवान् । अन्यतरस्यां ग्रहणं मतुप्समुच्च-
यार्थं नतु प्रत्ययविकल्पार्थम् । तेनाकारान्तेभ्य इनिठनौ न ॥

वातदन्तवलललाटगलानामूढ च ❀ ॥

वातूलः ॥

अर्णवः ॥

गाण्ड्यजगात्संज्ञायाम् ५ । २ । ११० ॥

ह्रस्वदीर्घयोर्यणा तन्त्रेण निर्देशः । गाण्ड्यम् । गाण्डीवमर्जु-
नस्य धनुः । अजगवं पिनाकः ॥

काण्डाण्डादीरन्नीरचौ ५ । २ । १११ ॥

काण्डीरः । आण्डीरः ॥

रजःकृष्यासुतिपरिपदो बलच् ५ । २ । ११२ ॥

रजस्वला स्त्री । कृषीबलः । बले इति दीर्घः । आसुतीबलः ।
शौण्डिकः । परिपद्वलः । पर्पत् इति पाठान्तरम् । पर्पद्वलम् ॥

अन्येभ्योऽपि दृश्यते ॥

भ्रातृबलः । शत्रुबलः । बले इत्यत्र संज्ञायाम् इत्यनुवृत्तेर्नह दीर्घः ॥

दन्तशिखात्संज्ञायाम् ५ । २ । ११३ ॥

दन्ताबलो हस्ती । शिखाबलः केकी ॥

ज्योत्स्नातमिस्राशृङ्गिणोर्जस्विभूर्जस्वलगोमिन्मलिन-
मलीमसाः ५ । २ । ११४ ॥

मत्वर्थे निपात्यन्ते । ज्योतिष उपधालोपो नश्च प्रत्ययः । ज्यो-
त्स्ना । तमस उपधाया इत्वं रथः । तमिस्रा । स्त्रीत्वमतन्त्रम् । तमि-
न्मम् । शृङ्गादिनच् । शृङ्गिणः । ऊर्जसो बलच् । तेन बाधा मा भू-
दिति विनिरपि । ऊर्जस्वी ऊर्जस्वलः । ऊर्जोऽमुगम् इति वृत्तिस्तु
चिन्त्या । ऊर्जस्वती इति वदसुब्रन्तेनैवोपपत्तेः । गोशब्दान्मिनिः ।
गोमा । मलशब्दादिनच् । मलिनः । ईमसश्च । मलीमसः ॥

अत इनिठनौ ५ । २ । ११५ ॥

दण्डी दण्डिकः । एकस्वरात् कृतो जातेः मसम्याञ्च न तौ स्मृ-
तौ । एकाक्षरात्-स्वान् । कृतः-काग्वान् । जातेः-ज्याघ्रवान् ।
समस्यां-दण्डोऽस्त्यस्या सा दण्डवती शाला । कचित्कृतो जाते-
श्चापि भवति । कार्पी कार्पिकः । तण्डली तण्डुलिकः ॥

ब्रीह्यादिभ्यश्च ५ । २ । ११६ ॥

ब्रीही ब्रीहिकः । नच सर्वेभ्यो ब्रीह्यादिभ्य इतिठनापिप्येते । किं तर्हि शिखामालासंज्ञादिभ्य इतिः । यवखदादिभ्य इकः । अन्येभ्य उभयम् ॥

तुन्दादिभ्य इलच् ५ । २ । ११७ ॥

घादिनिठनौ मतुप् च । तुन्दिलः तुन्दी तुन्दिकः तुन्दवान् । उदारपिचण्डयवब्रीहि ॥

स्वाङ्गाद्विवृद्धौ ॥

विवृधुपाधिकात्स्वाङ्गवाचिन इलजादयः । विवृद्धौ कर्णौ यस्य स कर्णिलः कर्णौ कर्णिकः कर्णवान् ॥

रूपादाहतप्रशंसयोर्यप् ५ । २ । १२० ॥

आहतं रूपमस्यास्तीति रूप्यः कार्पापणः । प्रशस्तं रूपमस्यास्तीति रूप्यो गौः । आहत इति किम् । रूपवान् ॥

अन्येभ्योऽपि दृश्यते ॥

हिम्याः पर्वताः । गुण्या ब्राह्मणाः । अस्मायेति विनिः फिन्न-न्तत्वात्कुः । सग्वी ॥

आमयस्योपसंख्यानं दीर्घश्च ॥

आमयावी ॥

शृङ्गवृन्दाभ्यामारकन् ॥

शृङ्गारकः । वृन्दारकः ॥

फलवर्हाभ्यामिनच् ॥

फलिनः । वर्हिणः ॥

हृदयाच्चालुरन्यतरस्याम् ॥

इतिठनौ मतुप् च । हृदयालुः हृदयी हृदयिकः हृदयवान् ॥

इति १५० अंशाः । इति चतुर्थोऽध्यायस्य तृतीयः पादः ।

शीतोष्णतृप्रेभ्यस्तदसहने ❀ ॥

शीतं न सहते शीतालुः । उष्णालुः । स्फायितश्चि इति रक् ।
तृपः पुरोडाशः । तं न सहते तृपालुः । तृपं दुःखम् इति माधवः ॥

हिमाच्चैलुः ❀ ॥

हिमं न सहते हिमेलुः ॥

वलादूलः ❀ ॥

वलं न सहते वलूलः ॥

वातात् समूहे च ❀ ॥

वातं न सहते वातस्य समूहो वा वातूलः ॥

तप्पर्वमरुद्व्याम् ❀ ॥

पर्वतः । मरुतः ॥

ऊर्णाया युम् ५ । २ । १२३ ॥

सित्वात्पदत्वम् । ऊर्णायुः । अत्र छन्दसि इति केचिदनुवर्तयन्ति ।
पुक्तं चैतत् । अन्यथा हि अहंशुभमोः इत्यत्रैवोर्णाग्रहणं कुर्यात् ॥

वाचो गिमनिः ५ । २ । १२४ ॥

वाग्मी गदयवान् ॥

आलजाटचौ बहुभापिणि ५ । २ । १२५ ॥

कुत्सित इति वक्तव्यम् । कुत्सितं बहु भाषते वाचालः वा-
चाटः । यस्तु सम्यग्बहु भाषते स वाग्मीत्येव ॥

स्वामिन्नैश्वर्ये ५ । २ । १२६ ॥

ऐश्वर्यवाचकात्स्वशब्दान्मत्वर्थे आम्निच् । स्वासी ॥

अर्शादिभ्योऽच् ५ । २ । १२७ ॥

अर्शास्यस्य विद्यन्ते अर्शासः । आकृतिगणोऽयम् ॥

द्वन्द्वोपतापगद्वात्प्राणिस्थादिनिः ५ । २ । १२८ ॥

द्वन्द्वः । कटक्वलपिनी । शङ्खरूपुरिणी । उपतापो रोगः ।

कुक्षी । किलासी । गर्ही निन्द्यम् । करुदावर्ती । काकतालुकी ।
प्राणिस्थात् किम् । पुष्पफलवान् घटः ॥

प्राण्यङ्गान्न ❀ ॥

पाणिपादवती । अतः इत्येव । चित्रकल्लाटिकावती । सिद्धे
प्रत्यये पुनर्वचनं ठनादिबाधनार्थम् ॥

वातातीसाराभ्यां कुक् च ५ । २ । १२९ ॥

चादिनिः । वातकी । अतीसारकी ॥

रोगे चायमिष्यते ❀ ॥

नेह वातवती गुहा ॥

पिशाचाच्च ॥

पिशाचकी ॥

वयसि पूरणात् ५ । २ । १३० ॥

पूरणप्रत्ययान्तान्मत्वर्थे इनिः वयसि चोत्पे । मासः संवत्सरो
वा पञ्चमोऽस्यास्तीति पञ्चम्युप् । ठन्वाधनार्थमिदम् । वयसि
किम् । पञ्चमवान् ग्रामः ॥

सुखादिभ्यश्च ५ । २ । १३१ ॥

इनिर्मत्वर्थे । सुखी । दुःखी ॥

मालाक्षेपे ❀ ॥

माली ॥

धर्मशीलवर्णान्ताच्च ५ । २ । १३२ ॥

धर्माद्यन्तादिनिर्मत्वर्थे । ब्राह्मणधर्मी । ब्राह्मणशीली । ब्राह्मण-
वर्णी ॥

हस्ताज्जातौ ५ । २ । १३३ ॥

हस्ती । जातौ किम् । हस्तवान्पुरुषः ॥

वर्णाद्ब्रह्मचारिणि ५ । २ । १३४ ॥

वर्णां ॥

पुष्करादिभ्यो देशे ५ । २ । १३५ ॥

पुष्करिणी पद्मिनी । देशे किम् । पुष्करवोन्करी ॥

बाहूरुपूर्वपदाद्बलात् * ॥

बाहुवली । ऊरुवली ॥

सर्वादेश्व * ॥

सर्वधनी । सर्ववीर्जा ॥

अर्थाच्चाऽसंनिहिते * ॥

अर्थी । संनिहिते तु अर्थवान् ॥

तदन्ताच्च * ॥

धान्यार्थी । हिरण्यार्थी ॥

बलादिभ्यो मतुवन्यतरस्याम् ५ । २ । १३६ ॥

बलवान् बली । उत्साहवान् उत्साही ॥

संज्ञायां मन्माभ्याम् ५ । २ । १३७ ॥

मन्त्रन्तान्मान्ताधेनिर्मत्वर्थे । प्रथिमिनी । दामिनी । होमिनी ।
सोमिनी । संज्ञाया किम् । सोमवान् ॥

कंशंभ्यां वभयुस्तितुतयसः ५ । २ । १३८ ॥

कम् शम् इति मान्ती । कम् इत्युदकमुखयोः । शम् इति सुखे ।
आभ्या सप्त प्रत्ययाः । युस्यसोः सकारः पदत्वार्थः । कंवः ।
कंमः । कंयुः । कंतिः । कंतुः । कंतः । कंयः । शंवः । शंमः । शंयुः ।
शंतिः । शंतुः शंतः । शंयः । अनुस्वारस्य वकल्पिकः परसवर्णः ।
वकारयकारपरस्यानुनासिका वयो ॥

तुन्दिबलिवटेर्भः ५ । २ । १३९ ॥

शृद्धा नामिस्तुन्दिः । मृध्न्योपधोऽयम् इति माधवः । तुन्दिमः ।
मि । वटिमः । पामादित्वादलिनोऽपि ॥

अहंशुभमोर्युस् ५ । २ । १४० ॥

अहम् इति मान्तमव्ययमहंकारे । शुभमिति शुभे । अहंयुः अहं-
कारवान् । शुभंयुः शुभान्वितः ॥

प्राग्दिशो विभक्तिः ५ । ३ । १ ॥

दिक्छब्देभ्य इत्यतः प्राग् वक्ष्यमाणाः प्रत्यया विभक्तिगणाः ॥
अथ स्वार्थिकाः प्रत्ययाः । समर्थानाम् इति प्रथमात् इति च
निवृत्तम् । वा इति त्वनुवर्तत एव ॥

किंसर्वनामबहुभ्योऽद्यादिभ्यः ५ । ३ । २ ॥

किमः सर्वनाम्नो बहुशब्दाच्चेति प्राग्दिशोऽधिक्रियते ॥

इदम् इश् ५ । ३ । ३ ॥

प्राग्दिशीये परे । इशोऽपवादः ॥

एतेतौ रथोः ५ । ३ । ४ ॥

इदम् एत इत इत्येता स्तः रेफ्यकागदौ प्राग्दिव्यतीये परे ॥

एतदोऽन् ५ । ३ । ५ ॥

योगविभागः कर्तव्यः । एतदः । एतेता स्तो रथोः । अन् । एतदः
इत्येव । जनेकाल्त्वात्सर्वादेशः । नलोपः प्रातिपदिकान्तस्य ॥

सर्वस्य सोऽन्यतरस्यां दि ५ । ३ । ६ ॥

प्राग्दिशीये ढकारादौ प्रत्यये परे सर्वस्य सो वा ॥

पञ्चम्यास्तसिल् ५ । ३ । ७ ॥

पञ्चम्यन्तेभ्यः किमादिभ्यस्तसिल् वा ॥

कु तिहोः ७ । २ । १०४ ॥

किमः कु स्यात् तादो हादौ च विभक्तौ परतः । कुतः कम्मान् ।
यतः । ततः । अतः । इतः । अमुतः । बहुतः । व्याप्तेस्तु दाम्याम् ॥

तसेश्च ५ । ३ । ८ ॥

किंसर्वनामबहुभ्यः परस्य तसेस्तमिलादेशः । स्वार्थं विभक्त्यर्थं
च वचनम् ॥

पर्यभिभ्यां च ५ । ३ । ९ ॥

आभ्यां तसिल् ॥

सर्वोभयार्थाभ्यामेव ❀ ॥

परितः सर्वत इत्यर्थः । अभितः । उभयत इत्यर्थः ॥

सप्तम्यास्त्रल् ५ । ३ । १० ॥

कुत्र । यत्र । तत्र । बहुत्र ॥

इदमो हः ५ । ३ । ११ ॥

त्रलोऽपवादः । इशादेशः । इह ॥

किमोऽत् ५ । ३ । १२ ॥

वाग्रहणमपकृष्यते । सप्तम्यन्तात्किमोऽद्वा पक्षे त्रल् ॥

क्वाऽति ७ । २ । १०५ ॥

किमः क्वादेशः अति । क । कुत्र ॥

वाऽह च च्छन्दसि ५ । ३ । १३ ॥

कुह स्यः । कुह जग्मथुः ॥

इतराभ्योऽपि दृश्यन्ते ५ । ३ । १४ ॥

पञ्चमीसप्तमीतरविभक्तयन्तादपि तसिलादयो दृश्यन्ते । दृशि-
ग्रहणाद्भवदादियोग एव । समवान् । ततोभवान् । तत्रमवान् ।
तंभवन्तम् । ततोभवन्तम् । तत्रमवन्तम् एवं दीर्घाद्युः । देवाना-
मियः । आयुष्मान् ॥

सर्वैकान्यर्कियत्तदः काले दा ५ । ३ । १५ ॥

सप्तम्यन्तेभ्यः कालार्थेभ्यः स्वार्थे दा । सर्वस्मिन् काले सदा ।
सर्वदा । एकदा । अन्यदा । यदा । कदा । तदा । काले किम् ।
सर्वत्र देशे ॥

इदमोर्हिल् ५ । ३ । १६ ॥

सप्तम्यन्तात्काले इत्येव । हस्यापवादः । अस्मिन् काले एतर्हि ।
काले किम् । इह देशे ॥

अधुना ५ । ३ । १७ ॥

इदमः सप्तम्यन्तात्कालवाचिनः स्वार्थेऽधुनाप्रत्ययः । इत् ।
स्य इति लोपः । अधुना ॥

इति १५१ अंशः ।

दानौ च ५ । ३ । १८ ॥

इदानीम् ॥

तदो दा च ५ । ३ । १९ ॥

तदा तदानीम् । तदो दावचनमनर्थकं विहितत्वात् ॥

अनद्यतनेर्हिलन्यतरस्याम् ५ । ३ । २१ ॥

कर्हि कदा । यर्हि यदा । तर्हि तदा । एतस्मिन्काल एतर्हि ॥

सद्यः परुत्परार्यैपमः परेद्यव्यद्यपूर्वेद्युरन्येद्युरन्यतरेद्यु-
तरेद्युरपरेद्युरधरेद्युरुभयेद्युरुत्तरेद्युः ५ । ३ । २२ ॥

एते निपात्यन्ते । समानस्य सभावो यश्चाहनि । समानेऽहनिः
घः । पूर्वपूर्वतरयोः परः । उदारी च संवत्सरे । पूर्वस्मिन् वत्सरे
एत् । पूर्वतरे वत्सरे परारि । इदम इत् समसण प्रत्ययश्च । संवत्स-
। अस्मिन्संवत्सरे ऐपमः । परस्मादेद्यव्यहनि परस्मिन्नहनि परे-
वि । इदमोऽश्च घश्च । अस्मिन्नहनि अद्य । पूर्वादिभ्योऽष्टभ्योऽहन्ये-
प् । पूर्वस्मिन्नहनि पूर्वद्युः । अन्यस्मिन्नहनि अन्येद्युः । उभयो-
रीरुभयेद्युः ॥

द्युश्चोभयाद्वक्तव्यः ❀ ॥

उभयद्युः ॥

प्रकारवचने थाल् ५ । ३ । २३ ॥

प्रकारवृत्तिभ्यः किमादिभ्यस्थाल् स्वार्थे । तेन प्रकारेण
था । यथा ॥

इदमस्थमुः ५ । ३ । २४ ॥

थालोऽपवादः ॥

एतदो वाच्यः ❀ ॥

अनेन एतेन वा प्रकारेण इत्यम् ॥

किमथ ५ । ३ । २५ ॥

केन प्रकारेण कथम् ॥

इति १५२ अंशाः ।

दिक्छन्देभ्यः सप्तमीपञ्चमीप्रथमाभ्योऽदिग्देशकाले-
ष्वस्तातिः ५ । ३ । २७ ॥

सप्तम्याद्यन्तेभ्यो दिशि रुढेभ्यो दिग्देशकालवृत्तिभ्यः स्वा-
येंस्तातिप्रत्ययः ॥

पूर्वाधरावराणामसि पुरधवश्चैषाम् ५ । ३ । ३९ ॥

एभ्योऽस्तात्ययेंसिप्रत्ययः । तद्योगे चिषां क्रमात् पुरः अध्
अव् इत्यादेशाः ॥

अस्ताति च ५ । ३ । ४० ॥

अस्तातौ परे पूर्वादीनां पुरादयः । पूर्वस्यां पूर्वस्याः पूर्वा वा
दिक् पुरः पुरस्तात् । अधः अधस्तात् । अवः अवस्तात् ॥

विभापाऽवरस्य ५ । ३ । ४१ ॥

अवरस्यास्तादौ परेऽव् स्याद्वा । अवस्तात् अवरस्तात् । एवं
देशे काले च । दिशि रुढेभ्यः किम् । ऐद्र्यां वसति । सप्तम्याद्य-
न्तेभ्यः किम् । पूर्व आरभं गतः । दिगादिवृत्तिभ्यः किम् । पूर्व-
स्मिन् गुरो वसति । अस्ताति च इति ज्ञापकादस्तिरस्तानि न
वाधते ॥

दक्षिणोत्तराभ्यामतसुच ५ । ३ । २८ ॥

अस्तातेरपवादः । दक्षिणतः । उत्तरतः ॥

विभापा परावराभ्याम् ५ । ३ । २९ ॥

परतः । अवरतः । परस्तात् । अवरस्तात् ॥

अञ्चेलुक् ५ । ३ । ३० ॥

अञ्चत्यन्तादिकछन्दादस्तातेर्लुक् । लुक्ताद्धितलुकि । प्राच्यां प्राच्याः प्राची वा दिक् प्राक् । उदक् । एवं देशे काले च ॥

उपर्युपरिष्ठात् ५ । ३ । ३१ ॥

अस्तातेर्विषये ऊर्ध्वशब्दस्योपादेयः रिलिष्ठातिलौ च प्रत्ययौ । उपरि उपरिष्ठाद्वा वसति आगतो रमणीयं वा ॥

पश्चात् ५ । ३ । ३२ ॥

अपरस्य पश्चभाव आतिश्च प्रत्ययोऽस्तातेर्विषये ॥

उत्तराधरदक्षिणादातिः ५ । ३ । ३४ ॥

उत्तरात् । अधरात् । दक्षिणात् ॥

एनवन्यतरस्यामदूरेऽपञ्चम्याः ५ । ३ । ३५ ॥

उत्तरादिभ्य एनन्वा स्यादवध्यवधिमतोः सामीप्ये पञ्चम्यन्तं विना । उत्तरेण । अधरेण । दक्षिणेन । पक्षे यथास्वं प्रत्ययाः । इह केचिदुत्तरादीनननुवर्त्य दिक्छन्दमात्रादेनपमाहुः । पूर्वेण ग्रामम् । अपरेण ग्रामम् ॥

दक्षिणादाच्च ५ । ३ । ३६ ॥

अस्तातेर्विषये । दक्षिणा वसति । अपञ्चम्याः इत्येव । दक्षिणादागतः ॥

आहि च दूरे ५ । ३ । ३७ ॥

दक्षिणादूरे आहिः स्यात् चादाच्च । दक्षिणाहि दक्षिणा ॥

उत्तराच्च ५ । ३ । ३८ ॥

उत्तराहि उत्तरा ॥

संख्याया विधार्थे धा ५ । ३ । ४२ ॥

चतुर्धा । पञ्चधा ॥

अधिकरणविचाले च ५ । ३ । ४३ ॥

द्रव्यस्य संख्यान्तरापादने संख्याया धा । एकं राशिं पञ्चधा
कुरु ॥

एकाद्वो ध्यमुभन्यतरस्याम् ५ । ३ । ४४ ॥

ऐकध्यम् एकधा ॥

द्विन्योश्च धमुञ् ५ । ३ । ४५ ॥

आभ्या धा इत्यस्य धमुञ् वा । द्वैधं द्विधा । त्रैधं त्रिधा ।
धमुञन्तात् स्वार्थे ङदर्शनम् । पयि द्वैधानि ॥

एधाञ्च ५ । ३ । ४६ ॥

द्वेधा । त्रिधा ॥

याप्ये पाशप् ५ । ३ । ४७ ॥

कुत्सितो मिपक् मिपक्पाशः ॥

एकादाकिनिच्चासहाये ५ । ३ । ५२ ॥

घात्कन्लुक् । एकः एकाकी एककः ॥

भूतपूर्वे चरट् ५ । ३ । ५३ ॥

आढ्यो भूतपूर्व आढ्यचरः । अनिशायने । लघुतमः लघिष्ठः ॥

अजादी गुणवचनादेव ५ । ३ । ५८ ॥

इष्टलीयसुनौ । गुणवचनादेव । प्रथिष्ठः प्रथीयान् । नेह । पाच-
कतरः । पाचकतमः ॥

तुश्छन्दसि ५ । ३ । ५९ ॥

वन् । वृजन्तादिष्टलीयसुनौ ॥

तुरिष्ठेमेयःसु ६ । ४ । १५४ ॥

वृशब्दस्य लोपः इष्ठेमेयःसु परोषु । अतिशयेन कर्तो करिष्ठः ।
दोरीयसी धेनुः ॥

प्रशस्यस्य थः ५ । ३ । ६० ॥

अस्य श्रादेशः अजाघोः ॥

प्रकृत्यैकाच् ६ । ४ । १६३ ॥

इष्ठादिष्वेकाच् प्रकृत्या । श्रेष्ठः श्रेयान् ॥

ज्य च ५ । ३ । ६१ ॥

प्रशस्यस्य ज्यादेशः इष्टेयसोः । ज्येष्ठः ॥

ज्यादादीयसः ६ । ४ । १६० ॥

आदेः परस्य । ज्यायान् ॥

वृद्धस्य च ५ । ३ । ६२ ॥

ज्यादेशः अजाघोः । ज्येष्ठः ज्यायान् ॥

अन्तिकवाढयोर्नेदसाघौ ५ । ३ । ६३ ॥

अजाघोः । नेदिष्ठः नेदीयान् । साधिष्ठः साधीयान् ॥

स्थूलदूरयुवद्वस्वक्षिप्रक्षुद्राणां यणादिपरं पूर्वस्य च
गुणः ६ । ४ । १५६ ॥

एषां यणादिपरं लुप्यते पूर्वस्य च गुण इष्ठादिषु । स्थविष्ठः ।
दविष्ठः । यविष्ठः । द्वाविष्ठः । क्षेविष्ठः । क्षोदिष्ठः । एवमीयस ।
द्वस्वक्षिप्रक्षुद्राणां पृथ्वादिवाद्भातिमा । क्षेपिमा । क्षोदिमा ॥

प्रियस्थिरस्फिरोरुवहुलगुरुवृद्धत्प्रदीर्घवृन्दारकाणां
प्रस्थस्फवर्बहिर्गर्वर्षित्रन्द्राघिवृन्दाः ६ । ४ । १५७ ॥

प्रियादीनां क्रमात् प्रादयः स्युरिष्ठादिषु । प्रेष्ठः । स्थेष्ठः । स्फेष्ठः ।
वरिष्ठः । बंहिष्ठः । गरिष्ठः । बर्षिष्ठः । त्रपिष्ठः । द्राघिष्ठः । वृ-
न्दिष्ठः । एवमीयसन् । प्रेयान् । प्रियोरुवहुलगुरुदीर्घाणां पृथ्वा-
दित्वात्प्रेमेत्यादि ॥

बहोर्लोपो भू च बहोः ६ । ४ । १५८ ॥

बहोः परयोरिमेयसोर्लोपः बहोश्च । भूरादेशः । भूमा भूयान् ॥

इष्टस्य यिद् च ६ । ४ । १५९ ॥

वहोः परस्य इष्टस्य लोपः यिडागमश्च । भृविष्ठः ॥

युवाल्पयोः कनन्यतरस्याम् ५ । ३ । ६४ ॥

एतयोः कलादेशो वा इष्टेयसोः । कनिष्ठः कनीयान् । पक्षे । य-
विष्ठः । अलिपिष्ठ इत्यादि ॥

विन्मतोल्लुक् ५ । ३ । ६५ ॥

विनो मत्पुपश्च लुक् इष्टेयसोः अतिशयेन स्रग्वी स्रजिष्ठः स्रजी-
यान् । अतिशयेन त्वग्वान् त्वचिष्ठः त्वचीयान् ॥

प्रशंसायां रूपम् ५ । ३ । ६६ ॥

सुबन्तात्तिङन्ताच्च । प्रशस्तः पटुः पटुरूपः । प्रशस्तं पचति
पचातिरूपम् ॥

ईपदसमासौ कल्पन्देश्यदेशीयरः ५ । ३ । ६७ ॥

ईपदूनो विद्वान् विद्वत्कल्पः । यशस्कल्पम् । यशुःकल्पम् ।
विद्वद्देश्यः । विद्वद्देशीयः । पचतिकल्पम् ॥

विभाषा सुपो बहुचपुरस्तात् ५ । ३ । ६८ ॥

ईपदसमासि विशिष्टेऽर्थे सुबन्ताद्बहुज्वा।स च प्रागेव नतु परतः ।
ईपदूनः पटुर्वहुपटुः । पटुकल्पः । सुपः किम् । यजतिकल्पम् ॥

प्रकारवचने जातीयर् ५ । ३ । ६९ ॥

प्रकारवति चायम् । थाल्तु प्रकारमात्रे । पटुप्रकारः । पटुजातीयः ॥

प्रागिवात्कः ५ । ३ । ७० ॥

इवे प्रतिफृत्ती इत्यतः प्राक्काधिकारः ॥

अव्ययसर्वनाम्नामकञ्च प्राक्कटेः ५ । ३ । ७१ ॥

तिङश्च इत्यनुवर्तते ॥

कस्य च दः ५ । ३ । ७२ ॥

कान्ताज्ययस्य दकारोऽन्तादेशः अक्च ॥

अज्ञाते ५ । ३ । ७३ ॥

कस्यायमश्वोऽश्वकः । उच्चकैः । नीचकैः । सर्वकैः । विश्वकैः ॥

ओकारसकारभकारादौ सुपि सर्वनाम्रष्टेः प्रागकच् ॥

अन्यत्र तु सुवन्तस्य ढेः प्रागकच् ॥ युवकयोः । आवकयोः ।

युष्मकासु । अस्मकासु । युष्मकाभिः । अस्मकाभिः । ओकार

इत्यादि किम् । त्वयका । मयका ॥

अकच्प्रकरणे तूष्णीमः काम्वक्तव्यः ॥

मित्वादन्त्यादचः परः । तूष्णीकामास्ते ॥

शीले कोमलोपश्च ॥

तूष्णींशीलस्तूष्णीकः । पचतकि जल्पतकि।धक्ति हिरकुत् ॥

कुत्सिते ५ । ३ । ७४ ॥

कुत्सितोऽश्वोऽश्वकः ॥

संज्ञायां कन् ५ । ३ । ७५ ॥

कुत्सिते कन् तदन्तेन चेतसंज्ञा गम्यते । शूद्रकः । राधकः ।
स्वरार्थं वचनम् ॥

अनुकम्पायाम् ५ । ३ । ७६ ॥

पुत्रकः । अनुकम्पितः पुत्र इत्यर्थः ॥

नीतौ च तद्युक्तात् ५ । ३ । ७७ ॥

सामदानादिरूपा नीतिस्तस्यां गम्यमानायामनुकम्पायुक्तात्क-
प्रत्ययः । हन्त ते धानकाः । गुडकाः । एहाकि । अद्हाकि । पूर्व-

णानुकम्प्यमानात्प्रत्ययः । अनेन तु परम्परासंबन्धेऽपीति विशेषः ॥

वह्नौ चो मनुष्यनाम्रष्टृज्वा ५ । ३ । ७८ ॥

पूर्वसूत्रद्वयविषये ॥

घनिलचौ च ५ । ३ । ७९ ॥

तत्रैव ॥

ठाजादादूर्ध्वं द्वितीयादचः ५ । ३ । ८३ ॥

अस्मिन्प्रकरणे यष्टोऽज्ञादिप्रत्ययश्च तस्मिन् प्रत्यये परे प्रकृते-

द्वितीयादच ऊर्ध्वं सर्वं लुप्यते । अनुकम्पितो देवदत्तो देविकः
 देवियः देविलः देवदत्तकः । अनुकम्पितो वायुदत्तो वायुकः । ठग्रहण-
 मुको द्वितीयत्वे कविधानार्थम् । वायुदत्तकः वायुकः पितृकः ॥

चतुर्थादच ऊर्ध्वस्य लोपो वाच्यः ❀ ॥

अनुकम्पितो बृहस्पतिदत्तो बृहस्पतिकः ॥

अनजादौ च विभापा लोपो वक्तव्यः ❀ ॥

देवदत्तकः देवकः ॥

लोपः पूर्वपदस्य च ❀ ॥

दत्तिकः दत्तियः दत्तिलः दत्तकः ॥

विनापि प्रत्ययं पूर्वोत्तरपदयोर्वा लोपो वाच्यः ❀ ॥

देवदत्तः दत्तः देवः । सत्यमामा मामा सत्या ॥

उवर्णाल इलस्य च ❀ ॥

मानुदत्तः मानुलः ॥

ऋवर्णादपि ❀ ॥

सवित्रियः सवितृलः । चतुर्थादनजादौ च लोपः पूर्वपदस्य च ।
 अग्रत्यये तथैवेष्ट उवर्णाल इलस्य च । ल इति लोपसंज्ञा प्राचाम् ॥

जातिनाम्नः कन् ५ । ३ । ८१ ॥

मनुष्यनाम्नः इत्येव । जातिशब्दो यो मनुष्यनामधेयस्तस्मात्कन्
 स्यादनुकम्पायां नीतौ च । सिंहकः । शरभकः । रासभकः ॥

द्वितीयं संध्यक्षरं चेत्तदादेर्लोपो वक्तव्यः ❀ ॥

कहोडः । कहिकः ॥

एकाक्षरपूर्वपदानामुत्तरपदलोपो वक्तव्यः वाचाशी-
 र्यस्य ❀ ॥

वागाशीर्दत्तः वार्धिकः । कथं षडङ्गुलिदत्तः षडिक इति षषष्ठा-
 जादिवचनातिसदम् ॥

अल्पे ५ । ३ । ८५ ॥

अल्पं तैलं तैलकम् ॥

ह्रस्वे ५ । ३ । ८६ ॥

ह्रस्वो वृक्षो वृक्षकः ॥

संज्ञायां कन् ५ । ३ । ८७ ॥

ह्रस्वहेतुका या संज्ञा तस्यां गम्यमानायां कन् । पूर्वस्यापवादः ।

वैशकः । वेणुकः ॥

कुटीशमीशुण्डाभ्यो रः ५ । ३ । ८८ ॥

ह्रस्वा कुटी कुटीरः । शमीरः । शुण्डारः ॥

कुत्वा डुपच् ५ । ३ । ८९ ॥

ह्रस्वा कुतूः कुतुपः । कुतूः कृत्तेः स्नेहपार्श्वं ह्रस्वा सा कुतुपः

पुमान् । इत्यमरः ॥

कासूगोणीभ्यां एरच् ५ । ३ । ९० ॥

आयुधविशेषः कासूः । ह्रस्वा सा कासूतरी । गोणीतरी ॥

वत्सोक्षाश्वर्षभेभ्यश्च तनुत्वे ३ । ५ । ९१ ॥

वत्सतरः । द्वितीयं वयः प्राप्तः । उक्षतरः । अश्वतरः । ऋषमतरः ।

प्रवृत्तिनिमित्ततनुत्व एवायम् ॥

किंयत्तदोर्निर्धारणे द्वयोरेकस्य डतरच् ५ । ३ । ९२ ॥

अनयोः कतरो वैष्णवः । यतरः । ततरः । महाविभाषया कः ।

यः । सः ॥

वा बहुनां जातिपरिग्रहे डतमच् ५ । ३ । ९३ ॥

बहुना मध्ये एकस्य निर्धारणे डतमज्वा । जातिपरिग्रहे इति

प्रत्याख्यातमाकरे । कनमो भवता कठः । यतमः ततमः । वाग्र-

हणमकजर्थम् । यकः । सकः । महाविभाषया यः । सः । किमोऽ-

ति । किंयत्तदोर्निर्धारणे । कतरः ॥

एकाञ्च प्राचाम् ५ । ३ । ९४ ॥

डतरच डतमच्च । अनयोरेकतरो भेदः । एषामेकतमः ॥

अवक्षेपणे कन् ५ । ३ । ९५ ॥

व्याकरणकेन गर्वितः । येनेतरः कुत्स्यते तदिहोदाहरणम् । स्वतः
कुत्सितं तु कुत्सिते इत्यस्य ॥ इति प्राग्वीयाः ॥

इति १५३ अंशः ।

इवे प्रतिकृतौ ५ । ३ । ९६ ॥

कन् । अश्व इव प्रतिकृतिः अश्वकः । प्रतिकृतौ किम् । गौरिव
गवयः ॥

संज्ञायां च ५ । ३ । ९७ ॥

इवार्थे कन् समुदायश्चेत्संज्ञा । अप्रतिकृत्यर्थमारम्भः । अश्वसद-
शस्य संज्ञा अश्वकः । उप्रकः ॥

लुम्मनुष्ये ५ । ३ । ९८ ॥

संज्ञाया चेति विहितस्य कनो लुप् मनुष्ये वाच्ये । चञ्चा तृण-
मयः पुमान् । चञ्चैव मनुष्यश्चञ्चा । वार्धिका ॥

जीविकार्थे चापण्ये ५ । ३ । ९९ ॥

जीविकार्थं यदविक्रीयमाणं तस्मिन्वाच्ये कनो लुप् । वासुदेवः ।
शिवः । स्कन्दः । देवलकानां जीविकार्यासु देवप्रतिकृतिष्विदम् ।
अपण्ये किम् । हस्तिकान्विक्रीणीति ॥

शिलाया ढः ५ । ३ । १०२ ॥

शिलायाः इति योगविभागाङ्गजपीत्येके । शिलेव शिलेयं
शैलेयम् ॥

शाखादिभ्यो यत् ५ । ३ । १०३ ॥

शाखेव शाख्यः । मुख्यः । जघनमिव जघन्यः । अश्व्यः ।
५५. ॥

द्रव्यं च भव्ये ५ । ३ । १०४ ॥

द्रव्यमयं ब्राह्मणः ॥

कुशाग्राच्छः ५ । ३ । १०५ ॥

कुशाग्रमिव कुशाग्रीया बुद्धिः ॥

समासाच्च तद्विपयात् ५ । ३ । १०६ ॥

इवार्थविपयात्समासाच्छः । काकतालीयो देवदत्तस्य वधः । इह काकतालसमागमसदृशश्चोत्समागम इति समासार्थः । तत्प्रयुक्तः काकमरणसदृशस्तु प्रत्ययार्थः । अजाकृपाणीयः । अतर्कितोपनत इति फलितोऽर्थः ॥

पादशतस्य संख्यादेर्वीप्सायां वुन् लोपश्च ५ । ४ । १ ॥

लोपवचनमनैमित्तिकत्वार्थम् अतो न स्यानिवत् । पादः पद् । तद्वितार्थ इति समासे कृते प्रत्ययः । वुन्नन्तं स्त्रियामेव । द्वौ द्वौ पादौ ददाति द्विपदिकाम् । द्विशतिकां । पादशतग्रहणमनर्थकमन्यत्रापि दर्शनत् । द्विमोदकिकाम् ॥

दण्डव्यवसर्गयोश्च ५ । ४ । २ ॥

वुन् । अवीप्सार्थमिदम् । द्वौ पादौ दण्डितः द्विपदिकां द्विशतिकां व्यवसृजति । ददातीत्यर्थः ॥

स्थूलादिभ्यः प्रकारवचने कन् ५ । ४ । ३ ॥

जातीयरोष्पवादः । स्थूलकः । अणुकः ॥

अनत्यन्तगतौ क्तात् ५ । ४ । ४ ॥

छिन्नकम् । भिन्नकम् । अभिन्नकम् ॥

न सामिवचने ५ । ४ । ५ ॥

सामिपर्याय उपपदे क्तान्तान्न कन् । सामिकृतम् । अर्धकृतम् । अनत्यन्तगतेरिह प्रकृत्यैवाभिधानात्पूर्वेण कन्न प्राप्तः । इदमेव निषेधसूत्रमत्यन्तस्वार्थिकमपि कर्त्तुं ज्ञापयति । बहुतरकम् ॥

बृहत्या आच्छादने ५ । ४ । ६ ॥

कद्र । द्वौ प्रावारोत्तरासङ्गौ समौ बृहतिका तथा । इत्यमरः ।
आच्छादने किम् । बृहतीछन्दः ॥

अपडक्षाशितंग्वलंकर्मालंपुरुषाध्युत्तरपदात्त्वः ५ । ४ । ७ ॥

स्वार्थे । अपडक्षीणो मन्त्रः । द्वाभ्यामेव कृत इत्यर्थः । आशिता
गावोऽस्मिन्निति आशितंगवीनमरण्यम् । निपातनात्पूर्वस्य मुम् ।
अलं कर्मणे अलंकर्मणः । अलंपुरुषीणः । ईश्वराधीनः । नित्योऽयं
त्वः । उत्तरसूत्रे विमापाग्रहणात् । अन्येऽपि केचित्स्वार्थिकाः ।
प्रत्यया नित्यमिष्यन्ते ॥

तमवादयः प्राक्कनः । व्यादयः प्राग्बुनः । आमादयः प्राङ्-
यटः । बृहती जात्यन्ताः समासान्ताश्च इति ॥

विभापाञ्चरदिकस्त्रियाम् ५ । ४ । ८ ॥

अदिकस्त्रीवृत्तेरश्चत्यन्तात्प्रातिपदिकात् खो वा स्वार्थे । प्राक्
प्राचीनम् प्रत्यक् प्रतीचीनम् । अवाक् अवाचीनम् । निकृष्टप्रतिकृ-
ष्टावरेफयाप्यावमाधमाः । इत्यमरः । अर्बन्तमश्नतीति अर्वाक् अर्वा-
चीनम् । अदिक् स्त्रियां किम् । प्राची दिक् । उदीची दिक् । दि-
ग्रहणं किम् । प्राचीना ब्राह्मणी । स्त्रीग्रहणं किम् । प्राचीनं ब्रामा-
दाम्नाः ॥

जात्यन्ताच्छ बन्धुनि ५ । ४ । ९ ॥

ब्राह्मणजातीयः । बन्धुनि किम् । ब्राह्मणजातिः शोभना । जा-
तेर्व्यञ्जकं द्रव्यं बन्धु ॥

स्थानान्ताद्विभापा सस्थानेनेति चेत् ५ । ४ । १० ॥

सस्थानेन तुल्येन चेत् स्थानान्तमर्थेवादित्यर्थः । पितृस्थानीयः
पितृस्थानः । सस्थानेन किम् । गोः स्थानम् ॥

अनुगादिनष्टक् ५ । ४ । १३ ॥

अनुगदतीत्यनुगादी स एवानुगादिकः ॥

विसारिणो मत्स्ये ५ । ४ । १६ ॥

अण् । विसारिणः । मत्स्ये इति किम् । विसारी देवदत्तः ।
कृत्वमुच्चसुचौ प्रागुक्तौ । पञ्चकृत्वो भुङ्क्ते । द्विर्भुङ्क्ते । सकृद्भुङ्क्ते ॥

विभापावहोर्धाऽविप्रकृष्टकाले ५ । ४ । २० ॥

अविप्रकृष्ट आसन्नः । बहुधा दिवसस्य भुङ्क्ते । आसन्नकाले किम् ।
बहुकृत्वो मासस्य भुङ्क्ते ॥

तत्प्रकृतवचने मयद् ५ । ४ । २१ ॥

प्राचुर्येण प्रस्तुतं प्रकृतं तस्य वचनं प्रतिपादनम् । भावेऽधिक-
रणे वा लघुद् । आद्ये प्रकृतमन्नमन्नमयम् । अपूपमयम् । यवागृमयी ।
द्वितीयेऽन्नमयो यज्ञः । अपूपमयं पर्वे ॥

समूहवच्च बहुषु ५ । ४ । २२ ॥

सामूहिकाः प्रत्यया अतिदिश्यन्ते चान्मयद् । मोदकाः प्रकृताः
मौदकिकं मोदकमयम् । शाण्डुलिकं शाण्डुलीमयम् । द्वितीयेऽर्थे
मौदकिको यज्ञः मोदकमयः ॥

अनन्तावसथेतिहभेपजाञ्च ५ । ४ । २३ ॥

अनन्त एवानन्त्यम् । आवसथ एवावसथ्यम् । इति ह इति
निपातसमुदायः । ऐतिह्यम् । भेपजमेव भेपज्यम् ॥

देवतान्तात्तादर्थ्यं यत् ५ । ४ । २४ ॥

तदर्थ एव तादर्थ्यम् । स्वार्थे ण्यञ् । अग्निदेवतायै इदमाग्निदे-
वत्यम् । पितृदेवत्यम् ॥

पादार्धाभ्यां च ५ । ४ । २५ ॥

पादार्थमुदकं पाद्यम् । अर्घ्यम् ॥

नवस्य नू आदेशो नूतनपूखाश्च प्रत्यया वक्तव्याः ॥

नूतनं नूतनं नवीनम् ॥

नश्च पुराणे प्रात् ॥

पुराणार्थे वर्तमानात्प्रशब्दान्नो वक्तव्यः । चात्पूर्वोक्ताः । प्रणं
प्रतनं । प्रतनं प्रीणम् ॥

भागरूपनामभ्यो धेयः ॐ ॥

भागधेयम् । रूपधेयम् । नामधेयम् ॥

आग्नीध्रसाधारणादञ् ॐ ॥

आग्नीध्रम् । साधारणम् । स्त्रियां ङीप् । आग्नीध्री । साधारणी ॥

अतिथेर्न्यः ५ । ४ । २६ ॥

तादर्थ्ये इत्येव । अतियय इदमातिथ्यम् ॥

देवात्तल् ५ । ४ । २७ ॥

देव एव देवता ॥

अवेः कः ५ । ४ । २८ ॥

अविरेवाधिकः ॥

यावादिभ्यः कन् ५ । ४ । २९ ॥

याव एव यावकः । मणिकः ॥

विनयादिभ्यष्टक् ५ । ४ । ३४ ॥

विनय एव वैनयिकः । सामयिकः ॥

उपायो ह्रस्वत्वं च ॐ ॥

औपयिकः ॥

वाचो व्याहृतार्थायाम् ५ । ४ । ३५ ॥

संदिष्टार्थायां वाचि विद्यमानादाक्छन्दात् स्वार्थे षक् च । संदे-
शवाग् वाचिकं स्यात् । इत्यमरः ॥

तद्युक्तात्कर्मणोऽण् ५ । ४ । ३६ ॥

मैव कर्मणम् । वाचिकं श्रुत्वा क्रियमाणं कर्मेत्यर्थः ॥

अज्ञातो ५ । ४ । ३७ ॥

अज्ञोऽण् । औपधं पिबति । अज्ञातो किम् । औपधयः क्षत्रे
॥ ॥

प्रज्ञादिभ्यश्च ५ । ४ । ३८ ॥

प्रज्ञ एव प्राज्ञः । प्राज्ञी स्त्री । देवतः । वान्धवः ॥

मृदस्तिकन् ५ । ४ । ३९ ॥

मृदेव मृत्तिका ॥

सरुनौ प्रशंसायाम् ५ । ४ । ४० ॥

रूपोऽपवादः । प्रशस्ता मृन्मृत्ता मृत्ता । उत्तरसूत्रे अन्यतरस्यां ग्रहणान्नित्योऽयम् ॥

इति १५४ अंशाः ।

बह्वल्पार्थाच्छस्कारकादन्यतरस्याम् ॥

बहूनि ददाति बहुशः । अल्पशः ॥

बह्वल्पार्थान्मङ्गलामङ्गलवचनम् ❀ ॥

नेह । बहूनि ददात्यनिष्टेषु । अल्पानि ददान्याभ्युदायिकेषु ॥

संख्यैकवचनाच्च वीप्सायाम् ५ । ४ । ४३ ॥

द्वौ द्वौ ददाति द्विशः । मापं मापं मापशः । प्रत्यशः । परिमाणशब्दावृत्तावेकार्था एव । संख्यैकवचनात् किम् । घटं घटं ददाति । वीप्सायां किम् । द्वौ ददाति । कारकात् इत्येव । द्वयोर्द्वयोः स्वाभी ॥

प्रतियोगे पञ्चम्यास्तसिः ५ । ४ । ४४ ॥

प्रतिना कर्मप्रवचनीयेन योगे या पञ्चमी विहिता तदन्तात्तमिः । प्रथुम्नः कृष्णतः प्रति ॥

आद्यादिभ्य उपसंख्यानम् ❀ ॥

आदौ आदितः । मध्यतः । अन्ततः । पृष्ठतः । पार्श्वतः । आकृतिगणोऽयम् । स्वरेण स्वरतः । वर्णतः ॥

अपादाने चाहीयरुहोः ५ । ४ । ४५ ॥

अपादाने या पञ्चमी तदन्तात्तसिः । व्यामादागच्छति ग्रामतः । अहीयरुहोः किम् । स्वर्गादीयते । पर्वतादवरोहति । अमृततद्रात्रे चिवः ॥

भागरूपनामभ्यो धेयः ❀ ॥

भागधेयम् । रूपधेयम् । नामधेयम् ॥

आग्नीध्रसाधारणादञ् ❀ ॥

आग्नीध्रम् । साधारणम् । द्विया ङीप् । आग्नीध्री । साधारणी ॥

अतिथेर्भ्यः ५ । ४ । २६ ॥

तादर्थ्ये इत्येव । अतियय इदमातिथ्यम् ॥

देवात्तल् ५ । ४ । २७ ॥

देव एव देवता ॥

अवेः कः ५ । ४ । २८ ॥

अविरेवाविकः ॥

यावादिभ्यः कन् ५ । ४ । २९ ॥

याव एव यावकः । मणिकः ॥

विनयादिभ्यष्टक् ५ । ४ । ३४ ॥

विनय एव वैनायिकः । सामायिकः ॥

उपायो ह्रस्वत्वं च ❀ ॥

औपयिकः ॥

वाचो व्याहृतार्थायाम् ५ । ४ । ३५ ॥

सदृष्टार्थाया वाचि विद्यमानाद्वाक्छन्दात् स्वार्थे ठक् च । संदे-
शवाग् वाचिकं स्यात् । इत्यमरः ॥

तद्युक्तात्कर्मणोऽण् ५ । ४ । ३६ ॥

कर्मैव कर्मणम् । वाचिक श्रुत्वा क्रियमाणं कर्मेत्यर्थः ॥

ओपधेरजातौ ५ । ४ । ३७ ॥

स्वार्थेऽण् । औपधं पितृति । अजातौ किम् । ओपधय, क्षेत्रे
रूढा ॥

प्रज्ञादिभ्यश्च ५ । ४ । ३८ ॥

प्रज्ञ एव प्राज्ञः । प्राज्ञी स्त्री । देवतः । बान्धवः ॥

मृदस्तिकन् ५ । ४ । ३९ ॥

मृदेव मृत्तिका ॥

सरुनौ प्रशंसायाम् ५ । ४ । ४० ॥

रूपपोऽपवादः । प्रशस्ता मृन्मृत्सा मृत्सा । उत्तरसूत्रे अन्यतरस्यां ग्रहणान्नित्योऽयम् ॥

इति १५४ अंशाः ।

बह्वलपार्थाच्छस्कारकादन्यतरस्याम् ॥

बहूनि ददाति बहुशः । अल्पशः ॥

बह्वलपार्थान्मङ्गलामङ्गलवचनम् ❀ ॥

नेह । बहूनि ददात्यनिष्टेषु । अल्पानि ददान्याभ्युदायिकेषु ॥

संख्यैकवचनाच्च वीप्सायाम् ५ । ४ । ४३ ॥

द्वौ द्वौ ददाति द्विशः । मापं मापं मापशः । प्रस्थशः । परिमाणशब्दावृत्ताविकार्या एव । संख्यैकवचनात् किम् । घटं घटं ददाति । वीप्सायां किम् । द्वौ ददाति । कारकोत् इत्येव । द्वयोर्द्वयोः स्वामी ॥

प्रतियोगे पञ्चम्यास्तसिः ५ । ४ । ४४ ॥

प्रतिना कर्मप्रवचनीयेन योगे या पञ्चमी विहिता तदन्तात्तसिः । प्रशुभ्रः कृष्णतः प्रति ॥

आद्यादिभ्य उपसंख्यानम् ❀ ॥

आदौ आदितः । मध्यतः । अन्ततः । पृष्ठतः । पार्श्वतः । आकृतिगणोऽयम् । स्वरेण स्वरतः । वर्णतः ॥

अपादाने चाहीयरुहोः ५ । ४ । ४५ ॥

अपादाने या पञ्चमी तदन्तात्तसिः । आमादागच्छति ग्रामतः । अहीयरुहोः किम् । स्वर्गाद्धीयते । पर्वतादवरोहति । अभूततद्भावे चिवः ॥

अव्ययस्य च्वावीत्वं न ❀ ॥

दोषाभूतमहः । दिवाभूता रात्रिः । एतच्च अव्ययीभावश्चेत्यत्र भाष्य उक्तम् ॥

क्यच्च्योश्च ६ । ४ । १५२ ॥

हलः परस्यापत्ययकारस्य लोपः क्ये च्चौ च परतः । गार्गीभवति । च्चौ च शुचीभवति । पटूस्यात् । अव्ययस्य दीर्घत्वं न इति केचित् । तन्निर्भूलम् । स्वस्ति स्यात् इति तु महाविभाषया च्वेरभावात्सिद्धम् । स्वस्ती स्यात् इत्यपि पक्षे स्यादिति चेदस्तु । यदि नेष्यते तर्ह्यनभिधानात् च्विरेव नोत्पद्यत इत्यस्तु । रीदृतमात्री करोति ॥

अरुर्मनश्चक्षुश्चेतोरहोरजसां लोपश्च ५ । ४ । ५१ ॥

एषां लोपः च्विश्च । अरुंकरोति । उन्मनीस्यात् उच्चक्षूकरोति । विचेतीकरोति । विरहीकरोति । विरजीकरोति ॥

विभाषा साति कात्स्न्ये ५ । ४ । ५२ ॥

च्विषिषये सातिर्वा साकल्ये ॥

सात्पदाद्योः ८ । ३ । १११ ॥

सस्य पत्वं न स्यात् । दधि सिञ्चति । अनुस्वदते कृत्स्नं शस्त्रमग्निः संपद्यतेऽग्निमाद्भवति अग्नीमवति । महारिभाषया वाक्यमपि । कात्स्न्ये किम् । एकदेशेन शुक्लीभवति पटः ॥

अभिविधौ संपदा च ५ । ४ । ५३ ॥

संपदा कृभ्वस्तिभिश्च योगे सातिर्वा व्याप्तौ । पक्षे कृभ्वस्ति-योगे च्विः । संपदा तु वाक्यमेव । अग्निसात्संपद्यते अग्निसाद्भवति । शस्त्रम् अग्नीभवति । जलसात्संपद्यते जलीभवति लवणम् । एकस्या व्यक्तेः सर्वावयवावच्छेदेनान्यथाभावः कात्स्न्यम् । बहूनां व्य-
ञ्जीनां किञ्चिदवयवावच्छेदेनान्यथात्वं त्वभिविधिः ॥

नीनवचने ५ । ४ । ५४ ॥

सातिः कृभ्वस्तिभिः संपदा च योगे । राजसात्करोति । राज-
सात्संपद्यते । राजाधीनमित्यर्थः ॥

देये त्रा च ५ । ४ । ५५ ॥

तदधीने देये त्रा स्यात्सातिश्च । कृभ्वादियोगे विप्राधीनं देयं
करोति विप्रत्राकरोति । विप्रत्रासंपद्यते । पक्षे विप्रसात्करोति । देये
किम् । राजसाद्भवति राष्ट्रम् ॥

देवमनुष्यपुरुषपुरुषमर्त्येभ्यो द्वितीयासप्तम्योर्वहुलम्
५ । ४ । ५६ ॥

एभ्यो द्वितीयान्तेभ्यः सप्तम्यन्तेभ्यश्च त्रा । देवत्रावन्दे रमे वा ।
बहुलोक्तेरन्यत्रापि । बहुत्राजीवतो मनः ॥

अव्यक्तानुकरणाद् व्यजवरार्धादनितौ डाच् ५ । ४ । ५७ ॥
द्यच् । अवरं न्यूनं न तु ततो न्यूनम् । अनेकाच् इति यावत्ताद-
शमर्थं यस्य तस्माद्धाच् कृभ्वस्तिभिर्योगे ॥

डाचि विवक्षिते द्वे बहुलम् ❀ ॥

नित्यमात्रेडिते डाचीति वक्तव्यम् ❀ ॥

डाच्परं यदात्रेडितं तस्मिन्परे पूर्वपरयोर्वर्णयोः पररूपं स्यात् ।
इति तकारपकारयोः पकारः । पटपटाकरोति । अव्यक्तानुकरणात्
किम् । ईप्त्करोति । व्यजवरार्धात् किम् । श्रत्करोति । अवर इति
किम् । खरटखरटाकरोति । त्रपटत्रपटाकरोति । अनेकाचः इत्येव
सूत्रयितुमुचितम् । एवं हि डाचीति परसप्तम्येव द्वित्वे सुवचेत्य-
वधेयम् । अनितौ किम् । पटितिकरोति ॥

कृभो द्वितीयतृतीयशम्बबीजात्कृषौ ५ । ४ । ५८ ॥

द्वितीयादिभ्यो डाच् कृञ एव योगे कर्षणेऽर्थे । बहुलोक्तेरव्य-
क्तानुकरणादन्यस्य डाचि न द्वित्वम् । द्वितीयं तृतीयं कर्षणं करोति
द्वितीयाकरोति तृतीयाकरोति । शम्बशब्दः प्रतिलोमे । अनुलोमं

कृष्टं क्षेत्रं पुनः प्रतिलोमं कर्पति शम्भाकरोति । बीजेन सह कर्पति बीजाकरोति ॥

संख्यायाश्च गुणान्तायाः ५ । ४ । ५९ ॥

कृजो योगे कृषौ डाच् । द्विगुणाकरोति क्षेत्रम् । क्षेत्रकर्मकं द्विगुणं कर्पणं करोतीत्यर्थः ॥

समयाच्च यापनायाम् ५ । ४ । ६० ॥

कृषौ इति निवृत्तम् । कृजो योगे डाच् । समयाकरोति । कालं यापयतीत्यर्थः ॥

सपत्रनिष्पत्रादतिव्यथने ५ । ४ । ६१ ॥

सपत्राकरोति मृगम् । सपुङ्गवशः प्रवेशेन सपत्रं करोतीत्यर्थः । निष्पत्राकरोति । सपुङ्गवस्य शरस्यापरपार्श्वे निर्गमनान्निष्पत्रं करोतीत्यर्थः । अनिव्यथने किम् । सपत्रं निष्पत्रं वा करोति भूतलम् ॥

निष्कुलान्निष्कोपणे ५ । ४ । ६२ ॥

निष्कुलाकरोति दाडिमम् । निर्गतं कुलमन्तरवयवानां समूहो यस्मादिति बहुव्रीहौडाच् ॥

सुखप्रियादानुलोम्ये ५ । ४ । ६३ ॥

सुखाकरोति प्रियाकरोति गुरुम् । अनुकूलाचरणेनानन्दयतीत्यर्थः ॥

दुःखात्प्रतिलोम्ये ५ । ४ । ६४ ॥

दुःखाकरोति । स्वामिनं पीडयतीत्यर्थः ॥

शूलात्पाके ५ । ४ । ६५ ॥

शूलाकरोति मांसम् । शूलेन पचतीत्यर्थः ॥

सत्यादशपथे ५ । ४ । ६६ ॥

सत्याकरोति भाण्डं वाणिज्यम् । केतव्यामिति तथ्यं करोतीत्यर्थः । शपथे तु सत्यं करोति विप्रः ॥

मद्रात्परिवापणे ५ । ४ । ६७ ॥

मद्रशब्दो मङ्गलार्थः । परिवापणं मुण्डनम् । मद्राकरोति । मा-
ङ्गल्यमुण्डनेन संस्करोतीत्यर्थः ॥

भद्राच्चेति वक्तव्यम् ❀ ॥

भद्राकरोति । अर्थः प्राग्वत् । परिवापणे किम् । भद्रं करोति ॥
इति तद्धिताः ॥

इति १५५ अंशाः ।

स्त्रियामित्यधिकृत्य ॥

अजाद्यतष्टाप् ॥

अजाद्युक्तिर्डीपो डीपश्च वाधनाय । अजा । अत' सद्वा ।
अजादिभिः स्त्रीत्वस्य विशेषणान्नेह । पञ्चाजी । द्विगो. इति डीप् ।
अत्र हि समाप्तार्थसमाहारनिष्ठं स्त्रीत्वम् । अजा । एडका । अश्वा ।
चटका । मूपिका । एषु जातिलक्षणो डीप् प्राप्तः । बाला । वत्सा ।
होढा । मन्दा । विलाता । एषु वयासि प्रथमे इति डीप् प्राप्तः ॥

संभस्त्राजिनशणपिण्डेभ्यः फलात् ❀ ॥

संफला । भस्त्रफला । डच्चापो' इति ह्रस्वः ॥

सदच्चाण्डप्रान्तशतैकेभ्यः पुष्पात् ❀ ॥

सत्पुष्पा । प्राक्पुष्पा । प्रत्यक्पुष्पा ॥

शूद्रा चामहत्पूर्वाजातिः ❀ ॥

पुंयोगे तु शूद्री । अमहत्पूर्वा किम् । महाशूद्री । कुश्वा । उ-
ष्णिहा । देवविशा । ज्येष्ठा । कनिष्ठा । मध्यमेति पुंयोगेऽपि कौ-
किला । जातावपि ॥

मूलान्नभः ❀ ॥

अमूला । ऋन्नेभ्यो डीप् । कर्त्री । दण्डिनी ॥

उगितश्च ४ । १ । ६ ॥

पचन्ती । भवन्ती । दीव्यन्ती । अत्र प्रागुक्तानाम् संग्रहपद्य-
मनुसन्धेयम् । भांती । माती । अदती । जुह्वती । सुन्वती । तुद-
न्ती । तुदती । रुन्धती । तन्वती । क्रीणन्ती । क्रीणती । भविष्यन्ती ।
भविष्यती । उगिदचामिति सूत्रेऽग्रहणेन धातोश्चेदुगितकार्यं तर्ह्य-
श्चेतेरेव इति नियम्यते । तेनेह न । उखास्तत् । क्षिप् । अनदिताम्
इति नलोपः । पर्णध्वत् । अश्चतेस्तु स्यादेव । प्राची । प्रतीची ॥

वनो र च ४ । १ । ७ ॥

वन्नन्तात्तदन्ताच्च प्रातिपदिकात् स्त्रियां ङीप् रश्चान्तादेशः ।
वन्निति द्विनिष्कानिष्वनिषां सामान्यग्रहणम् । प्रत्ययग्रहणे यस्मात्स
विहितस्तदादेस्तदन्तस्य ग्रहणम् । तेन प्रातिपदिकविशेषणात्तद-
न्तान्तमपि लभ्यते । सुत्वानमतिक्रान्ता अतिसुत्वरी । अतिधीवरी ।
शर्वरी ॥

वनो न दृश इति वक्तव्यम् ❀ ॥

दृशन्ताद्भातोर्विहितो यो वन् तदन्तात्तदन्तान्ताच्च प्रातिपदि-
कान् ङीच् रश्च नेत्यर्थः । ओणृ अपनयने । वनिप् । विद्वनोः
इत्यात्वम् । अवावा ब्राह्मणी राजयुधा ॥

बहुव्रीहौ वा ❀ ॥

बहुधीवरी बहुधीवा पक्षे डाब्वक्ष्यते ॥

पादोऽन्यतरस्याम् ४ । १ । ८ ॥

पाच्छब्दः कृत्तमासान्तस्तदन्तात्प्रातिपदिकान्ङीच्वा । द्विपदी
द्विपाद् ॥

टावृचि ४ । १ । ९ ॥

ऋचि वाच्यायां पादन्वाद्याप् । द्विपदा ऋक् । एकपदा ॥

न पट्स्वस्त्रादिभ्यः ॥

पञ्च । चतस्रः । पञ्च इत्यत्र नलोपे कृतेऽपि ण्यन्ता पट् इति

पदसंज्ञां प्रति नलोपः सुप्स्वर इति नलोपस्यासिद्धत्वात् । न पद-
स्वस्त्रादिभ्यः इति न टाप् ॥

मनः ४ । १ । ११ ॥

मन्नन्तान्न डीप् । सीमा । सीमानौ ॥

अनो बहुव्रीहेः ४ । १ । १२ ॥

अन्नन्ताद्बहुव्रीहेर्न डीप् । बहुयज्वा । बहुयज्वानौ ॥

डाबुभाभ्यामन्यतरस्याम् ४ । १ । १३ ॥

सूत्रद्वयोपात्ताभ्यां डाब्वा । सीमा । सीमे । सीमाना । दामा ।
दामे । दामानौ । न पुंसि दाम इत्यमरः । बहुयज्वा । बहुयज्वं ।
बहुयज्वानौ ॥

अन उपधालोपिनोऽन्यतरस्याम् ४ । १ । २८ ॥

अन्नन्ताद्बहुव्रीहेरुपधालोपिनो वा डीप् पक्षे डाब्डीन्निषेधा ।
बहुराज्ञी । बहुराज्ञौ । बहुराजे । बहुराजानौ । प्रत्ययस्थात्कात्पूर्व-
स्येत्युक्तम् । सर्विका । कारिका । अतः किम् । नौका । प्रत्यय-
स्थात् किम् । शक्नोतीति शका । असुपः किम् । बहुपरिधाजका
नगरी । कात् किम् । नन्दना । पूर्वस्य किम् । परस्य मा भूत् ।
कटुका । तपरः किम् । राका । आपि किम् । कारकः ॥

मामकनरकयोरुपसंख्यानम् ❀ ॥

मामिका । नरान् कायतीति नरिका ॥

त्यक्त्यपोश्च ❀ ॥

दाक्षिणात्यिका । इहत्यिका ॥

न यासयोः ७ । ३ । ४५ ॥

यत्तदोरस्येज् । यका । सका । यकाम् । तकाम् ॥

त्यक्नश्च निषेधः ❀ ॥

अधित्यका । उपत्यका ॥

आशिपि वुनश्च न ❀ ॥

जीवका । भवका ॥

उत्तरपदलोपे च ❀ ॥

देवदत्तिका देवका ॥

क्षिपकादीनां च न ❀ ॥

क्षिपका । ध्रुवका । कन्यका । चटका ॥

तारका ज्योतिषि ❀ ॥

अन्यत्र तारिका ॥

वर्णका तान्तवे ❀ ॥

अन्यत्र वर्णिका ॥

वर्तका शकुनौ प्राचाम् ❀ ॥

उदीचां तु वर्तिका ॥

अष्टका पितृदेवत्ये ❀ ॥

अष्टिकान्या ॥

सूतकापुत्रिकावृन्दारकाणां वेति वक्तव्यम् ❀ ॥

इह वा अ इति च्छेदः । कात्पूर्वस्याकारादेशो वेत्यर्थः । तेन पुत्रिकाशब्दे ङीन इवर्णस्य पक्षेऽकारः । अन्यत्रेत्वबाधनार्थमकारस्यैव पक्षेऽकारः । सूतिका सूतकेत्यादि ॥

उदीचामातः स्थाने यकपूर्वायाः ७ । ३ । ४६ ॥

यकपूर्वस्य स्त्रीप्रत्ययाकारस्य स्थाने योऽकारस्तस्य कात्पूर्वस्थे-
द्वा आपि परे । केणः इति ह्रस्वः । आर्यका आर्यिका । चटकका
चटकिका । आतः किम् । सांकाश्ये भवा सांकाश्रियका । यक
इति किम् । अश्विका । स्त्रीप्रत्यय इति किम् । शुभं यातीति
शुभंयाः । अज्ञाता शुभंयाः शुभंयिका । धात्वन्तयकोस्तु नित्यम् ।
मुनयिका । मुपायिका ॥

इति १५६ अंशाः ।

भस्त्रैपाजाज्ञास्वानपूर्वाणामपि ७ । ३ । ४७ ॥

स्वेत्यन्तं लुप्तपष्ठीकं षट्मम् । एषामत इद्वा । तदन्तविधिर्नैव सिद्धे
नञ्पूर्वाणामपीति स्पष्टार्थम् । मस्त्राग्रहणमुपसर्जनार्थम् । अन्यस्य
तूत्तरसूत्रेण सिद्धम् । एषा द्वा एतयोस्तु सपूर्वयोर्नैवम् । अन्तर्व-
र्तिर्नो विभक्तिमाश्रित्य असुपः इति प्रतिषेधात् । अनेपका । पर-
मैपका । अद्वके । परमद्वके । स्वशब्दग्रहणं संज्ञोपसर्जनार्थम् । इह
हि आतः स्थाने इत्यनुवृत्तं स्वशब्दस्यैवातो विशेषणम् । नतु द्विप-
योरसंभवात् । नाप्यन्येषामव्यभिचारात् । स्वशब्दस्त्वनुपसर्जनमा-
त्मीयवाची अकजर्हः । अर्थान्तरे तु न स्त्री । संज्ञोपसर्जनीभूतस्तु
कप्रत्ययान्तत्वाद्भवत्युदाहरणम् । एवं चात्मीयायां स्विका परम-
स्विकेति । नित्यमेवेत्वम् । निर्भस्त्रका निर्भस्त्रिका । एपका एपिका ।
कृतपत्वनिर्देशान्नेह विकल्पः । एतिके एतिकाः । अजका अजि-
का । जका जिका । द्विके द्वके । निःस्वका निःस्विका ॥

अभाषितपुंस्काच्च ७ । ३ । ४८ ॥

आदाचार्याणाम् ७ । ३ । ४९ ॥

गङ्गिका गङ्गाका गङ्गका । उक्तपुंस्कात् शुभ्रिका । बहुव्रीहेर्भा-
षितपुंस्कत्वात्ततो विहितस्य नित्यम् । अज्ञाता अखट्टा अस-
द्विका । शैषिके कपि तु विकल्प एव ॥

अनुपसर्जनात् ४ । १ । १४ ॥

अधिकारोऽयम् । यूनस्तिः इत्यभिव्याप्य । अयमेव स्त्रीप्रत्ययेषु
तदन्तविधिं ज्ञापयति । टिङ्गाणञ् इत्यादि । कुरुचरी । उपसर्ज-
नत्वान्नेह । बहुकुरुचग । नदद् नदी । वक्ष्यमाणेत्यत्र टित्त्वादुगि-
त्वाच्च ङीप्प्राप्तः यासुटो ङित्वेन लाश्रयमनुबन्धकार्यं नादेशानाम्
इति ज्ञापनान्न भवति । श्रः ज्ञानचः गित्वेन कचिदनुबन्धका-
र्येऽप्यनलिवधाविति निषेधज्ञापनाद्वा । सौपण्यी । ऐन्द्री । आत्सी ।
ऊरुद्वयसी । ऊरुद्वी । ऊरुमात्री । पञ्चतयी । आक्षिकी । लाव-
णिकी । यादृशी । इत्वरि । ताच्छीलिके णेऽपि चोरी ॥

नभस्नभीकक्षरव्युंस्तरुणतलुनानामुपसंख्यानम् ॥

स्त्रेणी । पौंस्त्री । शाक्तीकी । आढ्यंकरणी । नरुणी । तलुनी ॥

यभश्च ४ । १ । १६ ॥

यञन्तात्स्त्रिया ङीप् । अकारलोपे कृते ॥

हलस्तद्धितस्य ६ । ४ । १५० ॥

हल उत्तरस्य तद्धितयकारस्योपधाभृतस्य लोपः इति परे । गार्गी ॥

अनपत्याधिकारस्थान्न ङीप् ॥

द्वीपे भवा द्वैप्या । अधिकारग्रहणान्नेह । देवस्यापत्यं देव्या ।

देवाद्यञञौ इति हि यञ्माग्दीव्यतीयो न त्वपत्याधिकारपठितः ॥

प्राचां ष्फस्तद्धितः ४ । १ । १७ ॥

यञन्तात्ष्फो वा स्त्रियाम् । स च तद्धितः । ष इत् । तद्धितान्त-

त्वात्प्रातिपदिकत्वम् । ष्फेणोक्तेऽपि स्त्रीत्वे पितृसामर्थ्यात् पित्रौरा-

दिभ्य इति ङीप् । गार्ग्यायणी ॥

सर्वत्र लोहितादिकतन्तेभ्यः ४ । १ । १८ ॥

लोहितादिभ्यः कतशब्दान्तेभ्यो यञन्तेभ्यो नित्यं ष्फः ।

लोहित्यायनी । कात्यायनी ॥

कौरव्यमाण्डूकाभ्यां च ४ । १ । १९ ॥

आभ्या ष्फः टाण्डीशोरपवादः । कुर्वादिभ्यो ण्यः । कौरव्या-

यणी । ढक्च मण्डूकात् इत्यण् । माण्डूकायनी ॥

आसुरेरुपसंख्यानम् ॥

आसुरायणी ॥

वयसि प्रथमे ४ । १ । २० ॥

कुमारी ॥

वयस्य चरम इति वाच्यम् ॥

वधूटी । चिरण्टी । वधूटचिरण्टशब्दौ यौवनवाचिनौ । अतः

१ । शिशुः ॥

कन्याया न ॐ ॥

कन्यायाः कनीन च इति निर्देशात् ॥

द्विगोः ४ । १ । २१ ॥

त्रिलोकी । द्विगोः किम् । ज्यनीका सेना ॥

अपरिमाणविस्ताचितकम्बल्येभ्यो न तद्वितलुकि
४ । १ । २२ ॥

अपरिमाणान्ताद्विस्ताद्यन्ताद्य द्विगोर्डीप् न तद्वितलुकि सति ।
पञ्चभिरश्वैः क्रीता पञ्चाश्वः । आर्हीषष्ठः । अध्यर्ध इति लुक् ।
द्वौ विस्तौ पचति द्विविस्ता । दद्याचिता । द्विकम्बल्या । परिमा-
णातु दद्यादकी तद्वितलुकि किम् । समाहारे पञ्चाश्वी ॥

काण्डान्तात् क्षेत्रे ४ । १ । २३ ॥

क्षेत्रे यः काण्डान्तो द्विगुस्ततो न डीप् तद्वितलुकि द्वे काण्डे
प्रमाणमस्या द्विकाण्डा क्षेत्रमस्ति । प्रमाणे द्यसज् इति विहितस्य
मात्रचः । प्रमाणे लो द्विगोर्नित्यम् इति लुक् । क्षेत्रे किम् । द्विका-
ण्डी रज्जुः ॥

पुरुषात्प्रमाणेऽन्यतरस्याम् ४ । १ । २४ ॥

प्रमाणे यः पुरुषस्तदन्ताद्विगोर्डीप् तद्वितलुकि । द्वौ पुरुषौ
प्रमाणमस्याः सा द्विपुरुषी द्विपुरुषा वा परित्वा ॥

ऊधसोऽनङ् ५ । ४ । १३१ ॥

ऊधोन्तस्य बहुव्रीहेरनङादेशः स्त्रियाम् । इत्यनङि कृते ङाङ्डी-
त्रिवेधेषु प्राप्तेषु ॥

बहुव्रीहेरुधसो डीप् ४ । १ । २५ ॥

ऊधोन्ताद्बहुव्रीहेर्डीप् स्त्रियाम् । कुण्डोर्डी । स्त्रियां किम् ।
कुण्डो धो धेनुकम् । इहानङपि न । तद्विधी स्त्रियाम् इत्युपमंख्या-
नात् ॥

मनुनिपात्यते । पतिवत्री इत्यत्र तु वत्त्वं निपात्यते । अन्तर्वत्री ।
पतिवत्री । प्रत्युदाहरणं तु अंतरस्त्यस्यां शालायां घटः । पतिमंती
पृथिवी ॥

पत्युर्नो यज्ञसंयोगे ४ । १ । ३३ ॥

पतिशब्दस्य नकारादेशः यज्ञेन संबन्धे । वसिष्ठस्य पत्नी ।
तत्कर्तृकयज्ञस्य फलभोक्त्रीत्यर्थः । दंपत्योः सहाधिकारात् ॥

विभाषा सपूर्वस्य ४ । १ । ३४ ॥

पतिशब्दान्तस्य सपूर्वस्य प्रातिपादिकस्य नो वा । गृहस्य पतिः
गृहपतिः गृहपत्नी । अनुपसर्जनस्य इतीहोत्तरार्धमनुवृत्तमपि न
पत्युर्विशेषणं किंतु तदन्तस्य तेन बहुव्रीहावपि । दृढपत्नी दृढपतिः ।
वृषलपत्नी वृषलपतिः । अथ वृषलस्य पत्नी इति व्यस्ते कथमिति
चेत् पत्नीव पत्नीत्युपचारात् । यद्वा । आचारक्रियन्तात्कर्तरि
किप् । अस्मिंश्च पक्षे पत्नियौ पत्निय इतीयङ्विषये विशेषः ।
सपूर्वस्य किम् । गवां पतिः स्त्री ॥

नित्यं सपत्न्यादिषु ४ । १ । ३५ ॥

पूर्वविकल्पापवादः । समानस्य सभावोऽपि निपात्यते । समानः
पतिर्यस्याः सा सपत्नी । एकपत्नी । वीरपत्नी ॥

पूतक्रतोरै च ४ । १ । ३६ ॥

अस्य स्त्रियामै आदेशो ङीप् च । इयं त्रिसूत्री पुंयोग एवेप्यते ।
पूतक्रतोः स्त्री पूतक्रतायी । यया तु क्रतवः पूताः स्यात्पूतक्रतुरेव सा ॥

वृषाकप्यग्निकुसितकुसिदानामुदात्तः ४ । १ । ३७ ॥

एषामुदात्त ए आदेशः ङीप् च । वृषाकपेः स्त्री वृषाकपायी ।
हरविष्णू वृषाकपी इत्यमरः । वृषाकपायी श्रीगौर्योः इति च ।
अग्रायी । कुसितायी । कुसिदायी । कुसिदशब्दो ह्रस्वमध्यो नतु
दीर्घमध्यः ॥

मनोरौ वा ४ । १ । ३८ ॥

मनुशब्दस्यौकारादेशः उदात्तैकारश्च वा ताभ्यां संनियोगशिष्टो
ङीप् च । मनोः स्त्री मनायी मनावी मनुः ॥

वर्णादनुदात्तात्तोपधात्तो नः ४ । १ । ३९ ॥

वर्णवाची योऽनुदात्तान्तस्तोपधस्तदन्तादनुषसर्जनात्प्रातिपदि-
काद्वा ङीप् । तकारस्य नकारादेशश्च । एनी एता । रोहिणी रोहिता ।
वर्णानां तणतिनितान्तानाम् इति फिट्सूत्रेणाद्युदात्तः । ज्येष्ठ्या च
शलल्या इति गृह्यम् । त्रीण्येतान्यस्या इति बहुव्रीहिः । अनुदात्तात्
किम् । श्वेता । घृतादीनां च इत्यन्तोदात्तोऽयम् । अत इत्येव ।
शितिः स्त्री ॥

पिशङ्गादुपसंख्यानम् ❀ ॥

पिशङ्गी पिशङ्गा ॥

असितपलितयोर्न ❀ ॥

असिता । पलिता ॥

छन्दसि क्रमेके ❀ ॥

असिक्री । पलिक्री । अवदातशब्दस्तु न वर्णवाची किंतु विशु-
द्धिवाची । तेन अवदाता इत्येव ॥

अन्यतो ङीप् ४ । १ । ४० ॥

तोपधभिन्नादर्णवाचिनोऽनुदात्तान्तात्प्रातिपदिकात् स्त्रियां ङीप् ।
कल्माषी । सारङ्गी । लघावन्ते द्वयोश्च बह्वचो गुरुः इति मध्योदा-
त्तावेर्तो । अनुदात्तान्तात् किम् । कृष्णा । कपिला ॥

पिद्मौरादिभ्यश्च ॥

गीरी । नर्त्तकी । अनडुही । अनड्वाही ॥

पिप्पल्यादयश्च ❀ ॥

आशूतिगणोऽयम् ॥

सूर्यतिप्यागस्त्यमत्स्यानां य उपधायाः ६ । ४ । १४९ ॥

अद्रस्योपधाया यस्य लोपः स चेत्यः सूर्याद्यवयवः ॥

मत्स्यस्य ङ्याम् ❀ ॥

सूर्यागस्त्ययोश्चे च ङ्यां च ❀ ॥

तिप्यपुप्ययोर्नक्षत्राणि यलोप इति वाच्यम् ❀ ॥

मत्सी । मातरि पिच इति पित्वादेव सिद्धे र्गागदिषु माताम-
हीशब्दपाठादनित्यः पितां ङीप् । दंष्ट्रा ॥

जानपदकुण्डगोणस्थलभाजनागकालनीलकुशकामु-
ककवरादृत्यमत्रावपनाकृत्रिमाश्राणास्थोल्यवर्णानाच्छा-
दनायोविकारमैथुनेच्छाकेशवेशेषु ४ । १ । ४२ ॥

एकादशभ्यः प्रातिपदिकेभ्यः क्रमादृत्यादिष्वर्धेषु ङीप् । जा-
नपदी घृत्तिश्चेत् । अन्या तु जानपदी । उत्सादित्वादयन्तत्वेन
दिङ् इति ङीप्याद्युदात्तः । कुण्डी अमघ्नं चेत् । कुण्डान्या । कुडि
दाहे गुरोश्च हलः इत्यप्प्रत्ययः । यस्तु, अमृते जारजः कुण्डः इति
मनुष्यजातिवचनस्ततो जातिलक्षणो ङीप् भवत्येव । अमघ्रे हि
स्त्रीविषयत्वाभावादप्राप्तो ङीप् विधीयते नतु नियम्यते । गोणी
आवपनं चेत् । गोणान्या । स्थली अकृत्रिमा चेत् । स्थलान्या ।
भाजी श्राणा चेत् । भाजान्या । नागी स्थला चेत् । नागान्या ।
गजवाची नागशब्दः स्याल्यगुणयोगादन्यत्र शिलादा प्रयुक्त
उदाहरणम् । नागी शिला । सर्पवाची तु दैर्घ्यगुणयोगाद् अन्यत्र
रज्ज्वादी प्रयुक्तः प्रत्युदाहरणम् । नागा रज्जुः । काली वर्णश्चेत् ।
कालान्या । नीली अनाच्छादनं चेत् । नीलान्या । नील्या रक्ता
शादीत्यर्थः । नीत्या अन् वक्तव्य इत्यन् । अनाच्छादनेऽपि न स-
र्वत्र किंतु नीलादोषधी नीली । प्राणिनि च नीली र्गाः । संजायां
वा । नीली नीला । कुशी अयोविकारश्चेत् । कुशान्या । कामुकी
मैथुनेच्छा चेत् । कामुकान्या । कवगी केशानां संनिवेशश्चेत् । कव-
रान्या । चित्रेत्यर्थः ॥

इति १५८ अंशाः ।

शोणात्प्राचाम् ४ । १ । ४३ ॥

शोणी शोणा । वोतो गुणवचनात् । मृद्वी मृदुः । उतः किम् ।
शुचिः । गुण इति किम् । आखुः ॥

खरुसंयोगोपधान्न ❀ ॥

खरुः पतिवरा कन्या । पाण्डुः ॥

बह्वादिभ्यश्च ४ । १ । ४५ ॥

एभ्यो वा ङीप् । बह्वी बहुः ॥

कृदिकारादक्तिनः ❀ ॥

रात्रिः रात्री । सर्वतोऽक्तिन्नर्थादित्येके । शकटिः शकटी ।
अक्तिन्नर्थात् किम् । अजननिः । क्तिन्नन्तत्वादप्राप्ते विध्यर्थे पद्धति-
शब्दो गणे पठ्यते । हिमकापिहतिषु च इति पद्मावः । पद्धतिः
पद्धती । पुंयोगादाख्यायाम् । गोपी ॥

पालफान्तान्न ❀ ॥

गोपालिका । अश्वपालिका ॥

सूर्यादेवतायां चाव्याच्यः ❀ ॥

सूर्यस्य स्त्री देवता सूर्या । देवतायां किम् । सूरि । कुन्ती मानु-
षीयम् । न केवलं दाम्पत्यलक्षण एव पुंयोगः किन्तु जन्यजनक-
लक्षणोऽपि । तेन केकयी देवकीत्यत्रापीति केचित् । परे तु दाम्प-
त्यलक्षणा एव पुंयोगः । केकयी । देवकीत्यत्र अपत्यप्रत्यये ङीप्
संज्ञापूर्वकत्वादचामादेर्न वृद्धिरित्याहुः इति प्रायुक्तम् ॥

इन्द्रवरुणभवशर्वरुद्रमृडहिमारण्ययवयवनमातुला-
चार्याणामानुक् ४ । १ । ४९ ॥

एवामानुगागमः स्थान् ङीप्च । इन्द्रादीनां षण्णां मातुलाचार्य-
योश्च पुंयोग एवेप्यते । तत्र ङीपि सिद्धे आनुगागममात्रं विधीयते ।
इतरेषां चतुर्णां शुभयम् । इन्द्राणी ॥

हिमारण्ययोर्महत्त्वे ❀ ॥

महद्भिमे हिमानी । अरण्यानी ॥

यवाहोपे ❀ ॥

दुधो यवो यवानी ॥

यवनालिप्याम् ❀ ॥

यवनानां लिपिर्यवनानी ॥

मातुलोपाध्याययोरानुग्वा ❀ ॥

मातुलानी मातुली । उपाध्यायानी उपाध्यायी ॥

या तु स्वयमेवाध्यापिका तत्र वा ङीप् वाच्यः ❀ ॥

उपाध्यायी उपाध्याया ॥

आचार्यादणत्वं च ❀ ॥

आचार्यस्य स्त्री आचार्यानी । पुंयोग इत्येव । आचार्या स्वयं व्याख्यात्री ॥

अर्यक्षत्रियाभ्यां वा ❀ ॥

स्वार्थे । अर्याणी अर्या । स्वामिनी वैश्या वेत्यर्थः । क्षत्रियाणी क्षत्रिया । पुंयोगे तु अर्या । क्षत्रिया । कथं ब्रह्माणी इति । ब्रह्माणमानयती जीवयतीति कर्मण्यण् ॥

क्रीतात्करणपूर्वात् ४ । १ । ५० ॥

क्रीतान्ताददन्तात्करणादेः स्त्रियां ङीप् । वस्त्रक्रीती । कचिन्न । धनक्रीता ॥

क्तादल्पाख्यायाम् ४ । १ । ५१ ॥

करणादेः क्तान्तात्स्त्रिया ङीप् अल्पत्वे द्योत्ये ॥ अभ्रलिप्ती द्यौः । अल्पाख्याया किम् । चन्दनलिप्ताङ्गना ॥

बहुव्रीहेश्वान्तोदात्तात् ४ । १ । ५२ ॥

बहुव्रीहेः क्तान्तादन्तोदात्ताददन्तात् स्त्रियां ङीप् ॥

जातिपूर्वादिति वक्तव्यम् ❀ ॥

तेन बहुनञ्मुकालमुखादेर्पूर्वान्न । ऊरुभिन्नी । नेह । बहुकृता ॥

जानान्तात्र ❀ ॥

दन्तजाता ॥

पाणिगृहीती भार्यायाम् ❀ ॥

पाणिगृहीतान्या ॥

अस्वाङ्गपूर्वपदाद्वा ४ । १ । ५३ ॥

पूर्वेण नित्ये प्राप्ते विकल्पोऽयम् । सुरापीती सुरापीता । अ-
न्तोदात्तात् किम् । वस्त्रच्छन्ना । अनाच्छादनात् इत्युदात्तनिषेधः ।
अत एव पूर्वेणापि न ङीप् । स्वाङ्गाद्योपसर्जनादित्यादि । अतिके-
शी अतिकेशा । संयोगोपधात् सुगुल्फा । स्वाङ्गं त्रिधा । अद्रव-
न्मूर्तिमत्स्वाङ्गं प्राणिस्थमविकारजम् । सुस्वेदा द्रवत्वात् । सुज्ञाना
अमूर्तत्वात् । सुमुखा शाला अप्राणिस्थत्वात् । सुशोका विकारज-
त्वात् । अतस्त्वं तत्र दृष्टं च । सुकेशी सुकेशा वा रथ्या । अप्राणि-
स्थस्यापि प्राणिनि दृष्टत्वात् । तेन चेत्तत्तथायुतम् । सुस्तनी सुस्त-
ना वा प्रतिमा । प्राणिवत्प्राणिसदृशे स्थितत्वात् ॥

नासिकोदरौष्ठजङ्घादन्तकर्णशृङ्गाच्च ४ । १ । ५५ ॥

एभ्यो वा ङीप् । आद्ययोर्वह्नञ्लक्षणो निषेधो बाध्यते ।
पुरस्तादपवादन्यायात् । ओष्ठादीनां पञ्चानां तु असंयोगोपधात्
इति पर्युदासे प्राप्ते वचनं मध्येऽपवादन्यायात् । सहनञ्लक्षणस्तु
प्रतिषेधः परत्वादस्य बाधकः । तुङ्गनासिकी तुङ्गनासिकेत्यादि ।
नेह । सहनासिका । अनासिका । अत्र वृत्तिः ॥

अङ्गगात्रकण्ठेभ्यो वक्तव्यम् ❀ ॥

स्वङ्गी स्वङ्गेत्यादि । एतच्चानुक्तसमुच्चयार्थेन चकारेण संग्राह-
मिति केचित् । प्राण्यादनुक्तत्वादप्रमाणम् इति प्रामाणिकाः ।
अत्र वार्तिकानि ॥

पुच्छाच्च ❀ ॥

सुपुच्छी सुपुच्छा ॥

कवरमणिविपशरेभ्यो नित्यम् ❀ ॥

कवरं चित्रं पुच्छं यस्याः सा कवरपुच्छी मयूरीत्यादि ॥

उपमानात्पक्षाच्च पुच्छाच्च ❀ ॥

नित्यमित्येव । उलूकपक्षी शाला । उलूकपुच्छी सेना ॥

न क्रोडादिवह्वचः ४ । १ । ५६ ॥

क्रोडादेर्वह्वचश्च स्वाङ्गान्न डीप् । कल्याणक्रोडा । अश्वानामुरः
क्रोडा । आकृतिगणोऽयम् । सुजघना ॥

इति १५९ अंशः ।

सहनविद्यमानपूर्वाच्च ४ । १ । ५७ ॥

सहेत्यादित्रिकपूर्वान्न डीप् । सकेशा । अकेशा । विद्यमान-
नासिका ॥

नखमुखात्संज्ञायाम् ४ । १ । ५८ ॥

डीप् न । शूर्पणखा । गौरमुखा । संज्ञायां किम् । ताम्रमुखी
कन्या ॥

दिकपूर्वपदान् डीप् ४ । १ । ६० ॥

दिकपूर्वपदात्स्वाङ्गान्तात्प्रातिपदिकात्परस्य डीपो डीवादेशः ।
प्राङ्मुखी । आद्युदात्तं पदम् ॥

वाहः ४ । १ । ६१ ॥

वाहन्तात्प्रातिपदिकान्डीप् डीपेवानुवर्तते न डीप् । दित्येवाद्
च मे दित्यौही च मे ॥

सख्यशिश्वीति भाषायाम् ४ । १ । ६२ ॥

इतिशब्दः प्रकारे भाषायाम् इत्यस्यानन्तरं द्रष्टव्यः । उन्द्-
स्यापि कचित् । सखी । अशिश्वी । आधेनवो धुनयन्तामशिश्वीः ।
जातेरस्त्रीविषयादयोपधात् । आकृतिग्रहणा जातिः । अनुगतसं-

स्थानव्यङ्ग्येत्यर्थः । तटी । लिङ्गानां च न सर्वभाक् । सकृदा-
ख्यातनिर्गोहा । असर्वलिङ्गत्वे सत्येकस्यां व्यक्ता कथनाद्यत्त्य-
न्तरे कथनं विनापि सुग्रहा जातिः इति लक्षणान्तरम् । वृषली ।
सत्यन्तं किम् । शुक्ला । सकृत् इत्यादि किम् । देवदत्ता । गोत्रं च
चरणैः सह । अपत्यप्रत्ययान्तः शाखाध्येतृवाची चशब्दो जाति-
कार्यं लभत इत्यर्थः । औपगवी । कठी । बह्वृची । ब्राह्मणीत्यत्र
तु शार्ङ्गखादिपाठान् डीना डीष्वाध्यते । जातेः किम् । मुण्डा ।
अस्त्रीविषयात् किम् । बलाका । अयोपधात् किम् । क्षत्रिया ॥

योपधप्रतिपेधे ह्यगवयमुकयमनुष्यमत्स्यानामप्रति-
पेधः ❀ ॥

हयी । गवयी । मुकयी । हलस्तद्धितस्य इति लोपः । मानुयी ॥

मत्स्यस्य ड्याम् ❀ ॥

मत्सी ॥

पाककर्णपर्णपुष्पफलमूलवालोत्तरपदाच्च ४।१।६४ ॥

पाकाद्युत्तरपदाजातिवाचिनः स्त्रीविषयादपि डीप् । ओदनपा-
की । शंकुकर्णी । शालपर्णी । शङ्खपुष्पी । दासीफली । दर्भमूली ।
गोवाली । ओपधिविशेषे रूढा एते ॥

इतो मनुष्यजातेः ४।१।६५ ॥

डीप् । दाक्षी । योपधादपि । उदमेयस्यापत्यं औदमेयी ।
मनुष्य इति किम् । तित्तिरिः ॥

उडुतः ४।१।६६ ॥

उकारान्तादयोपधान्मनुष्यजातिवाचिनः स्त्रियामुङ् । कुरुः ।
कुरुनादिभ्यो ण्यः । तस्य स्त्रियामवन्ति इत्यादिना लुक् । अयोप-
धात् किम् । अध्वर्युः ॥

अप्राणिजतेश्चरज्ज्वादीनामुपसंख्यानम् ❀ ॥

• रज्ज्वादिपर्युदासादुवर्णान्तेभ्य एव । अलाव्वा । कर्कन्ध्वा । अन-

योर्दीर्घान्तत्वेषु नोङ् धात्वोः इति विभक्त्युदात्तत्वप्रतिषेध ऊङ्ः
फलम् । प्राणिजातेस्तु कृकवाहुः । रज्ज्वादेस्तु रज्जुः । हनुः ॥

बाह्वन्तात्संज्ञायाम् ४ । १ । ६७ ॥

स्त्रियामृङ् । भद्रबाहुः । संज्ञायां किम् । वृत्तबाहुः ॥

पङ्गोश्च ४ । १ । ६८ ॥

पङ्गूः ॥

श्वशुरस्योकाराकारलोपश्च ❀ ॥

चाट्टङ् । पुंयोगलक्षणस्य ङीपोऽपवादः । लिङ्गविशिष्टपरिमा-
या स्वादयः । श्वश्रूः ॥

ऊरूत्तरपदादौपम्ये ४ । १ । ६९ ॥

उपमानवाचिपूर्वपटमूरूत्तरपदं यत्प्रातिपदिकं तस्माट्टङ् ।
करभोरूः ॥

संहितशफलक्षणवामादेश्च ४ । १ । ७० ॥

अनौपम्यार्थं सूत्रम् । संहितोरूः । सैव शफोरूः । शर्का सुरा
ताविव संश्लिष्टत्वादुपचारात् । लक्षणशब्दादर्श आद्यत्र । लक्षणोरूः ।
वामोरूः ॥

सहितसहाभ्यां चेति वक्तव्यम् ❀ ॥

हितेन सह सहितौ ऊरू यस्याः सा सहितोरूः । सहिते इति
सहौ ऊरू यस्याः सा सहोरूः । यदा विद्यमानवचनस्य सहशब्दस्य
ऊर्वतिशयप्रतिपादनाय प्रयोगः ॥

संज्ञायाम् ४ । १ । ७२ ॥

कञ्चुकमण्डल्वोः संज्ञायां स्त्रियामृङ् । कट्टुः । कमण्डलूः । संज्ञायां
किम् । कट्टुः । कमण्डलुः । अच्ऊन्दोऽर्थवचनम् ॥

शार्ङ्गैरवाद्यभो ङीन् ४ । १ । ७३ ॥

शार्ङ्गैरवादेरञो योऽङ्कारस्तदन्ताद्य जातिवाचिनो ङीन् । शार्ङ्ग-
खी वेदी । जातेः इत्यनुवृत्तेः पुंयोगे ङीपेव ॥

स्थानव्यङ्ग्येत्यर्थः । तटी । लिङ्गानां च न सर्वभाक् । सकृदाख्यातनिर्ग्राह्या । असर्वलिङ्गत्वे सत्येकस्या व्यक्तौ कथनाव्यक्त्यन्तरे कथनं विनापि सुग्रहा जातिः इति लक्षणान्तरम् । वृषली । सत्यन्तं किम् । शुक्ला । सकृत् इत्यादि किम् । देवदत्ता । गोत्रं च चरणैः सह । अपत्यप्रत्ययान्तः शाखाध्येतृवाची चशब्दो जातिकार्यं लभत इत्यर्थः । औपगवी । कठी । वहूची । ब्राह्मणीत्यत्र तु शार्ङ्गखादिपाठान् डीना डीष्वाध्यते । जातेः किम् । मुण्डा । अस्त्रीविषयात् किम् । बलाका । अयोपधात् किम् । क्षत्रिया ॥

योपधप्रतिपेधे ह्यगवयमुकयमनुष्यमत्स्यानामप्रतिपेधः ❀ ॥

हयी । गवयी । मुकयी । हलस्तद्धितस्य इति लोपः । मानुषी ॥

मत्स्यस्य ड्याम् ❀ ॥

मत्सी ॥

पाककर्णपर्णपुष्पफलमूलवालोत्तरपदाच्च ४।१।६४ ॥

पाकाद्युत्तरपदाज्ञातिवाचिनः स्त्रीविषयादपि डीप् । औदनपाकी । शंकुकर्णी । शालपर्णी । शङ्खपुष्पी । दासीफली । दर्भमूली । गोवाली । ओपधिविशेषे रुढा एते ॥

इतो मनुष्यजातेः ४।१।६५ ॥

डीप् । दाक्षी । योपधादपि । उदमेयस्यापत्यं औदमेयी । मनुष्य इति किम् । तित्तिरिः ॥

लुङुतः ४।१।६६ ॥

उकारान्तादयोपधान्मनुष्यजातिवाचिनः स्त्रियामृड् । कुरूः । कुरुनादिभ्यो ण्यः । तस्य स्त्रियामवन्ति इत्यादिना लुक् । अयोपधात् किम् । अध्वर्युः ॥

अप्राणिजातेश्वारज्ज्वादीनामुपसंख्यानम् ❀ ॥

* रज्ज्वादिपर्युदासादुवर्णान्तेभ्य एव । अलाब्वा । कर्कन्ध्वा । अन-

योर्दीर्घान्तत्वैर्ऽपि नोङ् धात्वोः इति विभक्त्युदात्तत्वप्रतिषेध ऊङ्ः
फलम् । प्राणिजातेस्तु कृकवाहुः । रज्ज्यादेस्तु रज्जुः । हनुः ॥

बाह्वन्तात्संज्ञायाम् ४ । १ । ६७ ॥

स्त्रियामृङ् । भद्रवाहः । संज्ञायां किम् । वृत्तवाहुः ॥

पङ्गोश्च ४ । १ । ६८ ॥

पङ्गुः ॥

श्वशुरस्योकाराकारलोपश्च ॐ ॥

चादृङ् । पुंयोगलक्षणस्य ङीपोऽपवादः । लिङ्गविशिष्टपरिमा-
पया स्वादयः । श्वश्रूः ॥

ऊरूत्तरपदादौपम्ये ४ । १ । ६९ ॥

उपमानवाचिपूर्वपदमूरूत्तरपदं यत्प्रातिपदिकं तस्मादृङ् ।
करभोरूः ॥

संहितशफलक्षणवामादेश्च ४ । १ । ७० ॥

अनौपम्यार्थं सूत्रम् । संहितोरूः । सैव शफोरूः । शर्मा सुरा
तापिव संश्लिष्टत्वादुपचारात् । लक्षणग्रन्दादर्श आद्यन् । लक्षणोरूः ।
वामोरूः ॥

सहितसहाभ्यां चेति वक्तव्यम् ॐ ॥

हितेन सह सहिती ऊरू यस्याः सा सहितोरूः । संहिते इति
सहो ऊरू यस्याः सा सहोरूः । यदा विद्यमानवचनस्य सहग्रन्थस्य
ऊर्वतिशयप्रतिपादनाय प्रयोगः ॥

संज्ञायाम् ४ । १ । ७२ ॥

कवुकमण्डल्वोः संज्ञायां स्त्रियामृङ् । कटुः । कमण्डलुः । संज्ञायां
किम् । कटुः । कमण्डलुः । अच्छन्दोऽर्थं वचनम् ॥

शार्ङ्गरवाद्यनो ङीन् ४ । १ । ७३ ॥

शार्ङ्गरवादेरनो योऽकारस्तदन्ताय जातिवाचिनो ङीन् । शार्ङ्ग-
रवी षेदी । जातेः इत्यनुवृत्तेः पुंयोगे ङीप् ॥

नृनरयोर्वृद्धिश्च ❀ ॥

इति गणसूत्रम् । नारी ॥

यङश्चाप् ४ । १ । ७४ ॥

यङन्तात् स्त्रियां चाप् । यङ्प्यङोः सामान्यग्रहणम् । आम्ब-
ष्ठ्या । कारीपगन्ध्या ॥

पाद्यभश्चाव्याच्यः ❀ ॥

पातिमाण्या ॥

/आवत्याच्च ४ । १ । ७५ ॥

अस्माच्चाप् । यञश्च इति ङीपोऽपवादः । अवटशब्दो गर्गादिः ।
आवट्या ॥

तद्धिताः ❀ ॥

आपञ्चमसमाप्तेराधिकारोऽयं प्रागुक्तः ॥

यूनस्तिः ४ । १ । ७७ ॥

युवन्शब्दात्तिप्रत्ययः स च तद्धितः । लिङ्गविशिष्टपीरभाषया
सिद्धे तद्धिताधिकार उत्तरार्थः । युवतिः । अनुपसर्जनादित्येव ।
बहवो युवानो यस्यां सा बहुयुवा । युवतीति तु यौतेः शत्रन्ता-
न्ङीपि बोध्यम् ॥ इति स्त्रीप्रत्ययाः ॥

इति १६० अंशाः ।

इति चतुर्थोऽध्यायस्य चतुर्थः पादः ॥

चतुर्थोऽध्यायः समाप्तः । इति द्वितीय खण्डस्य द्वितीयो भागः ।

पूर्णा द्वितीयः खण्डोऽयं श्रीशानुग्रहतः सुखम् ।

संपूर्णकल्पा व्युत्पत्ति छात्राणा विदधात्यसौ ॥ १ ॥

इति श्रीमद्भट्टोजिदीक्षितकृतसिद्धान्तकौ-

मुदीप्रतिचिम्बभूतायाः सुगमकौमुद्या

द्वितीयः खण्डः समाप्तः ॥ २ ॥